महाकवि

ग्वाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व

[आगरा विश्वविद्यालय की पी एच० डी० उपाधि के लिये स्वीकृत शोध प्रबन्ध]

डा० भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'
एम० ए०, पी एच० डी०

राज्यश्री प्रकाशन
मथुरा

Copy Right
डा० भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'
एम० ए० पी एच० डी०

मूल्य पैंतालीस रुपये।
रु० ४५.००

पुस्तकालय संस्करण

प्रकाशक : प्रमोद बिहारी, बी० कॉम०
राजश्री प्रकाशन, तिलकद्वार, मथुरा

मुद्रक : नत्थाराम पुष्पध
पद्मासिंगी प्रिंटर्स, मथुरा

आमुख

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम ५० वर्ष स्थूल रूप से हिंदी के रीति काल और अंतिम ५० वर्ष आधुनिक काल में पड़ते हैं, अतः यह संधि युग है और इस अवधि में लिखा गया साहित्य अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहा है। इस युग के रीति कवियों की कविता में जहाँ रीति परम्परा के प्रति आग्रह था, वहीं आधुनिक काल की नई चेतना और नई प्रवृत्तियों की झलक भी उसमें परिलक्षित होने लगी थी। अतीत के प्रति मोह और वर्तमान के प्रति जिज्ञासापूर्ण दृष्टि— इन दोनों के गंगा जमुनी सामंजस्य की झाँकी इस शती के अंतिम चरण के काव्य में स्पष्ट दिखाई देती है। इस दृष्टिकोण से इस शती के काव्य पर अभी तक विचार नहीं किया गया। इसमें भी रीति के अंतिम प्रसिद्ध आचार्य कवि ग्वाल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत करने की बात तो दूर रही अभी तक इनके अनुपलब्ध ग्रंथों की न तो खोज का ही प्रयास हुआ और न उनकी कोई प्रामाणिक ग्रंथावली ही अब तक तैयार हो पाई। इस शोचनीय स्थिति में आज से प्रायः चार वर्ष पूर्व इस कवि के ग्रन्थों की खोज और उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करने का मैंने संकल्प किया था। यह कार्य लगभग दो वर्ष में पूर्ण हो सका। ग्वाल ग्रंथावली संगृहीत होने पर ग्वाल पर अध्ययन प्रस्तुत करने का विचार बनना स्वाभाविक ही था। इसके साथ उन्नीसवीं शताब्दी के रीतिकाव्य का अध्ययन भी अत्यंत आवश्यक था। अतः मेरे शोध-प्रबंध का विषय उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य और उसके अंतर्गत ग्वाल कवि का विशेष अध्ययन बना। मुझे हर्ष है कि उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व को समग्र रूप में उभारने वाला यह प्रथम शोध प्रबंध माँ भारती के मन्दिर में निवेदित हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबंध दस अध्यायों में विभक्त किया गया है, जिनमें से प्रथम चार अध्यायों में इस शती के रीति काव्य का विवेचन प्रस्तुत है और अंतिम छः अध्याय ग्वाल कवि के विशेष अध्ययन को अर्पित हैं। इस प्रकार इस शती के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में कवि का व्यक्तित्व और कृतित्व विशद रूप में विवेचित हुआ है। रीतिकाव्य का विवेचन करते समय अठारहवीं शताब्दी के रीति काव्य को भी दृष्टिपथ में रखा गया है, जिससे आलोच्य शती

Copy Right
डा० भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'
एम० ए० पी एच० डी०

मूल्य पैंतालीस रुपया
रु० ४५.००

पुस्तकालय संस्करण

प्रकाशक : प्रमोद बिहारी, बी० काम०
राज्यश्री प्रकाशन, तिलकद्वार, मथुरा

मुद्रक : नत्थाराम पुष्पघ
नवालिमी प्रिंटर्स, मथुरा

आमुख

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम ५० वर्ष स्थूल रूप से हिन्दी के रीति काल और अन्तिम ५० वर्ष आधुनिक काल में पड़ते हैं, अतः यह सन्धि युग है और इस अवधि में लिखा गया साहित्य अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण रहा है। इस युग के रीति कवियों की कविता में जहाँ रीति परम्परा के प्रति आग्रह था, वहाँ आधुनिक काल की नई चेतना और नई प्रवृत्तियों की झलक भी उसमें परिलक्षित होने लगी थी। अतीत के प्रति मोह और वर्तमान के प्रति जिज्ञासापूर्ण दृष्टि—इन दोनों के गंगा जमुनी सामंजस्य की झाँकी इस शती के अन्तिम चरण के काव्य में स्पष्ट दिखाई देती है। इस दृष्टिकोण से इस शती के काव्य पर अभी तक विचार नहीं किया गया। इसमें भी रीति के अन्तिम प्रसिद्ध आचार्य-कवि ग्वाल के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रामाणिक अध्ययन प्रस्तुत करने की बात तो दूर रही अभी तक इनके अनुपलब्ध ग्रन्थों की न तो खोज का ही प्रयास हुआ और न उनकी कोई प्रामाणिक ग्रन्थावली ही अब तक तैयार हो पाई। इस शोचनीय स्थिति में आज से प्रायः चार वर्ष पूर्व इस कवि के ग्रन्थों की खोज और उनकी प्रतिलिपियाँ तैयार करने का मैंने संकल्प किया था। यह कार्य लगभग दो वर्ष में पूर्ण हो सका। ग्वाल ग्रन्थावली संगृहीत होने पर ग्वाल पर अध्ययन प्रस्तुत करने का विचार बनना स्वाभाविक ही था। इसके साथ उन्नीसवीं शताब्दी के रीतिकाव्य का अध्ययन भी अत्यन्त आवश्यक था। अतः मेरे शोध प्रबन्ध का विषय 'उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य और उसके अन्तर्गत ग्वाल कवि का विशेष अध्ययन' बना। मुझे हर्ष है कि उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व को समग्र रूप में उभारने वाला यह प्रथम शोध प्रबन्ध माँ भारती के मन्दिर में निवेदित हो रहा है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध दस अध्यायों में विभक्त किया गया है, जिनमें से प्रथम चार अध्यायों में इस शती के रीति काव्य का विवेचन प्रस्तुत है और अन्तिम छः अध्याय ग्वाल कवि के विशेष अध्ययन को अर्पित हैं। इस प्रकार इस शती के रीति काव्य के परिप्रेक्ष्य में कवि का व्यक्तित्व और कृतित्व विशद रूप में विवेचित हुआ है। रीतिकाव्य का विवेचन करते समय अठारहवीं शताब्दी के रीति काव्य को भी दृष्टिपथ में रखा गया है, जिससे आलोच्य

के साहित्य की प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों का एक तुलनात्मक चित्र अंकित हो सके और जिसमें विवेच्य कवि का स्थान निर्धारण किया जा सके।

प्रथम अध्याय में आलोच्य शती की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों पर विहंगम दृष्टिपात करते हुए तत्कालीन रीति साहित्य का अठारहवीं शती के साहित्य की तुलना के साथ परिचयात्मक विवेचन प्रस्तुत हुआ है।

द्वितीय अध्याय में आलोच्य शताब्दी की प्रमुख प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों का विवेचन अठारहवीं शताब्दी की प्रवृत्तियों और प्रतिपाद्यों को सामने रख कर किया गया है। संधिकालीन काव्य की नई उपलब्धियों का परिचय इस अध्याय की विशेषता है।

हिन्दी काव्य संस्कृत, उर्दू, फारसी और पंजाबी भाषाओं के साहित्यों से आकृति, प्रकृति, सिद्धांत चेतना वस्तु विषय और शैली आदि में कितना प्रभावापन्न हुआ है तथा हिन्दी काव्य ने उर्दू और पंजाबी काव्य को कितना प्रभावित किया है यह विवेचन तृतीय अध्याय का प्रतिपाद्य है।

चतुर्थ अध्याय में तत्कालीन काव्य और ललित कलाओं के विकास का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने की नवीन दृष्टि से चेष्टा की गई है।

पंचम अध्याय में अंतःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य के आधार पर ग्वाल कवि का प्रामाणिक जीवन वृत्त प्रस्तुत किया है। कवि के जीवन दर्शन रहन-सहन वेशभूषा स्वभाव और काव्य प्रतिभा के प्रसंग विविध अंतःसाक्ष्यों के आधार पर विवृत हैं।

ग्वाल के लिखे प्रामाणिक ग्रन्थ साहित्य का संक्षिप्त परिचय षष्ठ अध्याय का प्रतिपाद्य विषय है। आरम्भ में प्रामाणिक बहिःसाक्ष्य का सिंहावलोकनात्मक अनुशीलन प्रस्तुत करके तथ्यपूर्ण निष्कर्ष निकाले गये हैं जिससे कवि के चर्चित ग्रन्थों की एक बड़ी तालिका प्रस्तुत हुई है।

सप्तम अध्याय ग्वाल के काव्य के प्रतिपाद्यों और उसकी प्रवृत्तियों का परिचय सात उपशीर्षकों में देता है। इस विवेचन में कवि के समसामयिक प्रमुख रचनाकारों के प्रतिपाद्यों और उनकी प्रवृत्तियों को भी यत्र तत्र तुलना में स्थान दिया गया है। ग्वाल जैसे एक संधि स्थलीय एकमेव व्याख्याकार आचार्य कवि से क्या क्या अपेक्षाएँ की जा सकती हैं और वह वहाँ तक सफल रहा है इन प्रश्नों को भी दृष्टि पथ में रखा गया है।

अष्टम अध्याय में ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। बहुभाषाविद् ग्वाल कवि की भाषा का परीक्षण तत्कालीन काव्य के परि

प्रेक्ष्य म प्रस्तुत हुआ है। कहने की आवश्यकता नहीं कि ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक तलस्पर्शी अध्ययन प्रस्तुत करके हिन्दी म प्रथम बार उसका स्थान निर्धारण किया गया है।

ग्वाल के साहित्य म प्रतिबिम्बित समाज के चित्रण को नवम अध्याय का विवेच्य विषय बनाया गया है। ग्वाल न युग-चेतना प्रतिबद्ध रचनाएँ भी की थीं इस नाते उनम ऐतिहासिक तत्वा का भी समावश है। इस दृष्टि से उनका काव्य तत्कालीन समाज की सच्ची झाकी से प्रतिबिम्बित है। अत इस अध्याय का विशेष ऐतिहासिक महत्व है।

अतिम अध्याय म ग्वाल कवि का मूल्याकन अभिप्रेत है। ग्वाल की का य शक्ति, निपुणता और अभ्यास के अतिरिक्त उनके काव्य पर सस्कृत हिन्दी क प्राचीन कविया का प्रभाव देखा गया है। उनका का य का परवर्ती कवियो के रीति निरूपण और काव्य पर उस का कितना प्रभाव पडा है, इन दृष्टि बि दुआ स कवि की प्रतिभा का यहा प्रथम बार मूल्याकन किया गया है। विविध क्षत्रो म हिन्दी साहित्य को ग्वाल की क्या दन है, इसके विवचनपूण निष्कप इस अध्याय म निकाल गये हैं।

मूल शोध प्रबन्ध के पश्चात् परिशिष्ट मे ग्वाल क उपलब्ध रगीन चित्र उनक मकान और मन्दिर तथा कतिपय ग्रन्था क कुछ पृष्ठा क फोटोप्रिंट भी उपयोगिता और प्रामाणिकता की दृष्टि म द दिये गय हैं, जो साहित्य म प्रथम बार केवल मरे द्वारा ही प्रयुक्त हुए हैं और जिन पर एकमव मेरा स्वामित्व है।

सक्षेप मे हिन्दी के एकमेव व्याख्याकार आचार्य ग्वाल कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व का यह प्रथम प्रामाणिक अध्ययन है, जिसे हिन्दी को मरी विशेष देन कहा जा सकता है।

निर्देशक डा० मनोहर लाल गौड, प्रकाशक श्री प्रमोद बिहारी, सह्योगिया एव सन्दर्भित विद्वानो क प्रति आभारी—

ग्वाल पुण्यतिथि १३-९-७० भगवान सहाय पचौरी 'भवेश'
२५, प्रमा प्रेस एम० ए० (हिन्दी, इतिहास) एल० टी०,
कृष्णापुरी, मथुरा पी एच० डी०

विषयानुक्रम

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य

उन्नीसवीं शताब्दी रीति काव्य की स्थिति उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य, (अ) विविधांग निरूपण गोविंदानंदघन, साहित्य सुधानिधि, काव्य विलास, (आ) रस निरूपण- जगत विनोद रसिक विनोद, व्यंग्यार्थ कौमुदी, रस सागर, रस चंद्रिका रस कुसुमाकर (इ) अलंकार निरूपण- पद्माभरण, भूषण भक्ति विलास चित्र चंद्रिका, भारती भूषण, (ई) पिंगल निरूपण वृत्त तरंगिणी, छन्दपयोनिधि (उ) रीतिबद्ध काव्य- अनुराग बाग, शृंगार लतिका, राम सतसई (ऊ) नीति काव्य दृष्टांत तरंगिणी, अन्योक्ति कल्पद्रुम (ए) वीर काव्य- हिम्मत बहादुर विरुदावली, हम्मीर हठ (ऐ) रीति मुक्त काव्य- ठाकुर के कवित्त (ठाकुर ठसक)। ६—४८

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

पृष्ठ भूमि नामकरण सामान्य परिचय आधार, रीति के सम्प्रदाय निरूपण शैली रीति निरूपण, आलोच्य काल के विविधांग निरूपक आचार्य रस निरूपण नायिका भेद ग्रन्थ नखशिख ग्रन्थ ऋतु वर्णन अलंकार निरूपण पिंगल निरूपण नाराशंसा कविता भक्ति वैराग्य और नीति कथन अनुवाद उपालम्भ काव्य रचना की प्रवृत्ति गद्य आलोचना का प्रादुर्भाव भाषा और प्रतिपाद्य में परिवर्तन के संकेत वर्ण्य विषय शृंगार संग्रह की प्रवृत्ति शृंगार ग्रन्थों की टीकाएँ, फारसी निष्ठ भाषा की प्रवृत्ति। ४६ ८२

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

संस्कृत साहित्य काव्य शास्त्र स्मृति साहित्य पुराण साहित्य और तन्त्र साहित्य महाकाव्य स्फुट काव्य, दर्शन साहित्य, रीति साहित्य पर संस्कृत का प्रभाव, फारसी तथा उर्दू साहित्य का प्रभाव पंजाबी साहित्य का प्रभाव, पंजाबी साहित्य पर रीति काव्य का प्रभाव रीति काव्य का फारसी और उर्दू साहित्य पर प्रभाव। ८३—११६

चतुर्थ अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य का तत्कालीन ललित कलाओं से सम्बन्ध

काव्य कला और राज्याश्रय, रीति काव्य तथा संगीत रीति काव्य और सांगीतिक प्रवृत्तियों की तुलना ऋतु वर्णन और संगीत रीति काव्य और संगीत में राधा कृष्ण का रूप रीति काव्य और चित्रकला, राजपूत शैली पहाड़ी शैली, कांगड़ा शैली, गढ़वाल शैली, सिख शैली मुगल शैली, कम्पनी शैली, रीति काव्य और स्थापत्य कला, रीति काव्य और स्थापत्य की समान प्रवृत्तियां स्थापत्य की ह्रासावस्था। ११७—१३६

पंचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

ग्वाल सनक दा कवि, ग्वाल प्राचीन, ग्वाल कवि बन्दीजन, आधार सामग्री, वंश परम्परा और पूर्वज, जन्म स्थान, जन्म संवत् निधन संवत् प्रारम्भिक जीवन और शिक्षा दीक्षा, कविता काल राज्याश्रय, नाभा दरबार में, अमृतसर में, लाहौर दरबार में पटियाला में अलवर में, रामपुर में, मकान निर्माण, संतान, मित्र और प्रशंसक शिष्य प्रतिद्वन्द्वी कवि, ग्वाल का व्यक्तित्व आकृति, स्वभाव, रहन सहन और वेशभूषा, प्रतिभा, जनश्रुतियां धर्म और सम्प्रदाय। १३७—१७४

षष्ठम अध्याय

ग्वाल के ग्रन्थ

साहित्येतिहासिक अनुशीलन कवि वृत्त संग्रह भक्त भावन इतर संग्रह धारों के संकलन कवि हृदय विनोद लक्षणा व्यंजना अलंकार भ्रम भंजन, रसरूप, शरसिंह विनोद, राधा माधव मिलन, दूषण दर्पण, साहित्य दूषण कवि दर्पण, नेह विवाद तथा नेह निवाह कवित्त संग्रह, षट ऋतु सम्बन्धी कवित्त, होरी आदि के कवित्त ग्वाल कवि के कवित्त, शृंगार कवित्त, अध्ययन के परिणाम ग्वाल के ग्रन्थों की प्रमाणिकता, तिम्बाक स्वाम्यष्टक, नेह निवाह, यमुना लहरी, रसिकानन्द, हम्मीर हठ, श्रीकृष्ण जू को नखशिख विजय विनोद गोपी पच्चीसी, कुब्जाष्टक, रामाष्टक, ज्वालाष्टक, शिवादि देवतान के कवित्त षटऋतु वर्णन, प्रस्तावक कवि दर्पण, रसरंग, साहित्यानन्द प्रस्तार प्रकाश, दो गणेशाष्टक, कृष्णाष्टक रामाष्टक, गंगा स्तुति, दश महाविद्या स्तुति गुरु पचासा, इश्क लहर दरयाव, वंशी बीसा, दृग शतक शांति रसादि के कवित्त, बलवीर विनोद। १७५—२५४

विषयानुक्रम

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य

उन्नीसवीं शताब्दी रीति काव्य की स्थिति उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य (अ) विविधांग निरूपण गोविन्दानन्दघन, साहित्य सुधानिधि, काव्य विलास, (आ) रस निरूपण- जगत विनोद रसिक विनोद, जगन्नाथ कौमुदी, रस सागर, रस चन्द्रिका रस कुसुमाकर (इ) अलकार निरूपण- पद्माभरण, भूषण भक्ति विलास चित्र चन्द्रिका, भारती भूषण, (ई) पिंगल निरूपण वृत्त तरंगिणी छन्दपयोनिधि (उ) रीतिबद्ध काव्य अनुराग बाग, शृंगार लतिका राम सतसई (ऊ) नीति काव्य दृष्टान्त तरंगिणी अन्योक्ति कल्पद्रुम, (ए) वीर काव्य- हिम्मत बहादुर विरदावली हम्मीर हठ (ऐ) रीति मुक्त काव्य ठाकुर के कवित्त (ठाकुर ठसक)। ६—४८

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

पृष्ठ भूमि नामकरण सामान्य परिचय आधार रीति के सम्प्रदाय निरूपण शैली रीति निरूपण, आलोच्य काल के विविधांग निरूपक आचार्य रस निरूपण नायिका भेद ग्रन्थ नखशिख ग्रन्थ ऋतु वर्णन अलकार निरूपण पिंगल निरूपण नाराशंसा कविता भक्ति वैराग्य और नीति कथन अनुवाद उपालम्भ काव्य रचना की प्रवृत्ति गद्य आलोचना का प्रादुर्भाव भाषा और प्रतिपाद्य मे परिवर्तन के सकेत वर्ण्य विषय शृंगार सग्रह की प्रवृत्ति शृंगार ग्रन्थो की टीकाएँ फारसी निष्ठ भाषा की प्रवृत्ति। ४८ ८२

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

सस्कृत साहित्य काव्य शास्त्र स्मृति साहित्य पुराण साहित्य और तन्त्र साहित्य महाकाव्य, स्फुट काव्य, दर्शन साहित्य, रीति साहित्य पर सस्कृत का प्रभाव, फारसी तथा उर्दू साहित्य का प्रभाव पजाबी साहित्य का प्रभाव, पजाबी साहित्य पर रीति काव्य का प्रभाव रीति काव्य का फारसी और उर्दू साहित्य पर प्रभाव। ८३—११६

चतुर्थ अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य का तत्कालीन ललित कलाओं से सम्बन्ध

काव्य कला और राज्याश्रय, रीति काव्य तथा संगीत रीति काव्य और सांगीतिक प्रवृत्तियों की तुलना ऋतु वर्णन और संगीत रीति काव्य और संगीत में राधा कृष्ण का रूप रीति काव्य और चित्रकला, राजपूत शैली पहाड़ी शैली कांगड़ा शैली, गढ़वाल शैली, सिख शैली मुगल शैली, कम्पनी शैली, रीति काव्य और स्थापत्य कला, रीति काव्य और स्थापत्य की समान प्रवृत्तियाँ, स्थापत्य की ह्रासावस्था। ११७—१३६

पंचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

ग्वाल नामक दो कवि, ग्वाल प्राचीन, ग्वाल कवि वन्दीजन, आधार सामग्री, वंश परम्परा और पूर्वज, जन्म स्थान, जन्म संवत् निधन संवत् आरम्भिक जीवन और शिक्षा दीक्षा कविता काल, राज्याश्रय, नाभा दरबार में, अमृतसर में, लाहौर दरबार में पटियाला में अलवर में, रामपुर में, मकान निर्माण, सन्तान, मित्र और प्रशंसक शिष्य प्रतिद्वन्द्वी कवि ग्वाल का व्यक्तित्व आकृति, स्वभाव, रहन सहन और वेशभूषा, प्रतिभा, जनश्रुतियाँ धर्म और सम्प्रदाय। १३७—१७४

षष्ठम अध्याय

ग्वाल के ग्रन्थ

साहित्येतिहासिक अनुशीलन कवि कृत संग्रह भक्त भावन इतर संग्रह कारों के संकलन कवि हृदय विनोद लक्षणा व्यंजना अलंकार भ्रम भंजन, रसरूप, शरसिंह विनोद राधा माधव मिलन, दूषण दर्पण, साहित्य दूषण, कवि दर्पण, नेह निबाद तथा नेह निबाह, कवित्त संग्रह, षट् ऋतु सम्बन्धी कविता होरी आदि के कविता ग्वाल कवि के कवित्त शृंगार कविता, अध्ययन के परिणाम ग्वाल के ग्रन्थों की प्रमाणिकता, निम्बार्क स्वाम्यष्टक, नेह निबाह, यमुना लहरी, रसिकानन्द, हम्मीर हठ, श्रीकृष्ण जू को नखशिख, विजय विनोद गोपी पच्चीसी कुब्जाष्टक, रामाष्टक, ज्वालाष्टक, शिवादि देवतान के कवित्त, षट्ऋतु वर्णन, प्रस्तावक, कवि दर्पण, रसरंग साहित्यानन्द प्रस्तार प्रकाश, दो गणगाष्टक, कृष्णाष्टक, रामाष्टक, गंगा स्तुति, दश महाविद्या स्तुति गुरु पचासा, इश्क लहर दरयाव, वंशी बीसा, दृग शतक शान्ति रसादि के कवित्त, बलवीर विनोद। १७५—२४४

सप्तम अध्याय

ग्वाल कवि के प्रतिपाद्य तथा प्रवतियां

वर्गीकरण रीति निरूपण, रस निरूपण, शृंगार संयोग, वियोग, नायिका भेद विवेचन षट ऋतु वर्णन हास्यादि रस वर्णन, अलंकार विवेचन, पिंगल वर्णन काव्य दोष वर्णन शब्द शक्ति रीति गुण और वृत्ति काव्य निरूपण (आ) नाराशंसा तथा राज वैभव वर्णन (इ) भक्ति वैराग्य तथा नीति वर्णन, (ई) वीर काव्य रचना (उ) काव्यानुवाद। २४५—२८६

अष्टम अध्याय

ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

ग्वाल की काव्य कला वस्तु विषय वर्ण वैभव अभिव्यंजना के प्रसाधन अप्रस्तुत विधान सादृश्य मानवीकरण सम्भावना मूलक अप्रस्तुत विधान वैषम्यमूलक अलंकार अतिशयमूलक अलंकार वक्रता मूलक अलंकार औचित्यमूलक अलंकार ग्वाल के प्रतीकों का विवेचन ग्वाल की भाषा व्याकरण ग्वाल की शब्द शक्ति वृत्ति और गुण उक्ति वैचित्र्य ग्वाल की शैली छन्द। २८७—३३०

नवम अध्याय

ग्वाल साहित्य में बिम्बित समाज

सामान्य पृष्ठभूमि समाज का उच्च वर्ग वर्ण व्यवस्था व्यवसाय शिक्षा ललित कलाएँ विविध विद्याएं वेशभूषा वस्त्र आभूषण और अंग राग आमोद प्रमोद गमनागमन के साधन सामाजिक प्रथाएँ समाज में अन्धविश्वासों की स्थिति समाज की धार्मिक मान्यताएँ समाज में नारी का स्थान निष्कर्ष। ३३१—३४६

दशम अध्याय

ग्वाल कवि का मूल्यांकन

ग्वाल में काव्य शक्ति निपुणता और काव्याभ्यास आचार्य के रूप में ग्वाल का मूल्यांकन कवि के रूप में ग्वाल का मूल्यांकन ग्वाल पर हिन्दी कवियों का प्रभाव, पद्माकर और ग्वाल का आदान प्रदान, ग्वाल का हिन्दी कवियों पर प्रभाव हिंदी साहित्य में ग्वाल का स्थान। ३४७—३६४

परिशिष्ट

(क) ग्वाल कवि का चित्र। ग्वाल के मकान का चित्र।
ग्वालेश्वर मन्दिर का चित्र। ग्वाल के कतिपय महत्वपूर्ण हस्त लिखित ग्रन्थों के चित्र।
(ख) सहायक ग्रन्थ।

प्रथम अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति-काव्य

भावना के फलस्वरूप—उच्च वर्ग और मध्यम वर्ग में संघर्ष, विज्ञान और पौराणिक परम्पराओं एवं अन्धविश्वासों में संघर्ष, व्यक्तित्व और सत्ता में संघर्ष, और सर्वोपरि पूर्व और पश्चिम में संघर्ष। डा० वार्ष्णेय का यह मत सम्भवतः तर्क सम्मत है। अठारहवीं शताब्दी का भारत राजनीतिक अस्थिरता, अस्तव्यस्तता, अराजकता और विशृंखलता का था। सन् १७५७ ई० (सं० १८१४ वि०) के पलासी के युद्ध तथा १७६५ ई० (सं० १८२२ वि०) की इलाहबाद की संधि से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को व्यापारी से शासक बनने में देर न लगी। देश की अनिश्चित स्थिति से लाभ उठाकर धीरे धीरे अंग्रेजों ने बंगाल बिहार अवध, में तो राजनीतिक सत्ता का सूत्र अपने हाथों में ले ही लिया था टीपू सुलतान, निजाम, मरहठे आदि दक्षिणी भारत के शासकों को भी प्रायः पंगु बना दिया था। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक दक्षिणी भारत और प्रायः पूरे उत्तरी पूर्वी भारत में उसकी तूती बोलने लगी थी। अंग्रेजी कम्पनी की विजयों ने भारतीय राजाओं और नवाबों में देशभक्ति की भावना भी उत्पन्न कर दी। पद दलित राज्य अंग्रेजों से खोई सत्ता छीनने की ताक में रहते थे किन्तु इस शताब्दी के पूर्व तक पंजाब और राजस्थान के राज्यों तक अंग्रेजी राजनीति की पहुँच नहीं हो सकी थी। पंजाब के लाहौर पटियाला, नाभा, कपूरथला, जींद, रोपड आदि और राजस्थान के जोधपुर बीकानेर, भरतपुर, अलवर आदि राज्यों की राजनीति का संचालक सूत्र इसी शताब्दी में विदेशी सत्ता को उखाड फेंकने के कई संगठित प्रयास भी हुए। वलौर का विद्रोह और १८५७ ई० का स्वतन्त्रता संग्राम एसे ही प्रयत्न थे। परन्तु अंग्रेजों के संगठन और अनुशासन के आगे भारतीय राजाओं के असंगठित और अस्तव्यस्त प्रयास कृतकार्य नहीं हो सके। इस समय तक प्रायः समस्त भारत में अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो चुका था। अंतिम मुगल सम्राट बहादुरशाह रंगून में कैद था और अन्तिम लाहौराधिपति दलीपसिंह इङ्गलैण्ड में अंग्रेजों की निगरानी में जीवन काट रहा था।

इस राजनीतिक परिवर्तन का प्रभाव देश की सांस्कृतिक स्थिति पर भी पड़े बिना न रह सका। अठारहवीं शताब्दी तक तो हिन्दू मुस्लिम संस्कृति और धर्म ही परस्पर सम्पृक्त हुए थे। अब ईसाई धर्म और यूरोपीय संस्कृति ने देश के जीवन में प्रवेश करना आरम्भ कर दिया था। अंग्रेजी शिक्षा और संस्कृति ने देश के उच्च वर्ग को पर्याप्त प्रभावित किया। मध्ययुगीन जीवन हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों के सम्मिलन के फलस्वरूप प्रत्येक क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रियाशीलता से पूर्ण होगया था, परन्तु तब भी वह मन्दगतिपूर्ण एवं विस्तार भार से बोझिल था। इस तीसरी संस्कृति ने आकर उस मध्ययुगीन

बोझिलता को पूरी तरह झकझोर कर खड़ा कर दिया जिसमे भारते दु युगीन साहित्यिक राष्ट्रीयता का जन्म हुआ। राजमहलो म प्रस्फुटित और पल्लवित होने वाली रीतिकविता का रंग फीका पडने लगा और शन-शन वह भवनो की वलासिक चहारदीवारी से बाहर भाकने को विवश हुई।

रीतिकाव्य की स्थिति— रीति कवि राज्याश्रित थे। परम्परानुसार देशी दरबारो म पुराने विषयो पर कवितायें लिखी जाती रही। इन कवियो के आश्रयदाता भारतीय थे अग्रेज नही। अत कवियो ने पूव परम्परा के अनुरोध स्वरूप उनके प्रशस्ति गायन किये और शृ गारी रचनायें लिखी। भले ही उपमान बदल गये, परन्तु उनके मन और 'मनोज नही बदले—कचन रचित राज नूपुर अनूप क्यो बाज बजें भू पर मनोज अग्रेज के।[1] अग्रेजों सम्बन्धी ऐसी अनेक उक्तिया तत्कालीन साहित्य म मिलती हैं[2] परन्तु यह अपवाद स्वरूप ही मानी जानी चाहिये। 'सामान्यत कविगण प्राचीन विषय और शैली ग्रहण कर काव्य रचना करते रहे। अभी उन्होने ईस्ट इण्डिया कम्पनी और भारतीय नरेशो के सघर्ष को अथवा किसी नवीन विषय को अपनी काव्य रचनाओ का स्वतन्त्र विषय नही बनाया था'।[3] ग्वाल कवि ने अपने वीर काव्य विजय विनोद' म अनेकत्र 'कम्पनी' कासिल' और कलकत्ता के 'लाट साहब' के प्रासगिक सन्दर्भ अवश्य दिये।[4] सेवक कवि ने अग्रेजों की सहायता करने के लिये अपने आश्रयदाता हरिशकर सिंह की प्रशसा म छन्द रचे[5] और बिहारी सिंह ने—चिरजीवों सदा विक्टोरिया रानी[6] आदि लिखकर अग्रेजों की प्रभुता के गुण गाये। बसवाडे के कवि दुलारे ने राजा बेनी माधवसिंह को उसकी अग्रेजी सेवा के लिये यह लिखकर भर्त्सना की- 'तुम तौ जाय अग्रेजन मिलिहो हमहू का भगवान'।[7] कवि बजरग ब्रह्मभट्ट ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से बहादुरी से लडने के उपलक्ष मे एक राणा की प्रशसा भी की थी।[8] ऐसी उक्तिया और कुछ के नये विषय इस शताब्दी के कुछ कवियो ने अपनाये अवश्य, परन्तु ये सब प्रयोग इस युग के रीति

---

१ चन्द्रशेखर वाजपेयी पटियाला—नखशिख।

२ देखिये इस शोध प्रबन्ध का द्वितीय अध्याय—रीतिकाव्य के प्रतिपाद्य विषय और प्रवृत्तियाँ।

३ उन्नीसवीं शताब्दी—पृष्ठ ३१

४ देखिये इस शोध प्रबन्ध का सप्तम प्रकरण ग्वाल के प्रतिपाद्य विषय और प्रवृत्तियाँ।

५ वही।

६ वही।

७ वही, पृष्ठ २७२।

८ वही।

काव्य के खारी सागर मे मीठे जल की कतिपय बूदो के समान ही कहे जाने चाहिये ।

वास्तव म अभी भी रीति की प्राचीन शृ गार-रस निरूपण और नर प्रशसा आदि की परम्परा का ही कविगण अनुगमन कर रहे थ । आश्रय दाताओ की मनोवृत्ति म अभी कोई परिवतन नही आ सका था अत कवियो के पास रीति-रचना करन के अतिरिक्त अ य कोई विकल्प भी न था ।

उन्नीसवीं शताब्दी का रीति काव्य—जहा तक गुण का प्रश्न है अठारहवी और उन्नीसवी शताब्दी के रीति काव्य म प्राय कोई भि नता दिखाई नही देती । हाँ मात्रा और विस्तार म आलोच्य शता दी का काव्य पूववती का य से कुछ अशो म अधिक वृद्धिगत दृष्टिगोचर होता है । इसका कारण सम्भवत यह था कि कविगण परम्परा से इस का य के सृजन म अधिक दीक्षित हो गय थे, सस्कृत और हिन्दी के लक्षण साहित्य का उन्हे पर्याप्त ज्ञान हो गया था तथा आदश रूप म उनके सामने हिन्दी का पूरा रीतिवाङमय था । साहित्य के सूक्ष्म निरीक्षण से प्रकट होता है कि इस शताब्दी के कवियो ने अठारहवी शताब्दी के कवियो के सभी प्रकार के ग्र थो की तुलना म कही अधिक ग्रन्थ लिखे । इनकी गणना इस प्रब ध के द्वितीय अ याय म की गई है । जहाँ तक रीति के सर्वांग निरूपक ग्र थो का प्रसग है इस युग म इनकी सख्या पहले के ऐसे ग्र थो से कही अधिक है । इनमे स कुछ के नाम हैं—साहित्य सुधानिधि[1] (जगतसिंह), काव्य रत्नाकर[2] (रणधीर सिंह), साहित्य सुधानिधि[3] (हरिप्रसाद), साहित्य सुधाकर[4] (सरदार कवि) साहित्य शिरोमणि[5] (निहाल कवि), साहित्य तरगिणी[6] (बशीधर), काव्य विलास[7] (प्रताप साहि), गोविन्दानन्दघन[8] (गोविन्द), साहित्यानन्द (ग्वाल) दलेल प्रकाश[9] (थान कवि), का यविनोद[10] (प्रतापसाहि)[11] आदि । सस्कृत के 'काव्य प्रकाश' के दो हिन्दी अनुवाद भी देखन म आय । एक है धनीराम कृत 'काव्य प्रकाश'[11] और दूसरा रामजन कृत 'का य प्रभाकर'[12] ।

१ खो० रि० १९०९ १२७ ए, १९२० ६४ ए बी १९२३ १७९ एन एम १८२६ १९२ बी । २ वही, १९०६ ३१६ बी १९२३ ३५२ ।
३ वही, १९२६ १७० ए,बी । ४ वही १९२० १७४ ।
५ वही, १९०३-१०८ । ६ वही १९२० १२ ।
७ वही १९२६ ३५१ ए, बी, सी डी ई १८४१ ५१६ ।
८ वही १९३२ १८८, १९१२ ६५ १८०६ १२२ ए ५० २२ २ ।
९ वही १९०९ ३१७ १८२३ ४२७ १९२६ ४८० ।
१० वही १९०६ ९१,एच । ११ वही १९२३ ९८ ।
१२ वही, १९२६ ३९१ ए, बी ।

उक्त सभी ग्र थो की रचना उन्नीसवी शताब्दी म हुई। केवल रस निरूपक ग्रन्थो की सख्या भी इससे पूव लिखे ग्र थो से कई गुनी दिखाई देती है। अलकार और पिगल के ग्रन्थ भी पहले से सख्या मे कही अधिक लिखे गये। नायिका भेद और नखशिख पर रचे गये स्वत त्र काव्य ग्र थो की सख्या भी इस युग म आशातीत है।

ग्रन्थो की भाषा म तो पहल से कोई उल्लेखनीय परिवतन दिखाई नही दिया, परन्तु लक्षणो के निरूपण की शली म गद्य के कारण आशातीत अन्तर आगया दीखता है। इस शताब्दी के पूव के भिखारीदास आदि अचार्यो ने लक्षणो के स्पष्ट करने म छोटे छोटे गद्य वार्तिको का प्रासगिक रूप म आश्रय ग्रहण किया था, परन्तु इस युग म ग्वाल आदि कवियो ने पर्याप्त लम्बी-लम्बी गद्य वार्ताओ और टीकाओ द्वारा विषय बोध को हृदयगम कराने की चेष्टा की यही नही रसिकगोविन्द ने गोवि दान दघन' प्रतापनारायणसिह ने रसकुसुमाकर' एव प्रतापसाहि ने 'व्यग्याथ कौमुदी' मे अधिकाश लक्षण गद्य के माध्यम स ही समझाये। इससे पूव लक्षणो म गद्य का उपयोग प्राय नही ही हुआ। यह एक प्रकार से अभि यक्ति मे गद्य के महत्व का सकेत है, आधुनिक काल की एक विशिष्ट और यापक विधा है।

नीति म दीनदयाल गिरि का अयोक्ति कल्पद्रुम इसी शताब्दी की देन है। बोधा ठाकुर विशुद्ध प्रेम की परिपाटी के कवि भी इसी युग म हुए। पर घनान द की नेह की सच्ची पीर इनमे खोजने पर भी नही मिलती। रीति कवियो ने वीर का य भी लिखे थे। पूववर्ती भूषण, सूदन और लाल कवि वीर रस के प्रसिद्ध कवि है। उन्नीसवी शताब्दी ने भी वीररस के कई कवि और कई वीर प्रबन्ध प्रदान किये। पद्माकर की हिम्मत बहादुर विरुदावली चन्द्रशेखर वाजपेयी का 'हम्मीर हठ' ग्वाल का 'हम्मीर हठ' तथा विजय विनोद इस युग की वीर रस की प्रसिद्ध रचनायें हैं। इस काल म राजस्थान और पजाब के हि दी कवियो ने भी कई वीर काव्य लिखे।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उन्नीसवी शताब्दी का रीति काव्य एतत्पूर्वलिखित रीति-काव्य से कुल मिलाकर गुण और मात्रा मे उन्नीस दिखाई नही देता परन्तु बिहारी की सी सतसई और जसवन्त सिह के से 'भाषा भूषण' इस शताब्दी म नही लिखे जा सके।

आलोच्य शताब्दी के कतिपय प्रतिनिधि ग्रन्थो का सक्षिप्त धारान परिचय आगे की पक्तियो मे प्रस्तुत किया जा रहा है। इसम आलोच्य कवि ग्वाल के रीति निरूपक (सर्वांग रस अलकार, पिगल) रीतिबद्ध रीति-मुक्त, वीररस भक्ति ज्ञान वराग्य एव अनुवाद के काव्यग्रन्थो को **सम्मिलित** नही

किया जा सका है। इनका विवरण पृथक रूप म इस प्रबन्ध के छटे अध्याय म किया जायगा।

(अ) विविधाग निरूपण

गोविन्दान दघन[1]—लेखक–गोवि द नाटाणी[2] रचनाकाल स० १८५८ वि०[3]। रीति का यह एक अच्छा सवाग निरूपक ग्र थ है। इसके अवलोकन स ज्ञात होता है कि लक्षण निरूपण म सम्मिश्र शली को अपनाया गया है। लक्षण अधिकागत गद्य म रखे गये हैं और वे भी सम्मि त है। इसका कारण भ तर्सा य म ही मिल जाता है कवि को इसके द्वारा आचायत्व प्रदर्शन नहीं करना था। इसकी रचना तो उसन अपने भाई बालमुकुन्द के पुत्र श्रीनारायण को काव्य शास्त्र की शिक्षा देने के लिये की थी, जसा कि ग्रन्थ के इस दोहे स प्रकट होता है—

बेटा बालमुकु द को श्री नारायण नाम।
तासु पढन हित रसमई रच्यो ग्र थ अभिराम॥[4]

एसी स्थिति मे ग्र थ म कवि का पाडि य खोजने की चेष्टा निरर्थक होगी। सरलता और स्पष्टता लाने के लिये गोवि द ने अपने उदाहरणो के स्थान पर इधर पूववर्ती कवियो के प्रसिद्ध उदाहरणो का भी उपयोग किया है। अन्यत्र अपने उदाहरण भी रख हैं। जिन कवियो के उदाहरणो ने ग्रन्थ म स्थान पाया है, वे हैं केशव मनिराम अनात बिहारी सु दर कुलपति मुकुन्द दव सोमनाथ तथा काशीराम, कालिदास भूधर लाल कान्ह, गग, मतीराम सनापति। रीति निरूपण म भरताचाय का का य प्रकाश, विश्वनाथ का

---

१ हस्तलिखित प्रति, प्राप्ति स्थान-श्रीकृष्ण चत य पुस्तकालय वृन्दावन १।३।९ आकार २७½ सेमी × ११½ समी, पंक्ति प्रति पृ०ठ ४० पत्र सख्या ८०।

२ साहित्य मे रसिक गोविंद के नाम से प्रसिद्ध निम्बार्क मातावलम्बी जयपुर निवासी गोविंद नाटानी कवि का वास्तविक नाम गोविंद है, जो अतसक्ष्य क आधार पर ठीक है। डा० मातीलाल गुप्त का भी यही मत है देखिये मत्स्य प्रदेश को हिंदी साहित्य की देन' की पाद टिप्पणी पृ०ठ ३८ व ३८।

३ वसु सर वसु शशि १८५८ अब्द रवि शुभ पचमी वसत। श्रीगुविन्दानदघन वृदावन रसावत॥९॥ गोविन्दानदघन—प्रबध प्रबध।

४ वही १८।

साहित्यादर्पण, जयदेव कृत चन्द्रालोक और अप्पयय दीक्षित कृत कुवलयानन्द को कवि ने आधार रूप में ग्रहण किया है। लक्षण और उदाहरण स्वच्छ है। विस्तार और विमर्श से कवि बचा है। ग्रन्थ में १४४६ छन्द और ४ बड़े बड़े अध्याय हैं। जिनका नाम प्रबन्ध है। ग्रन्थ का आरम्भ—"श्री कुंजविहारी जी। अथ गोविन्दघन लिख्यत" के पश्चात स्वामी गोवर्द्धन देव के मंगलाचरण-कवित्त से होता है और समापन की पुष्पिका इस प्रकार है—इति श्रीमत् राधा सर्वेश्वर श्रीवृन्दावन चन्द वर चरणारविन्द मकरन्दपानानन्दित अलि रसिक गुविन्द कविराज विरचित श्रीमत् रसिक गोविन्दानन्दघने गुणालंकार निरूपन नाम चतुर्थो प्रबन्ध ॥४॥

वर्ण्य विषय मंगलाचरण, गुरुवंश वर्णन, कविवंश वर्णन, ग्रन्थ रचनाकाल और वृन्दावन शोभा वर्णन के पश्चात् कवि ने रसराज में नवरस का समाहार इन शब्दों में किया है—

ललित सिंगार परिहास बिन दूती मुख विरह निवेदन मे करुणा को साज है।
रुठिबे मे रुद्र सुरतोत्सव मे बीर कम्प मे विभत्स नय रद छत को समाज है॥
अद्भुत उलटि सिंगार सांत प्यारी के मनाये बिन पीको न सुहाइ कछू काज है।
दंपति बिहार चारु चंदन गुविंद संग सबैन सरस रसराज महाराज है॥१३॥
—गोविन्दानन्दघन

तदनन्तर रस निरूपण के अन्तर्गत पहले शृंगार और फिर इतर रसों का संक्षिप्त विवेचन किया गया है। संयोग और वियोग के लक्षण उदाहरण देकर कवि ने ५ प्रकार का वियोग शृंगार बताया है अभिलाषा, ईर्ष्या, प्रवास विरह, शाप। इनमें अभिलाषा के दो विभेद— १-दूती मुख और २ सखी मुख ईर्ष्या तीन विधि श्रवण दर्शन और अनुमान बताई गई है। परम्परानुसार विरह की दस दशायें गिनाई गई हैं। हास्य के छः वीर के चार और अद्भुत रस के चार भेद गिनाये गये हैं। रसों की एक दूसरे से उत्पत्ति का वर्णन भी इस प्रसंग में हुआ है। भाव की परिभाषा कवि ने इस प्रकार की है—'प्रधान विभिचारी भाव को वर्णन करे सो भाव। भाव के चारों भेदों के लक्षण देकर कवि ने देवरति, मुनिरति भावध्वनि राजरति भावध्वनि, रसाभास भावाभास, भावशांति भावोदय और भावसंधि के उदाहरण दिये हैं। विभाव अनुभाव और संचारी की परिभाषा कवि ने निम्नांकित लिखी है।

विभाव 'विशेष करिके रस को प्रगट करे सो विभाव।'
अनुभाव 'रस के अनुभव को प्रगट करें सो
संचारी 'नौहू रस में नियम बिन जे संचरें ते

रीति परम्परा के अनुसार कवि ने विभाव दो, अनुभाव नौ, सात्विक आठ, स्थायी नौ, सचारी ३३, रस दृष्टिया आठ और सचारियो की २० दृष्टियाँ गिनाई हैं।

ग्रथ मे नायक का वर्णन नायिका स पहले किया गया है, जिसका कारण इस प्रकार लिखा गया है—

प्रथम नायिका है जदपि, नायक कह्यौ सुजान।
ज्यो तरुआ पहले करत, पुनि अहिरिनि निर्मान ॥२॥ वही प्रथम प्रबन्ध।

नायक के दो विभेद १ पति और २ उपपति करके प्रत्येक के चार चार उपभेद और किये है १ अनुकूल २ दक्षिण, ३ धृष्ठ और ४ शठ। पति को मानी और चतुर (क्रिया और वाक्चतुर) दो प्रकार का और बताया गया है। सखा चार प्रकार के और नायक म ८ गुण गिनाये गये हैं।

द्वितीय प्रबन्ध मे परम्परानुसार नायिका भेद का वर्णन है जिनके भेद इस प्रकार किये गये हैं नायिका ३ प्रकार १ स्वीया, २ परकीया और ३ सामान्या।

स्वीया ३ प्रकार १-मुग्धा, २-मध्या और ३ प्रौढ़ा।

मुग्धा ५ प्रकार १ पूर्वावतीर्ण मदना २ पूर्वावतीर्ण मदन विकारा ३ रतीवामा, ४ मानकोविदा ५ अधिक लज्जावती।

मध्या ३ प्रकार १ विचित्र सुरता, २ प्रौढ़ स्मरा, ३-प्रौढ यौवना।

प्रौढ़ा ६ प्रकार १-कामा धा २ घन तारुण्या, ३-समस्त रसकोविदा, ४ भावोन्नता, ५-लब्धप्रीडा, ६-आक्रान्त नायिका।

मध्या और प्रौढा के तीन तीन अन्य भेद—१ धीरा, २ अधीरा, ३ धीरा-धीरा। इनके भी दो-दो और उपभेद है —१ ज्येष्ठा और २ कनिष्ठा।

परकीया के ७ भेद १ गुप्ता त्रिविधि, २ विदग्धा द्विविधि, ३ कुलटा, ४ लक्षिता, ५ अनुशयना और ६ मुदिता। इनके तीन-तीन भेद और किये गये हैं। ऊढ़ा और अनूढ़ा के आग तीन-तीन भेद और करके स्वीया और परकीया १६-१६ प्रकार की गिनाई गई हैं। इन सबके आठ आठ सूक्ष्म भेद और है। इन सभी के फिर उत्तमा, मध्यमा और अधमा तीन-तीन और उपभेद हैं। पुन दिव्या अदिव्या और दिव्यादिव्या करके नायिकाओ की गणना ११५२ की गई है। कही कही लक्षण न देकर उदाहरणों से ही काम चला लिया गया है। हाव-भाव और हेला अलकार शरीर म प्रकट बताये गये हैं और शोभा, कान्ति, दीप्ति माधुर्य, प्रागल्भ्य, औदार्य, धैर्य

का अनायास प्रगट होना बताया है। हाव के भेद भी परम्परागत है। भरत की अष्ट नायिकाओ को भी गिनाया गया है। २८ दूतियो के नाम और गुण बताकर नायिकाओं के समान ही उनके भेद किये गये हैं।

तृतीय प्रबन्ध मे दूपणा की परिभाषा करता हुआ कवि कहता है—'जद्यपि गुणालकार रस के उपकारक हैं, याते पहले निरूपण करिये योग्य है। तोहू दोष कहत हैं। काहे तें कि सम्पूर्ण कवि प्रथम दोष ही कहत आये हैं यातें।' दोष का लक्षण कवि ने इस प्रकार किया है—'मुख्यारथ कों न्यून करै सो दोष। मुख्यारथ रस है। रस के आश्रय तें वाच्य हू मुख्यारथ है। दोऊ के उपयोगत्व मे सब्द हू सब्दादि के वर्ण हू मुख्यारथ है। यातें मुख्यारथ कहिबे मे इन सबन को बोध होत है।'

कवि ने परम्परानुसार पदपदांशदोष (१६), वाक्य दोष (१८), अर्थ दोष (२५), रस दोष (१०) का वर्णन किया है। इनका आधार मम्मट का 'काव्य प्रकाश है। कही-कही इनके नामो मे अन्तर आ गया है, शेष वर्णन भाषा के कवियो के अनुसार ही हुआ है।

चतुर्थ प्रबन्ध मे गुण और अलकारो के भेदोपभेदो का निरूपण परिष्कृत गद्य मे हुआ है। वक्रोक्ति, अनुप्रास, यमक, श्लेष, चित्र, पुनरुक्तवदाभास शब्दालकारो के साथ साथ मम्मट, जयदेव और अप्पयय दीक्षित के अर्थालकारो का वर्णन किया गया है। केशव के अलकारों का भी इसमे विवेचन है।

गोविन्दानन्दघन रीति का प्रतिनिधित्व करने वाली एक प्रौढ और महत्वपूर्ण रचना है। पिंगल को छोडकर सभी अगो का इसमे सरल और सक्षिप्त समाहार है। दूसरे कवियो के लक्षणो पर टिप्पणी नहीं लिखी गई। कवि आचार्य शिक्षक के रूप में पर्याप्त सफल रहा है।

साहित्य सुधानिधि ले० जगतसिंह, रचनाकाल स० १८५८ वि०[1] ग्रन्थ मे ६३६ बरवै छन्द और दस तरगें हैं।

वर्ण्य विषय प्रथम तरग मे काव्य प्रयोजन, काव्य हेतु और काव्य भेद दूसरी मे शब्द स्वरूप निरूपण तीसरी चौथी और पाचवी तरगो मे अभिधा, लक्षणा और व्यजना शक्तिया एव गम्भीरा, कुटिला और सरला वृत्तियो का निरूपण है। छठी तरग मे शब्दालकार और अर्थालकार सातवीं मे माधुर्य,

१ संवत बसु सर बसु ससी अरु गुरुवार। शुक्ला पचमी भादों रच्यो ...

आज आर प्रसाद गुण, आठवी तरग म नवरस निरूपण है। इस प्रसग म पाच भाव माने गये हैं १–स्थायी २–सचारी, ३–विभाव, ४–अनुभाव और ५–सात्विक। नौ रसा और नौ स्थायिया का सक्षिप्त परिचय है। शृगार रसान्तगत नायिका भेद की चर्चा परम्परागत की गई है। नवी तरग म अति सक्षेप म पाचाली, लाट, गौडी और वदर्भी रीतियो का नामोल्लेख है। अत की दसवी तरग म काव्य दोष निरूपण प्रस्तुत किया गया है। कवि ने केवल १०० दोषा के अ तगत ही समस्त दोषा को मा यता दी है —

'ये सत दोष मुख्य हैं इन्हीं के अतरभूत मे और दोस जानिबो'॥

यह निरूपण अधिकाशत चन्द्रालोक पर आधृत है। दोषा की क्रम व्यवस्था और निरूपण शली वही सस्कृत की सी है। कही कही कवि ने मम्मट और जयदेव के लक्षण भी लिये हैं। जयदव के दोषाकुशो को मिथ्या मानता हुआ कहता है—

औ काहू न दोषाकुस कियो है। दोष कहिक फिरि दोष मिटाइ डारयौ है। जो कहिक मिटावनो हो ता दोष काहे को लिख्यौ। तातै दोषाकुस मिथ्या है।

दाष सत्य है। दोष विचारि कवित्त करिये याहि प्राचीन मत जानियो। जगतसिंह की यह धारणा शास्त्रीय रीति के विपरीत ही है क्या कि दोष के निरसन के उपरा त वह गुण हो जाता है। 'दोषे गुणत्व तनुत दोष या निरस्यति'। चन्द्रालोक २(४१) दोषापहार को किसी आचार्य ने मिथ्या नहीं कहा।

ग्रन्थ प्रणयन म कवि ने जिन आचार्यों से सहायता ली, उनके नाम ग्र थ म इस प्रकार वर्णित है —

चन्द्रालोक आदि है भाषा कौन। कहि साहित्य सुधानिधि बरन बीन॥
भरत, भोज औ मम्मट श्री जदेव। विश्वनाथ गोविंद भट्ट दीक्षितमेव॥
भानुदत्त आदिक मत करि अनुमान। दियो प्रगट करि भाषाकवित विधान॥

इससे प्रकट होता है कि कवि ने सस्कृत ग्रन्थो का विस्तृत अध्ययन किया था। चन्द्रालोक कुवलयानन्द आदि का कहीं २ अनुवाद भी दे दिया गया है, जिसे कवि स्वय स्वीकारता भी है। दोषा म वायस पक्ति मराल, वास्थूलत्तस और अन्ज अशा नामक दोषा के नाम जगतसिंह ने प्रथमवार दिये हैं। वायसपक्ति मराल का लक्षण देखिये—

मसत गामिनी भाषा भाषा मध्य। वायस पांति मरालिक दूषण सद्य॥

वास्थूलत्तम दाष की परिभाषा—

,प्रिथम बोल गुन बरनत पुनि परमाद। वास्थूलत्तम दूषन रहित सवाद॥

अब्ज अक्ष दोष—

मलि नयनि आपन ससि कहि पीत । अब्ज अक्ष दूषन सो जानो मीत ॥

कवि ने शब्दालकारों और अर्थालकारों में वीर रस पूर्ण उदाहरण दिये हैं। इन्होंने 'सग्रामोद्दाम हुक्रा, नामक नये अलकार की उद्भावना भी की है जिसका लक्षण यह लिखा है—

दल प्रति महलत्व कहि वहँ जस होइ। सग्रामोद्दाम हुकृति जानो सोइ ॥[1]

परन्तु लक्षण से ज्ञात होता है कि यह उत्प्रेक्षालकार मात्र है उदाहरण—

भानु प्रभा जस अहै निसब जानु। गई निसा तब जानौ सब्र मतिभानु॥[2]

इस प्रकार जगतसिंह में मौलिक उद्भावनाओं के स्थापित करने की चेष्टा का आग्रह अवलोकनीय है। डा० सत्यदेव चौधरी के मतानुसार वे या तो सामान्य कोटि की हैं या भ्रमपूर्ण[3]।

आचार्य और कवि के रूप में जगतसिंह सामान्य कोटि में ही आते है। कवित्व की दृष्टि से कवि को उत्कर्ष प्रदर्शन का अवकाश कम मिलता है क्योंकि इस ग्रन्थ में कवित्त सवैयों में न होकर वस्तु निरूपण करने जैसे छोटे छन्द में है। छन्दों की भाषा भाव और व्याकरण के सम्मत है।

काव्य विलास—प्रताप साहि रचनाकाल, स० १८८६ वि०। यह विविध काव्यांग निरूपक काव्य शास्त्रीय ग्रन्थ श्रावण मास की त्रयोदशी को सवत् १८८६ वि० को पूर्ण हुआ था। कवि ने इसका रचनाकाल निम्नलिखित दिया है—

१ ८ ८ ६

सवत ससि बसु बसु बहुरि, ऊपर षट पहिचानि ।

सावनमास त्रयोदसी सोमवार उर आनि ॥[4]

यह ११३६ छन्दों का विशाल शास्त्र ग्रन्थ है जिसका निर्माण कवि ने काव्य प्रकाश, काव्यप्रदीप, साहित्य दर्पण रसगगाधर, चन्द्रलोक कुवलयानन्द रस तरगिणी, रसमजरी आदि के अध्ययन-आलोडन के उपरान्त किया था। जैसा कि कवि स्वय लिखता भी है—

मत लहि काव्य प्रकास को काव्य प्रदीप सजोइ ।

साहित दपन चितसमुझि रस गगाधर सोइ ॥[5]

---

१ हि० सा० का बृहत इतिहास सम्पादक डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३६८।

२ वही पृष्ठ ३६८। ३ वही, पृष्ठ ३६६।

४ काव्य विलास, प्रतापसाहि छ० स० ११५२।

५ वही प्रथम प्रकाश-छन्द सख्या २।

ग्रन्थ में सात प्रकाश (अध्याय) हैं। प्रथम प्रकाश में कवि ने काव्य की परिभाषा काव्य के लक्षण, प्रयोजन, कारण शक्ति व्युत्पत्ति, काव्याभ्यास, काव्य के भेद उत्तम, मध्य और अवर काव्य का विभिन्न आधार ग्रन्थों के अनुसार विवेचन प्रस्तुत किया है।

द्वितीय प्रकाश में वृत्ति का लक्षण, लक्षणा के भेद—व्यंग के भेद गूढ़ तथा अगूढ़, व्यंजना का लक्षण, वाचक, लक्षक तथा व्यंजक व्यंग्य के भेदों की चर्चा है।

तृतीय प्रकाश का प्रतिपाद्य विषय है— ध्वनि तथा रस। रस के लक्षण में कवि ने भरत के सूत्र 'विभावानुभाव सचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्ति' के स्थायी भाव को व्यंग्य रूप मानकर इस प्रकार की है—

मिलि विभाव अनुभाव भत, मिलि संचारी भाव।
विग होत थाई जहा सोरस कहि कविराव ॥[1]

रस के लौकिक और अलौकिक भेद पारम्परिक ही हैं। संचारी भावों के प्रसंग में कवि ने भरत के ३३ संचारियों को ही मान्यता दी है। भाव निरूपणोपरान्त कवि शृंगार रस का वर्णन करता हुआ रीति परम्परा के अनुसार नायक और नायिका भेद का विवेचन प्रस्तुत करता है। आलम्बन-उद्दीपन प्रसंग वर्णन के पश्चात् विविध हाव निरूपण है। विप्रलम्भ शृंगार वर्णन के पश्चात् अन्य आठ रसों की भी प्रासंगिक चर्चा ने ग्रन्थ में स्थान पाया है।

चतुर्थ प्रकाश में गुणीभूत व्यंग्यान्तगत मध्यम काव्य का वर्णन है। पंचम व षष्ठ प्रकाशों में शब्दालंकारों का वर्णन है।

सप्तम प्रकाश में अर्थालंकार प्रसंग है जिसमें उपमा से हेतु तक के अलंकारों के लक्षण उदाहरण लिखे गये हैं। काव्य के गुण और दोषों का संक्षिप्त वर्णन भी इसी प्रकाश में है। यह ग्रन्थ शास्त्रीय दृष्टि से सामान्य कोटि का है।

(आ) रस निरूपण

जगतविनोद पद्माकर भट्ट रचनाकाल—सं० १८६२ वि० तथा सं० १८७० वि० के बीच।[2]

वर्ण्य विषय—जगत विनोद पद्माकर की एक प्रौढ़ शास्त्रीय रचना है। ग्रन्थ में कुल ७३१ छन्द हैं जिनमें ४६७ दोहा १३४ कवित्त, १२७

१ वही, तृतीय प्रकाश—छन्द संख्या १२५।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायणसिंह—पृ० ११५।

सवया और ३ छप्पय हैं। आरम्भ मे १ दोहे म मगलाचरण, दूसरे म आमर वणन, ३ से ६ तक के छदो म राजा जगतसिह की प्रशस्ति, ७ से १० तक के दोहो म ग्रन्थ-हेतु और ग्रन्थ विषय की चर्चा है। दोहा सख्या ७३१ म पुन ग्रन्थ का कारण वर्णित है। शेष ७२० छन्दो मे नायक-नायिका भेद और नवरस का वणन है। रसो म शृगार का वणन प्रधानता से किया गया, शेष रस सक्षेप रूप मे हैं।

कवि ने नायिका का लक्षण इस प्रकार लिखा है —

रस शृगार को भाव उर, उपजहि जाहि निहारि।
ताहो को कोव नायिका बरनत विविध प्रकार॥[1]

सस्कृत म काय भेद म नायिकाओ के आठ रूप माने गये हैं पर हिन्दी म बहुत पूव स ही दस नायिकाओ का निरूपण होता आया है पद्माकर ने भी हिन्दी की परम्परा के अनुसरण पर दस नायिकाओ का ही निरूपण किया है।

कवि ने ये नायिकाए इस प्रकार गिनाई हैं —

प्रोषित पतिका खण्डिता, कलहांतरिता होय।
विप्रलब्ध, उत्कंठिता, बासकसज्जा सोय॥
स्वाधिन पतिका हू कहत, अभिसारिका बखानि।
प्रगट प्रावत्स्यत् प्रेयसी, आगत पतिका जानि॥—जगत विनोद

नायक की परिभाषा कवि ने इस प्रकार लिखी है —

सुदर गुन मंदिर जुवा, जुवति विलोक जाहि।
कविता राग रसज्ञ जो, नायक कहिये ताहि॥—वही

नायको क भेदोपभेद पारम्परिक ही रखे गये हैं। इसी प्रकार दूती-भेद म भी परम्परा का निर्वाह है।

उद्दीपन प्रसग में षडऋतु वणन के ११ कवित्त और एक सवया के सुदर उदाहरण दृष्टव्य हैं। बसन्त के ४ वर्षा के ३, शरद के २ हेमन्त के २ और ग्रीष्म का १ छन्द हैं। शिशिर का कोई छन्द नहीं।

कवि ने जम्भा सहित नौ सात्विक भाव बताये हैं —

स्तम्भ स्वेद, रोमाच कहि, बहुरि कहत स्वर भग।
कप, बरन बवर्ण्य पुनि,आसु प्रलय प्रसग॥
अतगत अनुमान मे आठहु सात्विक भाव।
जम्भा नवम बखानहीं जे कवीन के राव॥ —वही

---

१ जगत विनोद—छन्द सख्या ११।

तत्पश्चात् १–खडिता २–कलहा तरिता, ३–विप्रलब्धा, ४–उत्कण्ठिता ५–वासकसज्जा, ६–स्वाधीन पतिका, ७–अभिसारिका और ८–विरहिणी ये आठ प्रकार की नायिकाओ का वर्णन है। रस मजरी की प्रोषित भर्तृका शब्द द्वारा विरहिणी बना दी गई हैं। शेष सब आधार भानुदत्त का ही लिया गया है। नायक के भेद १–पति, २–उपपति और ३–वैशिक आदि भेद भी रसमजरी के आधार पर मिलते है।

तदुपरान्त कवि ने रस प्रकरण को उठाया है। रस कविता का सार और रस म भाव प्रधान होता है। भाव मनोविकार माना गया है। कवि भाव का लक्षण इस प्रकार लिखता है —

> इष्ट वस्तु अनुकूल है जहाँ मगन मन होइ ।
> ताकी इच्छा वासना प्रगट भाव है सोइ ।।[1]

भाव चार प्रकार के हैं १–विभाव, २–स्थायी भाव, ३–अनुभाव और ४–सचारी भाव। अनुभाव और सचारी की परिभाषाए अति सक्षिप्त और परम्परागत ही है

> जे रस को अनुभव करै ते अनुभाव बखानि ।
> बहुविधि बिहर रसन मे त सचारी जानि ।।[2]

रस निष्पत्ति म भरतमुनि के सूत्र विभावानुभाव सचारिसयोगाद्रस निष्पत्ति' को आधार मान कर लिखा गया है —

> लहि विभाव अनुभाव अरु सचारिन के सग ।
> वत्त मान थिरभाव जो, सो रस जान अभग ।।[3]

ग्रन्थ म आगे चल कर नौ रसों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। शृगार का विस्तृत और शेष रसो को चालू पद्धति अपनाई गई है। भाव वर्णन म कवि रस तरगिणी स अधिक प्रभावित रहा है। ७४७ वें छन्द म ग्रन्थ रचना काल का उल्लेख करके ग्रन्थ की पुष्पिका इस प्रकार दी गई है—

स्वस्ति श्रीमत् सकल महिमडलाखण्डल खडमडली विहडन विपच्छ मत खड प्रचड मारतड प्रताप नताप हरन सरनागत सुवेस दस दसाधिनायगन सवित सुरेस साम्राज्य सुख पूर्ण चन्द्र वमावतम श्री मन्महाराजाधिराज रामसिंह कुल मडल गरीब नवाज महाराज राजगान महाराजाधिराजेस्वर श्री ५ महाराज नरेन्द्र सिंहानामगामिन चन्द्र सेखर कृत रसिक विनोद समाप्त सुभमस्तु ।

---

१ रसिक विनोद–छन्द सख्या २४१। २ वही छ० स० २४४।
३ वही–छ० स० ३८७।

व्यग्याथ कौमुदी-प्रतापसाहि, रचनाकाल स० १८८२ वि०। इसका रचनाकाल निर्देश कवि ने ग्रथ मे इस प्रकार किया है—

१ ८ ८ २
सवत ससि वसु वसु सु द्व, गति असाढ को मास।
किय विचारय कौमुदी सुकविप्रताप प्रकास[1] ॥

वर्ण्य विषय —ग्रथ मे ध्वनि काव्य मे नायिका भेद का वर्णन किया गया है, व्यग्याथ कौमुदी कवि की एक अनूठी रचना है। नायिका भेद तो इसका प्रधान वर्ण्य विषय है ही इसमे व्यग्याथ और अलकारो को मुख्य विषय की पृष्ठभूमि मे चातुर्य के साथ रखा गया है। कवि व्यग्य प्रधान काव्य को उत्तम काव्य मानता है। वह लिखता है—

बिन जीव है कवित मे, सब्द अरथ गति अग।
सोई उत्तम काव्य है बरन बिग प्रसग[2] ॥

व्यग-शक्ति का निदर्शन कराना ही व्यग्याथ कौमुदी का उद्देश्य लिखा है—

करि कबिवन सौं बीनती सुकबि प्रताप सुहेत।
किय बिचारय कौमुदी बिग जानिबे हेत[3] ॥

ग्रथ के दो भाग हैं—मूल भाग और वृत्ति भाग। मूल भाग मे कुल १३० छन्द हैं। ग्रथारम्भ गणपति की वन्दना से होता है। तत्पश्चात १४वें छन्द तक अभिधा, लक्षणा और व्यजना शक्तियो और अलकारो का सक्षिप्त निर्देश किया गया है। १५वें छन्द से १२५ तक मूल विषय नायिका भेद का निरूपण है। कवि ने सखी दूती दर्शन हाव और भाव का वर्णन छोड दिया है। अतिम पाच छन्दो मे ग्रन्थ रचना प्रयोजन और रचनाकाल का उल्लेख मिलता है। कवि का नायिका भेद निरूपण का आधार आचार्य भानु मिश्र हैं। वृत्ति भाग मे कवि ने गद्य मे मूल ग्रथ के उदाहरणो से सम्बन्धित नायक नायिका, शब्द शक्ति और अलकारो के भेदोपभेद समझाये हैं। अधिक स्पष्टता लाने के उद्देश्य से पद्यबद्ध लक्षण भी दिये गये हैं। रीति की परम्परा में यह ग्रथ अपने प्रकार का एक ही है। कवियो ने पद्यो के साथ वार्तिको का प्रयोग अवश्य किया है परन्तु पृथक से एकत्र गद्य मे लक्षण-उदाहरणो को बताने वाले प्राचीन साहित्य मे कम ही ग्रन्थ हैं। जहा तक विषय वर्णन का प्रसग है कवि ने भानुमिश्र के अतिरिक्त व्यग्याथ

१, व्यग्याथ कौमुदी-प्रतापसाहि छ० स० १२६ २ वही-छन्द सख्या ५।
३ वही-छन्द सख्या ६।

विवेचन मे मम्मट के काव्य प्रकाश[1] का भी आधार बनाया। साथ ही आगत पतिका को रसलीन गणिका के भेदों को कुमारमणि और अकबरशाह की परम्परा से ग्रहण किया है। लक्षणों के लिये कवि संस्कृत आधार ग्रन्थों का ऋणी है। उदाहरण उसके अपने हैं और अद्वितीय हैं विवेचन मे मौलिक सूझ हैं उदाहरणों मे व्यग्य के रत्न हैं। ग्रन्थ की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री विगाथ कौमुदी समाप्ता।

रस सागर —गोपाल राय[2] रचना काल स० १८८६ वि०। यह नायिका भेद का रस सम्बन्धी ग्रन्थ है। इसकी हस्तलिपि ८ इन्च×६ इन्च के आकार मे २७० पृष्ठों मे है। इसका रचनाकाल स० १८८७ है जो कवि ने ग्रन्थ मे इस प्रकार लिखा है—

ठारह स सत्तासिया, जेठ बदी रवि तीज।
कवि गुपाल बरनन करयौ रससागर को बीज॥

आरम्भ मे गणेश वन्दना का कवित्त ग्रन्थ नामकरण आदि का वर्णन है। यह ग्रन्थ ग्वाल के रसिकानन्द (र०का० १८७९) के नायिका भेद की वर्णन पद्धति से प्रभावित है। इस मे नायिका के वय गुण, प्रकृति आदि के अतिरिक्त वात्स्यायन और कोकोक के नायिका भेदों का भी आश्रय लिया गया है। चित्रिणी का लक्षण यहा उद्धृत किया जाता है—

काम के धाम मे लोभ कछू रति के जल मे मधगध सो होई।
मित्र के चित्र वह रति सौं, रति गीतरू नृत्य कवित्त मे भोई॥
चचल दिष्टरु चित्त अचचल भीनी गुपाल सुगध मे जोई।
चित्र विचित्र करै जो चरित्रन, चित्रिनी जासो कहे सब कोई॥

---

१ विश अथ अतिसय कठिन, को कवि पावै पार।
मम्मट कछुमत कछुसमुझि चित कीनौमति अनुसार॥
— वही छ० स० १२७॥

२ राजन के राजाधिपति पृथ्वीसिह सुभूप।
रजधानी श्रीकृष्णगढ राजतदुग अनूप॥१॥
४ १ ८ १
वेद ब्रह्मनिधि इन्दुवर सवत अवधि उदार।
श्रावण शुक्ला त्रयोदसि सयुत शुभ शशिवार॥३॥
दपति वाक्य विलास की पोथी सबसुखरास।
लिखि वृन्दावन मध्यम श्रीवृन्दावनदास॥४॥
ये वृन्दावन वासी थे —दम्पति वाक्य विलास पृष्ठ १२८।

विवेचन म मम्मट के का्य प्रका[1] को भी आधार बनाया। साथ ही आगत पतिका को रसलीन गणिका क भेदो को कुमारमणि और अकबरशाह की परम्परा से ग्रहण किया है। लक्षणा के लिय कवि संस्कृत आधार ग्रथा का ऋणी है। उदाहरण उसके अपने हैं और अद्वितीय हैं विवचन म मौलिक सूझ हैं उदाहरणा म व्यग्य क रत्न हैं। ग्रथ की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री विगाय कौमुदी समाप्ता।

रस सागर —गोपल राय[2] रचना काल स० १८८६ वि०। यह नायिका भेद का रस सम्बन्धी ग्रन्थ है। इसकी हस्तलिपि ८ इंच×६ इंच के आकार म २७० पृष्ठो म है। इसका रचनाकाल स० १८८७ है, जो कवि न ग्रथ म इस प्रकार लिखा है—

दारह स सत्तासिया, जेठ बदी रवि तीज।
कवि गुपाल बरनन करयो रससागर की चोज॥

आरम्भ म गणेश वन्दना का कवित्त ग्र थ नामकरण, आदि का वणन है। यह ग्र थ ग्वाल क रसिकानन्द (र०का० १८७९) के नायिका भेद की वणन पद्धति से प्रभावित है। इस म नायिका के वय गुण, प्रवृत्ति आदि के अतिरिक्त वात्स्यायन और कोकोक्त के नायिका भेदा का भी आश्रय लिया गया है। चित्रिणी का लक्षण यहा उदाहृत किया जाता है—

काम के धाम मे लोभ कछू रति के जल मे मधुगंध सो होई।
मित्र के चित्र यह रति सौं रति गोतरू नरव कवित्त में भोई॥
चचल दिष्टर चित्त अचचल भौनी गुपाल सुगध मे जोई।
चित्र विचित्र कर जो चरित्रन, चित्रिनी जासों कहे सब कोई॥

---

१ बिन अथ अतिसय कठिन, को कवि पाव पार।
मम्मट कछुमत कछुसमुझि दित कौनौमति अनुसार॥
— वही छ० स० १२७॥

२ राजन के राजाधिपति पृथ्वीसिंह मुभूप।
रजधानी श्रीकृष्णगढ़ राजतदुग अनूप॥१॥
८ १ ८ १
बेद ब्रह्मनिधि इंदुवर सवत अवधि उदार।
श्रावण शुक्ला त्रयोदसि सयुत शुभ शशिवार॥३॥
दपति वाक्य विलास की पोथी सवसुखरास।
लिखि वृन्दावन मध्यम श्रीव दावनदास॥४॥
ये वृन्दावन वासी ये —दम्पति वाक्य विलास पृष्ठ १२८।

नायिका भेद म विशेष विस्तार का आग्रह नही मिलता। पर भाषा कवि की जानी है और निरूपण स्वच्छ हुआ है। रसागार म शृगार रस का विशद और इतर रसा का चलता हुआ वर्णन है। शान्त रस का लक्षण कवि ने इस प्रकार दिया है—

कथा की रतन सतसग सिद्ध साधन की।
गुरु तपोवन ए विभाव मन हरन॥
सब मे समान ज्ञान रोम अश्रु अनुभाव।
धृति मति हर्ष रोत भाई भाव धरन॥
सुकवि गुपाल सुद्ध सुक्ल है रग देव।
गणराय निसा अस्थायी साति करन॥
होत तत्व ज्ञान निरवेद उर आनि।
तहाँ कवि गुन मान जानि सांतिरस बरन॥

शान्तरस वर्णन के साथ ही ग्रन्थ का समापन हो जाता है।

गोपालराय का लक्ष्य एक सरल और सुबोध लक्षण ग्रन्थ लिखने का ही रहा प्रतीत होता है आचार्यत्व प्रदर्शन का नही। लक्षण और उदाहरणो की भाषा सरल और स्वच्छ है। विवेचन म संस्कृत और भाषा के आचार्यो क मतो को कवि ने नही परखा जिसकी उस जैसे परवर्ती कवि से अपेक्षा थी। नायक नायिकाओ का वर्णन हिन्दी रीति परम्परा के अनुसार हुआ है। इससे प्रकट होता है कि कवि का संस्कृत का अध्ययन अधिक विस्तृत नहीं था।

रस चन्द्रिका —हस्तलेख रचनाकाल स० १८६० के लगभग। यह मूलत शृगार रस क अन्तर्गत नायक–नायिका भेद का निरूपक ग्रन्थ है, जो दोहा, कवित्त और सवैया छन्दो म लिखित है। शृगारेतर रसो का चलता वर्णन भी इसके अन्त म मिलता है कवि क नायिका भेद निरूपण का आधार श्री रूपगोस्वामी का 'भक्ति रसामृत सिन्धु' और 'उज्जवल नीलमणि' है जिसम शृगार क उज्जवल और मर्यादोचित रूप का ही कथन है। कवि गणेश वन्दना और राधा ठकुराइन के पदारविन्दो की अर्चना करके नित्यलीला स्थली वृन्दावन और कलिंदजा की अभ्यर्थना करता है। रस की परिभाषा कुलपति मिश्र से प्रभावित है।[२] नवरसो के नाम गिनाकर कवि ने शृगा-

१ कुंजन करत विहार सखी सेवत सुखदा नी।
रसिक गुविंद गुरु दई बताय वृंदावन राजी॥
—छन्द पयोनिधि छ० स० १

२ जगत अद्भुत सुख सदन, ब्रह्मानंद समान।
रसिकन को अवलंबहै, सोइ रस सुखदान॥
—रसचन्द्रिका प्रथम प्रभा छ० स० ६

रा तगत आलम्बन उद्दीपन विभावों तथा अनुभावों का वणन किया है। नायिका लक्षण आठो गुण के लक्षण रूप शील प्रेम कुल, वभव, भूषणादि का वणन किया गया है। स्वकीया और परकीया नायिकाओं के भेदोपभेद निरूपण मे कुलटा को छोड दिया है[1]। कवि न पद्मिनी आदि नायिकाओं के भी लक्षण उदाहरण दिय है। कुल नायिका गणना ११५२ है। नायक के भेदोपभेद अनुराग वणन उद्दीपनान्तगत षटऋतु वर्णन सखी और सखाओ के भेद दूती भेद अनुभाव, हावादि एव शृगारेतर रस वर्णन ग्र थ के अन्य प्रतिपाद्य विषय है। भयानक रस के उपरान्त तेरह प्रभा व ४५० छन्दों का यह ग्रन्थ समाप्त होता है। इसकी अपूणता देखकर प्रतीत होता है कि कवि इसे कदाचित पूण नही कर पाया। इससे यह कवि की अन्तिम कृति अनुमानित होती है। ग्रन्थ म रचना काल नहीं है। पर काव्य की दृष्टि से यह कवि की प्रौढ रचना है।

रस कुसमाकर प्रताप नारायण सिंह रचनाकाल स० १९४६ वि०। यह मूलत रस निरूपक ग्रन्थ है जिसम रस की स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार की गई है। कवि ने इसम अपने लक्षण तो गद्य म रखे और उदाहरणो म स्वरचित कविताओ के अतिरिक्त अन्य प्रसिद्ध कवियो के छन्द भी अगीकृत किये हैं। द्विजदेव केशव बिहारी, पद्माकर आदि के छन्द इनम प्रमुख है। ग्रन्थ १५ कुसुमो म विभक्त है। पहले कुसुम म अनुक्रमणिका दूसरे म स्थायी भाव तीसरे म सचारी, चौथे मे अनुभाव, पाचवे म हाव छटे म विभाव और सखा सखी, दूती आदि का वर्णन सातवें म ऋतु वर्णन—विशेषकर वसन्त के उदाहरण आठवें म उद्दीपन के उपादान—पवन चन्द्र चादनी पुष्प पराग और नवें से बारहवें कुसुम तक आलम्बन विभाव का वर्णन है जिसम सम्पूर्ण नायिका भेद का विवेचन आया है। तेरहवें से पन्द्रहवें कुसुम म रस का निरूपण किया गया है। दूतिया के विभाजन म बहिरगिनी अतरगिनी, व्यग्य विदग्धा और हितकारिणी चार भेद किये गय हैं। हास्य के छ पवन के तीव्र तप्त और दुगन्ध और भेद करके इनक उदाहरण नही दिये। सचारी ३४ है। बोधक और जभा के लक्षण और उदाहरण नही दिये गये। स्थायी भाव उत्साह के तीन भेद और किये गय हैं—१—बल विद्याप्रतापादि जनित २—आद्र तादि जनित और ३—दान सामर्थ्यादि जनित। वीर रस म केवल तीन भेद किये गये है—युद्धवीर २—दान वीर और ३—दयावीर। नायिका भेद रीति परम्परा के अनुसार विभाजित किया गया है। लक्षण और उदाहरण शास्त्रीय स्पष्ट और स्वच्छ हैं।

[1] बसक नायक की प्रीति गनका सू होय है सो रसाभास जानक कहो नहीं।
—रसचन्द्रिका—सप्तम प्रभा छ० स० १८

उक्त विवेचन से उक्त कवि की शास्त्रज्ञता एवं विद्वत्ता पर तो प्रकाश पड़ता है, यह भी सिद्ध होता है कि उन्होंने मौलिक उद्भावनायें उत्पन्न करने की भी चेष्टा की है। रस कुसुमाकर रस रीति का एक अनूठा ग्रन्थ है।

६ अलंकार निरूपण

पद्माभरण पद्माकर रचनाकाल सं० १८७० व ७८ के लगभग। यह अलंकार निरूपक ग्रन्थ है। डा० ब्रजनारायण सिंह ने इस पर अपना मत इस प्रकार स्थिर किया है—'जब हम पद्माभरण जयपुर में रचा जाना स्वीकार कर लेते हैं तो यह बात सिद्ध हो जाती है कि ग्रन्थ महाराज जगतसिंह की मृत्यु के पहले ही निर्मित हो गया होगा। इसलिये इस ग्रन्थ की रचना सं० १८७५ वि० के पूर्व अवश्य हो जानी चाहिए। जब हम जगत विनोद का रचनाकाल सं० १८७० के लगभग मानते हैं तो कवि ने इस ग्रन्थ की रचना निश्चित रूप से सं० १८७० वि० और १८७८ वि० के बीच करली होगी[1]।

वर्ण्य विषय इसमें कुल ३४४ दोहे हैं जिनमें आरम्भ का एक मंगलाचरण और अन्त का एक दोहा ग्रन्थ रचना के उद्देश्य का है। शेष छन्दों में अलंकारों का वर्णन है। कवि ने समस्त अलंकारों को न लेकर अर्थालंकारों का ही निरूपण किया है। शब्दालंकार और उभयालंकार का संकेत इस एक दोहे में देकर उपमालंकार प्रसंग छेड़ दिया है —

> सब्दहु तें कहुं अर्थ तें, कहूं दुहु तें उर आनि।
> अभिप्राय जिहि भांति जहं, अलंकार सो मानि॥[2]

कवि की अनेक अलंकारों में से प्रधान अलंकार चुनने की यह युक्ति अनूठी है—

> अलंकार इक थलहिं में, समुझि परं जु अनेक।
> अभिप्राय कवि को जहां, वहैं मुख्य गनि एक॥
> ज्यों विधि एक महल में बहु मंदिर इकमान।
> जो नृप के मन मे रुच, गनियतु वहैं प्रधान॥[3]

उपमा के भेदोपभेदादि से लेकर हेतु आदि अलंकारों का दोहा शैली में वर्णन है। तत्पश्चात् रसवत, प्रेयस, ऊर्जस्वित, समाहित, भावोदय, भावसंधि, भाव शबलता, प्रत्यक्ष, अनुमान आदि पचन्सो अलंकारों के भी लक्षण-उदाहरण दिये गये हैं। तीन अलंकारों के प्रसंग में बिहारी के दोहे भी उदाहृत किये

१ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ ११६।
२ पद्माभरण—दो० सं० २। ३ वही—छ० सं० ३ व

गय हैं। समृष्टि संकर के बाद कवि ने निम्नाकित दोहे से ग्र थ का समापन कर दिया है —

राधा माधव कृपा कहि लखि सुकविन को पथ।
कवि पदमाकर ने कियो पदमाभरन सुग्र थ ॥[1]

पद्माभरण के निर्माण मे कवि ने सस्कृत के 'चन्द्रालोक' और अप्पय्य दीक्षित की 'कुवलयानन्द' को आधार माना है। इन सस्कृत ग्रन्थो के आधार पर लिख गये जसवन्तसिंह के 'भाषाभूषण' बरीसाल के 'भाषाभरण' को भी दृष्टिगत रखा गया है। कवि बरीसाल से अधिक प्रभावित है। ससृष्टि सकर के उदाहरणो म 'भाषाभरण' के दोहो को ही उद्धृत किया है[2]। ग्रन्थ के दोहा क्रमाक २,३ और ४ को भाषाभरण के निम्नाकित दोहों स मिला कर देखिये—

कहु पद त कहु अर्थ त कहु दु हुन त जोइ।
अभिप्राय जसो जहा अलकार सो होइ॥
अलकार यक ठौर मे जो अनेक दरसाहि।
अभिप्राय कवि को जहा मो प्रधान तिनमाहि॥
ज्यों ब्रज म ब्रज बधुन की निरखत सजो समाज।
मनकी रुचि जापर गई ताहि लखत ब्रजराज॥[3]

परन्तु इसस पद्माकर की मौलिकता पर आच नही आती। लक्षणों की उदाहरणा स सगति भाषा की सुग्राह्यता पद्माकर म बरीलाल से कहीं अधिक है। आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के मतानुसार यह ग्रन्थ जसवन्त सिंह क 'भाषाभूषण की अपेक्षा बहुत स्पष्ट और सुग्राह्य अलकार ग्रन्थ है[4]।

भूषण भक्ति विलास इसके रचनाकाल स० १८१४ वि०। इसकी रचना फाल्गुन प्रतिपदा स० १८१४ वि० को की गई थी, जसा कि कवि ने ग्रन्थ के अन्तिम छन्द म उल्लेख किया है—

४ १ ८ १
बेद इन्दु नवनिधि बिसद ब्रह्मअक मधुमास।
हरिदेव सु की हों बिसद भूषन भक्ति विलास ॥३९८॥

---

१ पद्माभरण छ० स० ३४४।
२ पद्माभरण छ० स० ३३४, ३३८ ३३७ ३३८ ३४० और ३४१।
३ भाषा भरण बरीसाल।
४ हि० सा० का अतीत (द्वितीय भाग) पृष्ठ ५९४।

ग्रन्थ का प्रमुख प्रतिपाद्य अलंकार हैं। विषय निरूपण में कुवलयानन्द आधार है। कवि केशव से इतना प्रभावित है कि उसने केशव का दोहा ही ग्रन्थारम्भ में दे दिया है —

यदपि सुजात सुलच्छनी सुवरन सरस सुवित्त ।
भूषन बिन न विराजहीं कविता वनिता मित्त ॥२॥

प्रधानालंकार को देखने की विधि कवि ने नहीं बताई। वह इतनी गहराई में नहीं उतरा जितने अन्य आचार्य। वह केवल यह कह कर सन्तुष्ट हो जाता है —

अलंकार इकठौर मे ज्यों अनेक दरसाहि ।
कवि को आसै है तहा जे प्रधान तिनमाहि ॥३॥

अलंकारों मे कवि ने उपमा को प्रधान मानकर[1] केवल अर्थालंकारों का ही वर्णन किया है। अर्थालंकारों के वर्णन के उपरान्त कवि ने वृत्तियों का भी आनुषंगिक विवेचन किया है। कोमला वृत्ति का लक्षण और उदाहरण यहां दिया जाता है

लक्षण बिना मधुरता ओज बिन, कहि कोमला विख्यात ।
सुयो अनेकन ग्रन्थ के मत सौं वरने भात ॥

वही छं० सं० ३९६

उदाहरण भाग जग मोहनी के छवें पद कोमल कंज लगें किमि तात ।
रूप की रासि अनूप रची विधि ओप सची की लजात हैं जात ॥
है रति मे रति सी हरि देव जू जानत काम कलान की घातें ।
जाति बडी है बडे कुल की अरु नन बडे हैं बडी बडी बात ॥

वही छं० सं० ३९७

हरदेव सामान्य रीति कवि-आचार्य हैं। लक्षण और उदाहरण परिमार्जित और स्पष्ट हैं। कवि निरूपण में केशव से प्रभावित है। ग्रन्थ सामान्य कोटि का है। निरूपण पारम्परिक है। लक्षण-उदाहरण कवि के अपने हैं।

---

१ विविध भांति भूषनन मे उपमा जान प्रधान ।
तासों कविहरिदेव सह प्रथमहिं कहत बखान ॥

—भूषण भक्ति विलास छं० सं० ५।

२ रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन

— डॉ० ओमप्रकाश १९६५ ई० पृष्ठ ९३० ।

चित्र चन्द्रिका बलवान सिंह रचनाकाल सं० १८८६ वि०।[1] बलवानसिंह ने चित्र काव्य को लेकर इस ग्रन्थ की रचना की है। चित्रकाव्य और चित्रालंकार संस्कृत शास्त्र में हीन माने गये हैं। भाषा में केशव तथा देव ने इनका विवेचन किया। बलवानसिंह ने इनके वर्णन में जितने विस्तार और विशदता से काम लिया उतना संस्कृत वाले भी नहीं कर सके।

बलवान सिंह ने चित्रालंकार के तीन भेद १–शब्द, २–अर्थ और ३–संकर चित्र किये हैं —

अब सब्द चित्र बखानु पुनि अर्थ चित्रहि जानु।
संकर सुचित्रहिं भानु त्रय भेद चित्रहि आनु॥[1]

इन तीनों के निम्नांकित उपभेद और लिखे हैं —

१ शब्द चित्र वर्ण चित्र, स्थान चित्र स्वर चित्र, पद्माकार चित्र गति चित्र आकार बंध चित्र तथा गुणबंध चित्र।[2]

२ अर्थ चित्र एकाक्षरादि अर्थ चित्र प्रहेलिका सूक्ष्मालंकार, गूढोत्तर अपह्नुति, श्लेष और यमक।[3]

३ संकर चित्र पदार्थ संशयय यमक चित्र।[4]

ग्रन्थकार ने विषय को सुस्पष्ट बनाने के लिये गद्य टीकाओं का आश्रय लिया है नायक–नायिका तथा सखी–नायिकाओं के प्रश्नोत्तरों में चित्रों को बांधा गया है जिससे विषय का सौन्दर्य बढ़ गया है। चित्रों में जीवन के विविध उपादानों को बांधा गया है।

संक्षेप में चित्र चन्द्रिका' बलवान सिंह की भाषा काव्य शास्त्र में अनूठी देन है।[5]

भारती भूषण गिरिधरदास रचनाकाल सं० १८८० वि०। गिरिधरदास का यह अलंकार ग्रन्थ परम्परा के निर्वाहार्थ बना। इसमें सौ

---

१ चित्रचन्द्रिका बलवानसिंह पृष्ठ ३।
वही पृष्ठ १३८ की पादटिप्पणी में उदाहृत।

२ वर्ण स्थान स्वर गिनो, आकृति गति पुनिबंध।
चित्रभेद षट जानिये बरनत कविवर बंध॥ वही छ० ६।

३ वही पृष्ठ ३ व ५।

४ वही पृष्ठ १११।

५ रीतिकालीन अलंकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन पृष्ठ १४०।

अर्थालङ्कारों और अनुप्रास एव यमक दो शब्दालङ्कारों का विवेचन है। ग्रन्थाकार ने अर्थालङ्कारों म 'कुवलयानन्द' और शब्दालङ्कारो म 'साहित्य दर्पण' का अनुसरण किया है। *अन्त्यानुप्रास का भी वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत हुआ है।* इन्होने उपमावाचक शब्दो के दो भेद माने हैं। १–मूल शब्द और २–इतर। मूल शब्दो म लो, सा, से सी, सौ, सरिस, सम, समान, इव, तूल, एसो, ऐसे तथा इतर कोटि मे जिमि तिमि, जसोई, तसोई, जथा, तथा, ज्यो और त्यो हैं। गिरधरदास ने यह शब्द चयन संस्कृत से ग्रहीत किया है।[१]

ग्रन्थकार ने स्मरणालङ्कार का भेद नही लिखा। वस इसे दो प्रकार का बताया है। १–देखने से, २–सुनने से। गूढोक्ति के श्लेषयुक्त और विवृतोक्ति को शब्दाशक्तियुक्त तथा अथशक्तियुक्त दो-दो भेद किये हैं। इनके लक्षण नही दिये। भारती भूषण मे लक्षण और उदाहरण दोनों ही स्वच्छ और स्पष्ट दिये हैं। यह एक उत्तम कृति है।[२]

ई पिंगल निरूपण

वृत्त तरंगिणी राम सहाय दास रचना काल स १८७३ वि०।[३] यही आचार्यत्व की दृष्टि से पर्याप्त महत्व का है। डा० ब्रजनारायण सिंह ने इस की एक पूर्ण प्रति काशी नरेश के पुस्तकालय म देखी थी। लेखक को यह नही मिली। अत उन्ही के विवरण के आधार पर इसका परिचय प्रस्तुत किया जाता है।

गणेश दुर्गा और गुरुचरण वन्दना के अनन्तर कवि ने पिंगल की परिभाषा, गुरु, लघु, पताका, मर्कटी, मेरु सूची, कला आदि के भेदाभेद, उनकी परिभाषा और उदाहरण दिये हैं। नष्ट और उद्दिष्ट का भी सोदाहरण वर्णन है।

छन्दो का वर्णन दूसरी तरग म प्रस्तुत किया गया है। मात्रिक छदो के लक्षण और उदाहरण दिये हैं। तीसरी तरग म वर्णिक वृत्तो का सोदाहरण वर्णन किया गया है।

चतुर्थ तरग म कवि ने तुक का प्रसग उठाकर उसकी परिभाषा की है। स्थूल रूप म तुक के १–उत्तम, २–मध्यम और ३–अधम तीन भेद करके

---

१ रीतिकालीन अलङ्कार साहित्य का विवेचन पृष्ठ १४१।

२ वही पृष्ठ १४०।

३ सध्या सुधि सिधि विधु बरस, गोरी तिथि सुदि दूज।
सुराचाज बासर सुखद अष्ट घट मे गति सूज॥

उत्तम को तीन विभेदों में बांटा है। कवि ने तुक को और आगे समसरि विषमसरि आदि श्रेणियों में विभक्त करते हुए उनके लक्षण सोदाहरण दिये हैं। लाटिया, यामकी, सामान्य यामकी, वीप्सरि विशेष वीप्सरि, सामान्य विषमसरि, विशेष विषमसरि, सामान्य कष्टसरि विशेष कष्टसरि आदि का वर्णन भी किया है। इसी प्रकार अन्य तुकों का भी वर्णन है।

राम सहाय दास का आचार्यत्व इससे स्पष्ट है। ग्रन्थ का आधार शेष-नाग का पिंगल है।

डा० मनमोहन गौतम के अनुसार वृत्त तरंगिणी हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ पिंगल ग्रन्थ है।[1] शैली, विषय वर्गीकरण और निरूपण की दृष्टि से यह ग्रन्थ अति गौरवपूर्ण स्थान पाने का अधिकारी है। कवि ने आचार्यत्व को तत्परता से निभाया है। उसने अपने लक्षण देकर अपने ही उदाहरणों से सन्तोष नहीं किया बल्कि सूरदास जैसे सिद्ध कवि के उदाहरण दिये हैं और वार्तिका द्वारा उनकी विशेषताओं को स्पष्ट किया है। श्रेष्ठ ग्रन्थों के पद संस्कृत साहित्य से ज्यों के त्यों रख दिये हैं जिससे विषय विस्तार भी हुआ है और स्पष्टीकरण भी। तीसरी विशेषता है सूत्र-पद्धति में लक्षण और छन्द भेद लिखने की तथा सख्याओं का कूट पद्धति से लिखने की। चौथी विशेषता है हिन्दी छन्द शास्त्र को नये छन्द देने की। कवि ने वृत्त तरंगिणी में अन्य ग्रन्थों की तुलना में सर्वाधिक छन्द संख्या दी है।[2]

छन्द पयोनिधि हरदेव रचनाकाल सं० १८९२ वि०। छन्दों का वर्णन और प्रस्तार प्रस्तुत करने वाला यह अच्छा ग्रन्थ है। इसका रचनाकाल ग्रन्थ के अन्तिम दोहे में इस प्रकार लिखा है —

२ ८ ८ १
धरौ ननिधि सिद्धि ससि सवत सुखद उदार।
माघ शुक्ल तिथि पंचमी, रविनंदन शुभवार॥[3]

ग्रन्थ में कुल ८ तरंग और ५४४ छन्द हैं। प्रथम तरंग में केवल ६ छन्द हैं जिनमें मंगलाचरण और छन्द का लक्षण लिखा है। कवि ने छन्द शास्त्र को बड़ा ही गम्भीर विषय बताया है और उसे सरल बना देने का दावा भी किया है

---

१ हि० सा० बृ० इतिहास षष्ठ भाग पृष्ठ ४८९।

२ वही पृष्ठ ४९०।

३ छन्द पयोनिधि–हरदेव, सम्पादक–कन्हैया लाल शाह–प्रकाशक खेमराज श्रीकृष्ण दास बम्बई, अष्टम तरंग छ० सं० ५४४।

है अति पथ अगाध दियो सुगम सो ग्रन्थ करि ।
यह सो मम अपराध, क्षमा करो कवि बुद्धिवर ॥[१]

छन्द वेदांग है, प्रातःकाल ही इसका पाठ होना चाहिये

छंद वेद को अंग है कहैं मुनिन के वृंद ।
याते पढ़ियतु प्रात ही बरन नाग कविंद ॥[२]

ग्रन्थ के अंतिम ३ छन्दों में रचनाकालादि की सूचना देकर कवि ने इस प्रकार पुष्पिका लिखी है —

'इति श्री छन्द पयोनिधौ कवि हरदेव विरचितायाम पद्याधिकरण अष्टमो तरंग ॥८॥ इति छन्द पयोंधि समाप्त ॥[३]

अध्यायश ग्रन्थ का वर्ण्य विषय निम्नांकित है

द्वितीय तरंग गुरु लघु विचार, गुरु नामानि, द्वि गुरु नामानि, लघु नामानि ।

तृतीय तरंग गण निरूपण का शास्त्रीय विधान किया गया है ।

चतुर्थ तरंग अष्टांग वर्णन संख्या, मात्रा प्रस्तार, सूची, नष्ट, उद्दिष्ट मेरु, पताका, मर्कटी (अष्टपाति, दसपाति) मात्रा एकावली मात्रा पाताल चक्र, स्थान विपर्यय, संख्या विपरीत उभय विपर्यय, उभय विपरीत, उभय प्रस्तार आदि के लक्षण स्वरूप, लक्षण आदि ।

पंचम तरंग वर्ण अष्टांग, वर्ण प्रस्तार वर्ण सूची, वर्ण नष्ट वर्ण उद्दिष्ट, वर्ण मेरु, वर्ण पताका वर्ण मर्कटी (छ पंक्ति, आठ पंक्ति और दस पंक्ति) एकावली, पातालमर्कटी स्थान विपर्यय वर्ण प्रस्तार, नष्ट, उद्दिष्ट, वर्ण प्रस्तार ।

षष्ठ तरंग गणागण विचार, गणों के फल लक्षण, देवता, गण संख्या, फलाफल, वर्ण शुद्धाशुद्ध, वर्ण फलाफल ।

सप्तम तरंग में मात्रिक छन्दों का वर्णन और अष्टम तरंग में वर्ण वृत्तों का विवेचन प्रस्तुत हुआ है । विवेचन का आधार पिंगलाचार्य नागेश कवि है । भाषा में हरदेव ग्वाल कवि से प्रभावित हैं । उन्होंने ग्वाल का एक दोहा लक्षण अपने ग्रन्थ में उद्धृत किया है जो यह है —

षटकल चौकल जानिबो, पुनि इककल फिर दोइ ।
पुनि षट चौइक इम दुकल दोहा सुमतीसोइ ।[४]

---

१ वही ११२ २ वही ११३ ३ वही पृष्ठ २०७
४ वही ७।१२१ ।

हरदेव ने अपना दोहा लक्षण इस प्रकार बताया है

छ कल चार इकल दु कल प्रथम तीसरे पाय ।
दूजे चौथे दुक्ल लजि दोहा छद बनाय ॥[१]

हरदेव ने दोहा के २३ भेद एव २४६४६८ प्रस्तार गिनाए है।

पिंगल शास्त्र अत्यन्त कठिन और शुष्क है। कम ही आचार्यों ने इसे लिखा है। हरदेव ने सरल सुबोध और स्वच्छ भाषा म छन्द शास्त्र लिखकर इसके जिज्ञासुओं का बडा हित किया। इससे शास्त्र का सरलतापूर्वक ज्ञान किया जा सकता है। उदाहरण बडे स्वच्छ हैं। लक्षण स्पष्ट हैं।

उ रीतिबद्ध काव्य

अनुराग बाग दीन दयाल गिरि रचना काल स० १८८८ वि०। अन्तर्साक्ष्य म रचनाकाल का निर्देश निम्नाक्त दोहे म मिलता है

८ ८ ८ १
बसु बसु बसु ससि साल मे रितु बसत मधुमास।
रामजनम तिथि भौम दिन भयो सुबाग विकास ॥[२]

गिरिजी नीतिकार के रूप म प्रसिद्ध हैं। अनुराग बाग उनकी रीतिबद्ध रचना है जिसम अनुराग के बाग की कल्पना करके लाक्षणिक शैली द्वारा राधा माधव के भक्ति और अनुराग का काव्यमय वर्णन किया गया है। कवि इस बाग का माली है उत्थान के कवित्त अकुर, वत्सल भाव जननी यशोदा, माधव के ध्यानमय कवित्त ही दुमावली श्यामा के सखियो के कथन मोहन, मुसकान सुमन, प्रिय तथा प्रिया के सखियो के प्रति वचन कोकिल हरिदर्शन वर्णन बगल, राधा हरि की जोडी मजरी, सखी के सखो के प्रति वचन दोत्र कलित वक्रोक्ति के प्रश्नोत्तर, वणु के खडन मडन वाक्य सारिकाए विविध लीलायें बाग के लालित्य, बारहमास के दोहे मणिमय कूप नन्द प्रति उद्धव वचन शुक, ऋतु वर्णन पुलिन, निर्गुण खडन मकरन्द ब्रजबालाओ की उद्धव के प्रति अभिलाषा पराग उद्धव के द्वारा कृष्ण के सन्देश कथन सुगन्ध के ढेर, उद्धव द्वारा कृष्ण से राधा-ध्यानयना के भाव कथन ही फल है। कवि की कुण्डलियामय विनती ही बाग की शीतलता है आदि। ग्रन्थ पाच अध्यायो म विभक्त है जिनका नाम वेलार है। कुल छन्द सख्या ३७७ है।

---

१ वही ७।१२०।
२ अनुराग बाग दीनदयाल गिरि पृ० बनारस लायट प्रेस

वण्य विषय मगलाचरण के उपरान्त कवि ने एक स्वर चित्र और एक मानिक चित्र दिया है। ग्रथ वाटिका स्पष्ट कथन के अनन्तर वात्सल्य, ध्यान, पूर्वानुराग, रूपकातिशयोक्ति, सिहावलोकन, मुकरी, छकापह्नुति अलकार, श्लेषालकार आदि के कवित्त हैं। तदन तर रूपगर्विता से दूती वचन, श्रवण स्वप्न, चित्र और प्रत्यक्ष दशना की कुण्डलिया तथा होली, बशी, अन्तर्धान लीला आदि की कुण्डलिया हैं। तृतीय केदार म कृष्ण के मधुपुरी गमन समय के यशोदा के वात्सल्यपूरित भावो को काव्य का रूप दिया गया है। षट ऋतु वणन का वणन यहा गोपी-विरह म किया गया है। अन्त म श्लिष्ट षटऋतु वर्णन है चतुथ कदार मे उद्धव गोपी सवाद है और पाचवे पराग मे विनय क छन्द दिये गये हैं।

इसम भक्तिमूलक शृगार का वर्णन है। कवि का सन्देश निम्नाकित दोहे से ध्वनित होता है

सुमन सहित यह बाग है यामे सन्त बसन्त ।
सुखदायक सब काल मे, दुज नायक विलसन्त ।[१]

षटऋतु वणन, अलकार वणन तथा कतिपय नायिकाओ की मनो दशाओ के उदाहरणो के कारण यह रीतिबद्ध ग्रथो की कोटि म आता है। भक्ति के दोहे रीतिबद्ध रचना के रूप म सामान्य है। अनुराग बाग शृगार के भावुक वणनो के रत्नो स भरा है। कवि की भावुकता इतनी है कि इसस उनके भक्तकवि होने का भ्रम होने लगता है।

शृगार लतिका महाराज मानसिह द्विजदेव रचनाकाल स० १६४० वि० द्विजदेव व्रजभाषा के श्रेष्ठ कवि है। 'शृगार लतिका उनका प्रसिद्ध रीतिबद्ध काव्य है, जिस पर कई टीकाएँ हो चुकी है। भाव और कला का जसा सु दर समन्वय इसके छन्दो म है, वसा अ यत्र सुलभ नही। ध्वनि, रस और व्यग्य क एक से एक अनूठ उदाहरण ग्रन्थ मे उपलब्ध हैं।

कवि न बसन्तागम के वणन से ग्रन्थ की उत्थानिका बाधी है। जिसके अन्तगत राधा और कृष्ण के सयोग और वियोग वणन के छन्द है उनकी विविध लीलाओं के चित्र हैं। इस म उद्दीपन एव आलम्बन विभावो के समग्र उपकरणो की सु दर व्यजना की गई है, जिसम नायिका भेद क भावो की व्यजना उपलब्ध है।

---

१ वही ११४१।

नायिका के मुख की उपमा को शरद का मयक उसी दशा म पा सकता है जबकि नित्य प्रति पूना रहे और उसका कलक भी धुला हुआ हो। देखिए —

> निसदिन पूरन जगमग, आव धोइ कलक।
> जो तो वा मुख की प्रभा पाव सरद मयक ॥ ३३८॥ वही।

ऊ नीति काव्य

दष्टात तरगिणी दीनदयाल गिरि, रचनाकाल स० १८७८ वि०। कवि ने अत म इसका रचनाकाल इस प्रकार दिया है

> ८ ७ ८ १
> निधि मुनि वसु ससि साल मे फागुन मास प्रकास।
> प्रतिपद मगल दिवस को कीहो ग्रथविकास ॥[1]

बालकृष्ण की पया चारु के वणन से ग्रथ का मगलाचरण बनता है।

> पया पयां जह तहा विहरत अति आनद।
> मुख मुनील नवनीत जुत नौमि सुखद नदनद ॥[2]

दोहा शैली म कवि ने नीति वणन किया है। प्रथम पक्ति म नीति की बात कह कर दूसरी पक्ति मे उसका दृष्टात रखा है। कवि ने अपने अनुभव से विविध उक्तिया जुटाकर नीति का उपदेश दिया है। इसके प्रमुख विषय हैं—भक्ति वराग्य, उपदेश सत्सग–महिमा, कुसगति का दुष्परिणाम, सतो के गुण, उनकी महिमा, विद्या और नारि का प्रभाव, सतोष की महिमा, प्रिय और अप्रिय वाणी का परिणाम, परिश्रम की महिमा, सगठन की शक्ति, पुरुषार्थ महत्ता आदि। कवि ने सामासिक दोहा शैली म बहुत बडी बात सक्षेप म कह दी है।

अन्योक्ति कल्पद्रुम दीनदयाल गिरि, रचना काल स० १८१२ वि०। कवि ने ग्रन्थ म रचनाकाल का निर्देश इस प्रकार किया है

> २ १ ९ १
> करहिति निधि ससि साल मे माघमास सितपच्छ।
> तिथि बसतजुत पचमी रविवासर सुभ स्वच्छ ॥
> सोभित तहि औसर विमल बसि कासी सुरधाम।
> विरच्यो दीनदयालगिरि, कल्पद्रुम अभिराम ॥[3]

---

१ दष्टात तरगिणी–दीन दयाल गिरि छ० स० २०६

२ वही छ० स० १।

३ अन्योक्ति कल्पद्रुम–दीनदयाल गिरि बनारस लायट प्रस स० १९२६ वि० छद सख्या ७६ व ८०। शाखा चतुथ।

दीनदयाल गिरि ने अ योक्ति के माध्यम से नीति का सु दर निरूपण किया है। इसम चार शाखायें और कुल २६८ छ द है। कुण्डलिया इनका प्रिय छ द हैं। ग्रथारम्भ म श्लेषमय मगलाचरण तथा कल्पद्रुम अयोक्ति दो कुण्डलिया म लिखकर षट्ऋतु वणन किया किया गया है। पच तत्व, पवन, अनल, जल, भूतल, दिवाकर निशाकर, दीपक, रत्नदीप नीरज, नवरत्न, सागर, नद, नदी, सर कमल, मधुकर, हस, चक्रवाक, बक, मङ्क, कूप, भूधर चिता मणि, नालमणि, मुक्ता, रग, लोहा, कानन, वृक्ष, शालमली, अक, बास, दाडिम बबूर, रसाल, कदली, पलाश, च दन, तुलसी, करील, अशोक, चपक, मित्र, कपास, तुम्बका, गेंदा, गुलाब कुसुम शुक चातक, मयूर, चकोर, पतग, उलूक, वायस, वासा, सिह मातग, तुरग, कुरग जम्बुक, शूकर, शशक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, माली, कुलाल दरजी, नट रजक, दाहलटा, ग्वालिनी किरातिनी, पनिहारी, तमालिनी, कृषान, गडरनी, चोर खिलाडी, जौहरी, सौदागर, चित्रकार, छल, बजत्री, मृदग, शख, पाषाण, बाण रसना, नयन, श्रवण, कत्तरी पर अयोक्ति लिखी गइ हैं। यहा तक कि काम क्रोध, मोह, लोभ, दम्भ, अभिमान, विवेक, विचार विराग, स तोष, क्षमा, मन, प्रबोध, प्रशसा आदि मनोविकारो के माध्यम से भी नीति कथन किया गया है।

ग्रथ म पाच छन्द प्रयुक्त हैं जि हे कवि ने पचामत कहा है

कु डलिका सु घनाक्षरी सुखद सुदोहा वृत।
हर सवया मानिनी मिलि पचामत चित्त॥[1]

कल्पद्रुम नीति का वजोड ग्रथ है।

ए वीर काव्य

हिम्मत बहादुर विरुदावली पद्माकर, रचनाकाल स० १८४६ १८२६ वि०।[2] ग्रथ का विषय आश्रयदाता हिम्मत बहादुर का वीरतापूण यशोगायन है। इसम कुल २१२ छद है। ग्रथारम्भ म श्रीकृष्ण की वदना करके कवि अनूपगिरि (हिम्मत बहादुर) की विजय कामना करता है— नित नप अनूपगिरि भूप कह विजय देहु यदुवश मनि।[3] तदनतर १४ छदा म अनूपगिरि के शौय पराक्रम, दानवीरता, राजवभव एव वयक्तिक गुणानुवाद करता हुआ कवि उस युद्ध का वणन करता है जो उसके आश्रयदाता और

१ वही ४।८०।
२ कविवर पद्माकर और उनका युग डा०व्रजनारायण सिह पृष्ठ १०६।
३ हिम्मत बहादुर विरुदावली स० लाला भ

धूमधाम धुधरित भूमि असमान न सुज्झ ।
मनु घुमडि घनघोर दौरि दुहु ओर अरुज्झ ॥
तह तोडे चमक्कत घोर घहरात घमक ।
चड सार चहु ओर सुनत धुवधाम धमर्के ॥
गरजन मेघ तडप तडित बज्रसरिस गोला पर ।
आलाउद्दीन हमीर को मार परी तापन तर ॥[1]

ग्रथ का आरम्भ श्रीकृष्ण और महादेव की स्तुति से होता है। आगे के ४ दोहा म आश्रयदाता का परिचय, ग्रथ लेखन का कारण बताया है। तदनन्तर छ० स० ३६८ तक कथानक चलता है। अन्त म ग्रथ रचना काल का दोहा एव आश्रयदाता नरेन्द्र सिंह के लिए आशीवचन लिखे गये हैं। ग्रथ ४०३ छन्दा म पूर्ण हुआ है।

ऐ–रीतिमुक्त काव्य

ठाकुर के कवित्त रीति की स्वच्छन्द काव्य धारा म ठाकुर कवि जतपुर ने पर्याप्त काव्य सृजन किया था। इनका कोई निजी सग्रह-ग्रथ तो नहीं मिलता परन्तु लाला भगवानदीन द्वारा सम्पादित 'ठाकुर ठसक' प्रकाशित हुआ था। इसके अन्तगत ठाकुर की नीति, व्यवहार ज्ञान आदि के छन्दो के साथ साथ रीतिमुक्त विशुद्ध प्रेम परक छन्द भी सकडो की सख्या म उपलब्ध होते है। यह कवि सौन्दर्योपासक थे। ठाकुर ने कविता की निम्नाकित विशेषतायें बताई हैं

मोतिन की सी मनोहर माल गुहै तुक अच्छर जोरि बनाव ।
प्रेम को पथ कथा हरिनाम की बात अनूठी बनाय सुनाव ॥
ठाकुर' सो कवि भावत मोहि जो राजसभा मे बडप्पन पाव ।
पडित लोग प्रवीनन को जोइ चित्त चुरै सो कवित्त कहाव ॥[2]

राज्य सम्मान कविता की उत्कृष्टता की पहली विशेषता और पडित एव प्रवीणजना के चित्त को लुब्ध करना इसका दूसरा गुण ठाकुर मानते हैं। कविता हसी खेल नही है—डेल सो बनाय आय मेलत सभा के बीच लोगन कवित्त कीबो खेल करि जानो है।[3]

---

१ वही छ० स० २६१ पृ० ३१।
२ ठाकुर ठसक स० लाला भगवानदीन छ० स० १३, पृ० ५।
३ वही छ० स० १२ पृ० ५।

'ठाकुर ठसक' में १८२ छन्द ठाकुर के तथा १२ छन्द उनके पुत्र दरियावसिंह एवं पौत्र शंकर प्रसाद के संग्रहीत हैं। गणेश वन्दना से ग्रन्थ आरम्भ होता है। राम, ईश ईशविलक्षणता के छन्दों के उपरान्त निवेदन, काव्य रचना, निज स्वभाव, उपदेश, रूप वर्णन, संयोग वर्णन, अनुराग, वियोग वर्णन, बसन्त, होरी पावस वर्णन, देह गति, मनुष्यत्व, विधि विडम्बना, काल कुटिलता लोकोक्ति, उद्धव वचन, तुलसी समालोचना आदि के प्रसंगों पर छन्द लिखे गये हैं। सर्वत्र ठाकुर की प्रांजल परिपक्व भाषा, मजी हुई परिष्कृत शैली और तीव्र भाव व्यंजना द्रष्टव्य है।

ठाकुर कवि शृंगार की हाट लगाये हुए हैं परन्तु वे प्रेम की सच्ची पीर के ग्राहक पहले हैं। प्रेम के बजार में नैन-दलालों द्वारा प्रवीणों को परखवा कर जमा पर दाम लगाने के ही वे पक्ष में हैं

गुन गाहक सों विनती इतनी हक नाहक नाहिं ठगावने हैं।
यह प्रेम बजार के अंतर सो पर नैन दलाल अकावने हैं॥
'कवि ठाकुर' औगुन छोड़ि सबै परवीनन्नु पै परखावने हैं।
अब देखि विचारि निहारि कें माल जमा पर दाम लगावने हैं॥[1]

ठाकुर की प्रीति एकनिष्ठ और स्थिर है। चाहे जो हो वह अस्थिर नहीं हो सकती। देखिये

अब का समझावती को समझै बदनामी के बीजन बोय चुकी री।
इतनौ हू विचार करौ तो सखी यह लाज की साज तौ धोय चुकी री॥
'कवि ठाकुर' काम न मां सबकौ करि प्रीति पतिव्रत खोय चुकी री।
नकी बदी जो लिखी हुती भाल में होनी हुती सु तौ होय चुकी री॥[2]

कवि जिस नेह के बाने को ओढ कर चला है वह उसे सर्वथा निभाना है, चाहे उस की 'सुजान' कुछ भी करे। अनन्य प्रेम की यह झांकी घनानन्द के अतिरिक्त बस ठाकुर में प्राप्त है। कवि लिखता है

गति मेरी यही निसि बासर है चित तेरी गलीन के गाहने हैं।
चित कीन्हौं कठोर कहा इतनौ अरी तोहि नहीं मह चाहने हैं॥
'कवि ठाकुर' नेक नहीं दरसीं कपटीन को काह सराहने हैं।
मन भाव सुजान सोई करिये हमें नेह के नाते निवाहने हैं॥

---

१ वही छ० सं० २१ पृ० ७। २ वही छ० सं० ६० पृ० १५।
३ वही छ० सं० ५५ पृ० १४।

धूमकाम धुधरित भूमि असमान न सुज्झ ।
मनु घुमडि घनघोर दौरि दुहु ओर अरुज्झ ॥
तह तोडे चमक्त धार धहरात धमक ।
घड सोर चहु ओर सुनत धुवधाम धमर्के ॥
गरजन मेघ तडप तडित वज्रसरिस गोला पर ।
आलाउद्दीन हमीर को मार परी तोपन सर ॥[1]

ग्रथ का आरम्भ श्रीकृष्ण और महादेव की स्तुति से होता है। आग क ४ दोहा म आश्रयदाता का परिचय, ग्रथ लखन का कारण बताया है। तदनन्तर छ० स० ३६८ तक कथानक चलता है। अत म ग्रथ रचना काल का दोहा एव आश्रयदाता नरेन्द्र सिंह के लिय आशीवचन लिखे गये हैं। ग्रथ ४०३ छन्दो म पूर्ण हुआ है।

ऐ–रीतिमुक्त काव्य

ठाकुर क कविता रीति की स्वच्छन्द काव्य धारा म ठाकुर कवि जतपुर ने पर्याप्त काव्य सृजन किया था। इनका कोई निजी सग्रह–ग्रथ तो नहीं मिलता परन्तु लाला भगवानदीन द्वारा सम्पादित ठाकुर ठसक' प्रकाशित हुआ था। इसके अन्तगत ठाकुर की नीति, व्यवहार, दान आदि क छन्दो क साथ साथ रीतिमुक्त विशुद्ध प्रेम परक छद भी सकडो की सख्या मे उपलब्ध होते हैं। यह कवि सौदर्योपासक थे। ठाकुर ने कविता की निम्नाकित विशेषतायें बताई है

मोतिन की सी मनोहर माल गुहै तुक अच्छर जोरि बनाव ।
प्रेम को पथ कथा हरिनाम की बात अनूठी बनाय सुनाव ॥
'ठाकुर' सो कवि भावत मोहि जो राजसभा मे बडप्पन पाव ।
पडित लोग प्रवीनन को जोइ चित्त चुर सो कवित्त कहाव ॥[2]

राज्य सम्मान कविता की उत्कृष्टता की पहली विशेषता और पडित एव प्रवीणजनो के चित्त को तुष्ट करना इसका दूसरा गुण ठाकुर मानते है। कविता हसी खेल नहीं है—डेल सौ बनाय आय मेलत सभा के बीच लोगन कवित्त कीबौ खेल करि जानो है।[3]

---

१ वही छ० स० २६१ पृ० ३१।
२ ठाकुर ठसक स० लाला भगवानदीन छ० स० १३, पृ० ५।
३ वही छ० स० १२ पृ० ५।

'ठाकुर ठसक' म १८२ छन्द ठाकुर के तथा १२ छन्द उनके पुत्र दरियावसिंह एव पौत्र शकर प्रसाद क सग्रहीत है। गणेश वन्दना स ग्रन्थ आरम्भ होता है। राम, ईश, ईशविलक्षणता के छन्दो के उपरान्त निवेदन, काव्य रचना, निज स्वभाव, उपदेश, रूप वर्णन, सयोग वर्णन, अनुराग वियोग वर्णन बसन्त होरी पावस वर्णन, देह गति, मनुष्यत्व, विधि विडम्बना काल कुटिलता लोकोक्ति, उद्धव वचन, तुलसी समालोचना आदि के प्रसगो पर छन्द लिखे गये हैं। सवत्र ठाकुर की प्राजल परिपक्व भाषा, मजी हुई परिष्कृत शली और तीव्र भाव व्यजना द्रष्टव्य है।

ठाकुर कवि शृगार की हाट लगाये हुए हैं परन्तु व प्रेम की सच्ची पीर के ग्राहक पहल है। प्रेम क बजार म नेत्र-दलालो द्वारा प्रवीणो का परखवा कर जमा पर दाम लगाने के ही वे पक्ष म है

गुन गाहक सो विनती इतनी हक नाहक नाहि ठगावने हैं।
यह प्रेम बजार के अनर सा पर नन दलाल अकावने हैं॥
'कवि ठाकुर' औगुन छोडि सब परवीननु प परखावने हैं।
अब देखि बिचारि निहारि कैं माल जमा पर दाम लगावने हैं॥[1]

ठाकुर की प्रीति एकनिष्ठ और स्थिर है। चाहे जो हो वह अस्थिर नहा हो सकती। दखिये

अब का समझावती का समझे बदनामी के बीजन बोय चुकी री।
इतनो हू बिचार करी तौ सखी यह लाज की साज तौ धोय चुकी री॥
'कवि ठाकुर' काम न या सबको करि प्रीति पतिव्रत खोय चुकी री।
नेकी बदी जो लिखी हुती भाल मे होनी हुती सु तौ होय चुकी री॥[2]

कवि जिस नेह के बाने को ओढ कर चला है वह उसे सवथा निभाना है, चाहे उस की सुजान कुछ भी करे। अनन्य प्रेम की यह झाकी घनानन्द के अतिरिक्त बस ठाकुर म प्राप्त है। कवि लिखता है

गति मेरी यही निसि बासर है चित तेरी गलीन के गाहने हैं।
दित कौ हौं कठोर कहा इतनो अरी तोहि नहीं यह चाहने हैं॥
'कवि ठाकुर' नेक नहीं दरसौ कपटीन को काह सराहने हैं।
मन भाव सुजान सोई करिये हमे नेह क नाते निवाहने हैं॥[3]

---

१ वही छ० स० २१ पृ० ७। २ वही छ० स० ६० पृ० १५।
३ वही छ० स० ५५ पृ० १४।

वह प्रिय से दर्शन देने की जिस अनुरोधपूर्वक प्रार्थना करता है उस पर कोई भी बलिहार हो सकता है। देखिये

रोज न आइये तौ मनमोहन तौ यह नेकु मतौ सुन लीजिये।
प्रान हमारे तुम्हारे अधीन तुम्हें बिन देखें सु कसें क दीजिये॥
'ठाकुर' लालन प्यारे सुनो विनती इतनो प जहो चित दीजिये।
दूसरे तीसरे, पांचयें सातयें आठयें तौ भला आइबौ कीजिय॥[1]

नेत्र से नेत्र मिलने पर प्रेमियों की जो दशा होती है, इसका वर्णन ठाकुर इस प्रकार करते हैं

जब तें दरसे मन मोहन जू तब ते अखियां ये लगीं सो लगीं।
कुल कानि गइ भगि वाही घरी ब्रजराज के प्रेम पगीं सो पगीं॥
कवि ठाकुर नह के नजन की उर मे अनी आनि लगी सो लगीं।
अब गाम रे नाम रे कोऊ धरी हम सांवरे रंग रंगी सो रंगी॥[2]

आलोच्य शताब्दी के रीति काव्य के उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि कवियों में रीति परम्परा की सम्पूर्ण प्रवृत्तियों का आग्रह मिलता है। काव्य की भाषा और शैली अब तक पूरी तरह मज चुकी थी। काव्य शास्त्र के निरूपण में प्रौढ़ता पा ली थी। कवियों में विषय विस्तार और नवीन उद्भावनाओं की खोज की ललक पाई जाती है। रीति के क्षेत्र में यद्यपि किसी नवीन उद्भावना के दर्शन तो नहीं होते परन्तु विवेचन-गत निष्कर्षों में मौलिकता का आग्रह मिलता है। कवित्व के क्षेत्र में भी यह युग अपनी विगत शताब्दी से किसी प्रकार हेय नहीं दिखता।

---

१ वही छ० सं० ४८ पृ० १३।
२ वही छ० सं० ४३ पृ० १२।

द्वितीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रमुख प्रतिपाद्य और प्रवृत्तियाँ

२ | उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य के प्रमुख प्रतिपाद्य और प्रवृत्तियाँ

पृष्ठभूमि हिन्दी मे 'रीति' शब्द का प्रयोग संस्कृत से पृथक अर्थ मे हुआ है। संस्कृत म विशेष प्रकार की चमत्कारपूर्ण पद रचना रीति[1] मानी गई है। संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य वामन ने रीति को काव्य की आत्मा माना है[2] इनके अनुसार रीति शास्त्र के अंतर्गत केवल उन्ही ग्रन्थो का समावेश हो सकता है जिनम रीति को काव्य की आत्मा मान कर काव्य के स्वरूप का विश्लेषण किया गया हो। पर हिन्दी म रीतिशास्त्र का अर्थ व्यापक है और उसका प्रयोग विशिष्ट अर्थ म किया गया है। यहा 'रीति' को मात्र वर्णन परिपाटी, शैली, के पर्याय के रूप म ग्रहण किया गया है। हिन्दी मे रीतिशास्त्र का तात्पर्य उन लक्षण या सिद्धान्त ग्रन्थो से है, जिनम अलकार रस, रीति वक्रोक्ति, ध्वनि आदि के स्वरूप भेद प्रभेद, तत्व और अगों आदि पर विचार किया गया है। इनमे इन विषयो के निरूपण की रीति सर्व साधारण पर प्रकट की गई है[3]। डा० नगेन्द्र के अनुसार काव्य रचना सबधी नियमो के विधान को ही समग्रत रीति नाम दे दिया गया है[4]। अनेक कवियो ने अपने ग्रन्थो मे इस रीति या ग्रन्थ पथ शब्द का प्राय प्रयोग किया है[5]। अत संस्कृत म जहा यह शब्द रीति सम्प्रदाय का बोधक था वहाँ हिन्दी म यह शैली का प्रतिपादक बना। कवियो ने कविता लिखने की यह एक प्रणाली ही बना ली कि पहल दोहे म अलकार या रस का लक्षण लिखना फिर उसके उदाहरण के रूप म कवित्त सवैया लिखना। हिन्दी साहित्य

---

१ विशिष्टा पद रचना रीति -काव्यालकार सूत्र वामन १।२।६।

२ रीतिरात्मा काव्यस्य—वही, १।२।७।

३ हिन्दी साहित्य-द्वितीय खण्ड। स० डा० धीरेन्द्र वर्मा। रीतिशास्त्र —डा० भगीरथ मिश्र पृ० ४२२।

४ रीति काव्य की भूमिका डा० नगेन्द्र, पृष्ठ १४१।

५ कछु कवित पुरख की साजि सब समुझि लोक की रीति।
—चिन्तामणि -कविकुल कल्पतरु
रीति सुभाषा कवित की, बरनत मति अनुसार। वही

म यह एक अनूठा दृश्य प्रकट हुआ।[1] लगभग २०० वर्षों की सुदीर्घ अवधि में ऐसे शतशत रीति ग्रन्थों की रचना हुई, जिनमे रीति के विविध अंगों के लक्षणों एव उदाहरणों को दृष्टिगत रख कर काव्य की रचना की गई। लक्षणकारों को आचार्य कवि और एतदाधारित काव्य कर्ताओं को काव्य कवि कहा गया। पर वास्तव में ये दोनों ही कोटि के ग्रन्थकार रीति कवि थे। चिन्तामणि त्रिपाठी रीति लक्षणकार थे पर बिहारी केवल रीति काव्य कवि थे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने चिन्तामणि, जसवन्तसिंह बिहारी प्रभृति ५७ कवियों को रीति ग्रन्थकार माना है।[2] इस काल में रीतीतर विषयों पर कविता लिखने वाले कवियों

ख भाषा प्राकृत ससकृत, देखि महाकवि पथ। देव-काव्य रसायन।
अपनी अपनी रीति के काव्य और कवि रीति। वही।

ग समुझि सुरुचि भाषा कियौ ल और कवि पथ।
—भिखारीदास-काव्य निर्णय।

काव्य की रीति सिखी सुकविन सों देखी सुनीं सब लोक की बातें। —वही

घ सुकविन हू की कछु कृपा, समुझि कविन को पथ।
— भूषण-शिवराज भूषण

ड-वरनत मनरजन जहा, रीति अलौकिक होई।
—सूरति मिश्र काव्यसिद्धान्त।

च-रीति चारिहू देस का सो समास ते होइ।
—करन कवि-रस कल्लोल।

छ-ज ज पिंगल नाग, छन्द रीति जिन प्रगट किय।
—नन्दकिशोर-पिंगल प्रकाश।

ज-थोरे क्रम क्रम ते कह्यौं, अलकार की रीति।
—दूलह-कवि कुल कठाभरण।

झ-रीति कुवलयानन्द की कोन्ही भाषा भरण। —वरीसाल, भाषा भरण।

ञ-काव्य रीति जितनी प्रघट आनि करीं इकठौर।
—रणधीरसिंह-काव्यरत्नाकर।

ट-कवित रीति कछ कहत हौं व्यग अरथ चित लाइ।
—प्रतापसाहि-व्यग्यार्थ कौमुदी।

ठ-देखो कछु साहित्तमत, ग्रन्थ पथ सुख राम।
—ग्वाल-रसिकानन्द १।६२।

ड-काव्यन के दूषनन की बरन्यो पथ गुपाल।
— गोपालराय-दूषण विलास ७।६९।

ढ-जिनकी कृपावलोक ते, यह कविता रसरीति।
— नवनीत चतुर्वेदी-गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह पृष्ठ १०८ छ० स० ७।

१ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, २०१८ पृष्ठ २२६।

२ वही पृष्ठ २३४ ३०६।

को उन्होंने रीतिकाल के अन्य कवियों की श्रेणी में समाविष्ट किया है। शुक्ल जी ने बिहारी प्रभृति कवियों के काव्य को रीति के अन्तर्गत नहीं रखा, इस पर डा० नगेन्द्र का मत है कि 'शुक्ल जी के विधान में जिसने रीति ग्रन्थ रचा हो, केवल वही रीति कवि नहीं है, वरन जिसका काव्य के प्रति दृष्टिकोण रीतिबद्ध हो, वह भी रीति कवि है[१]।'

नाम-करण संवत १७०० वि० से सं० १८०० वि० तक हिन्दी में रीति ग्रन्थों की रचना का ही प्राधान्य रहा, इसी से शुक्ल जी ने इस अवधि को रीतिकाल की संज्ञा दी। रस की दृष्टि से शृङ्गार रस का बाहुल्य रहा, अतः पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इस साहित्यिक युग को शृङ्गार काल की अभिधा दी। शुक्ल जी का भी कथन है कि रस के विचार से इसको कोई शृङ्गार काल कहे तो कह सकता है[२]। इस युग के काव्य की भाषा के अत्यधिक अलङ्कृत होने के कारण मिश्रबन्धुओं ने इसे अलङ्कृत काल भी कहा है। कला की चरमोन्नति होने के कारण इसे कला काल भी कहा जा सकता है। परन्तु रीति की व्यापक परिधि में उपयुक्त सभी विशेषताएं समाहित हो जाती हैं, इससे रीतिकाल नाम ही आज सर्वसम्मत समीचीन माना जाता है[३]।

सामान्य परिचय यों रीति परम्परा के दर्शन बीजरूप में हम भक्ति काल के कृपाराम, मोहनलाल मिश्र, करनेश कवि की रचनाओं में हो जाते हैं और काव्य रीति का सम्यक् समावेश शुक्ल जी केशव में देखते हैं[४] परन्तु वास्तव में रीति की अखंड परम्परा के सूत्रधार चिंतामणि त्रिपाठी ही माने जाते हैं[५]। इनके पश्चात तो हिन्दी में रीति ग्रन्थों की बाढ़ सी आगई। इस

१ रीति काव्य की भूमिका डा० नगेन्द्र, १९६४ पृष्ठ १४२।

२ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २३३।

३ वही पृ० २३३।

४ सं० १५९८ में कृपा राम थोड़ा बहुत रस निरूपण कर चुके थे। उसी समय के लगभग चरखारी के मोहनलाल मिश्र ने शृङ्गार सागर नामक एक ग्रन्थ लिखा। नरहरि कवि के साथी करनेस कवि ने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण और भूप भूषण नामक तीन ग्रन्थ अलंकार संबंधी लिखे। रस निरूपण और अलंकार निरूपण का इस प्रकार सूत्रपात हो जाने पर केशवदास जी ने काव्य के सब अंगों का निरूपण शास्त्रीय पद्धति पर किया। इसमें सन्देह नहीं कि काव्य रीति का सम्यक समावेश पहले पहल आचार्य केशव ने ही किया।
—हि० सा० का इतिहास - रामचन्द्र शुक्ल, पृ०

५ वही - पृ० २२६ तथा २२८।

युग के कवियों ने संस्कृत के परवर्ती आचार्यों—जयदेव, अप्पय दीक्षित मम्मट, विश्वनाथ आदि, के लक्षण ग्रंथों को आधार मानकर हिन्दी में लक्षण तो लिखे ही, रसों और अलंकारों के अत्यंत सरस और हृदयग्राही काव्य-उदाहरणों द्वारा साहित्य की भारी सेवा की। कुछ कवियों ने तो केवल उत्कृष्ट मुक्तक काव्य रचना ही की, जो लक्षणों में शत प्रतिशत खरी उतरती है। अलंकारों की अपेक्षा शृंगार रस का विवेचन अधिक रहा और उसमें भी नायिका-भेद पर कवियों की प्रतिभा अधिक रमी। शृंगार रस का इतना विस्तार हुआ कि नायिका और उसके अंग प्रत्यंग—को लेकर स्वतंत्र नायिका भेद और नखशिख-वर्णन पर प्रचुर मात्रा में काव्य रचनाएं हुईं। षडऋतु वर्णन पर अनेक पृथक ग्रंथ रच गये। बारहमासों की रचनायें हुईं। शृंगारेतर रसों का निरूपण भी हुआ पर वह गौण और आनुषंगिक ही रह गया। पिंगल पर भी ग्रंथ बने। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में 'बड़ा भारी कार्य यह हुआ कि रसों विशेषकर शृंगार रस और अलंकारों के बहुत ही सरस और हृदयग्राही उदाहरण प्रचुर परिमाण में प्रस्तुत हुए। ऐसे उदाहरण संस्कृत के सारे लक्षण ग्रंथों में चुनकर इकट्ठा करें तो भी उनकी इतनी अधिक संख्या न होगी। चाहे रीति कवियों का उद्देश्य काव्यांगों का शास्त्रीय पद्धति पर निरूपण करना न रहा हो, पर वे इतना पर्याप्त काम कर गये कि संस्कृत साहित्य शास्त्र के इतिहास की एक संक्षिप्त उद्धरणी हिन्दी में हो गई।[1]

आधार: रीति शास्त्र का आधार संस्कृत का काव्यशास्त्र है। संस्कृत के पूर्ववर्ती आचार्य भरत, वामन, रुद्रट, ध्वनिकार, अभिनव गुप्त, कुन्तक, मम्मट आदि, आचार्य थे, कवि नहीं। इन्होंने सूत्र, कारिका, वृत्ति आदि द्वारा सैद्धान्तिक विवेचन किया। राजशेखर, दण्डी, भानुदत्त, पंडितराज जगन्नाथ, जयदेव आदि में कवित्व और आचार्यत्व का सम्मिश्रण है। शताब्दियों तक का संस्कृत शास्त्र सिद्धान्तों के खंडन-मंडन का इतिहास है। परन्तु उत्तरार्द्ध काल में इस प्रवृत्ति का ह्रास होता गया। पंडितराज जगन्नाथ प्रभृति परवर्ती आचार्य अपने आश्रयदाताओं और रसज्ञ नागरिकों को काव्य शिक्षा देने और उनकी स्तुति पाठ भी करने लगे थे। विवेचन का स्थान संक्षिप्त लक्षणों ने ले लिया था। दूसरे संस्कृत कवियों के उदाहरण उद्धृत होते और स्वरचित भी दिये जाने लगे थे। शृंगार रस लोकप्रिय हो गया था। हिन्दी के रीति शास्त्र में संस्कृत की इसी परम्परा का अनुधावन हुआ। रीति कवि राज्याश्रित होते थे। उनको आश्रयदाता एवं रसज्ञ जनों का मनोरंजन करते हुए काव्य

१ वही पृ० २२६।

शिक्षा भी देनी पड़ती थी। अत उन्होंने संस्कृत की इस परम्परा को प्राप्त किया। प्राकृत और अपभ्रंश का जो साहित्य प्राप्त है उससे स्पष्ट है कि उसमें भी यही परिपाटी चली जो आलोचना की अपेक्षा काव्य को अधिक महत्व देती थी। रीति काव्य इसी का सीधा विकास है। इसमें आचार्यत्व और कविता का सम्मिलन है।[1] रीति ग्रंथकारों ने जिन संस्कृत ग्रंथों को आधार माना है, डा० भगीरथ मिश्र के अनुसार वे हैं—भरत का नाट्य शास्त्र भामह का काव्यालंकार, दण्डी का काव्यादर्श, उद्भट का अलंकार सारसंग्रह केशव मिश्र का अलंकार-शेखर, अमर देव का काव्यलता-वृत्ति जयदेव का चन्द्रालोक, अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द मम्मट का काव्य प्रकाश, आनन्दवर्धन का ध्वन्यालोक, भानुदत्त का रसमंजरी व रसतरंगिणी, विश्वनाथ का साहित्य दर्पण आदि।[2] प्रथम छः ग्रंथों को केवल केशव तथा कतिपय अन्य परवर्ती कवियों ने ही अपने विवेचन का आधार बनाया। चिन्तामणि आदि कवियों ने विषयानुसार सभी संस्कृत ग्रंथों में से सामग्री ली है। अलंकार विवेचकों ने मुख्यतः चन्द्रालोक और कुवलयानन्द, ध्वनि विवेचकों ने काव्य प्रकाश रस और नायिका भेद निरूपकों ने अधिकांशतः शृंगार तिलक, रस-मंजरी रसतरंगिणी, साहित्य दर्पण, दशरूपक, नाट्य शास्त्र, रति रहस्य, कामसूत्र आदि से अपनी विवेच्य सामग्री का चयन किया है। पिंगल निरूपक आचार्यों ने पिंगलाचार्य के पिंगल और प्राकृत के प्राकृत पिंगलम आदि के आधार पर पिंगल विवेचन प्रस्तुत किया है।

रीति के सम्प्रदाय संस्कृत वाङमय में रस, अलंकार, रीति, वक्रोक्ति और ध्वनि इन पांच प्रवृत्तियों का इतिहास मिलता है। हिन्दी में रीति और वक्रोक्ति के सिद्धान्तों की चर्चा नहीं के बराबर है, प्रमुखतया रस, अलंकार और ध्वनि का विवेचन किया गया है। हिन्दी में गुण रीति और वृत्ति के वर्णन संक्षेप में अवश्य है, पर वे सिद्धान्त नहीं बन पाये। अलंकारों एवं रसांगों के साथ ही प्राय उनका उल्लेख है।[3] इन कवियों के मध्य विभाजक रेखा खींचना दुरूह है, क्योंकि रस और अलंकारों को अधिकांश ने अपना विवेच्य विषय बनाया है। चिन्तामणि, मतिराम, भिखारी दास, पद्माकर ग्वाल आदि ने अलंकार रस, नायिका भेद, छन्द गुण दोष, शब्दशक्ति आदि

१, रीतिकाव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र पृ० १४३।

२ हिन्दी रीति साहित्य—डा०भगीरथ मिश्र प्रथम संस्करण १६५६ पृ० २३ हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड (सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा) रीतिकाव्य और रीतिशास्त्र डा० भगीरथ मिश्र पृ० ४२५।

३ हिन्दी रीति साहित्य - डा०-भगीरथ मिश्र, पृ० २६।

सभी का विवेचन अपने ग्रंथों में किया है। अतः इनमें से किसी को भी केवल रसवादी या अलंकारवादी या ध्वनिवादी कहना कठिन है। इनकी प्रमुख प्रवृत्ति के अनुसार जिस वाद में भी उनका समावेश हुआ है, उसी में उसका स्थान प्रमुखतः होगा। हिन्दी रीति साहित्य में दो ही प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं एक रसवादी और दूसरी अलंकारवादी। पर दोनों परस्पर मिश्रित ही दिखाई देती हैं।

निरूपण शैली डा० नगेन्द्र के अनुसार रीति ग्रंथों में तीन प्रकार की निरूपण शैली काम में लाई गई है—१ काव्य प्रकाश की निरूपण शैली जिसमें काव्य के सभी अंगों पर प्रकाश डाला गया है, २ शृंगार तिलक, रस मंजरी आदि शृंगार रसमयी नायिका भेद वाली शैली जिसमें केवल शृंगार के विभिन्न अंगों विशेषकर नायिका भेद का ही निरूपण किया गया है, ३ चन्द्रालोक की संक्षिप्त अलंकार निरूपण शैली, जिसमें अलंकारों के ही संक्षिप्त लक्षण उदाहरण दिये गये हैं।[1] लक्षणों को दोहों में और उदाहरणों को कवित्त और सवैया में लिखा गया। परन्तु दोहों में ही लक्षण और उदाहरण दोनों प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति भी सर्वथा दुर्लभ नहीं रही।

रीति निरूपण संस्कृत वाङ्मय में सिद्धान्तों का निरूपण करने वाला आचार्यों का वर्ग पृथक् था। सैद्धांतिक ग्रन्थ—मण्डन—कर्ता विद्वानों ने उदाहरणों में यदि काव्य रचना भी की तो भी उनका आचार्य रूप अलग ही रहा। हिन्दी में आचार्य और कवि का यह भेद समाप्त हो गया। रीति *ग्रंथकर्ता मूलतः कवि थे। आश्रयदाताओं की इच्छाओं के अनुपालनार्थ ही* उनको रीतिशास्त्र के लक्षण ग्रंथ लिखने पड़े, जिनमें उदाहरणों के रूप में उनका कवित्व उद्भूत हुआ। रीति ग्रंथों के ये आचार्य लक्षण तो संस्कृत के आधार पर लिख गये, किन्तु उदाहरणों में उन्होंने अपने पूर्ण मनोयोग का परिचय दिया। संस्कृत में रीतिशास्त्र का निरूपण विशदता से हो चुका था, किसी मौलिक उद्भावना की गुंजायश न थी। आचार्य कर्म हिन्दी कवियों का उद्देश्य भी न था। रीति—कवि राज्याश्रित थे परिस्थितियों की माँग थी कि वे आश्रयदाताओं और रसिकों के विनोदार्थ कलापूर्ण चमत्कृति परक काव्य रचना करें। यही उन्होंने किया। इस प्रकार रीति निरूपण की यह प्रवृत्ति रीति काल में मिलती है। इस सम्बन्ध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं कि 'हिन्दी में लक्षण की परिपाटी पर रचना करने वाले जो सैकड़ों कवि हुए वे आचार्य कोटि में नहीं आ सकते। वे वास्तव में कवि ही थे। उनमें आचार्यत्व के गुण नहीं

१ रीति काव्य की भूमिका - डा०—नगेन्द्र, पृ० १४७।

थे। उनके अपर्याप्त लक्षण साहित्य शास्त्र का सम्यक् बोध कराने म असमर्थ है। बहुत स्थलों पर तो उनके द्वारा अलकार आदि के स्वरूप का भी ठीक-ठीक बोध नहीं हो सकता। कहीं कहीं तो उदाहरण भी ठीक नहीं हैं। 'शब्द शक्ति' का विषय तो दो ही चार कवियो ने नाममात्र के लिये लिया है जिससे उस विषय का स्पष्ट बोध होना तो दूर रहा, कहीं कहीं भ्रान्त धारणा अवश्य उत्पन्न हो सकती है।[1] इसी विषय पर डा० नगेन्द्र लिखते है —

'शताब्दियो तक विस्तृत रीतिकाल म यदि वास्तव म आचार्यत्व के अधिकारी कुछ कवि हुए तो व सेनापति, चिन्तामणि, कुलपति मिश्र, सूरति-मिश्र, श्रीपति, भिखारीदास, सोमनाथ, कुमार मणिभट्ट, रतन कवि प्रतापसाहि रसिकगोविन्द आदि छ सात कवि ही थे। इन्होने रीति निरूपण को गम्भीरता-पूर्वक ग्रहण किया है। इनके ग्रन्थो मे काव्य लक्षण, काव्य प्रयोजन रसभाव, ध्वनि, नायक अलकार, पदार्थ निर्णय, शब्द शक्ति गुणदोष, पिंगल आदि सभी कार्यत्किचित व्यवस्था के साथ निरूपण किया गया है। पदार्थ निर्णय, गुणदोष आदि उपेक्षित प्रसगो का भी, जिन का निरूपण करने का अन्य कवियो म न धैर्य था न क्षमता इन लोगो ने यथोचित समावेश किया है। इनके विवेचन से स्पष्ट है कि इनका ध्यान लक्ष्य की अपेक्षा लक्षण पर अधिक रहा है। इसम सन्देह नही कि इनके लक्षण कही-कही अस्पष्ट और भ्रामक हैं और यह भी ठीक है कि केवल इन पर निर्भर रहने वाले जिज्ञासु का रीतिज्ञान अधूरा और कच्चा ही रहेगा परन्तु इनका अपना शास्त्र ज्ञान भी बिल्कुल कच्चा या अधूरा था यह कहना इन मनस्वी के प्रति अन्याय होगा। ये प्राय सभी कवि रीति शास्त्र के गम्भीर पण्डित थे उनका अध्ययन व्यापक था।"[2]

अत यह निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि रीतिकाल ने ऐसे आचार्य अत्यल्प ही दिये, जिनको पाण्डित्य और लक्षण निरूपण की स्वच्छ दृष्टि प्राप्त थी। कुछ और आगे देखें तो ज्ञात होगा कि सम्यक् स्वच्छ और स्पष्ट निरूपण करने वाले केवल तीन चार ही आचार्य हम मिलते है और वे भी उत्तर रीतिकाल से पूर्व नही। ये आचार्य हैं प्रतापसाहि– यशवन्त कौमुदी रसिक गोविंद- रसिक गोविन्दानन्द घन और ग्वाल 'साहित्यानन्द आदि।

हिन्दी के आचार्यों को विषय प्रतिपादन की दृष्टि से दो वर्गों म विभाजित किया जा सकता है—(१) रीति के सर्वाङ्ग या विविधाग निरूपक आचार्य (२) एकागरस, अलकार या पिंगल निरूपक आचार्य।

---

१ हि० सा० का इतिहास—आचार्य रा० च० शुक्ल पृ० २२७।

२ रीति काव्य की भूमिका—पृ० १४७ १४८।

आलोच्यकाल के विविधाङ्ग निरूपक आचार्य

रीति शास्त्र के सर्वांग (विविधाङ्ग)—रस, अलङ्कार, पिंगल, काव्य के स्वरूप, शब्द शक्ति, दोष, गुण रीति एवं वृत्ति आदि—का निरूपण करने वाले आचार्यों में काव्य शास्त्र की गम्भीर ज्ञान गरिमा, अवकाश एवं प्रतिभा की की अपेक्षा होती है। अर्थ और यश के अभिलाषी रीतिकालीन सभी आचार्यों से ऐसी आशा कदापि नहीं की जा सकती थी। गोकुल आदि कवियों के विषय में तो कहना ही क्या है जो आश्रयदाता के आदेश पर अविलम्ब ग्रन्थ रचना कर डालते हों[1]। शास्त्र-पारायण, मनन और चिन्तन के लिए यत्किंचित भी अवकाश लेना भी अपनी हेठी समझते थे। ऐसे आत्म-प्रदर्शन के आग्रही आचार्य विषय के साथ कितना और क्या न्याय कर सकते थे? इसकी कल्पना की जा सकती है। परन्तु रसिक गोविन्द[2], ग्वाल[3], प्रतापसाहि[4] आदि आचार्यों ने शास्त्र निरूपण केवल साहित्य रस के निमित्त किया किसी आश्रय-दाता के परितोषार्थ नहीं। अतः यहाँ शास्त्र के प्रति पर्याप्त न्याय भी हुआ। ये रीतिकाल के प्रमुखतम आचार्यों में गणनीय हैं और उनके ग्रन्थ श्रेष्ठतम रीति ग्रन्थों में भूषित। संक्षेप में सर्वाङ्ग निरूपक आचार्यों की निम्नोक्त सामान्य विशेषतायें हैं—

१ इन आचार्यों को रीति शास्त्र का यथार्थलौकिक ज्ञान ही न था, इन्होंने संस्कृत शास्त्र का अध्ययन-मनन किया था।

२ इन्होंने आचार्य कर्म को अपेक्षाकृत अधिक मनोनिवेश के साथ ग्रहण किया था।

३ आर्थिक रूप से ये अधिक निश्चिन्त प्रतीत होते थे।

---

१ गोकुल कवि पर करि कृपा, चेतसिंह छितिपाल।
दाम दिया घोरे दिये, दीन्हे दुरद बिसाल ॥८३॥
फेरि सुकवि सों यों कह्यौ करिकै अमित सनेहु।
अलङ्कार मत में हमैं ग्रन्थ एक करि देहु ॥८४॥
सुनै नृपति के बैन गोकुल नाथ कृपा भरे।
पाइ हिये में चैन, ग्रन्थ करन लागे तुरत ॥८५॥ —चेत चन्द्रिका।

२ रसिक गोविन्द आजन्म वृन्दावन में भगवदाराधन में रहे। किसी राजादि के आश्रित न थे।

३ ग्वाल ने साहित्यानन्द की रचना लगभग १ वर्ष में आत्मप्रेरणा से की, किसी आश्रयदाता के आदेश से नहीं। यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग निरूपक है। प्रतापसाहि ने काव्य विलास स्वतन्त्र रूप से लिखा।

४ इनकी मनोवृत्ति लक्ष्य की अपेक्षा लक्षण-निरूपण की ओर भी उन्मुख थी।

५ ये शास्त्र पण्डित और शास्त्र के अच्छे शिक्षक भी थे।

६ इन्होंने काव्यांग निरूपण ही करके छुट्टी नहीं पा ली, बल्कि पिंगल जैसे कठिन विषयों में भी अपनी रुचि एवं गति का प्रदर्शन किया।

डा० सत्यदेव चौधरी ने आलोच्य काल के केवल ५ आचार्यों के ६ सर्वांङ्ग निरूपक ग्रन्थों का उल्लेख किया है। वे हैं साहित्य सुधानिधि (जगतसिंह), काव्य-रत्नाकर (रणधीरसिंह), काव्य विलास और काव्य विनोद (प्रतापसाहि), रतन प्रकाश (रतन कवि) फतह प्रकाश (रतन कवि)[1] इनके अतिरिक्त मेरी खोज में प्राप्त ग्वाल का नवीनोपलब्ध ग्रन्थ साहित्यानन्द' भी इसी शृंखला की एक अमूल्य कड़ी है। दो और सर्वाङ्ग निरूपक कवि इधर मुझे खोज में मिले हैं वे हैं नन्दकिशोर (कविता काल सं० १८४१ १८६६ वि०) और गोपालराय (कविताकाल सं० १८८८-१६१४ वि०) इन्होंने काव्य के सर्वांग पर पृथक लक्षण ग्रन्थ लिखे हैं। नन्दकिशोर के रस कल्पद्रुम काव्य विनोद, पिंगल प्रकाश तथा श्यामाश्याम विनोद और गोपालराय के रस-सागर, भूषण विलास दूषण-विलास, ध्वनि-विलास तथा भाव विलास वृन्दावन में मेरे देखने में आये हैं। पजाब के निहाल कवि का 'साहित्य शिरोमणि' भी सर्वांग निरूपक रीति ग्रन्थ है। कुछ आचार्यों ने रस अलंकार, पिंगल आदि पर एकत्र भी विवेचन किया है और पृथक पृथक भी। किसी-किसी ने अपने विविधांग निरूपक ग्रन्थ में स्वरचित रस, अलंकारादि पर लिखे स्वतन्त्र ग्रन्थों से उदाहरण भी दिये हैं। उदाहरणार्थ ग्वाल ने साहित्यानन्द में स्वरचित यमुना लहरी, रसिकानन्द नखशिख रसरंग, बलबीर विनोद और कवि-दर्पण से उदाहरण रखे हैं। इन सभी आचार्यों ने अपने पूर्ववर्ती तथा समसामयिक कवियों के श्रेष्ठतम उदाहरणों को भी अपनों के साथ सम्मानपूर्ण स्थान दिया है। गोविन्द और ग्वाल के ग्रन्थ इसके उदाहरण हैं।

रस निरूपण रीति काव्य में रस को प्रमुखतम महत्व मिला। कोई भी आचार्य ऐसा नहीं जिसने नव-रस-निरूपण न किया हो। सर्वाधिक प्रतिष्ठा शृङ्गार रस को मिली। दूसरा महत्वपूर्ण रस वीर रहा। शृङ्गार रस की अन्तर्धारा समग्र रीतिकाल को ही आप्लावित किये हुए है।

---

[1] हि० सा० वृ० इतिहास (द्वितीय भाग)

—प्र० स० डा० नगेन्द्र पृ० २८८-२९९।

शृङ्गारिकता को रीति काव्य के स्नायुओं में बहने वाली रक्त धारा कहना चाहिए, क्योंकि इस युग की कविता का नवदशांश से भी अधिक शृङ्गारिक प्रधान है[1] शृङ्गार की इस अतिशयता के लिये उस युग की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ उत्तरदायी हैं। उक्त युग में भारतीय जन जीवन जीर्ण और जर्जर हो गया था। मुसलमानों की ऐहिक शक्ति तथा सुख के अतिचार ने और हिन्दुओं को पराभव ने निष्प्राण कर कर दिया था। देश की आर्थिक व्यवस्था भ्रष्ट हो गई थी। प्रकाश की कोई किरण दृष्टिपथ में न थी। समाज का हारा थका निराश जीवन न तो बहिर्मुखी बन पाया और न ही अन्तर्मुखी। समाज की समस्त प्रवृत्तियाँ घर की ही चहारदीवारी में ही सीमित रह गईं। जीवन में कृत्रिमता घर कर गई थी। जो कुछ बाह्य जीवन में प्राप्य सम्भव नहीं रह गया था, उसी की प्राप्ति का कल्पित सुख भोग मनुष्य अपने घर की चहारदीवारी में कृत्रिम साधन जुटाकर करता था। निदान विलास की सरिता दोनों कूलों को तोड़कर बह रही थी। विलास की केन्द्र बिन्दु थी नारी जिसके चारों ओर कृत्रिम उपकरण एकत्र थे।[2] नैतिक आदर्शों की दृढ़ता और कठोरता के अभाव में विलासिता की प्रवृत्ति को और भी सहारा मिला। फारसी संस्कृति और साहित्य की शृङ्गारिकता भारतीय संस्कृति में अब तक घुल मिल चुकी थी। हिन्दी कविता पर इसका प्रभाव अवश्यंभावी था। रीति काव्य में प्राकृत और संस्कृत काव्य की शृङ्गारिकता को इससे नैतिक प्रश्रय मिला। ऐसे सामाजिक वातावरण और साहित्यिक प्रभावों में पनी रीति कविता में शृङ्गार की अतिशयता का होना स्वाभाविक ही था। कवियों ने राधाकृष्ण को आलम्बन मानकर ऐहिक शृङ्गार का समग्रत वर्णन किया। भक्तियुग के राधा और कृष्ण रीतियुग के नायिका और नायक बने नखशिख वर्णन, षट् ऋतु वर्णन, नायक-नायिका भेदोपभेद वर्णन, शृङ्गार रस निरूपण आदि में ही कवियों ने अपनी प्रतिभा का उपयोग किया। इससे कवियों को आश्रयदाता का कृपा प्रसाद तो मिला ही रसिकों की भी प्रशंसा मिली। साथ ही 'राधिका कन्हाई सुमिरन का बहाना'[3] भी मिल गया। इहलोक के साथ साथ परलोक के निर्माण की परिकल्पना इन

---

१ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र, पृ० १७२।

२ वही।

३ आगे के सुकवि रीझिहैं तु कविताई
न तु राधिका कन्हाई सुमिरन को बहानो है।

कवियो की अनूठी सूझ थी, भले ही ग्वाल आदि कवियो को अपने अश्लील शृङ्गार वर्णन के अपराध के लिये राधाकृष्ण से क्षमा याचना करनी पड़ी।[१]

रस-वर्णन प्रभृत मात्रा मे हुआ। शृगार की प्रमुखता रही, अन्य रसो का वर्णन गौण रहा। ग्रन्थो मे नायक-नायिका भेद वर्णन को प्रमुखता दी गई। नायिका भेद, नखशिख, षट्ऋतु वर्णन पर स्वतन्त्र ग्रन्थ भी रचे गये। शृगार के सयोग और वियोग दोनो पक्षो का वर्णन किया गया। वियोग पक्ष मे बारह-मासे भी लिखे गये। सयोग मे विभाव, अनुभाव, सचारी भावो के साथ हावो का भी वर्णन हुआ। विरह की दसो दशाओ का भी वर्णन मिलता है।

रस और नायिका भेद निरूपण के लिये कवियो ने सस्कृत का आधार लिया। भरत मुनि का नाट्य शास्त्र, वात्सायन का कामसूत्र, कोक्कोक का रति रहस्य, रुद्र भट्ट का शृगार तिलक भोज का सरस्वती कठाभरण और शृगार प्रकाश धनजय का दशरूपक मम्मट का काव्य प्रकाश, भानुदत्त कृत रसतरगिणी तथा रस मजरी, विश्व नाथ कृत साहित्य दर्पण आदि इनके प्रमुख आधार ग्रन्थ थे। हिन्दी कवियो ने अपनी रुचि अनुकूल इनमे से एक या एकाधिक ग्रन्थो के लक्षणो का छायानुवाद देकर रसान्तगत नायिका-भेद-निरूपक रचनायें की। रीति निरूपक ग्रन्थो मे मौलिक उद्भावनाओ का अभाव है, परन्तु विषयगत शास्त्रीय अनुशीलन और व्याख्यायें आलोच्यकाल की अपनी विशेषताए है। इससे पूर्व भी यह अनुशीलन अनेकत्र मिलता है, जिसे प्रासगिक उल्लेख की ही सज्ञा दी जा सकती है, जैसी कि भिखारी दास और मतिराम के शास्त्रीय वर्णन मे दृष्टव्य है। इसके विपरीत उन्नीसवी शताब्दी के सभी आचार्यों मे तो नही, हा ग्वाल और रसिक गोविन्द मे इस प्रकार के शास्त्रीय परिशीलन को विधिवत ग्रहण किया गया है। आलोच्य काल अपने पूर्व रीतिकाल से अधिक रस-निरूपण ग्रन्थ दे सका है, जिनमे अधिकाश मे तो परम्परा के निर्वाह के लिये ही लिखे गये है। परन्तु जिनमे रस का व्याख्यात्मक और आलोचनात्मक प्रतिपादन हुआ है, ऐसे ग्रन्थो का भी सर्वथा अभाव नही है। इस सन्दर्भ मे ग्वाल के रस ग्रन्थ उदाहरण स्वरूप रखे जा सकते हैं। रसो मे शृगार को रस-राजत्व दिया जाता रहा। इस रीतिबद्ध काव्यो की सख्या तो पहले से अधिक मिलती है, परन्तु काव्य की दृष्टि से ये रचनायें बिहारी आदि के काव्य से हीन कोटि की ठहराई जायगी। या

१ श्री राधा पद पदुम कौ, प्रनछि प्रनमि कवि ग्वाल।
छमवत है अपराध कों, कियो जु कथन रसाल॥ --ग्वाल (रसरग)।

पद्माकर, प्रतापसाहि, रामसहाय दास और द्विजदेव जैसे रससिद्ध कवि भी इस युग में हुए। इस दृष्टि से प्रमुख कवियों और उनके ग्रन्थों की तालिका देना यहाँ उपयुक्त होगा।

रस और नायिका भेद

कविनाम	ग्रन्थ	रचनाकाल (विक्रमीय)
पद्माकर	जगत विनोद	१८६७
बेनी प्रवीन	नवरस तरंग (सर्वरस)	१८७४
करन कवि	रस कल्लोल ,,	१८९०
नवीन	रंग तरंग ,,	१८९८
ग्वाल	रसिकानंद ,,	१८७६
,	रसरंग ,,	१९०४
,,	बलबीरविनोद	लगभग १९०२
चन्द्रशेखर वाजपेयी	रसिक विनोद ,,	१८०२
रसिक गोविन्द	रसिक गोविंद ,,	अज्ञात
गोपाल राय भाट	रस सागर ,,	१८८७
,,	भाव विलास	अज्ञात
,,	मान पचीसी (नायिका भेद)	अज्ञात
हरदेव	रस चन्द्रिका (नवरस)	,
,	रसभाव माधुरी	,,
कृष्ण कवि	गोविन्द विलास	१८८३
यशोदानन्दन	बरवै नायिका भेद	१८७२
रघुनाथ कवि	रघुनाथ विलास	१९६९
कृष्ण भट्ट	रस कल्लोल	१८९०
प्रतापनारायणसिंह	रस कुसुमाकर	१९५१
हरिदास कायस्थ	रस कौमुदी	१९०१
गणेश चौबे	रस चन्द्रोदय	१८७५
देवीदीन बन्दी जन	रस दर्पण	१९४८
सुन्दर बन्दीजन	रस प्रबोध	१९३०
कृष्णलाल भट्ट बूँदी	रस भूषण	१८७४
गिरिधर दास	रस रत्नाकर	अज्ञात
मौन कवि	रस रत्नाकर	१८८१
रणधीरसिंह सिंगरामऊ	रस रत्नाकर	१८९७

रामसहायदास कायस्थ	रस विनोद	१८७३
"	शृंगार सतसई	लगभग १८६०
"	वनितावली	अज्ञात
रामसिंह	रस विनोद	१८६०
भारती	रस शृंगार	१८६१
मदन भट्ट जयपुर	रस समुद्र	१८७०
मातादीन शुक्ल	रस सारिणी	१६०३
कृष्ण भट्ट मथुरा	रस सिंधु	१८६६
ब्रजेंद्र भरतपुर	रसानन्द	१८६१
रसानन्द भट्ट	रसानन्द घन	१८६६
गोकुल कवि	राधाकृष्णविलास	१८५८
गोकुल कायस्थ	वामा विनोद (नायिका भेद)	१६००
प्रताप साहि	व्यंगार्थ कौमुदी	१८८२
"	शृंगार शिरोमणि	१८६४
नवछेनी तिवारी		
*अजान कवि	शृंगार चन्द्रिका	१६४८
ब्रजचन्द्र	शृंगार तिलक	१८६५
बख्शी गोपाल	शृंगार पचीसी	१८८५
द्विजदेव	शृंगार बत्तीसी	अज्ञात
"	शृंगार लतिका	लगभग १८१३
बनी प्रवीण	शृंगार भूषण	१८८०
सरदार कवि	शृंगार संग्रह	१६०५
मुरलीधर मिश्र	शृंगार सार	१८५७
द्विज कवि	शृंगार सुधाकर	१८८६
द्विज बलदेव	शृंगार सुधाकर	१६३१
रूप अलि	शृंगार हार	१६३०
द्विज कवि	सुन्दरी सर्वस्व	१६४६
लछीराम भट्ट	प्रताप रत्नाकर	अज्ञात
नवीन कवि	रस सुधासागर	१८६५
दीन दयाल गिरि	अनुराग बाग	१८८८
गोकुल कायस्थ	अष्टनाम प्रकाश	१६३१
उरदाम चौध	उरदाम प्रकाश	१६४७
रत्नेश कवि	कान्ता भूषण	१८७१

ठाकुर	ठाकुर ठसक व ठाकुर शतक	अज्ञात
गोकुल कायस्थ	दिग्विजय भूषण	१८१८
बेनी कवि	नवरस तरंग	१८७८
राजा जगत सिंह	नायिका दर्शन	१८७७
बेनी प्रवीन	नायिका भेद	१८७६
यशोदानन्दन	,	१८७२
रामसुखराय (पंजाब) जस्सासिंह विनोद भागसिंह विनोद		
हरनाम (पंजाब) रसतरंगिणी, रसमंजरी साहित्यबोध		(१८६६–१९००)

नख शिख ग्रन्थ

खूब चन्द्र राठ रसीले	अंग चन्द्रिका	१६२०
मृगेन्द्र साहब सिंह	कुसुम वाटिका	१८१७
ग्वाल	कृष्ण जू को नखशिख	१८८०
,	द्रग शतक	१९१८
महाराज जसवन्त सिंह द्वि०	नखशिख वर्णन	१८६५
प्रतापसाहि	जुगल नखशिख	१८८६
अगराय	नखशिख	१८८६
देवकीनन्दन बन्दीजन	नखशिख	अज्ञात
नवनीत चतुर्वेदी	श्यामांगावयव भूषण	,
नवीन	नखशिख	,
चन्दन राय	नखशिख	१८६४
चन्द्रशेखर वाजपेयी	,	१८१४
जगतसिंह	,	१८७७
देवीदीन बिलग्रामी	,	१९४८
पजनेश कवि रत्ना	,,	१८९९
परमानन्द	,	१८८६
बलवीर	,,	१८४६
सीरन कवि	,	लगभग १९०५
मुरलीधर मिश्र		१८०२
गोपाल बुन्देलखंडी	नखशिख दर्पण	लगभग १८६६
गोविन्द गिल्लाभाई	ननबावनी	लगभग १८५२
,,	पयोधर पचीसी	१८५१
,,	शृंगार षोडसी	१८४५
गिरिधर भट्ट	राधा नखशिख	१८८६

प्रतापसाहि	रामचन्द्र जू को नखशिख	अज्ञात
रसरूप	,,	१६२५
गिरिधर दास	लक्ष्मी नखशिख	अज्ञात
रसानन्द भरतपुर	सिखनख	१८१०
देवीदास कायस्थ	हनुमत नखशिख	१८६५
थानसिंह कायस्थ चरखारी	हयग्रीव नखशिख	१८८४
गोपाल वन्दी जन	सिखनख	१८८१
रामसहाय दास	शिखनखावली	१८८५
सीताराम (प०)	अलक बत्तीसी	१८१०

ऋतु वर्णन संस्कृत के रस शास्त्रियों ने ऋतु वर्णन को उद्दीपन के अन्तर्गत रखा है। नायिका भेद की परम्परा में निर्मित ग्रन्थों के अन्तर्गत षट् ऋतु वर्णन का पर्याप्त निरपेक्ष या स्वतन्त्र रूप से ऋतु वर्णन हुआ है। परन्तु हिन्दी में ऐसे चित्रण विरले ही है। जो हैं वे उतने उत्कृष्ट नहीं बन पड़े जैसे संस्कृत के हैं। आलोच्य काल के रीति-बद्ध कवियों ने भी षट् ऋतुओं के उद्दीपन पक्ष में ही अधिक मनोनता का परिचय दिया। प्रकृति के उद्दीपक चित्रों के निर्माण की प्रवृत्ति इस युग में रीति काव्य में समग्रत दृष्टिगोचर होती है। आलोच्य काल में षट्ऋतु वर्णन पर लिखित कुछ कवियों और ग्रन्थों के नाम निम्नांकित हैं —

लेखक	ग्रन्थ	रचना काल (संवत)
सरदार कवि	ऋतु विलास	अज्ञात
,,	षट् ऋतु वर्णन	,,
देवकीनन्दन	चतुर्मासा	१८८६
नाथ कवि	पावस पच्चीसी	१६३०
अवधविहारीलाल कायस्थ	बारह मासा	,,
रसाल कवि	बारहमासा	१८८६
देवीप्रसाद	बारहमासी	१८०५
ग्वाल	षट् ऋतु वर्णन	अज्ञात
रुद्रनाथ	बारहमासी	१८७६
रघुनाथ	षट ऋतु वर्णन	१६४०
हफीजुल्ला खाँ	षट्ऋतु काव्यसंग्रह	१६४६
परमानन्द सुहाने	हजारा (संग्रह)	१६४१
रामसहायदास	बारहमासा	अनिश्चित

श्यामसवक	वर्षा बहार	१८४८
माहवसिह मृगेन्द्र	बारामाह	—
उमादास (भवानीदास)	,	—
बसन्तसिह ऋतुराज	बसन्त बहार बसन्त विनोद, बसन्त सतसई	
बोधा	बारहमासी, बाग वर्णन, फूलमाल।	

अलकार निरूपण —रीतिकाल का साहित्य अलकृत था, इसी से कुछ विद्वानो ने इसे अलकृत काल भी कहा है। आलोच्य काल मे भी शृगार रस के बाद अलकारो पर ही सबसे अधिक सख्या म ग्रन्थ लिखे गये। सर्वांग निरूपक आचार्यों को छोडकर, अन्य रीति कवियो ने भी पर्याप्त ग्रन्थ केवल अलकार निरूपण पर लिखे। अलकार निरूपण रीतिशास्त्र की एक व्यापक प्रवृत्ति है इन ग्रन्थो का भी प्रणयन सस्कृत साहित्य शास्त्र के अनुसरण म हुआ। सस्कृत के चन्द्रालोक और कुवलयानन्द की परिपाटी पर अधिकाश हिन्दी अलकार ग्रन्थ लिखे गये। अधिकाश म लक्षण और उदाहरण दोहा शैली म ही लिखे गये।

आलोच्य काल म आलकारिक आचाय और उनके अलकार ग्रन्थो की तालिका नीचे दी जा रही है —

लेखक	ग्रन्थ	रचनाकाल (सवत्)
गोकुलनाथ	चेत चन्द्रिका	१८५८
ब्रह्मदत्त	दीपप्रकाश	१८६५
सग्रामसिह	का याणव	१८६६
हरदेव	भूषण भक्ति विलास	१६१८
पद्माकर	पद्माभरण	१८६७
बलवीर	उपमालकार	१८७०
बनवारसिह	चित्र चन्द्रिका	१८८८
प्रतापसाहि	अलकार चिन्तामणि	१८६४
चतुर्भुज	अलकार आभा	१८६६
नेखराज	लघुभूषण	१६००
शालिग्राम शाकद्वीपी	भाषाभूषण की समालोचना	१६२०
गोपालराय भाट	भूषण विलास	–
लीलाधर	काव्योदय	१८७४
गिरिधरदास	भारतीभूषण	१८८०
सरदार	साहित्य सुधानिधि	१६०२
जगन्नाथ	रघुवीर रसायन	लगभग १६५७

राममहायमनास	वाणी भूषण	अनिश्चित
राममुखाय (प०)	जस्मासिह विनोद	—

पिंगल निरूपण —पिंगल शास्त्र नीरस और दुरूह है। यही कारण है कि हिंदी में जितनी संख्या रस और अलंकार के ग्रन्थों की है, पिंगल ग्रन्थों की नहीं। हिन्दी के पिंगल ग्रन्थ संस्कृत के पिंगल या प्राकृत के ग्रन्थ प्राकृत पैंगलम् के आधार पर लिखे गये और अधिकांश ग्रन्थ इन ग्रन्थों के छायानुवाद मात्र ही रहे। पीछे वर्णित सभी सर्वांग निरूपक आचार्यों ने पिंगल पर लिखा जिन आचार्यों ने पिंगल पर पृथक् ही ग्रन्थ लिखे हैं उनकी तालिका निम्नांकित है —

लेखक	ग्रन्थ	रचनाकाल (संवत्)
दशरथ	वृत्त विचार	१८५६
नन्दकिशोर	पिंगलप्रकाश	१८५८
चंतन	लघु पिंगल	१८७७
राममहायनदास	वृत्त तरंगिणी	१८७३
ग्वाल	प्रस्तारप्रकाश	लगभग १६००
सीताराम (प०)	वृत्त चन्द्रिका	—
हरदेव	छन्द पयोनिधि	१८६२
मैन कवि (पंजाब)	प्रसार प्रकाश	—
अयोध्या प्रसाद वाजपेयी	छन्दानन्द पिंगल	१८००

इसके अतिरिक्त काव्य दोषों पर भी कतिपय ग्रन्थ लिखे गये। ग्वाल कवि का 'रवि दर्पण' और गोपाल राय भाट का 'दूषण विलास' नामक ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं।

नाराशंसा-कविता (प्रशस्ति ग्रन्थ) यह एक निर्विवाद सत्य है कि रीतिकालीन कवियों ने आश्रयदाताओं की भरपूर प्रशंसा लिखी। इस युग का कवि समाज के मध्यम वर्ग से सम्बन्ध नहीं रखता था। काव्य का परिशीलन और सर्जन उसकी आजीविका का साधन था—राजाओं और सामन्तों तथा धनिक कला प्रेमियों का आश्रय मिल जाने से उनकी काव्य साधना निर्विघ्न चलती रहती थी। तत्कालीन सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियां उसके अनुकूल थीं। तत्कालीन राजसभायें कवियों, कलाकारों, संगीतज्ञों, चित्रकारों से अलंकृत रहती थीं। कई राजाओं एवं सामन्तों को स्वयं काव्य, संगीत, चित्रकला आदि का शौक था। प्रतिभा प्रदर्शन युग की परम्परा बन चुकी थी। कविता ह्रासोन्मुखी था। रूढ़िबद्ध कविता विद्वानों के मनोविनोद का

साधन रह गयी थी। शृङ्गारिकता-प्रधान प्रवृत्ति ने आश्रयदाताओं और रसिकों को मोहित कर रखा था। कवि प्रतिभा प्रदर्शन के प्रति जागरूक थे पर ही व काव्य व्यवसायी और फरमायशी कवि न थे,[1] उनकी कविता आश्रयदाताओं की इच्छा पर ही अवलम्बित थी। उनको प्रसन्न रखने के लिये कवि उनकी रुचि और इच्छा से उसकी गुणावली का गान करते थे। अधिकांश कवियों ने आश्रयदाता के यश का वर्णन, उनकी उदारता, गुणाग्राहकता दानप्रियता, शास्त्रनिपुणता, शौर्य और पराक्रमादि का वर्णन किये हैं। ग्रन्थारम्भ में एक या आध अध्याय में और ग्रन्थान्त में आशीर्वचन स्वरूप में यह प्रशस्ति प्रकरण पूरा कर दिया जाता था। ग्रन्थ का अधिकांश कलेवर शास्त्र निरूपण को ही अर्पित होता था। कुछ उदाहरणों में भी आश्रयदाता की प्रशंसा के छन्द लिखे हैं। ग्वाल और पद्माकर इसके उदाहरण हैं। प्रशस्ति में अतिरञ्जना की प्रवृत्ति ही अधिक दृग्गत होती है। पद्माकर[2] ग्वाल[3] आदि में यह सीमा का अतिक्रमण भी करता दिखाई देती है। पद्माकर ने 'हिम्मत बहादुर बहादुर विरुदावली' पूरा ग्रन्थ ही नाराशंसा में लिखा। आनुषंगिक प्रशस्तियों से रीति-काव्य भरा पड़ा है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ। काल निर्धारणादि में इस प्रवृत्ति ने जहाँ तहाँ समस्याओं को सुलझाने में स्तुत्य योग दिया है।

नर प्रशस्ति में कवियों ने समग्रतः अपने स्वाभिमान को तिलांजलि दे दी हो, सर्वत्र ही ऐसा नहीं दिखता। ठाकुर कवि पर्याप्त स्वाभिमानी थे व

---

१ अपनी प्रतिभा और कला के प्रदर्शन के प्रति ये जागरूक थे, इसका तो निषेध नहीं किया जा सकता परन्तु इसके आगे बढ़कर इनको काव्य व्यवसायी या फर्मायशी कवि कहना अन्याय होगा।

—डा० नगेन्द्र रीतिकाव्य की पृष्ठभूमि-पृ० १४५।

२ 'हिम्मत बहादुर विरुदावली' में पद्माकर ने हिम्मत बहादुरसिंह जैसे अति साधारण कोटि के आश्रयदाता का अति रंजना पूर्ण गुणगान किया है। वह एक शौर्यहीन व्यक्ति था। उसके युद्ध हारने पर भी पद्माकर ने उसे शूरवीर आदि विशेषण दिये द्रष्टव्य हिम्मत बहादुर विरुदावली और दादा गजटियर।

३ नाभा नरेश भरपूरसिंह अंग्रेजों का पिट्ठू था। नाभा रियासत ने पंजाब के निर्माण में सिखों की सहायता नहीं की। परन्तु ग्वाल ने 'इश्कलहर दरयाव' में इस आश्रयदाता की प्रशंसा में कलम तोड़ दी है। द्रष्टव्य सिख इतिहास-ठा० देशराज तथा 'इश्कलहर दरयाव' आदि और अन्त।

खरी खरी कहने मे नही चूक ।[1] बनी कवि के भडौआ प्रसिद्ध ही है। ग्वाल का निम्नाकित छन्द भी इस सन्दभ म अवलोकनीय है—

आदर अपार कर सोभा बार बार कर,
भात भांत ब्यार कर प्यार करिबौ कर।
सभा में सुनाव कडे कठा जगा तुरी देबौ
लायन को बात नित ताजी करिबौ कर ॥
'ग्वाल कवि' कहै जब बिदा को सुनत नाम,
सूरत हराम इतराजी करिबौ कर।
कविन का दगाबाजी, दमबाजी, ठगबाजी,
पाजिन को पाजी महाराजी करिबौ कर ॥[2]

साराश यह है कि इन कवियो मे से कुछ का अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व भी था।

आलोच्यकाल के कुछ प्रशस्ति ग्रन्थो के नाम नीचे लिखे जाते हैं —

लेखक	प्रशसित	ग्रन्थ नाम	रचनाकाल (सवत)
पद्माकर	हिम्मत बहादुर	हिम्मत बहादुर विरुदावली	१८४८ और १८५६ के मध्य।
	प्रतापसिह	प्रतापसिह विरुदावली	१८६७ के पूव
	जगतसिह	जगत विनोद	लगभग १८६७
	दौलतराव सिंधिया	अलीजाह प्रकाश	१८७८
	ऊन्राजो	हितोपदश का भाषानुवाद	१८७६-८०
बोधा	खेतसिह	इश्कनामा	अनिश्चित
	खेतसिह	विरह वारीश	,,
ग्वाल	जसवन्तसिह (नाभा)	रसिकानन्द	१८७६
	शेरसिह (लाहौर)	विजय विनोद	१८०१
	भरपूरसिह (नाभा)	इश्कलहर दरयाब	१८१७

१ देखिये—ठाकुर ठसक का यह कवित्त—
सेवक सिपाही हम उन रजपूतन के, दान जुद्ध जुरिबे मे जे न नेकु मुरके।

२ भक्त भावन—प्रस्तावक छ० स० २६।

	सिखो के दस गुरु	गुरु पचासा	१९१७
प्रतापसाहि	जयसिंह	जयसिंह प्रकाश	१८५३
चन्द्रशेखर	नरेन्द्रसिंह-पटियाला	हम्मीर हठ	१९०२
	नरेन्द्रसिंह पटियाला	विवेक विलास	१९०४
	,	रसिक विनोद	१९०३
नछीराम	रावणश्वरसिंह	रावणेश्वरसिंह कल्पतरु	
	प्रतापसिंह (काशी)	प्रताप रत्नाकर	अनिश्चित
साहबसिंह मृगेन्द्र (पंजाब)		गुरुनाम पचासिका	,,
बसन्तसिंह ऋतुराज (पंजाब)		गुरुवंश तर्पण	
मन कवि (पंजाब) पटियाला राजवंश		राजतरंगिणी	,
दित्तेराय (पंजाब) मोहन (महेन्द्रसिंह)		महेन्द्रसिंह प्रकाश	१९१९
गंगाराम (पंजाब) म० कर्मसिंह पटि०		मानमंजरी	अनिश्चित
चन्द्रशेखर	सिखगुरु	गुरु पचासिका	,
गणेश कवि (पंजाब) खालसा		फतहनामा खालसा	१८७४ ७५
संतोषसिंह (पंजाब) सिखगुरु		गुरुप्रताप सूर्य	१८८०
बुधसिंह (पंजाब) सिखगुरु		गुरु रत्नावली	१८८० १९१०

भक्ति वैराग्य और नीति-कथन रीति कर्ता कवियो ने शृङ्गार वर्णन मे राधा और कृष्ण को आलम्बन आश्रय मानकर काव्य रचना की। भक्तिकालीन राधाकृष्ण का स्वरूप रीतिकाल मे आकर बदल गया। वे दैवी दम्पती न होकर इस लोक के सामान्य नायिका और नायक मात्र बनकर रह गये। रीतिकारो ने कही कही तो इनका वर्णन अत्यन्त अश्लील रूप मे किया। ग्वाल को तो अपने इस अपराध के लिये राधा से स्पष्ट शब्दों मे क्षमा मांगनी पडी —

> श्री राधा पद पदुम को प्रनमि प्रनमि कवि ग्वाल।
> छमवत है अपराध को, कियौ जु कथन रसाल ॥

ग्वाल ने निव को कुचा के उपमान के लिये चुना ।[1] कवियो का यह दृ भिखारीदास आदि स मिली थी । उत्तर रीतिकालीन कवि पूव रीति के कवियो स कोई भि नता लिय हुए नही थे । इन कवियो ने भक्ति विषयक ग्रथ भी लिखे, पर इनमे भक्ति का भावावश नही मिलता । वराग्य रचनाओ मे भी वह आज नही जो सतो के काय म है । भिखारीदास बहुत पहले लिख गये थे 'आग के सुकवि रीझि है ता कविताई न तु राधिका क हाई सुमिरन को बहानो है ।' यह बात उचित ही थी कि शृङ्गार स ऊबकर अपने जीवन के अतिम दिनो म वे भक्ति भावना स राधिका क हाई का स्मरण करत ।

लेखक	भक्ति-वराग्य ग्र थ
पद्माकर	गगालहरी, रामरसायन प्रबोध पचासा, ईश्वर पचीसी जमुना लहरी ।
ग्वाल	वशीबीसा यमुना लहरी, गगाजी क कवित्त, राधाष्टक, कृष्णाष्टक, दोगणशाष्टक, दवी देवताओं के कवित्त, ज्वालाष्टक, कुब्जाष्टक, गोपी पच्चीसी निम्बाक
(रसिक) गोवि द	रामायण सूचनिका, कलियुगरासो, युगल रसमाधुरी, समय प्रब ध, अष्टयाम के पद ।
गिरिधरदास	गग सहिता, वाल्मीकि रामायण, वाराह कथामृत, नृसिंह कथामृत, बलराम कथामृत, बुद्ध कथामृत ।
घनान द	सहस्राधिक फुटकल कवित्त
नागरीदास	छोटी बड़ी ७० रचनायें
च द्रशेखर वाजपेयी	हरि भक्ति विलास, वृ दावन शतक ।
सन्तोषसिंह (पजाब)	वाल्मीकि रामायण, दशम स्क ध, रामच द्रोदय, रामायण ।

---

१ सेवी जान मोको कवि कासो को पठावत हैं,
आवत न मेरे मन कान न धरत हो ।
जध कदलीवन मे नाभि कूप कूल बठि अ तर
गगोतरी को सीसियाँ भरत हो ॥
ग्वाल कवि चदन चढावो पहिरावो माल
आंगुरिन आरती उतारि वितरत हो ।
सुधिकारि रुचिकारि उच्चपद पाइव को
प्यारी कुच कु भ को मे पूजन करत हो ॥७९॥

साहबसिंह 'मृगेन्द्र'	राम मण्डल कृष्ण कौतूहल ।
ब्रजवासीदास	ब्रज विलास
उमादास, भवानीदास (पंजाब)	नाम माला, कुम्भेश माहात्म्य, पंचरत्न सुदामाचरित
नारायण स्वामी	ब्रज विहार ।
गंगाराम, (पंजाब)	कथा धर्मेश्वर
रामदास (पंजाब)	वाणी रामदास
वीरसिंह, (पंजाब)	वशिष्ठ पुराण, भक्त माल, गौसिंह कथा ।
विशनसिंह (पंजाब)	कलि भ्रम भजन ।
सेवासिंह जाट	सुदामा चरित ।
हरदयाल (पंजाब)	वैराग्य शतक (अनुवाद)
दीनदयाल गिरि	वैराग्य दिनेश ।
नवनीत चतुर्वेदी	गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह, गोपी पचीसी ।
गोपालराय	रास पंचाध्यायी सटीक वंशीलीला, वपात्मव, वृन्दावन धामानुरागावली, वृन्दावन माहात्म्य, वनयात्रा ।
दयानिधि	नृसिंह चरित्र उद्धव पचीसी ।

नीति ग्रन्थ

ग्वाल	प्रस्तावक कवित्त न्दयक्ति कवित्त ।
दयानिधि	अन्योक्ति पचीसी
गिरधर कविराय	कुण्डलियाँ ।
दीनदयाल गिरि	अन्योक्ति कल्पद्रुम अन्योक्ति माला दृष्टान्त तरंगिणी ।
साहबसिंह 'मृगेन्द्र'	सुमन संजीवन
उमादास	नीति रत्नाकर
मैन कवि	प्रस्ताव शतक ।
हरदयाल	सारुक्तावली १८८० ।
बुधसिंह	बुधवारिधि ।
पद्माकर	हितोपदेश भाषा ।
जसिंह सैना	भूषण ।

की धार्मिकता और भक्ति भी
बाकी रह गया था ।

यह भक्ति भी उन रीति कवियो की शृङ्गारिकता का ही एक अग थी । जीवन की अतिशय रसिकता से जब यह लोग घबरा उठे होंगे तो राधाकृष्ण का यही अनुराग उनके धमभीरू मन को आश्वासन देता होगा। इस प्रकार रीति कालीन भक्ति एक ओर सामाजिक कवच और दूसरी ओर मानसिक शरण भूमि के रूप म इनकी रक्षा करती थी। तभी तो वे किसी न किसी तरह उसका आँचल पकडे हुए थे। रीतिकाल का कोई भी कवि भक्ति भावना से हीन नही है, हो ही नहीं सकता था, क्योकि भक्ति उनके लिये एक मनोवैज्ञानिक आवश्यकता थी भौतिक इसकी उपासना करते हुए भी, उनके विलास और मन म इतना नैतिक बल नहीं था विभक्ति रस मे अनास्था प्रकट करते, या उसका सद्धातिक निषेध करते ।[1]

वैराग्य जनित नैराश्य म इन कवियो ने नीति सम्बन्धी रचनायें भी लिखी। तत्कालीन जीवन और परिवेश पर आधारित य नीति-उक्तियाँ कवियो के अवसाद और थकान की द्योतक हैं।

प्रबन्ध काव्य रीति मुक्तको का युग था। कविया की प्रतिभा शृङ्गार रस के कवित्त, सवैया और दोहा बनान म ही व्यय हुई। आलोच्य काल म कुछ प्रबन्ध काव्य भी लिख गये।

अनुवाद यदि सक्षेप म कहा जाय कि समग्र रीति युग ही सस्कृत साहित्य का छायानुवाद काल है, तो अत्युक्ति न होगी। हिन्दी के लक्षण ग्रन्थ सस्कृत के ग्रन्थो के छायानुवाद ही हैं। आलोच्य काल में महाभारत, वाल्मीकि रामायण और हितोपदेश क पद्यानुवाद हिन्दी म हुए, तथा उर्दू से हिन्दी म अनुवाद करने का सूत्रपात स्वागतयोग्य बात हुई। इसका श्रेय नाभा दरबार को है। ग्वाल ने स० १६१७ म उर्दू की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान [मीर हसन कृत] का 'इश्कलहर दरयाव' नामक बडा सुन्दर भाषानुवाद किया। दूसरा है वशी पडित द्वारा लिखा हुआ सुमन-विलास। स० १६२२ जो उर्दू के 'गुलबकावली' का हिन्दी पद्य रूपान्तर है। ग्वाल और वशी दोनो समसामयिक थे और दोनों ही नाभा नरेश के आश्रित रहे थे। वास्तव म यही से आधुनिककालीन अनुवाद काय का सूत्रपात समझना चाहिये।

उर्दू ग्रन्थो की भाषा फारसी और अरबी मिश्रित उर्दू है, जिसकी अपार शब्द सम्पत्ति इन कविया द्वारा हिन्दी को मिली। उर्दू की काव्य शली छन्द योजना, अभिव्यजना अलकार, प्रतीक योजना का चमत्कार हिन्दी म

---

१ रीति काव्य की भूमिका पृ० १८०।

स्वभावत आया, जो आना भी चाहिए था। अनुवाद की दिशा म साहित्य-कारो ने नई दिशा का निर्देश किया। भारतेन्दु युग म अनुवादो ने साहित्य म क्रान्ति करने म बडा योग प्रदान किया।

डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय के शब्दो म अनुवादको ने उन्नीसवीं शताब्दी म नवीन विषय सुझाये, नवीन साहित्य रूपो को जन्म दिया। अनुवादको ने उस समय यह बडा भारी कार्य किया।[1]

उपालम्भ काव्य की प्रवत्ति हिन्दी के उपालम्भ काव्य का उद्गम श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के ४६ तथा ४७वें, अध्यायो को माना जाता है। उपालम्भ काव्य 'भ्रमरगीत' के हिन्दी म प्रथम कवि सूरदास हैं। अष्टछाप कवियो ने 'भ्रमर प्रसग को लेकर रचनायें की हैं। नन्ददास का भवरगीत' दूसरा प्रसिद्ध उपालम्भ है। सूरदास भाव प्रवण और नन्ददास 'बुद्धि प्रधान' और भाव प्रधान रहे। यही परम्परा रीतिकाल म फुटकल छन्दों मे विकसित हुई।

उपालम्भ काव्य म उद्धव गोपी सवाद का प्रसग वर्णित हुआ है, जिसम निराकार पर साकार की विजय का विशद वर्णन है। कृष्ण सखा उद्धव उनका सन्देश लेकर ब्रज मे आते हैं गोपियाँ भाव विह्वल हो जाती हैं। भ्रमर या अन्य प्रतीक के माध्यम से व ताने उलाने देती हैं। यही इन काव्यो का वर्ण्य विषय रहा है।

रीति कवियों के वर्ण्य विषयो के अन्तर्गत राधा कृष्ण गोपी, उद्धव ग्वाल गोप आदि भी आते हैं। अत गोपियो द्वारा ऊधो के माध्यम से कृष्ण को सदव ही 'सूधो सो सदेश' भिजवाया जाता रहा है। यह केवल प्रासगिक चर्चा का ही विषय बना और उसकी अभिव्यक्ति रीतिकाल के अन्तिम चरण तक पाई जाती है। जिन कवियो ने उद्धव गोपी सवाद या भवर गीत रचे, उनमे वृन्दावन के दयानिधि ने स० १८५० वि० के लगभग उद्धव पचीसी[2] लिखी। सवाराम के "भवरगीत"[3] की भी चर्चा है पर यह उपलब्ध नही होता। ग्वाल ने गोपी पच्चीसी और कुब्जाष्टक' और नवनीत चतुर्वेदी ने 'कुब्जा पचीसी और गोपी पचीसी की रचना करके उपालम्भ काव्य की परम्परा को एक नया मोड दिया। ग्वाल और नवनीत से पूर्व 'कुब्जा उस

१ उन्नीसवीं शताब्दी–डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय १९६३ ई० पृ० १४।

२ चन्द्रिका (उदयपुर) अन्योक्ति पच्चीसी
—ले० गोस्वामी राधाचरण पृ० ५०।

३ ब्रजभाषा रीति साहित्य ग्रन्थ कोश प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, मथुरा।

पर किसी कवि ने स्वतन्त्र रूप से रचना नही थी। इस पर ग्रन्थ रचना करके ग्वाल और नवनीत ने आधुनिक युग का नया मार्ग और नया प्रतिपाद्य दिया। श्री रामनारायण अग्रवाल द्वारा लिखा गया कूबरी खड काव्य इस परम्परा का उल्लेखनीय ग्रन्थ माना जा सकता है [१]

ग्वाल की गोपी पच्चीसी का वर्ण्य विषय तो पारस्परिक है पर अभिव्यक्ति उनकी अपनी हैं। इसका एक उदाहरण यहाँ देना उचित होगा।

> ऊधो तेरे यार असे ह्वै है रिझवार जाइ
> जानती बिचार तो प सूधो हो न जाइबो।
> करनी उपाय भांत भांत के सुभाइ भाइ,
> केतो बडो बात हुती वाको अटकाइबो॥
> ग्वाल कवि पीठिन प येक येक हाडो बाधि,
> नीके मनमोहन को करती रिझाइबो।
> या तो कहू कोऊ बहुरूपिया तलाश करि,
> सीखि लेती सब हम कूब को बनाइबो॥[२]

हिन्दी साहित्य म प्रथम बार ग्वाल की कविता मे उपेक्षिता 'कुब्जा' गोपियो क असख्य उलाहने सुनने के बाद ऐसी खरी-खरी कहती हैं कि 'सुनकर लखनऊ वाली भी दाँता के बीच उँगली दबा ले।' एक उदाहरण प्रस्तुत है—

> मोहि व्यभिचारिनी कमीन कहि बोलती हैं,
> राखती न नेंकहू सम्हारि कै जबान को।
> दीनो गोपिकान ने भलो ही ताहिनो है बीर,
> खोलागी उनो के पतिव्रत के बयान को॥
> 'ग्वाल कवि अबलो रही हू चुप कत कानि,
> कहाँ का गवारिनि के अधिक अयान को।
> जानू गी उँचाई चतुराई उन सौतिनि की,
> लेय तौ बुलाय अब सावरे सुजान को॥
> गोरी मति लोरी की सुनी मे बात कथ्यन प,
> मोकों तो कुजातिनी कमीन कहि बोली वे।
> आपुने न औगुन गिनत पर पति पागी,
> ऐसी बेसरम करें मो ही सों ठिठोली वे॥

---

१ कूबरी-सन् १९६६ मे राज्यश्री प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित और उ० प्र० शासन से पुरस्कृत हुआ

२ गोपी पच्चीसी ग्वाल, छ० स० ३।

'ग्वाल कवि छिप छिप अंधियारी रातन मे
सोये पति त्याग कें किवारे मूदि खोली वे।
बनन में, बागन मे, जमुना किनारन मे,
खेतन, खदान मे खराब होत डोली वे।'[1]

गद्य आलोचना का प्रादुर्भाव रीतिकालीन लक्षण ग्रथो म उ नीसवी शताब्दी से पूव गद्य का बहुत ही कम आश्रय लिया गया। भिखारीदास ने अपने काय निणय म लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये छोटे-छोटे वार्तिको का प्रयोग किया था। आलोच्य काल म आचार्यो ने बड़ी वार्ताओ और व्याख्याओ को अपनाना आरम्भ कर दिया। इसके दशन पहले पहल रसिक गोविन्द के 'गोविन्दान दघन' (स० १८५८ वि०) ग्रथ म मिलत हैं। रस की व्याख्या उन्होने निम्नाकित रूप म की है –

'अन्य ज्ञान रहित जो आनन्द सो रस। प्रश्न अन्य ज्ञान रहित ता निद्रा हू है। उत्तर–निद्रा जड है, जड चेतन। भरत आचाय सूत्रकर्त्ता को मत विभाव अनुभाव सचारी भाव के सजोग म रस की सिद्धि। अथ काव्य को मत कारण कारज सहायक है, जो लोक म इन ही का नाटय म काव्य म, विभाव सज्ञा है। अथ टीका कर्ता को मतसत्व, विशुद्ध, अखड स्वप्रकाश, आनन्द चित अन्य ज्ञान नहि सग ब्रह्मास्वाद सहोदर रस।'[2]

इनके ४७ वष उपरान्त ग्वाल ने 'साहित्यानन्द' म और लम्बी गद्य व्याख्याओ का प्रयोग किया जो इस दिशा म विषय को स्पष्ट बनाने के प्रयास कहे जा सकते हैं। रूढि प्रयोजनवती लक्षणा का लक्षण ग्वाल ने वार्ता म इस प्रकार समझाया है –

प्रोजन जो है सो लक्षणा को अग ही है। जुदे नही है। ताते प्रोजनवती भेज करि कहै। प्रोजन लक्षना क्यो करनी थी। जसे काहू ने काहू ते पूछयो तुम्हारो घर कहा है। तब वाने कही हमारो घर गगा मे गृह है। तो गङ्गा म गृह असम्भव है। तब लक्षना करी। क्योकि अभिधा म जो गङ्गा प्रवाह ताम तो घर नही है सकै। तब मुख्यारथ गङ्गा प्रवाह को सम्बन्ध तीर ते है। तब जान्यो कि तीर प गृह है। गङ्गा म गृह कहनवारे हू को तात्पय तीर के जनाइव म हो सो पूछन वार ने जान्यो। परन्तु वा पूछन वारे ने कही क तुमने इतन फेर ते क्यो कह्यो कि मेरो घर गगा म है,

१ कुब्जाष्टक–ग्वाल, छ० स० १ व ६।
२ गोविन्दानन्दघन–रसिक गोविन्द, १।

गङ्गा के तीर प है। यसेंई सूधो कहनो हो। तब वानें कही के गगा म गृह कहिबे को प्रयोजन यह गगा त अति समीपता, सीत पवित्रता की अधिकता व्यग त सूचित कराइव को कह्यो क गगा क तीर गृह मसेई कहें तो तीर के पह चार चार कोस ताई को भ्रम पर। तो गगा क दूर गृह सूचित भये पै अति समीपत्व आदि धम व्यग हो तो तात गगा विर्षे गृह कह्यो विवेक ही ते अति समीपता सूचित भई। यसें बिना प्रयोजन लक्षना कहूँ कोई नही है सकै है। जितन सब्द लाक्षनिक है सबम त व्यग कढ है। बिना व्यग लक्षना हाय ही नही। सूधो माग छोड टढो जो चलानो सो काहू प्रयोजन के लिये ही है। चमत्कार की आधिक्यता के लियें वक्ता टेढ़ो वचन कहै। यसेंई सबल स्थान म हम प्रयोजन दिखावेंग। सब ही लक्षना प्रयोजनवती हैं।[1]

आगे चलकर अधिकाधिक गद्य का आश्रय लिया गया। रस कुसुमाकार ने तो पूरे लक्षण ही गद्य म लिखे। गद्य के विकास ने शास्त्र के क्षेत्र म युगान्तर सा उपस्थित कर दिया।

भाषा और प्रतिपाद्य में परिवर्तन के सकेत यद्यपि भारत म अंग्रेजी फ्रांसीसी आदि विदेशी जातियों के चरण अठारहवीं शताब्दी के आरम्भ से ही पड चुके थे, और १७५७ ई० म पलासी के युद्ध ने भविष्य क दुर्भाग्य का सकेत द दिया था। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य (१८५७ ई० तक) अंग्रेजी सत्ता प्राय समूचे भारत पर छा चुकी थी। परन्तु हमारे इन हिन्दी कवियो की रूढिबद्ध विचारधारा नये आयामों मे झाकने का नाम तक न लेती थी। अत पतनकालीन छोटे बडे साम त साहूकारो के आश्रय म प्राचीन विषय और प्राचीन शलियो की ही पुनरावृत्ति होती रही। क्रम इस शताब्दी के मध्य तक चलता रहा, परन्तु रीति के अ तिम पचास वर्षों म नूतनता क कुछ हलके छीटे काव्य धरा पर दिखाई दिये।

पद्माकर ने दौलतराव सिंधिया की प्रशस्ति मे प्रथमबार अपने सकुचित क्षेत्र से बाहर निकलकर फिरगियो को दबाने, 'कलकत्ता' के 'लत्ता' उडाने आदि की बात कही।

मीनागढ बम्बई सुमद मदराज बग, बदर को बद कर बदर बसावगो।
कह पद्माकर कसकि कसमीर हू को पिंजर सो घेरि क कलिजर छुडावैगो॥
बाका नप दौलत अलीजा महाराज कबो, साजिदल पकरि फिरगिन दबावगो।
दिल्ली दहपति, पटना हू को झपटि करि, कबहू लत्ता कलकत्ता के उडावगो॥[2]

१ साहित्यानन्द—ग्वाल कवि ११।२६।
२ हि० सा० का इतिहास आ० रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ २६४।

इससे कुछ पूर्व घनश्याम शुक्ल ने ईस्ट इण्डिया की सेना पर दलेलखाँ की विजय का हर्ष इस छन्द में प्रकट किया था।

प्रबल पठान तू दलेलखान बलवान, दच्छिन तें दलहि ज्यायो मानों हाँसी सें।
बांकुरो बहादुर बलीन बीर बरछी सें मारहि बचायो है विलायत निवासी तें॥
कहे घनश्याम युद्ध कीन्हों मेघनाद जैसे गरुड़ गोविन्दहिं छड़ायो नागफाँसी तें।
कुमदान कम्पनी कुम्हेड़ा ककरी से काटि, काढ़ि लायो कार्हि कृपान करिकासीन॥[1]

पटियाला राज्याश्रित चन्द्रशेखर वाजपेयी के काव्य में भी एक नई उत्प्रेक्षा का पुट दिखाई दिया।

कंचन रचित राजै नूपुर, अनूप कैधों, बाजे बज भूपर मनोज अंग्रेज के।[2]

वर्ण्य विषय सन् १८५७ ई० के प्रथम स्वाधीनता संग्राम की पहली झलक तत्कालीन हिन्दी साहित्य में दृष्टिगोचर हुई। यह कहना कि हिन्दी का कवि तत्कालीन समाज के सुख दुख का सहभोगी नहीं था और वह अपने वर्तमान से कटा हुआ शृङ्गार कविता में लीन था, कुछ अनुचित होगा। यह तथाकथित गदर तत्कालीन कविता का तत्कालीन विषय बना।

सेवक कवि (सं० १८७२-१८३८ वि०) ने अपने ग्रन्थ 'वाग्विलास' में इस विद्रोह से सम्बन्धित अपने आश्रयदाता हरिशंकर सिंह और गौरीशंकर-सिंह की अंग्रेजों की सहायता का वर्णन किया है। इन्होंने अंग्रेजों की पूरी सहायता की और प्रमाण-पत्र पाये थे।

सुनतहिं या विधि को समर खुसी भये अंग्रेज।
लिखत सारटीफिकट हू दीन्हों सहित मनेज॥[3]

एक अन्य कवि रसराज बाबू बिहारीसिंह ने अपने 'भारतेश्वरी भूषण' में अंग्रेजों की विशेषताओं पर प्रकाश डाला—

गदर उनीस गुबार उठ्यो सत्तावन में सिगरे जगजानी।
कर्ते अनीति अनीति कियो सब हिन्द प्रजा हिय में भय मानी॥
त्योंही बिहारी लियो कर सासन मेटी प्रजा दुख वेगि सयानी।
जेहि ऐसो विचार असीसें सब चिरजीवो सदा विक्टोरिया रानी॥[4]

---

१ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृष्ठ २१।
२ नखशिख चन्द्र शेखर बाजपेई।
३ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृष्ठ १५३।
४ वही पृष्ठ १५३-१५४।

कवि दुलारे ने बैसवाड़ के राजा बनी माधवबख्श सिंह के पराक्रम की प्रशस्ति में लिखा—

अवध मां राना है मरदाना ।
पहिल लड़ाई मे बक्सर मो सेमरी के मदाना ।
उहां का कूँच भयो पुरवा को तब लाट घबराना ।।
भाय भतीज सबै बुलवाया हमरो लेउ सला ना ।
तुम तो जाय अगरजन मिलिहौ हमहू का भगवाना ।।[1]

बजरग ब्रह्मभट्ट का यह छन्द भी अवलोकनीय है—

हिम्मत की हाकिम हजारन में देखि आयो खेदिक हटायो अंग्रेज ह सकाना है ।
जाको तेज लोउन तपत महिमडल मे हरिसे उलूक से न लागत ठिकाना है ।।
कहै बजरग बस अवतस भयो कपनी विलायत सकल बिल लाना है ।
नेक न डराना छीन लीनो तो परवाना वीर बाधे वीरबाना बसे राना मरदाना है ।।[2]

ज्वालराय भी विद्रोह के समय उपस्थित थे । वे लिखते हैं—

चडिका के चेले वस लडत है अकेले फौजें,
आया लीना घेरि गोला खूब ही बजायो है ।
मारे जरनेल औ कडनल को फद किरो,
मारे कप्तान गोरा भेंट ही चढ़ायो है ।।
राजन मे राजा महाराजा बनी माधो बक्स,
लडी है लड़ाई अग्रेज चढ़ि आयो है ।
कहत कवि ज्वालाराय राजन को काम को हो
बिना अन्न पानी गोला खूब ही बजायो है ।।[3]

कवि सीतलदास ने सं० १८६८ के लगभग खड़ी बोली में 'ईसा' शब्द का प्रयोग करते हुए प्रगतिशील विचार प्रकट किये—

दूयी सो दौलत मिली तुझे, पर तेरा दिल न उदार रहा ।
तू 'ईसा' हुआ जमाने का, यह दरदमद बीमार रहा ।।[4]

ग्वाल ने स्वप्रणीत रचना 'विजय विनोद' और इश्क लहर दरयाव में फिरंगियों आदि की प्रासंगिक चर्चा की है। इसी प्रकार मिश्रा के दमो

१ वही पृष्ठ १५६ ।
२ वही पृष्ठ १५६ ।
३ वही पृष्ठ १५७ ।
४ उन्नीसवीं शताब्दी डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय पृष्ठ २१ ।

श्रृंगार ग्रंथों की टीकाएँ हिन्दी साहित्य में संस्कृत और हिन्दी के काव्य ग्रंथों की टीकायें लिखने की परिपाटी प्राचीन काल से ही रही है। बलभद्र के नखशिख पर कई टीकायें उपलब्ध होती हैं। बिहारी की सतसई पर टीकाओं की संख्या सर्वाधिक है। आलोच्य काल में भी निम्नांकित ग्रंथकारों ने टीकाएँ लिखी—श्रीपाल, खजूरी, सुलतानपुर (स० १८५५ वि०) अयोध्या प्रसाद स० १९२० वि० शुभकरन तथा कमल नयन स० १८६५ वि० गंगाधर स० १९०६ वि० गणपति भारती स० १८६० वि० गदाधर भट्ट र० म० अज्ञात गिरिधर र० म० अमान महंत जानकी दास स० १८२७ वि० ठाकुर कवि स० १८६१ वि० दवकीनंदन स० १८६१ प्रभुदयाल पांडे स० १८५३ ई०, प्रतापसाहि स० १८८६ वि० भानुप्रताप तिवारी स० १८६० वि० भावकभाव जी स० १८२६ वि० रणछोड़ कवि स० १८६५ वि० रामचन्द्र स० १८०४ वि० रामबख्श कवि स० १८०६ वि लगभग लल्लू लाल स० १८७२ वि० सरदार कवि स० १८२१ वि० जुल्फकार खां स० १८०३ वि० साहबजादे बाबा सुमेर सिंह स० १६५५ वि० भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र, ईश्वर कवि स० १८६१ वि० बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर स० १६५३ वि०।[1] प्रतापसाहि ने मतिराम के रसराज और बलभद्र के नखशिख पर टीकाए लिखी।

फारसी मिश्र भाषा की प्रवृत्ति आलोच्य काल के उत्तरार्द्ध में रीति कवियों की कविता की भाषा अत्यन्त फारसी मिश्र होने लगी। यों फारसी के शब्दों को इससे पहले भी रीति कविता में विस्तारपूर्वक सम्मान मिला, पर कवि उनको ब्रज भाषा में खपाने में विकृत कर लेते थे। अब छन्दों में फारसी की अनेक पंक्तियां मणि कांचन शैली में अपने तत्सम रूप में ही स्थान पाने लगी।

हफीजुल्ला खां 'हाफिज' ने हिन्दी की एक पंक्ति के साथ फारसी की दूसरी पंक्तियां इस प्रकार लिखी

सांझ समै घर तें निकसी सब सखियन साथ वह सांवरी मूरत
रम्जो नाज नमूदसनम बेताब शुदम अफजूद कुदूरत ॥
मुसकियाय कै मो तन हेरि दियो तिरछी अखियां चितवन की मरोरत।
होशम रफ्त न मु बदश्त शुदह दिलमस्त जिदी दिने सूरत ॥[2]

---

१ ब्रजभाषा रीतिशास्त्र ग्रंथ कोश प० जवाहरलाल चतुर्वेदी तथा पुस्तक साहित्य, डा० माताप्रसाद गुप्त।

२ नवीन संग्रह हफीजुल्ला खां 'हाफिज' नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।

तृतीय अध्याय

उन्नीसवीं शताब्दी के काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

३ | उन्नीसवीं शताब्दी के रीति काव्य पर इतर साहित्य का प्रभाव

हिंदीतर साहित्यों की परिकल्पना करते समय संस्कृत का साहित्य सर्वप्रथम हमारे समक्ष आता है। संस्कृत ने हिंदी साहित्य को आद्यन्त प्रभावित किया है। यह स्वाभाविक है क्योंकि साहित्य का मूल स्रोत समग्रत देव-भाषा–साहित्य है। जब संस्कृत साहित्य की चर्चा म वदिक साहित्य को नहीं भुलाया जा सकता। भारतीय साहित्य का मूल वेदो म और शाखा प्रशाखायें संस्कृत साहित्य म हैं। भावना म वदिक साहित्य धार्मिक और संस्कृत साहित्य लौकिक है। पर प्रकृतित संस्कृत साहित्य का भरणपोषण वदिक साहित्य से हुआ है। अत पूव के अभाव मे ऊपर का अस्तित्व कल्पनीय है। संस्कृत के दशन, स्मृति पुराण ज्ञान का प्रकाश यत्र तत्र हिंदी साहित्य मे भी परिलक्षित है हिंदी के जायसी कबीर आदि ज्ञानमार्गी साहित्यकारो की विचारधाराएँ उपनिषदों की छाया म ही पली प्रतीत होती है भले ही यह छाया उनको मौलिक पद्धति या मौखिक परम्परा किसी भी प्रकार प्राप्त हुई हो। कबीर आदि ने स्वय वदिक साहित्य पढा था यह कहना तो अधिक युक्तियुक्त न होगा परन्तु मौखिक परम्परा द्वारा वे उपकृत अवश्य रहे होंगे।

संस्कृत साहित्य की परिधि म आयुर्वेद, ज्योतिष, स्मृति, पुराण, तन्त्र, सूत्र महाकाव्य गीतिकाव्य नीति शास्त्र, शिक्षा और काव्य शास्त्रादि सभी आते हैं। एतद्विषयक समस्त हिंदी ग्रन्थ संस्कृत साहित्य स ही प्रेरित, पोषित अथवा प्रभावित है। यह प्रेरणा, पोषण और प्रभाव दो प्रकार का है। कहीं हमे हिंदी पर संस्कृत का आकृतिमूलक और कहीं सिद्धान्त मूलक प्रभाव दृष्टि गोचर होता है। हिंदी के रूप और शाखाओं पर संस्कृत का आकृति मूलक प्रभाव है कथाओं और घटनाओं पर विस्तार मूलक प्रभाव की मुद्रा दीख पडती है और धम दशन एव काव्य विधान की पद्धति पर सिद्धान्त मूलक प्रभाव का साक्षात्कार होता है। सिद्धान्त प्रभाव के अन्तगत सदाचार वराग्य, मनोवृत्ति योग प्रवाह भक्ति, दाशनिक विचार एव काव्य शास्त्र का समावेश हो जाता है।[१] हिंदी ग्रथो के नामो की प्रेरणा के स्रोत म भी संस्कृत साहित्य दिखता

१ हिंदी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डा० सरनामसिंह शर्मा 'अरुण' १९५२, इलाहाबाद भूमिका पृष्ठ क'।

है। संस्कृत के हिन्दी अनुवादों ने हिन्दी को पोषित किया। हिन्दी साहित्य पर यह अनुवाद प्रभाव कई प्रकार से पड़ा है — १) मूल कृतियों के अनुवादों में, (२) मूल संस्कृत ग्रन्थों के अध्ययन से तथा (३) मौखिक परम्परा। यद्यपि अनुवाद मूल ग्रन्थ के अधिक समीप होते हैं पर तु अनुवादक का व्यक्तित्व उसमें समाविष्ट हो जाता है। अनुवाद कितना भी सफल हो फिर भी मूल मूल ही है। अनुवाद का अपनी प्रभाव सीमाए होती हैं। अत यह प्रभाव शुद्धतम नहीं कहा जा सकता। मूल ग्रन्थ के अध्ययन से पड़ा प्रभाव पर्याप्त शुद्ध और मौलिक कहा जा सकता है। यह प्रभाव दो श्रेणियों में रखा जा सकता है शुद्ध और मिश्रित। डा० सरनाम सिंह शर्मा मूल के विनियोग से हिन्दी तक आये प्रभाव को भी मौलिक की ही श्रेणी में रखने के पक्ष में हैं।[1] परन्तु यथार्थत मूल ग्रन्थों का अध्ययन प्रभाव ही शुद्ध कहलाने का अधिकारी है। मूल ग्रन्थ के मौखिक प्रभाव को मिश्रित ही कहा जायगा। परम्परागत प्रभाव में मौलिकता का ह्रास सन्निहित रहता है। हिन्दी के सभी रीति कालीन कवियों ने मौलिक रूप में संस्कृत का प्रभाव ग्रहण किया यह तो निश्चित नहीं। अधिकांश रीति आचार्य और कवि विद्वान् थे, जिनसे गुरु चरणों में बैठकर संस्कृत के काव्य शास्त्र वाङ्मय का पारायण हो सका था यह प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता। उन में भी मिश्रित प्रभाव की न्यूनाधिक मात्रा अवश्य रही होगी ऐसा विश्वास किया जा सकता है। जो भी हो, यह निश्चित है कि हिन्दीतर साहित्यों में संस्कृत साहित्य का प्रभाव सर्वाधिक मात्रा में पड़ा। अत यह आवश्यक होगा कि संस्कृत साहित्य पर एक विहगम दृष्टिपात कर लिया जाय।

काव्य शास्त्र राजशेखर ने काव्य मीमांसा में काव्य शास्त्र की उत्पत्ति सरस्वती पुत्र काव्य पुरुष के द्वारा हुई बताई है। काव्य पुरुष ने अपने १७ मानस पुत्रों को इस का व्याख्यान किया और शिष्यों ने काव्य शास्त्र को १७ अधिकरणों में विभक्त करके अपने अपने विषयों पर स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखे।[2] परन्तु यह मत विद्वानों को मान्य नहीं है। काव्य शास्त्र का वास्तविक आरम्भ दर्शन और व्याकरण के मूल ग्रन्थों के बहुत बाद ईसा की पहली पाँच शताब्दियों में हुआ माना जाता है। भरत के 'नाट्य शास्त्र' का मूल रूप तो स्पष्टत

१ वही पृष्ठ ७ मूल के विनियोग से जो प्रभाव हिन्दी तक आया है उसे मौलिक ही कहना चाहिए डा० सरनाम सिंह शर्मा।

२ हि० सा० वृ० इतिहास षष्ठ भाग, स० ले० डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३१।

इसी काल की आरम्भिक रचना है।[1] इसके पश्चात काव्य शास्त्र निरन्तर विकसित होता गया। इसमें आगे चलकर पांच सम्प्रदाय विशेषकर प्रसिद्ध हुए—(१) रस सम्प्रदाय, (२) अलंकार सम्प्रदाय (३) रीति सम्प्रदाय, (४) वक्रोक्ति सम्प्रदाय और (५) ध्वनिसम्प्रदाय।

'नाट्य शास्त्र' का प्रधान विषय नाट्य है। परवर्ती काव्य शास्त्र के सम्कृत ग्रन्थों का यही मूलाधार है। इसमें रस की प्रधानता है अलंकार भी गौण रूप से है। अलंकारों को महत्त्व प्रदान करने वाले भामह सातवीं विक्रमी शताब्दी में हुए भामह का 'काव्यालंकार' ऐतिहासिक महत्त्व रखता है। दंडी ने काव्यादर्श की रचना की, जिसमें भामह की भांति अलंकारों को प्रधानता तो दी गई परन्तु रीति, गुण आदि की अनिवार्यता भी स्वीकार की गई। परन्तु दंडी का अलंकार स्वरूप उनके परवर्ती आचार्यों का मान्य न हुआ। आठवीं विक्रमी शताब्दी में उद्भट ने भामह का अनुगमन किया। तत्पश्चात वामन ने रीति सम्प्रदाय का प्रवर्त्तन किया, जिसमें इन्होंने रीति को 'विशिष्ट पद रचना' और 'काव्यात्मा' भी माना। यह भी परवर्ती आचार्यों को अमान्य रहा। रुद्रट अलंकारवादी आचार्य हुए। विक्रम की नवीं शताब्दी के लगभग किसी अज्ञातनामा आचार्य ने काव्य में ध्वनिवाद का प्रवर्त्तन किया। परन्तु इसके वास्तविक प्रतिपादक और पृष्ठपोषक आचार्य आनन्दवर्धन माने जाते हैं, जिन्होंने 'ध्वन्यालोक' की रचना की। ये ध्वनि को ही काव्य की आत्मा मानते थे। आचार्य अभिनव गुप्त ने इन्हीं का अनुसरण किया। इससे रसवाद, अलंकारवाद और रीतिवाद निष्प्रभ हो गये। विक्रम की दसवीं शताब्दी में राजशेखर ने 'काव्य मीमांसा' की रचना करके काव्य शास्त्र को नये मोड़ दिए। इन्होंने अपने ग्रन्थ में सभी काव्यांगों की विशद विवेचना प्रस्तुत की। धनंजय ने दशरूपक' में नाट्य शास्त्र का निरूपण किया। कुन्तक ने वक्रोक्ति जीवितम्' लिखकर ध्वनि सिद्धान्त का विरोध और वक्रोक्ति को महत्व दिया। मम्मट ने काव्य प्रकाश' में काव्य के विविध सिद्धान्तों का समन्वय करने की चेष्टा की। बारहवीं शताब्दी में रुय्यक ने अलंकारवाद को पुनर्जीवित किया। जयदेव ने 'चन्द्रालोक' लिखकर अलंकारों की विस्तृत व्याख्या की, चन्द्रालोक के पंचम मयूख्वान्तर्गत वर्णित अलंकारों पर अप्पय दीक्षित ने 'कुवलयानन्द' की रचना की। चौदहवीं शताब्दी में विश्वनाथ ने 'साहित्य दर्पण' लिखा जिसमें भामह की भांति काव्य के विविधांगों की विस्तृत विवेचना हुई। पण्डितराज

---

१ वही पृष्ठ ३३।

इस शास्त्र में सिद्धान्त गोपनीय रखे जाते हैं। 'आगम तत्व विलास' और 'वाराही तन्त्र' प्रसिद्ध तन्त्रग्रन्थ हैं। जैमिनि, कपिल, नारद, गर्ग, पुलस्त्य, भृगु, शुक्र, बृहस्पति आदि ऋषियों ने भी कई उपतन्त्र रचे थे।[१]

तन्त्रों के तीन प्रमुख विभाग हैं—ब्राह्मण तन्त्र, बौद्ध तन्त्र और जैन तन्त्र। ब्राह्मण तन्त्र तीन प्रकार के हैं १ वैष्णवागम, २ शैवागम ३ शाक्तागम जिनमें क्रमशः विष्णु, शिव तथा शक्ति की परा देवता रूप से उपासना निहित है।[२] रीति काव्य में मिलने वाली भक्ति की क्षीण धारा पर वैष्णव तन्त्रों का परोक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है।

महाकाव्य —बाल्मीकि रामायण संस्कृत का प्रथम महाकाव्य है। संस्कृत में महाकाव्यों के चार वर्ग माने गये हैं १ महाभारत वर्ग, २ रामायण वर्ग ३ मिश्रवर्ग और ४ अवैदिक वर्ग। प्रथम वर्ग के महाकाव्यों में किरातार्जुनीय, शिशुपाल वध, नैषधचरित और नलोदय प्रमुख हैं। द्वितीय वर्ग में रघुवंश और रावणवध विशेषतः उल्लेख्य हैं। मिश्रवर्ग के महाकाव्यों में राघव पाण्डवीय प्रमुख है। अवैदिकों में बुद्ध-चरित सौन्दरानन्द और यशोधरा-चरित हैं।

इन महाकाव्यों का प्रभाव हिन्दी रीति काव्य पर विरलतम है। केवल भक्ति की कतिपय रचनाओं में प्रसंग चर्चा हुई है। पद्माकर ने बाल्मीकि रामायण का भाषानुवाद 'राम रसायन' नाम से किया। रसिक गोविंद ने रामायण सूचनिका लिखी। इस युग में महाभारत के भी कई अनुवाद हुए।[३]

स्फुट काव्य—संस्कृत में तीन प्रकार की स्फुट काव्य रचनाएं मिलती हैं १ धार्मिक २ शृंगारिक, ३ नीति तथा शिक्षा विषयक।

धार्मिक काव्य—इसके अन्तर्गत दो प्रकार के काव्य रचे गये १ भक्तिकाव्य, २ वैराग्य काव्य। प्रसिद्ध भक्ति काव्यों के नाम हैं—स्तुति कुसुमाञ्जलि चण्डीशतक दुर्गासप्तशती सूर्यशतक देवीशतक मुकुन्दमाला सरस्वती स्तोत्रावलि शिवापराधक्षमापण स्तोत्र मंगलाष्टक महिम्न स्तोत्र, पंचस्तवी आनन्द लहरी, शिवस्तोत्र, शिव ताण्डव स्तोत्र गंगा लहरी, विष्णु सहस्रनाम, देवी माहात्म्य आदि। वैराग्य विषयक में योग वाशिष्ठ और वैराग्य शतक ही अधिक प्रसिद्ध हैं।

---

१ वही, पृष्ठ ४८३।

२ भारतीय दर्शन बलदेव उपाध्याय प्र० सं० १९४२ ई०, पृ० ५३८।

३ देखिए इस प्रबन्ध का द्वितीय प्रकरण अनूदित काव्य प्रसंग।

शृंगारिक काव्य—इन काव्यों का प्रधान विषय प्रेम और सौंदर्य है इस की रचनाओं में शृंगार तिलक, शृंगार शतक, अमरुकशतक, गीत गोविंद चौर पंचाशिका, ऋतु संहार, घट कर्पर, मेघदूत, आर्यासप्तशती, आदि के नाम आते हैं।

नीति तथा शिक्षा ग्रन्थ—इन ग्रन्थों के वर्ण्य विषय मानव धर्म, नीति, राजनीति और शिक्षा आदि हैं। इस में प्रमुख ग्रन्थ हैं नीतिशतक, उपदेश-शतक हितोपदेश, पंचतंत्र, चारुचर्याशतक, नीति मंजरी, मुग्धोपदेश, नीति रत्न, सुभाषित रत्न भाण्डागारम् राजनीति समुच्चय, साधन दीपिका, राजेन्द्र कर्णपूर, चाणक्य नीति, चाणक्य राजनीति आदि। चौरपंचाशिका, सिंहासन द्वात्रिंशति, वेताल पंचविंशति कृष्णाष्टक, राधाष्टक, रामाष्टक, दुर्गाष्टक, गोप्याष्टक आदि कुछ स्फुट मुक्तक ग्रन्थ भी संस्कृत में हैं।

रीतिकाल का नीति और भक्ति साहित्य इन ग्रन्थों से आशातीत रूप में प्रभावित है। आलोच्यकाल के सभी रीति कवियों ने धर्म शृंगार, नीति तथा वैराग्य का वर्णन किया है।[1]

दर्शन साहित्य—जिस शास्त्र में वस्तु का सत्यभूत तात्विक स्वरूप निरूपण होता है, उसे दर्शन की संज्ञा दी गई है। भारतीय दर्शन का मूलस्रोत वैदिक साहित्य है। दर्शन की चौदह विद्याओं में गणना है। वेद के उपांग न्याय और मीमांसा दर्शन के ही अंग हैं।[2] वेदोक्त परलोक के मानने वाले व्यक्ति आस्तिक और न मानने वाले नास्तिक कहलाते हैं।[3] इन्हीं के अनुसार आस्तिक और नास्तिक दो प्रकार के दर्शन शास्त्र बताये गये हैं। चार्वाक माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक, वैभाषिक और आर्हत ये छः नास्तिक दर्शन हैं वैशेषिक न्याय सांख्य, योगपूर्व मीमांसा और वेदान्त ये छः आस्तिक दर्शन हैं।[4] नास्तिक दर्शन का रीतिकालीन साहित्य से कोई सम्बन्ध नहीं। वेदान्त योग और सांख्य ये तीन हमारे साहित्य को प्रभावित करते हैं।

हिंदी के भक्ति काव्य पर वेदान्त का अधिकतम प्रभाव है। द्वैतवाद अद्वैतवाद और विशिष्टा द्वैतवाद के आधार पर भारत में विभिन्न मत और सम्प्रदाय प्रवर्तित हुए। जीव माया और ब्रह्म को लेकर खंडन मंडन भी हुए इन सभी की हिन्दी साहित्य पर गहरी छाप है।

---

१ वही द्वितीय प्रकरण, भक्ति, वैराग्य और नीति कथन प्रसंग।
२ हिंदुत्व रामदास गौड पृष्ठ ५०३।
३ नास्ति वेदोदितोलोक इति येषां मति स्थिरा।
नास्तिकास्ते तथास्तीति मतिर्येषांत आस्तिका॥ वही, पृष्ठ ५०४
४ वही पृष्ठ ५०४।

शकर-मत अद्व तवाद का पोषक है। रामानुजीय मत विशिष्टाद्व तवादी है। मध्वाचाय द्व तवादी हैं। भक्ति के क्षेत्र मे इन्ही मतो को लेकर कतिपय सम्प्रदायो का उन्य हुआ। रसिक गोविद, ग्वाल, हरदव, गोपालराय आदि रीतिकालीन कवि किसी न किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बधित थे। उन के काव्या म इन सम्प्रदाया और मतो के सिद्धान्तो की क्षीण सी रेखायें अवश्यमेव निखती हैं। ये सभी राधाकृष्ण के उपासक थे, उन पर लिखे काव्यो म विशेषकर वैराग्य विषयक कविताओ म वेदान्त की झलक मारती है।

रीति काव्य म नाटक और कथा साहित्य नही रचा गया।

रीति साहित्य पर सस्कृत का प्रभाव सस्कृत साहित्य का सर्वाधिक प्रभाव रीति के काव्य शास्त्र पर पडा है। प्रभाव दृष्टि से रीतिबद्ध काव्या का दूसरा स्थान हो सकता है। तत्पश्चात भक्ति वराग्य, नीति और इतर विषय के ग्रन्थ आते हैं।

सस्कृत साहित्य शास्त्र परम्परा रीति के आचार्यों को उत्तराधिकार म प्राप्त हुई। यह भरत से आरम्भ होकर पडितराज जगनाथ के साथ समाप्त होती है। जहाँ यह ह्रासो मुखी हुई वही से हिन्दी रीतिकाल आरम्भ हुआ। उत्तर कालीन सस्कृत काव्य शास्त्र म तत्कालीन काव्य परिस्थितिया के अनुकूल वर्ण्य विषय और विस्तार था। रीति कविता राज्याश्रय मे पली थी। आश्रयदाताआ की रुचि शृङ्गारिक थी दरबारो म कवि कलाकार, चित्रकार, सगीतकार आदि रहत थे। अत इन कविया को एसे विषयो की आवश्यकता थी जिससे वे पडितो और दरबारियो को प्रभावित और प्रसन्न करके धन और यश अर्जित कर सकें। आश्रयदाताआ को भी लुभा सकें और रसज्ञजना का भी मुग्ध कर सकें। अधिकाश आश्रयदाता ऐसे कवियो को चाहत थ, जो शृङ्गार रस निष्पन्न करके उन्हें रिझा सकें उनका गुण स्तवन करके उनके अह की तुष्टि कर सकें हाला, प्याला और 'तान तुक ताला का वातावरण चित्रायित कर सकें। सयोग से सस्कृत साहित्य का शृङ्गार वणन नायिका भेद वणन, नखशिख वणन आदि इन कवियो को हस्तामलकवत् प्राप्त हा गय। सस्कृत साहित्य के इस ऋण को स्वय रीति कविया ने स्पष्ट शब्दो म स्वीकार किया है। कुछ कवियो की आभारोक्तियाँ निम्नांकित हैं

१ मम्मट मत कौ सार ल, कछुक आपने वित्त।
साहित सिरोमनि ग्रन्थ के बाधे उक्त कवित्त॥
मम्मट मत जे काव्य के कछू पदारथ कीन्ह।
ग्रन्थ बाध पूरा कियौ, कवि निहाल मतिहीन॥

—साहित्य शिरोमणि निहाल।

२ कातिमान ससि हो तो कीरति मान।
यह कुवलयानद मत कह विधान ॥२२१॥
और काज आरम्भ करि और और।
चद्रालोक लिखे इमि कवि सिरमौर ॥२६८॥
प्रगट अय फिर साधै, विधि कहि मोइ।
कहि कुवलयानद काव्य मनहोइ ॥३७५॥
—साहित्य सुधानिधि, जगतसिंह।

३ नील कमल लीला तव बरनै नन।
चद्रालोक देखे इमि कहि ऐन ॥१६१॥
चद्रालोक आदि दे भाषाकोन।
कहि सान्त्रिय सुधानिधि वरबैबीन ॥१०॥
क्षीर जनधि भव पकज यो कहि मेव।
चद्रालोव लिखो कवि श्रीजयदेव ॥४६॥
कुवलयानद चद्रालोक के मत कही, लुप्ता ये आठो आठा पहर बखानिये।
परतच्छ प्रमुख प्रमान आठो अलकार, कुवलयानद बखाने जग जानिये॥
—कवि कुल कठाभरण, दूलह कवि।

४ लखि गति चन्द्रालोक अरु काव्य प्रकास सुदीप्त।
औरो भासा ग्रन्थ बहु, ताको सगत गीत॥
—काव्य रत्नाकर रणधीर सिंह।

५ रसिक कुवलयानद लखि, अस मन हरस बढ़ाई।
अलकार चद्रोदयहिं, बरनतु हिय हुलसाई ॥४॥
तिन मधि कुवलयानद मत, अपनो कियो उद्योग।
अलकार चद्रोदय सु निकस्यो लिखिवे जोग ॥१८७॥
—अलकार चन्द्रोदय, रसिक सुमति।

६ अब कुवलयानद को वाच्यो दलपतिराय।
बसीधर कवि न धरयो कहूँ कवित्त बनाइ ॥३॥
तदपि अलकृत ग्रन्थ को, काहू कवि नहि कीन।
भाषा भूषण है जऊ कहूँक लक्षन हीन ॥६॥
याते ताहि सुधारि कै देखि कुवलयानन्द।
अलकार रत्नाकर जु किय कवि आनन्द कद ॥७॥
—अलकार रत्नाकर, दलपतिराय।

७ व्यंग अरथ अति से कठिन, को कहि पाव पार।
मम्मट मत कछु समुझि चित, कीनो मति अनुसार ॥
—व्यंगार्थ कौमुदी, प्रतापसाहि।

८ याते काव्य प्रदीप कौ, और कुवलयानंद।
ऊपर सु ग्रंथ अनेक लषि, जे अति भये पसंद ॥
—वाणी भूषण रामसहाय दास।

८ सम्मत काव्य प्रकास को और कुवलयानंद।
चंद्रालोक लताकलप, चंद्रोदय सुभकंद ॥
—तुलसी भूषण, रसरूप।

१० कुवलया चन्द्रालोक मं, अलंकार के नाम।
तिनकी गति अवलोकि कें अलंकार कहिराम ॥
—रघुनाथ अलंकार, सेवा दास।

११ ग्रन्थ संस्कृत देखि कें, समुझि कविन को अर्थ।
तथा तथा ही मं कह्यो, जनिहै बुद्धि समर्थ ॥
—काव्याभरण चन्दन।

१२ रूपक में अति व्याप्ति या, या लक्षन की जाति।
कह्यो मे कह्यो जु सो विख्यात ॥१६।६६॥
—साहित्यानन्द, ग्वाल।

अलंकार कितने कहै, कविप्रिया के माहि।
भाषा भूपन ते जुदे नाम लिये चित माहि ॥१६।३८७॥ ,,
मो न जुदे करि जानिये, भाषा भूषन माहि।
किये विचार जु जातमिलि नामांतर ठहराइ ॥१६।३८८॥
लपत कहू जु प्रहेलिका, अलंकार मे माहि।
चन्द्रालोकहु मं नहीं काव्य प्रकास हु नाहि ॥३८२॥ ,
चार तज लक्ष इन कहि लिये मम्मट जू।
सोई अब ज्यों के त्यो सुनावत हौं टेर टेर ॥१५।६८॥ ,, ,
कहि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचार।
इन करि इनकी पूनता सो रस भरत उचार ॥४।२॥ ,
विभिचारी तेतीस ये, भाये भरत प्रमान।
चोतिसम को भेद जो, सो अब करत बषान ॥३।३०६॥ ,,
और कह्यो नूतन, सु दर छल सचारी जोद।
रस तरंगिनी कारने थापिन कीयो साइ ॥३।३०७॥ , ,,

ग्रन्थ संस्कृत कोसु इक, रति रहस्य है नाम।
साहित्यानन्द, ग्वाल।

तामें लेप प्रमान यह, बरनत सब सुखधाम ॥४।३७॥
बातसायनी सूत्र मत, जाही के अनुसार।
कहियत है अब और हू, जाति भेद सुविचार ॥४।५४॥ ,,   ,,
भानुदत्त ने जो लिखा, रस मंजरि के माहिं।
सो लक्षन अब लिखत हैं, इन दोस कछु नाहिं ॥४।६४॥ ,,   ,,
रस मंजरि में त्रय लिखे, स्वप्न, चित्र साक्षात।
भाषा में चौथो कहत, सबन दरस विख्यात ॥५।२८॥
—रसरंग, ग्वाल।

१३ छन्द वेद कौ अङ्ग है, कहत मुनिन के वृन्द।
याते पढ़ियतु प्रात ही बरनें नाग फनिन्द ॥३॥
—छन्द पयोनिधि, हरदेव।

१४ ज जे पिंगल नाग, छन्द रीति जिन प्रगट किय।
तिहि मत मति अति लाग, गद्य पद्य अभिधान किय ॥५॥
—पिंगल प्रकाश, नन्दकिशोर।

१५ व्यंग अर्थ अति सैं कठिन, को कहि पावै पार।
मम्मट मत कछु समुझि चित, कीन्हो मति अनुसार ॥
—व्यंग्यार्थ कौमुदी, प्रतापसाहि।

संस्कृत ग्रन्थों के नामों का प्रभाव रीति ग्रन्थकारों ने अपनी रचनाओं के नाम अधिकांशतः संस्कृत के ग्रन्थों के आधार पर रखे। संस्कृत-नामों का प्रभाव कहीं तो समग्रतः और कहीं कम से कम छायारूप में हिन्दी में अवश्य दृष्टिगोचर होता है। *निम्नलिखित ग्रन्थ नाम तालिका से यह स्पष्ट* हो जायगा कि हिन्दी कवियों ने किस सीमा तक संस्कृत के नाम अंगीकृत किये।

वाणी भूषण (दामोदर मिश्र) प्रतापरुद्रयशोभूषण (विद्यानाथ) नन्दराज यशोभूषण (नृसिंह कवि) आदि। भूषणान्त ग्रन्थों के दृष्टान्त हैं—वाणी भूषण (रामसहाय दास) भारती भूषण (गिरधर दास) वनिता भूषण (गुलाबदास) महेश्वर भूषण (महेश्वर) रामचन्द्राभूषण (लछीराम) भारती भूषण (अर्जुनदास केडिया) रस भूषण (कृष्णलाल) आदि।

हुए कवि शिक्षा के सरल ग्रन्थ ही तयार कर पाये थे।[1] आचाय रामचन्द्र शुक्ल के विचार हैं कि 'केशवदास क वणन म यह दिखाया जा चुका है कि उन्होंने सारी सामग्री कहाँ स ली। आग होन वाले कवियों ने भी सार लक्षण और भेद सस्कृत की पुस्तकों से लेकर लिखे हैं, जो कहीं कहीं अपर्याप्त हैं। अपनी ओर से उन्होंने न तो अलकार क्षेत्र म मौलिक काम किया, न रस क्षत्र म।[2] साराश है कि रीतिकवियों न वण्य विषयो की सामग्री सस्कृत से ग्रहण की। कहना चाहिए कि हिन्दी रीति ग्रथ कई अर्थों म सस्कृत के ग्रन्थो के छायानुवाद हैं। लक्षण समग्रत सस्कृत के और केवल उदाहरण उनके अपने हैं।

सद्धान्तिक प्रभाव जसा कि हम लिख चुके हैं हिन्दी म रस, अलकार और ध्वनि इन तीन ही सम्प्रदायो के सिद्धान्तो का अनुसरण हुआ। रीति और वक्रोक्ति सम्प्रदाय तो सस्कृत म मतप्राय हो चुके थ। अत हिन्दी म उनके अनुवतन का प्रश्न ही नहीं उठता। रीति के विविधाग विवेचन आचार्यों ने मम्मट का अनुसरण किया। मम्मट रस ध्वनिवादी थे।[3] डा० नगेन्द्र न कुलपति, श्रीपति भिखारीदास के साथ आलोच्यकाल के प्रतापसाहि का रस ध्वनिवादी[4] और बनी प्रवीन आदि आचार्यों और ठाकुर बोधा आदि रीति मुक्त कवियो को रसवादी,[5] ठहराया है। सभी बहुसख्यक अलकार ग्रन्थो के कर्त्ताओं को वे स्पष्ट अलकारवादी मानने के पक्ष म नहीं हैं क्यो कि उनके मत म न तो उन ग्रन्थकारो न रस का तिरस्कार किया है, और न अलकार को ही काव्य का प्रमाण माना है।[6] डा० साहब ने वर्गीकरण के लिये यह सिद्धान्त बनाया है कि जिन्होंने अपने रस प्रेम का कोई विशिष्ट परिचय न दे कर केवल अलकार ग्रन्थों का ही प्रणयन किया है उनको अलकार सम्प्रदाय स बाहर नहीं मान सकते।[7] वे जसवन्तसिंह (भाषा भूषणकार) के अनुयायियो ग्वाल आदि को स्पष्ट सिद्धान्त के अभाव मे भी अलकारवादी ही सकेतित करते हैं।[8] वास्तव मे इन तीनो वादो के अनुयायियो के मध्य कोई स्पष्ट विभाजक रेखा खीचना भगीरथ प्रयत्न साध्य है। इसका कारण है कि इन

---

१ वही पृ० १६६–६७।
२ हि० सा० इतिहास—आचाय रामचन्द्र शुक्ल पृ० २२७।
३ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र, पृ० १६९।
४ वही, १६६। ५ वही, १७०। ६ वही, १७१।
७ वही, १७१। ८ वही, १७१।

कवियों ने प्रथम कोई स्पष्ट सिद्धांत-कथन ही नहीं किया, दूसरे उसका परि-पोषक ग्रंथ नहीं रचा। तीसरे प्राय सभी रीति कवि मूलत शृङ्गारी हैं, अत रसवादी हैं। प्रतापसाहि को ध्वनिवादी केवल उनकी 'व्यंग्यार्थ कौमुदी' के आधार पर कहा गया है पर उन्होंने व्यंग्य के माध्यम से रस का ही निरूपण किया है। ग्वाल को अलंकारवादी कहा गया है, पर उन्होंने भी निरूपण शृंगार रस का ही किया है।[1] उधर ग्वाल ध्वनि को काव्य की आत्मा मानते हैं

सब्द अर्थ है सरीर सब्द अप्रभाग जाको,
अर्थ प्रिष्ट भाग बड भाग पहिचानिये।
व्यङ्ग धुनि जीव अतिस जे व्यङ्ग सोइ धुनि,
कहू व्यङ्ग कहूँ धुनि असे जीवन जानिये॥
ग्वाल कवि अद्भुत उक्ति जे बसन बेस,
माधुरज आदि गुन गुन सन मानिये।
भूषन ते भूषन यों काव्य रूप कहियत,
अर्थ व्याधि व्रण कफ दोष दुख दानिये॥[2]

ऐसी दशा मे इनको भी ध्वनि रसवादी ही मानना समीचीन प्रतीत होता है। अस्तु। यहाँ हम केवल यह देखना है कि संस्कृत के सिद्धांतों का रीति काव्य पर क्या प्रभाव पडा। अत हम उक्त विषय के विस्तार मे नहीं जायेंगे।

रस सिद्धांत का प्रभाव – रस' शब्द का प्रयोग वैदिक साहित्य से ही आरम्भ हो जाता है। 'शतपथ ब्राह्मण' में 'रसो वै मधु' कहा गया है। तैत्तरीय उपनिषद मे रसो वै स। रस ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति। अर्थात् वह रसरूप है। इसलिये रस को पाकर, जहाँ कहीं रस मिलता है उसे प्राप्त कर, मनुष्य आनन्दमग्न हो जाता है।[3] परमात्मा रस है और रस चिदानन्द रूप है—'रस सार चिदानन्द प्रकाश।' संस्कृत काव्यशास्त्र मे रस को काव्य की आत्मा माना गया। 'काव्य मीमांसा' में राजशेखर ने रस को काव्य पुरुष की आत्मा माना है– शब्दार्थौ ते शरीरं संस्कृतं मुखं, प्राकृतं बाहु उक्ति चरण, ... ते वच रस आत्मा, रोमाणि छन्दांसि।[4] ध्वनि के विरोधी

१ ग्वाल ने अपने साहित्यानन्द के षोडस स्कन्ध मे 'अलंकार भ्रम भंजन' शीर्षक से ४२६ दोहों में अलंकार निरूपण किया। यह कोई पृथक ग्रंथ नहीं है। विशेष परिचय इस प्रबंध के षष्ठ प्रकरण मे है।

२ साहित्यानन्द— १२।४, ग्वाल।

३ रस सिद्धांत—डा० नगेन्द्र, पृ० ६।

४ हिन्दी साहित्य—द्वितीय खंड, स० डा० धीरेन्द्र वर्मा पृ० ५४२।

आचार्योंमें दण्डि, आनन्दवर्धन, भट्टनायक, धनञ्जय, धनिक आदि ने भी रस को काव्य की आत्मा मान कर उसका महत्त्व प्रतिपादित किया। भोजराज की दृष्टि में रस-काव्य ही सर्वोपरि है। सरस्वती कण्ठाभरण में—

वक्रोक्तिश्च रसोक्तिश्च स्वभावोक्तिश्च वाङ्मयम्।
सर्वासु ग्राहिणी तासु रसोक्तिम् प्रति जानते ॥[1]

लिखकर शृङ्गार प्रकाश में रस का दार्शनिक विवेचन प्रस्तुत करते हुए शृङ्गार को पूर्ण रस के रूप में स्वीकार किया है। 'शृङ्गार उत्कर्ष की ओर ले जाने वाला है—यत शृङ्गरीयते।[2] आचार्य विश्वनाथ के अनुसार तो रसात्मक वाक्यम् काव्यम् ही है। संक्षेप में संस्कृत साहित्य में रस को परमात्मरूप, ब्रह्मानन्द सहोदर निज स्वरूपानन्द आदि कह कर उस को सर्वमान्यता प्रदान की गई। रसात्मक काव्य की सर्वोत्कृष्ट काव्य के रूप में प्रतिष्ठा हुई और हिन्दी के रस ग्रन्थों में इसका प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित हुआ।

रीति कवियों ने रस की निष्पत्ति के निरूपण में भरत के नाट्य शास्त्र के रस लक्षण को ही अनेक रूपों में परिभाषित किया। भरत का रस लक्षण है– तत्र विभावानुभाव व्यभिचारि संयोगाद्रस निष्पत्ति।[3] साहित्य दर्पणकार ने भी इसी लक्षण को स्वीकार किया।[4]

आलोच्य काल के कवियों ने इन्हीं रस सिद्धान्तों का न्यूनाधिक अनुसरण करते हुए कहा —

"कहि विभाव अनुभाव अरु सात्विक पुनि विचार।
इन करि थति की पूरणता, सो रस भरत उचार ॥
चिदानन्द घन ब्रह्म सम, श्रुति हू करत उचार।
सो रस द्वै विधि लौकि-कजु, बहुरि अलौकिक धार ॥
—साहित्यानन्द, ग्वाल ४।१–४

'रस आनन्द स्वरूप है लिख्यौ सुकवि सब पंथ।
वही ४।१७।

---

१ सरस्वती कण्ठाभरण—भोजराज ५ ८।
२ हिन्दी साहित्य, द्वितीय खण्ड, डा० धीरेन्द्र सम्पादित पृ० ४४२।
३ नाट्य शास्त्र काव्य माला, ४२ पृ० ... ५।
४ विभावे ना

"लहि विभाव अनुभाव अरु सचारिन के सग।
वर्तमान थिरभाव जो, सो रस जान अभग।।"
—रसिक विनोद चन्द्रशेखर वाजपेयी, ३८७।

संस्कृत के 'शृङ्ग हि मन्मथोद्भेद,'[1] के अनुसार हिंदी में भी इसकी व्याख्या की गई।

शृङ्ग कहत प्राधान्य को, समताल आकार।
कहत रकार मनोज को, अक्षराथ उरधार।।३८।।
शृङ्ग, आर को संधि करि, होत तब शृङ्गार।
है प्रधानता भलो विधि, जिहि मनोज को धार।।३६।।
—साहित्यानन्द ग्वाल, ४।३५-३६

यही नहीं संस्कृत की भाँति हिंदी में भी शृङ्गार रसराज बना।

रसनि सार सिंगार रस, प्रेम सार सिंगार। —शब्द रसायन, देव।
भूलि कहत नव रस सुकवि, सकल मूल शृङ्गार।।
—भवानी विलास, ११० देव।

रस सिंगार के विष्णु प्रभु, याते प्रथम सिंगार।।३३।।
जसे विष्नु विख्यात हैं, सब देवन सिरताज।
तसे विष्नु प्रताप ते, है सिंगार रसराज।।३४।।
—वही ४।३३-३४।

ताहि कहत सिंगार हैं, सकल रसन को राव।
—बेनी प्रवीन, नवरस तरग।

नवरस में सिंगार रस, सिरे कहत सब कोइ।
—पद्माकर, जगत विनोद।

अलंकार सिद्धान्त का प्रभाव —अलंकार वादी संस्कृत आचार्यों की कुछ उक्तियाँ इस प्रकार हैं

अंगीकरोति य काव्य शब्दार्थावनलंकृती।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलंकृती।। —चन्द्रालोक, जयदेव।
'काव्य शोभा करान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते।'—दण्डी काव्यादर्श।
'काव्यशोभाया कर्त्तारो धर्मा गुणा। तदतिशयहेतवस्त्वलंकारा।'
—काव्यालंकार, वामन।

अलंकारवादी बिना अलंकार के काव्य को अकल्पनीय समझते हैं। यही धारणा हिन्दी में भी है। देखिये—

---

१ साहित्य दर्पण—विश्वनाथ।

कविता वनिता रसभरी सुदर होइ सुलाख।
बिन भूषन नहि भूषहीं यहै जगत की साख॥

—*अलकार आशय, उत्तम चन्द भडारी।*

सस्कृत म १०८ अलकार लिखे गये हैं। हिदी मे उन्हीं का अनुसरण किया गया।

ध्वनि सिद्धान्त का प्रभाव— ध्वनि को काव्य की आत्मा मानने वाले सम्प्रदाय के पृष्ठ पोषक और प्रवत्तक आनन्दवद्धन हुए जिन्होन 'ध्वन्यालोक' मे लिखा

काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधय समाम्नातपूर्व
स्तस्याभाव जगदुरपरे भक्तिमाहुस्तमन्ये।
केचिद्वाचा स्थिति विषये तत्वमूचुस्तदीय
तेन ब्रूम सहृदयमन प्रीतये तत्त्वरूपम्॥
काव्यस्यात्मा स एवाय तथा चादि कवेपुरा।
क्रौंच द्वद्व वियोगोत्थ श्लोकत्वमागत॥[1]

हिन्दी मे भी ध्वनि काव्य की आत्मा मानी गई।

व्यग जीव है कवित मे, शब्द अथ गति अग।
सोई उत्तम काव्य है, बरन व्यग प्रसग॥[2]
व्यग होय या होइ धुनि जामे भरौ प्रधान।
छद सु उत्तम काव्य को वरनत कवि गुनखान॥[3]

ध्वनि और ध्वनि के अगोपागो का प्राय ज्यो का त्यो सस्कृत के आधार पर हिन्दी म ग्रहण किया गया।

कहने की आवश्यकता नहीं कि नायिका भेदोपभेद रसदोष आदि के क्षेत्र म भी हिन्दी कवियो ने सस्कृत साहित्य का ही अनुसरण किया।

फारसी तथा उदू साहित्य का प्रभाव— सस्कृत के उपरान्त फारसी और उदू का हिन्दी रीति *काव्य पर प्रभाव हुआ। रीति कविता का जन्म राज्य* दरबारो म हुआ। अरबी और फारसी तत्कालीन शासको की भाषा थी और उदू लश्कर की भाषा बनी। उदू भाषा का जन्म हिन्दू और मुसलमानो सस्कृति म हुआ। यह जन्मी तो भारत म, पर इसका पोषण फारसी द्वारा

१ ध्वन्यालोक, १।५।
२ व्यग्याथ कौमुदी, प्रतापसाहि।
३ साहित्यानन्द, ग्वाल १२।१२।

द्वारा हुआ। वास्तव में यह पश्चिमी हिन्दी है, जिसमें फारसी के शब्दों की बहुलता है। प० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी के अनुसार हिन्दी या हिन्दवी इसका प्राचीन नाम था। दक्खिनी भी इसी को कहते थे।[1] शनैः शनैः उर्दू का रूप फारसी से परिपुष्ट होता गया और यह पृथक भाषा बन गई। अब फारसी, हिंदी और उर्दू तीनों भाषाओं में परस्पर विनिमय होने लगा। उर्दू एक प्रकार से फारसी लिपि में लिखी जाने वाली फारसी शब्द सम्पत्ति प्रधान हिन्दी ही थी।

शासकों की भाषा को हिन्दुओं द्वारा ग्रहण करना एक व्यावसायिक अनिवार्यता थी। मुसलमानी दरबारों में फारसी अरबी का ही बोलबाला था। अतः आजीविका के लिये हिन्दी कवियों को उस भाषा के बहिरंग गुणों को अंगीकृत करना आवश्यक था। हिन्दुओं ने इन विदेशी भाषाओं को पढ़ा भी और सम्पर्क से अपनाया भी। हिन्दी की अन्तरंग विशेषताओं—व्याकरण, लिपि आदि पर तो अरबी फारसी और उर्दू का कोई प्रभाव न पड़ सका, परन्तु उसके स्वभाव और चेतना में इनके साहित्यों ने अपनी स्थिति बनाली। यह समन्वय की ही प्रवृत्ति कही जायगी।

हिन्दी स्वभाव और चेतना पर प्रभाव—फारसी उच्छृंखल मनोभाव की भाषा है। इसमें अलंकरण की प्रवृत्ति का प्राधान्य है। बहिरंग जीवन के अधिकाधिक चित्रण में ही इसकी विशेषता निहित रही है। फारसी के ऐन्द्रिय तत्वों को अपना कर उर्दू परिपुष्ट हो गई। उसमें गुलो बुलबुल, शमा और परवाना, साकी और मयखाना इश्क और पैमाना आदि प्रतीकात्मक व्यंजनाएं ऐन्द्रिय आधार पर घर कर चुकी थी। मध्ययुगीन सूफी कवियों ने फारसी लिपि को अपना कर उर्दू में अपना साहित्य लिखकर एक परम्परा की ही स्थापना करदी थी। ये प्रेम गाथाकार कवि अपने 'माशूक' के सम्बन्ध में दूर की कौडी लाने के लिये जमीन और आसमान के कुलावे मिलाते हुए

१ रिसाला उर्दू — अप्रेल १९२९, डा० शिवलाल जोशी द्वारा रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में पृ० २८२ पर 'हिन्दी या हिन्दवी इसी का कदीम तरीन नाम था। उर्दू और दक्खनी के लिये यह लफ्ज बिला तकल्लुफ इस्तेमाल होता था। गोया उर्दू, हिन्दी और दखनी एक ही जुबान के मुख्तलिफ नाम थे। इस जबान की शायरी रेख्ता कहलाती थी।' प० अम्बिका प्रसाद बाजपेयी द्वारा 'मीर अम्मन' की बागो-बहार' के दीवान से उद्धृत।

ग्वाल कवि' जिसने चलाया आफताव तिस
गोपिया सिखाती रफ्तार हरचन्द है।
चार सिर वाले के करिंदे है जिसी के
वही ब दे प महरबान नज़रबुलन्द है ॥[1]
—ग्वाल।

इश्क चमन महबूब का वहा न जाव कोय।
जाव सो जीव नही, जिय सो बौरा होय ॥[2] —नागरीदास।
वाल बिथुरे परो प जा पडे हैं।
मानो अगर सो लटे चपेटे भुजग अडे हैं ॥
अबर अतर सो तर है जिनसे सुमन झडे हैं।
मस्तूल के छके है जिय म रहे अडे हैं ॥[3] —ब्रजनिधि।
जुगल वर अकीकी लवा कस कसे। फवे नील पीले पटा कसे कम ॥
खुमारी न समझो है बीमार चश्म। झुक पडत हैं नातवा कस कस ॥
पलक अबरुओं से ही करत हैं घायल। बनाय हैं तीरो कमा कैसे कसे ॥८॥[4]
—ललित किशोरी।

उन्नीसवी शताब्दी के हिंदी कवि हफीजुल्ला खा हाफिज (सवत् १६३६) का एक अरबी फारसी मिश्रित ब्रजभाषा का सवैया प्रस्तुत है—
कासा कहौ मन की ये जिया, कछू अपने तन आप जराने परौ।
खशो बुजुग अकारिब राह मे देखि अत्यन्त लजाने परौ ॥
तरी मुहब्बतो उल्फत मे हमे 'हाफिज हाय बिकाने परौ।
दिल रफ्त जिदस्त न मुन्द बदस्त[5] अफसोस महापछितान परौ ॥
—(हाफिज—नवीन सग्रह हफीजुल्ला खा। सन् १६२३ ई०

सूफिया के अद्वैतवाद की झलक उदू फारसी मिश्रित ग्वाल के निम्नाकित कवित्त म स्पष्टत दीखती है।
मक्का भी तिहारा सभी ठाकुर दुआरे तेरे,
दोजख क्या बहिश्त सब तराही सहारा है।
जिसे चाहे दोजख दे जिसे चाहे बहिश्त देवे,
मालिक मुलक दीन दुनी का तू मारा है ॥

---

१ कृष्णाष्टक ग्वाल (हस्तलिखित) छद स० २।
२ रौ० का० साहित्य की पृष्ठभूमि पृ०, २८४।
३ वही २८४।
४ चत्य मत और ब्रज साहित्य प्रभुदयाल मीतल पृ० ३२७।
५ मन हाथ से गया।

आसमान औ जमीन कबजे मे तेरे सदा,
तू तौ बेनमूद को नमूद करनहारा है।
बधे हुए दिलों का तुही खोल देने वाला,
तेरी दृष्टि ही ते दग सबके उज्यारा है॥
तेरी ही सु बात पर कहना औ सुनना है
नूर यह तेरा ही सभी मे झमकत है।
तेरे ही सु जेर का बना है बाद आफताब
तेरे तें न खाली कोई चीज गमकत है॥
तू तौ है न कोई चीज जिसका म नाम धरूँ
तू ही हर चीज मे सदा दमकत है।
मोती मे न है तू औ न है तू पत्थरो मे कहूँ
ज प हर रगन मे तू ही चमकत है॥[1]

रीति काल क अतिम चरण मे फारसी और उर्दू की शब्दावली तो हिंदी ने ग्रहण की ही, इन भाषाओं के साहित्य म वर्णित एकातिक प्रेम व्यजना के स्वरूप की छाया भी इस युगात के कवियो ने न्यूनाधिक रूप म ग्रहण की। यह दूसरी बात है कि फारसी उर्दू का कुछ स्वरूप हिन्दी रीति काव्य म कुछ वक्तव्य के साथ प्रस्तुत हुआ, परन्तु रीतिमुक्त कवियो—बोधा, ठाकुर आदि म उस प्रेम की पीर को पहचानने—पहचनवाने के प्रयत्न पाये जाते हैं। उर्दू काव्य धारा के सामयिक शायरो म स मीर तकी जौक, हातिम क कुछ शेरो की बानगी देना यहाँ उचित जान पड़ता है—

मीर— मग इक याद की का वफा है,
यानी आगे चलेंगे दम लेकर।
जौक— कहा पतग ने ये दारे शमअ पर चढकर,
अजब मजा है जो जीते किसी क सर चढ़कर।
हातिम— फकीरों से सुना है हमने हातिम,
मजा जीने का मरजाने मे देखा।
हिज्र की जिंदगी से मौत भली,
कि जिसे सब कहें विसाल हुआ।

फारसी शैली का प्रभाव रीति काल के काव्य पर फारसी और उर्दू की शैलियो का भी प्रभाव निर्विवाद रूप से पड़ा। केवल एक ही उदाहरण

---

१ इश्कलहर दरयाय ग्वाल, पहली दास्तान ५४–५५।

अनुवाद का एक दृटान्त यहाँ पर देना अप्रासगिक न होगा।

मीर हसन का छद—

'फकीरी जो कीव तो दुनिया के साथ।
नही गूब जाना उधर खाली हाथ॥
करो सल्तनत करो ऐमाल एक।
कि ताजो जहाँ म रहे हाल नक॥
जो आकिन हो वह सच्च म लगा रहे।
जो ऐसा न होवे कि फिर सब कह॥
तु कार जिमोरा निको मारवती।
कि बर आसमानी जि पर दावती।'

ग्वाल का छद—

"जो प फकीरी आप करनी विचारियत,
तो प करो दुनिया के साथ खुदा ब दगी।
खाली हाथ ऊपर का जाना नही बहतर।
करो बादशाही अमल अच्छे होय च दगी॥
जिमस होव दानो ही जहान माहि नेकनामी,
ये ही फिकर रख अकलमद तज ग दगी।
याते नेक नेक काम करने मुनासिब हैं।
खुदा की पसन्गी स होगी सफल जि दगी॥"

सुमन विलास' का एक अनूदित छन्द उदाहरणार्थ निम्नोक्त है —

'थोरी वमनलित सुगोरी गरवीली चाह सोहत गरे म गज मोतिन क हार है।
उनहत उरोज, औप मजुल कपोलन की, मलिन करै है दुति मुकर सुचारु हैं॥
थमी कवि खजन, कमल, मृग मीन हू को कोरदार दीरघ दगन पर वार हैं।
दूबी सी लगत इन्दु आभा अति ऊभी चाह आनन अजूबी खूबी रति की निवार है॥

उपयु क्त विवचन स स्पष्ट होता है कि आलोच्यकाल क रीति काव्य पर फारसी और उर्दू साहित्य का यथेष्ट प्रभाव पडा है।

पजाबी साहित्य का प्रभाव पजाबी एक स्वतन्त्र भाषा है। यहाँ हिन्दी को शास्त्र कहते हैं।[1] एतिहासिक खोज से प्रमाणित होता है कि पजाबी को आस पास की भाषाए भीचती रही है और इसम दिल्ली आगरा के दायकालीन प्रभाव के कारण हिन्दी ने इसे पश्चिम की ओर ढकेल दिया है।[2] इसकी लिपि गुरुमुखी है। पुरान हिन्दी साहित्य म पजाब अपना योगदान करता रहा और उसम ब्रजभाषा का प्राधान्य रहा है। पजाब म राजभक्ति की प्रमुखता रही। अत हिन्दी को लोकप्रिय बनाने का श्रेय यहाँ राम साहित्य को ही देना चाहिए। परन्तु यहा सबसे बडी कठिनाई लिपि की है। पजाब का सम्पूर्ण साहित्य गुरमुखी लिपि म सुरक्षित है। लिपि की कठिनाई के कारण अभी वह हिन्दी से दूर है।

हिन्दी और पजाबी दोना ही दो विशाल जनसमूहो की जीवित विकासोन्मुखी भाषाएँ हैं। इनमे परस्पर विनिमय भी होता रहा है। पजाब म लिखे गये हिन्दी साहित्य म पजाबी शब्दावली के साथ साथ पजाबी क्रियापद और कारकादि भी प्रयुक्त होते रहे हैं। पजाबी हिन्दी साहित्यकार ही नही, पूर्व से गये कवियो ने भी पजाब म रहकर पजाबी भाषा साहित्य की विशेष साओ को अशत अगीकृत किया। इन कवियो म चन्द्रशेखर वाजपयी ग्वाल, गोपालसिंह नवीन, गोपालराय आदि रीतिकालीन कवि प्रमुख हैं। 'पजाबी मिश्रित ब्रजभाषा की रचनाएँ भी एक शैली विशेष का रूप ले गई थी। इसे 'व्रजी' कहते थे। व्रजी की स्थिति पजाब म वही थी, जो बगाल म ब्रजबुली की थी बगाल मे ब्रजबुली कृष्ण भक्ति का स्रोत थी तो पजाब म 'व्रजी' गुरुभक्ति का। गुरुभक्ति का अर्थ था उन दिनो मुसलिम शासन के आक्रोश से स्वत्व की रक्षा।[3] परिणामत यह विप्लव की भाषा बन गई। भारत का शासक वर्ग फारसी का पक्षपाती था। गुरुओ के शौर्य पराक्रम और बलिदान के गीत हिन्दी न ही गाये, जो गुरमुखी म लिखे गये। पजाब के जिन हिन्दी कवियो ने उन्नीसवी शताब्दी मे रीति साहित्य की रचना की, उनम लाहौर दरबार के पजनेश ग्वाल, बुधसिंह हाशम, गणेश आदि पटियाला दरबार के शताधिक कवि जिनम निहाल, चन्द्रशेखर वाजपयी, बसन्तसिंह 'ऋतुराज', वशी पण्डित कान्हसिंह आदि नाभा दरबार के गोपालसिंह नवीन, ग्वाल,

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास

—पं० चन्द्रकान्त बाली पृ० ३७।

२ हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड—सं० डा० धीरेन्द्र, पृ० ६०८।

३ सप्तसिन्धु वर्ष १४, अङ्क १० अक्टूबर १९६७ ई०।

लालसिंह दास, भाई हजूरासिंह, आदि जींद के साहबसिंह 'मगेन्द्र' आदि और कपूरथला के कविराम हरिनाम, ज्ञानी सन्तसिंह तोष हरि आदि प्रधान हैं।

पंजाबी की अपनी कुछ पारस्परिक विशेषतायें हैं। पंजाब का हिन्दी साहित्य पंजाबी साहित्य की गुरुभक्ति से प्रभावित है। सिखों के दश गुरु पंजाब ही नहीं, समस्त हिन्दू जाति के त्राता और उन्नायकों में से हैं। अतः पंजाब में इस शताब्दी का शायद ही कोई कवि बचा हो, जिसने गुरु-भक्ति को अपनी कविता का विषय न बनाया हो। पंजाब के राजघराने समग्रतः गुरुभक्त, रामभक्त और कृष्णभक्त रहे हैं। यही कारण है कि इन दरबारी कवियों ने यद्यपि रीति कविता की परन्तु कुछ अपवादों को छोड़कर जिन पर मुसलमानी दरबारों का रंग चढ़ा था किसी ने अश्लील शृंगारिक चित्रण नहीं किये। राज्य प्रशस्ति, नगर प्रशस्ति राजा के शौर्य-वंश पराक्रमादि के वर्णन गुरुभक्ति वर्णनों के पश्चात आवश्यक थे। अन्तःपुरों में इन कवियों की पहुंच नहीं थी अतः अश्लील चित्रणों की गुंजायश ही नहीं थी। फिर सिख राजा सर्वांगतः विलासमग्न नहीं थे। पंजाब में वैलासिकता कम ही थी।

पंजाब की गुरुभक्ति परम्परा में गुरुपचासा, गुरुशतक आदि प्रत्येक हिन्दी कवि ने लिखे। ग्वाल और चन्द्रशेखर बाजपेयी ने दो हम्मीर हठ नामक वीर काव्य लिखे। भक्ति नीति और वैराग की प्रचुर रचनाएं हुईं। लक्षण ग्रन्थों में नृप प्रशस्ति को जोड़ा जाता था। अनेक बारहमासे और षटऋतु वर्णन भी लिखे गये।

पंजाबी मिश्रित हिन्दी के कुछ प्रेम व भक्ति सम्बन्धी प्रसिद्ध बारहमासा की तालिका[1] निम्नोक्त है—

लेखक	ग्रन्थ
भवानीदास	रामचन्द्र की बारहमासी
लालदास	भरत ,,
देवीसिंह	कौशल्या जी ,,
	श्री युगलकिशोर की बारहमासी
कवि किंकर प्रभु	गोविन्द बलदाऊ ,,
	राधा जी की ,,

१ यह तालिका पं० चन्द्रकान्त बाली के पंजाब प्रान्तीय हि० सा० इतिहास के आधार पर प्रस्तुत की गई है। साथ ही सप्तसिंधु द्वितीय वर्ष, अंक ७ जुलाई ५५ में प्रकाशित श्री शमशेरसिंह अशोक के तद्विषयक लेख का भी प्रमाण लिया गया है।

बाल मुकुन्द	बारहमासी
सुंदर	,,
खरैशाह	,,
उमादास	बारह माहा
टहलसिंह	,
बाबा रामदास	,,
सफुल्ला कवि	बारहमास चन्द्र बदन माहियार
नानसिंह	बारह माहा देवी जी का

पंजाबी प्रभाव-युक्त ग्वाल का एक कवित्त इस संदर्भ में देखना समीचीन होगा—

शेरन पै जानें शमशेर घालियां है वही,
रणजीत सिंघ जू की फौज आवें चालियां ।
कालिया अकालियां की पंति दूर दीस कत
जायगी सम्हालिया न फेर ततकालिया ॥
'ग्वाल कवि' चाहत खुशालियां बिसालिया जो,
राखनी है मुंव पर लालियां बहालियां ।
मेवन की डालियां तुरगन की पालियां ले,
मिलो मुक्तालियां व नजर उतालियां ॥[१]

पंजाबी साहित्य पर रीति काव्य का प्रभाव पंजाबी और हिंदी साहित्य में परस्पर आदान प्रदान हुआ। पंजाबी रीतिकालीन काव्य की भाषा पर भी हिंदी का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। यह भाई कान्हसिंह (१९ वीं शताब्दी) के दशमश गुरु पर लिखे निम्नोक्त कवित्त में स्पष्ट परिलक्षित है। इसमें श्री दशमेश की तेग का वर्णन है

देखि साधु प्रजा दुखी म्यान तों प्रगट होंदी,
प्रलय दे करन लई मूरती महेश की ।
इस्त्रियाँ दे सत अरु पुरषा दी रक्खे पत,
आन शान मान तान रच्छक स्वदेश दी ॥
जालिम अन्यायी शाहा छिन विच्च रंक करे,
देंवदी कंगालां ताई पदवी नरेश दी ।

१ विजय विनोद—ग्वाल कवि छं० सं० १४।

मौत अने मुक्ती नूं इक्को वार देण वाली,
तेग सच्चे पातसाह स्वामी दसमेस दी ॥[1]

पंजाबी के छन्दों में हिन्दी के पद, दोहा, कवित्त सोरठा, सवैया आदि का प्रयोग है। पंजाबी में वीर काव्य आध्यात्मिक काव्य उपदेश काव्य नीति काव्य सूफी काव्यादि की परम्परा रही है और इन प्रवृत्तियों में प्रभूत साहित्य की रचना हुई है। शृङ्गारिक प्रवृत्तियों का इसमें रीति काव्य से पूर्व अभाव रहा है। नायिका भेद नखशिख वर्णन, षट्ऋतु वर्णन आदि प्रमुख रीति प्रवृत्तियों का प्रचलन पंजाबी में हिन्दी के अनुसरण पर ही हुआ प्रतीत होता है। डा० हरदेव बाहरी का इस विषय में कथन इस प्रकार है—

शत्रु और परिस्थितियों से जूझते रहने के कारण अथवा राज्य और अधिकार के लिये लड़ने वाले दलों के बीच में घुटते पिसते रहने के कारण पंजाबी को साहित्य, कला और दर्शन की सूक्ष्म और गम्भीर चर्चाओं का अवसर भी कम मिल पाया। चम्बा और कांगड़ा की दूरस्थ घाटियों में चित्रकला भले ही सुरक्षित रह गई पर मैदानों में मूर्तिकला वास्तु कला अथवा साहित्य और धर्म के जो केन्द्र थे व कई बार बने और कई बार विध्वस्त हुए। पंजाब की सांस्कृतिक चेतना प्रायः कुण्ठित रही।[2]

इस से प्रकट होता है कि कलात्मक काव्य का श्रीगणेश पंजाबी में हिन्दी के प्रभाव से हुआ। पंजाबी में रीति के प्रतिपादन का श्रीगणेश करने वाले पंजाबीतर प्रान्त के ही कवि रहे होंगे ऐसा अनुमान है जो ग्वाल के निम्नांकित कवित्त से पुष्ट होता है—

जेही थवाडे चित विच्च भाउंदी है आउंदी है,
ओहो तुस्सां करणाधि गाणे कानूं कस्स दे।
साडी खुसी एहो आप आराधी खुसी दे विच्च,
जेही चाहो तेही करो ने ही कानूनस्स दे॥
ग्वाल कवि होऊ करमादा लिख्या लेख जेडा,
साकी बल्ल नना नूं पियोर रख्यो हस्स दे।
छल्ल रल्ली गल्लां थवाडी सोहणी न हुंदी स्याम,
सिद्धी गल साड्डे नाल क्यूं करन दस्स दे॥[3]

---

१ मध्य सिन्धु—चतुर्थ वर्ष अंक ६, जून १९४७ पृ० ६५ ६६।
२ हिन्दी साहित्य—द्वितीय खंड सं०—डा० धीरेन्द्र वर्मा।
—पंजाबी साहित्य पृ० ६०८।
३. कवि हृदय विनोद— सं० लाला हरप्रसाद १८८८ ई० छं० सं० ३५।

इस युग का काव्य जिस प्रकार परम्परागत था, उसी प्रकार अन्य कलायें भी रूढ़िबद्ध थीं। मौलिकता का अभाव था। कवियो और कलाकारो को आश्रयदाता की रुचि और इच्छा पर अपनी कला का निर्माण करना अनिवार्य था। तत्कालीन राज दरबार शृङ्गार विलास के केन्द्र थे। फलत तत्कालीन काव्य और कलाओं म शृङ्गार की ही प्रवृत्ति प्रधानत पाई जाती है। कलाओ म चमत्कार की प्रवृत्ति मिलती है। कलाकारो की प्रतियोगिता प्रवृत्ति ही इसका मुख्य कारण थी।

कवि और कलाकार लौकिक सौन्दय की अवतारणा कर रहे थे। नारी का स्थूल सौन्दय प्रदशन उनका उद्देश्य था। यह अलकरण की अतिशयता पर निभर था। विशेष अलङ्कृत रचनायें ही प्रशसनीय मानी जाती थी।

रीति काव्य तथा सगीत ललित कलाओं म सगीत सर्वोपरि कला है। यह अपने मे नृत्य, वादन और गायन को अन्तभूत कर लेती है। काव्य भी सगीत के क्षेत्र म प्रवेश पा लता है। काव्य और सगीत दोनो ही मानव जीवन म मिश्री की भाति घुले हुए हैं। रस की अनुभूति ही दोनो का लक्ष्य है। दोनों के ही सूक्ष्म सवेदन म ब्रह्मानन्द सहोदर' रस की परिव्याप्ति निर्विवाद रूप से निहित है। 'कविता शब्दो मे सगीत और सगीत स्वरो म कविता है। यदि दोनो म कोई अन्तर है तो वह मूलाधार की सूक्ष्मता क्षेत्र विस्तार और प्रभावोत्पादकता का ही है।'[1] सगीत काव्य का अविभाज्य अग है और काव्य सगीत का। अन्तर्सम्बन्धित होते हुए भी दोनों का अस्तित्व पृथक ही माना गया है। पर दोनो म समन्वय के तत्वो का अभाव नही। वदिक ऋचाओ के साथ ही दोनो का जन्म माना गया है। तब से आज तक ये दोनो शब्द' और 'अर्थ की भाँति परस्पर मिले जुले रहे हैं।

रीति काव्य मे सगीत के तत्वो का समावेश प्रभूत मात्रा म पाया जाता है। काव्य म अनेक ऐसे उदाहरण हैं जिनको यदि सगीत ज्ञान के साथ मनन किया जाय तो काव्य और सगीत का पारस्परिक निकट सम्बन्ध सहज ही उद्घाटित होने लगें। रीति काव्य म सगीत के साथ वादन और नृत्य का भी मार्मिक वणन हुआ है। रास मे सगीत और नृत्य साथ साथ चलते हैं। रास की भी अपनी एक अक्षुण्ण परम्परा है। निम्नोद्धृत छन्दों म सगीत, वादन नृत्य और काव्य चारो की चर्चा दृष्टिगोचर है

१ काव्य और सगीत का पारस्परिक सम्बन्ध
—डा० उमा मिश्र, १९६२ ई०, पृ० ४१।

'बाजत मृदङ्ग, मुर चग बीन ओर उपग,
तातथेई, तातथेई करत उमग मे।
गेलि के भुजान को सुजान नत्य कला कान्ह,
बीच बीच नाचैं मिलि गोपिन के सग मे॥
भृकुटी मटक, पटपटि की चटक चारु,
कुण्डल झलक छ्ज छवि के तरग मे।
पद की पटक, पानि झटक सु मुसकानि,
ग्रीवा की लटक सज सोभा अग अग में॥[1]

उक्त कविता सगीतमय है। वाद्यवृन्दा का नत्य के साथ बजना अगावयवो का सचालन, नृत्य मुद्राएँ आदि पाठक के सामने मानो सशरीर खड़े हो जाते हैं।

शब्द सगीत और नत्य समन्वित काव्य के ऐसे अनेक उदाहरण[2] काव्य म भरे पडे हैं। काव्य म मृदङ्ग जसी घोषगमक अनुभव करनी हो तो घनानन्द के निम्नाकित कविता का आस्वादन पर्याप्त होगा

---

१ हफीजुल्ला खा का हजारा-प्रथम भाग—पचमावृत्ति १९१५ ई०, पृ०१८६
२ क-गावत जो दस अष्ट सदा, यट चारन पावत पार मनी के।
वही, पृ० १८६।
ख-बाजत बीन मृग्ग निच धुनि पूरि रही नभ तो अवनी के॥
वही, पृ० १९०।
ग-बाजत पुज मजीर विमजु सुनाचत कुज कलानिधि नीके।
वही, पृ० १९०।
घ-नाचत मडल मडित प्रताप बज कल पायल पाय तनी के॥
वही, पृ० १९१।
ङ-भूषन सकल अग बसन सोहैं सुरग, नत्य को करत छमछम छवि छायी है।
वही, पृ० १९१।
च-त्रिविध समीर मद सीतल सुगध वह
निरतत ब्रजबाल नदलाल साथ हैं।
कुडल झनक काहू मुखसौं अलाप
तान नथ की हलन औ चमक बेंदी माथ हैं॥
नूपुर झनक कर किंकिन खनक घन
ताल की थनक कौंलि करैं यदुनाथ हैं॥ वही

ए रे बीर पौन तेरो सब और गौन
बीरी तोसों और कौन मन ढरकौंहीं बानि द ।
जगत के प्रान ओछे बड़ो औ समान घन
आनदनिधान सुखदान दुखियानी द ॥
जान उजियारे गुन भारे अत मोहो प्यारे
अब ह्व अमोही बठे पीठि पहिचानि द ।
बिरह बिथाहि भूरि आखिन मे राखौ पूरि
धूरि तिन पायनि की हाहा नकु आनि द ॥[२]

रसिक गोविन्द आदि रीतिमुक्त कवियो ने तो समय प्रबन्ध' आदि ग्रन्थो म राग ही राग लिख हैं, जिनम उनके रीतिबद्ध काव्य का भावसाम्य भी है। इससे लगता है कि काव्य सगीत का सर्वाधिक ऋणी है और सगीत काव्य का। अलक्जेंडर पाप क शब्दा म सगीत काव्य सदृश है।'[३] काव्य पर 'सबसे अधिक प्रभाव तो सगीत का ही है।[४]

रीति काव्य और सांगीतिक प्रवत्तियों की तुलना काव्य की प्रवृत्तिया के समानान्तर ही सागीतिक प्रवृत्तियो का भी विकास हुआ। इन प्रवत्तिया की दृष्टि स इस युग के काव्य और सगीत की विकास यात्रा म 'अद्भुत साम्य' क दशन होते हैं। का य क आचार्यों की भांति ही सगीत क क्षत्र म भी अनेक सगीतज्ञ आचाय हुए जि होने सगीत के शास्त्रीय पक्ष को लेकर मार्गी दशी सगीत भेद, स्वर, श्रुति मेल, राग इत्यादि की सागोपाग व्याख्या की। पर काव्याचार्यों की तुलना म इनकी सख्या न्यून दिखाई देती है। इसका कारण अपनी अपनी उपयोगिता है। काव्य की भांति सगीत कभी शास्त्रीय ऊहापोह का विषय नही रहा। आश्रयदाता और उनके दरबारी गायक की कठमाधुरी और कला माधुय से मुग्ध होने तक ही सगीत मे अनुरक्ति रखते थ। सगीत के कलात्मक उद्दीपक रूप मात्र तक उनकी गति थी। काव्य म भी आचार्यों की अपेक्षा छन्द गायक कवियो को अच्छा मान मिलता था। सगीताचार्यों ने भरत के 'नाटयशास्त्र या शाडग देव कृत 'सगीत रत्नाकर' आदि को आधार बनाकर सगीत रचनाएं प्रस्तुत कीं। अहोबल ने

२ घनानन्द कवित—प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ० ४२, स० २००७ वि०।
३ Music resembles poetry— Alexandar Pope, Essays on criticism, page 65
४ काव्य और सगीत का पारिस्परिक सम्बन्ध
—डा० उमा मिश्र, पृ० २०६ २०७।

'संगीत पारिजात' में इस तथ्य को स्वीकार किया है। आलोच्य शताब्दी के कतिपय आचार्य और उनके ग्रन्थों के नाम निम्नांकित हैं—

संगीताचार्य	ग्रन्थ	रचनाकाल
मुहम्मद रजा	नगमाते आसफी (उर्दू)	सं० १८७० वि०
प्रताप सिंह देव	संगीत सार	सं० १८६१ वि०
कृष्णानन्द व्यास	संगीत राग कल्पद्रुम	सं० १८६६ वि०
कृष्ण बनर्जी	गीत सूत्रकार	लगभग सं० १६०० वि०
त्यागराज	स्वरार्णव	,, सं० १८५७–१६०७ वि०
देव	राग रत्नाकर	अज्ञात
पन्नालाल	नाद विनोद	,,
श्रीनिवास	रागतत्व बोध	,

पन्नालाल रीति युगीन संगीत के अन्त और आधुनिक युग की संधि के संगीतकार माने जाते हैं। संगीतशास्त्र सम्बन्धी सभी ग्रन्थों में प्राचीन संगीतशास्त्रों की संक्षिप्त रूपरेखा तो आ गई है, परन्तु इन ग्रन्थों के लेखक अपने पूर्ववर्ती क्रियात्मक संगीत के विवेचनात्मक सामंजस्य के आधार पर अपने युग के संगीत शास्त्र का स्पष्ट आधार प्रस्तुत नहीं कर सके।[1] इस युग के अधिकांश संगीतकार प्रायः क्रियात्मक संगीत की साधना में ही तल्लीन रहते थे, सिद्धान्तों में उनकी रुचि न थी। मियां रमूल शक्करखां मक्खनखां, मियां शोरी सदारंग, अदारंग, मुहम्मदशाह रंगीले नवाब सालारजंग, नवाब कासिम अली खां प्रभृति संगीतज्ञ इसी कोटि के माने जाते हैं। वे संगीत शास्त्र के सिद्धान्तों से सर्वथा अनभिज्ञ थे यह कहना अन्याय ही होगा। परन्तु ये विशुद्ध कलाकार थे, आचार्य नहीं। इनको रीति कवियों की उस कोटि में रखना चाहिए जो लक्षणों के चक्कर में न पड़कर स्वतन्त्र काव्य रचना करते रहते थे।

रीतिमुक्त कवियों के समानान्तर हम उन्नीसवीं शताब्दी के ठुमरी और भजन गायकों को रख सकते हैं। इस शताब्दी में बोधा और ठाकुर परम्परा मुक्त कवियों में प्रमुख हैं। स्वतन्त्र परम्परा मुक्त गायकों में इस युग के सदारङ्ग, अदारङ्ग नूरखां लाद खां, प्यारखां, जानी, गुलाम रसूल, शक्कर मक्खू टट्टू, मोहू मुहम्मदखां, छज्जूखां और टप्पा प्रवर्तक शोरी मियां के नाम लिये

---

१ काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध—डा० उमा मिश्र पृ०

जा सकते हैं।'[1] इन कवियों और गायकों को शास्त्र का ज्ञान अधिक नहीं था परन्तु इन की कला शास्त्रज्ञों से कहीं बढ़ी हुई थी। जनता के होठों पर ठुमरी ऐसे ही थिरकती थी, जैसे ठाकुर बोधा पद्माकर आदि कवियों के कवित्त और सवैया। बहादुरशाह जफर अंतिम मुगल सम्राट स्वयं अच्छा शायर और संगीत प्रेमी था। लावनीकारों में रूपकिशोर, घमंडगिरि, पन्ना लाल, भैरों सिंह द्वारिका प्रसाद, नत्था सिंह बान्ल, मौलवी आशिक अक बरावादी इस शती के प्रमुख गायक थे।[2] इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वतन्त्र संगीतकारों की नामावली भी पर्याप्त बड़ी है। इन दोनों में ही शृङ्गारिकता अत्यधिक है। ठुमरी शैली की शृङ्गारिकता संगीत को रीति काव्य के और भी निकट पहुंचा देती है। रीति कवियों ने वीर-रस वर्णन में भी रतिक्रीडा को स्थान दिया था। संगीतकारों ने भी इसी प्रकार शंकरा, मालकौस, हमीर, अडाना जैसे वीररस उपयुक्त रागों में विषय औचित्य का ध्यान छोड़कर शृङ्गार गीत ही गाये।

ऋतु वर्णन और संगीत 'संगीत दर्पणकार ने छहों ऋतुओं का सम्बन्ध छः प्रमुख रागों से जोड़ दिया।[3] वर्षा ऋतु का वर्णन राग नटमल्लार (विलम्बित) में यहाँ उद्धृत किया जाता है—

स्थायी– पियू लिखना पठावे मके। पतिया रे मोरा रे॥
अन्तरा– आवत बीतो बरखा रुत आई लो
कागद बाचत माई री ना बाचत
लिखवया भागीला फरक रही ये
धीरज छतिया रे मोरा रे॥[4]

रीति काव्य और संगीत में राधाकृष्ण का रूप रीति काव्य में कवि राधाकृष्ण के माध्यम से लौकिक शृङ्गार रचना में तल्लीन थे, उसी प्रकार संगीतकार भी आक्षिप्तिकाओं में यही प्रवृत्ति अपना रहे थे। 'सहचरि सुख' का यह पद इस की पुष्टि के लिये पर्याप्त है—

१ भारतीय संगीत का इतिहास—उमेश जोशी, १९५७ ई० पृ० ३५३।
२ वही पृ० ३७१–३७२।
३ 'संगीत दर्पण में एक स्थल पर श्री राग को शिशिर ऋतु का, बसन्त को बसन्त ऋतु का, भैरव को ग्रीष्म का, मेघ को वर्षा ऋतु का और नट्ट नारायण को हेमन्त ऋतु का राग बताया है।' काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध—डा० उमा मिश्र पृ० २४५।
४ वही पृष्ठ २४६।

'रूप बावरी नन्द महर की बहुरि बन्यो होरी को छैल।
रोकतटोकत घूंघट खोलत भरिपिचकारी तकत
उरोजनि गोकुल की माई चलत न गल ॥
छल सों मसल गुलाल मुठी भरि निरख रहत
पुनि लाज न आवत हिये भरत होरी के फन्द ॥
कहिये कहा और सहचरि सुख मदन मवास रहत,
ब्रज जाके अंग अंग जु कटीलो सैल ॥[१]

उन्नीसवीं शताब्दी में रामपुर दरबार के गायक फीरोजखां 'अदारंग' ने होली के धमारों में रीति कवियों के विषयों को शब्दबद्ध और स्वरबद्ध किया। अदारंग अपने चचा और श्वसुर प्रसिद्ध गायक सदारंग की धमार परम्परा को ही आगे बढ़ा रहे थे। इन के कुछ धमार 'इस्तरवाने यादगार' में संग्रहीत मिलते हैं। एक धमार रचना यहाँ दी जाती है।

'एरी नेंक सुध हमसों बोलि नारि ।
होरी में गुमान काम नहि आव तू तो मुग्ध गवांरि ॥
कहू रंग कहू अबीर गुलाल कहू कुमकुमा कहू पिचकारि ।
ऐसी हो फगुआ मांगिये मुखते 'अदारंग' अचरा डारि ॥[२]

उक्त धमार के बोल से ग्वाल की निम्नांकित पंक्ति का भाव मिलाकर देखिये—

रेलिये न रंग औ न खेलिये दगा को खेल ।
मेलिये गुलाल सूधे दीजियें न गालियाँ ॥[३]

गायक 'मनरंग' की एक धमार के भावों को रीति कवियों के होली वर्णन के भावों से मिला कर देखिये—

'कछु ऐसो मंत्र पढ़ि रंग छिरको री होरी के दिननि में इन मन मोहन बनवारी ।
सकल त्रियनि में कौनें सिखाई हो न जानो ऐसी कौन है बारी नारी ॥
मोहि जानि वृषभान दुलारी मन हरि लीनों नन्द के बिहारी ।
'मनरंग' सहसगारी व भई मतवारी बजाय तारी ॥[४]

---

१ वही, पृष्ठ ३२६।

२ साप्ताहिक हिन्दुस्तान—१७ मार्च ६८, आचार्य कलाश चन्द्र देव बृहस्पति का लेख धमार—गायकी पृ० २३ पर उद्धृत।

३ षट्ऋतु वर्णन—ग्वाल छं० सं० ८३।

४ साप्ताहिक हिन्दुस्तान—१७ मार्च ६८, पृ० २३ पर उद्धृत

काव्य में नायिका भेद के उदाहरण स्वरूप चित्र हैं। इन्हीं भावों को जब मूर्तिकार चित्र फलक पर उतारने लगता है तो ये चित्र बन जाते हैं। इस प्रकार दोनों कलाएँ परस्पर अन्योन्याश्रित हैं।

चाहे जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर किशनगढ़ बूँदी की राजपूत शैली को चाहे जम्मू, चम्बा, कांगड़ा, बसोली, गुलेर और गढ़वाल की पहाड़ी शैली को और चाहे आगरा, दिल्ली की मुगल शैली को निहारा जाय, इन सभी के चित्रों में रीतिकालीन काव्य की भाँति रूढ़िबद्धता बाह्य चमत्कार और शृंगारिकता के दर्शन होते हैं। कुछ विद्वानों ने मुगल चित्रकला को विशिष्ट नियमबद्ध और राजपूत कला को तारतम्य लोक कला बताया है। इस युग की कोई भी कला स्वान्त सुखाय नहीं थी। इस युग की चित्रकला में चार प्रकार के चित्र उपलब्ध होते हैं—(१) नायक तथा नायिका भेद के परम्परायुक्त चित्र (२) पौराणिक उपाख्यानों पर आधारित चित्र, (३) राग रागिनियों के प्रतीक चित्र तथा (४) व्यक्तियों के चित्र।

रीतिकाव्य की भाँति ही उस युग के चित्रों में भी कलाकार की आत्मा के दर्शन नहीं होते। जहाँगीर के पश्चात ही कला से प्राणवत्ता तिरोहित हो गई थी। उसका स्थान तड़कीले भड़कीले रंगों, पन्नाक नक्काशी वस्त्राभूषणों रत्नालङ्कारों और आडम्बरपूर्ण सजधज ने ग्रहण कर लिया था। चित्रांकन में उन्नत प्राविधिक कौशल कमनीयता और रंगों की उत्तमता के होते हुए भी इस युग में बने शाही दरबार की शान शौकत समृद्धिशाही और अमीर स्त्री पुरुषों की छवियों, सन्तों दरवेशों आदि के चित्रों में कला के पूर्ववर्ती मानदण्ड का ह्रास पाया जाता है।[1]

राजपूत शैली इस शैली को पौराणिक शैली के नाम से अभिहित किया जा सकता है।[2] इसमें प्राय मुगल शैली के चित्रों की समसामयिक कृतियाँ पाई जाती हैं। राजपूत शैली के चित्रों में रामायण, महाभारत की घटनाओं और गीत गोविन्द जैसी कृतियों के वर्णनों पर आधृत चित्रकारी का प्राधान्य पाया जाता है। भारतीय संगीत के छहों रागों एवं छत्तीसों रागिनियों के चित्र भी 'रागमाला' नाम की चित्र मालाओं में मिलते हैं। गायक चित्रांकित छवि को संगीत की लय में परिणत करके विशिष्ट राग या रागिनी की सृष्टि करता था और चित्रकार उक्त राग रागिनियों की लय को छवि में परिणत करता था।[3]

---

१ वही पृ० २८९७।   २ वही, पृ० २८८८।

३ वही, पृ० २८९०।

पहाड़ी शली मुगल दरबार के सरक्षण से वचित और राजनीतिक अशान्ति से ऊबकर कुछ कलाकार हिमालय की छोटी पहाडी रियासतो मे जा बसे थ। इन्होने रामयण महाभारत की कथाओ, कृष्ण बलराम के अद्भुत पराक्रमो, नायक नायिका भेद सम्बन्धी प्रकरणो, दुर्गा सप्तशती आदि ग्रन्थो, शाही नर नारियो के समूहो, जलूसो आदि से सम्बधित चित्रो के ढेर लगा दिये। इन पहाडी चित्रकारो ने रागरागिनियो भी चित्रबद्ध की। परन्तु कला के ललित भावो क दशन इन चित्रो मे भी कही नही होते।[१] तत्काली। साम त सरदारो और सेठ साहूकारो की शृ गारी रुचि यहा भी अपना काम कर रही थी। मुर्शिदाबाद, हैदराबाद, लखनऊ इस शली के प्रमुख केन्द्र थे। शली के रूप म इसका जीवन १८६० ई० तक माना जा सकता है।[२]

कांगडा शली यह पहाडी चित्रकला शली की ही एक शाखा है। इस का विकास कागडा नरेश ससार चन्द्र (१७७४ ई०-१८२३ ई०) के समय म हुआ। इस समय यह अपने गौरव के चरमबिन्दु पर पहुच गई थी। कागडा शली की विशेषताए वही रही जो राजपूत चित्रकारी की अन्य शलियो म पाई जाती हैं। डा० कुमार स्वामी के शब्दो में 'इस शली की सबस बडी देन एक ऐसी कमनीय नारी मूर्ति की सृष्टि है, जो उसकी ही अपनी वस्तु है और जिसके आकषण की कोई सीमा नही।' यह नारी प्रतिमा राजस्थानी नमूनो जसी भारी भरकम नही, वरन् एक अनुपम कमनीयता से युक्त है। उसकी गति म जो अदा है उसके सामने कोई ठहर नही पाता। उसकी पोषाक की लहराती हुई रेखायें लालित्य को बढाने के लिये जानबूझकर खीची गई हैं। उसका जादू विवश करने वाला है। उसम एक ऐसे वयक्तिक भाव का समावेश है जसा कि रमणी की अपनी अदा मे पाया जाता है।'[३] रीति काव्य म नारी शृ गार वणन का एक मात्र केन्द्र स्थल रही है। १८५० ई० के लगभग इस शली का अन्त हो गया।[४]

गढ़वाल-शली पहाडी शैली की गढवाल शाखा का प्रदुर्भाव भी १८ वीं शताब्दी ईसवी म हुआ। इस शली की विशेषताएँ कागडा शली जसी ही मानी गई हैं। परन्तु यह उससे अपेक्षाकृत निम्न कोटि की है।

सिख शली इस शली का प्रादुर्भाव सन् १७७५ ई० से १८५० ई०

१ हिन्दी विश्व भारती—पृष्ठ २८६०।
२ भारत की चित्रकला—रायकृष्णदास २००७ वि०, पृ० १०२
३ हिन्दी विश्व भारती—पृ० २८६१।
४ भारत की चित्रकला— रायकृष्णदास, पृ० १००।

के बीच म हुआ ।[1] इस शली के चित्रो म सिखों के ऱ्ता गुरुओ नायकों और उनके मुसाहिबो के एकाकी अथवा सामूहिक चित्रांकन पाये जाते हैं। सिख शली का अन्त सन् १८५० के आस पास हो गया।[2]

मुगल शली यह शली मूलत फारसी है। परन्तु इस पर तत्कालीन भारतीय शली का पूर्ण प्रभाव था। इस काल के बाडरो में और रचना दोनो की अपनी विशेषता है। इस प्रकार की डिजाइनें आगरे के ताज महल और दिल्ली के लाल किले की मुगल इमारतो म मिलती हैं। लाहौर के शाही कारखाने के कालीनो पर भी ऐसी भव्य डिजायनें मिलती हैं। इस युग का दौलत नामक दरबारी चित्रकार सुनहले बाडरो और आलकारिक पाडुलिपियो का विशेषज्ञ था।[3] वास्तव म यह चित्रकारी व्यय साध्य और श्रमसाध्य थी इसम पौराणिक ऐतिहासिक और व्यक्तियो के चित्रो के माध्यम से तत्कालीन प्रवृत्तियो का ही चित्रांकन रहता था। सम्राटो शाहजादो शहजादियो महफिलो, जुलूसो,भवनो, राजप्रासादो राजदरबारो, आखेटो नायिकाओ आदि के चित्रो म प्राकृतिक उद्दीपक वातावरण का ही प्राधान्य रहता था। इस काल के चित्र मुगल सम्राटो के वभव विलास के परिचायक हैं। इस शली का अन्त बा० रायकृष्णदास सन् १८६८ ई० तक मानते हैं।[4] कवियो और चित्रकारो की रचना-कल्पना म एक आश्चयजनक साम्य का तारतम्य दिखाई देता है। या तो कवियो के शब्द चित्र पहले प्रस्तुत होते थे। अथवा फिर पहले चित्र उपस्थित होते थे जिनके आधार पर चित्रकार या कविगण रेखाओ या शब्दो म उस छवि को आकते थे। राष्ट्रीय सग्रहालय दिल्ली म रखे इस शली के चित्रकार मोहिउद्दीन के महलो की होली के एक से अधिक चित्र भी इसके साक्षी हैं।

कम्पनी शली उन्नीसवी शताब्दी म कम्पनी शली का प्रादुर्भाव हुआ। बनारस के राजा ईश्वरी नारायणसिंह (१८ ५ १८८६ ई०) का दरबार इसका आश्रयदाता रहा। काशी के दल्लूलाल लालचद और गोपालचन्द तीन अच्छे चित्रकार थे। उन्होंने जो चित्र अंकित किये[5] उनम शृङ्गारिकता को स्थान नही मिला। अत यह परम्परामुक्त है।

---

१ विश्वभारती–पृष्ठ २८९२।

२ भारत की चित्रकला–रायकृष्णदास, पृ० १००।

६ विश्वभारती–पृ० २८८६।

४ भारत की चित्रकला–रायकृष्णदास पृ० १०२।

५ वही, १०३।

पजाब की सिख शली और काशी की कम्पनी शली को छोडकर शेष सभी शलियो की चित्रकला म श्रृ गार की अमर्यादा दृष्टिगोचर होती है। कवियो की भांति चित्रकारो को भी अपने आश्रयदाता की रुचि का ध्यान रखना पडता था। इन चित्रो द्वारा स्त्री के नग्न सौन्दय के चित्रण की रुचि का आविर्भाव हुआ। इन श्रृ गारिक शैली मे उत्कठिता वासकसज्जा अभिसारिका आदि नायिकाओ का परम्परामुक्त वातावरण मे चित्रण हुआ। नायिकाओ के चित्र अधिकतर नायिका भेद के काव्य के आधार पर बनाये गये। 'सकेत स्थल पर पुष्पशैया बनाकर प्रियतम से मिलन के लिये उत्कठिता नायिका, विषम प्रकृति की चुनौती स्वीकार करके आगे बढती हुई अभिसारिका इत्यादि श्रृ गार नायिकाओ के परम्पराबद्ध रूप हैं। श्रृ गार की विभिन्न परिस्थितियों का चित्रण इन रचनाओ का ध्येय है और श्रृ गार उनकी आत्मा।'[१] कृष्ण और राधा के नायक नायिका रूप मे तथा पौराणिक आख्यानो पर आधृत चित्रो म शिव पार्वती के चित्रो मे श्रृ गार चित्रण इस युग की विशेषता है। तत्कालीन राजनायको और राज नायिकाओ के चित्रो की तो सख्या अपार है।

रीति कवियो के ऋतु वर्णन और बारहमासा के समानान्तर बने चित्रो मे प्रकृति को मात्र उद्दीपक रूप म चित्रित किया गया। बसन्त और वर्षा के उद्दीपक रूप के कई चित्र मिलते हैं। राधा के नग्न सौन्दर्य के प्रदर्शक चित्रो मे स्नान सम्बन्धी चित्राकन सजीव रूप म हुए हैं। गढवाल शली म रूपमती के सिन्धुर वदन की प्रतियोगिता मे वृक्षा की वक्र टहनियाँ, बिजली की चमक उद्दीपक रूप म ही चित्रित हुई है। बिजली की कौंध, मूसलाधार वर्षा, मेघ, तूफान आदि का प्रयोग प्रतीका के रूप म किया गया है।

जहाँ चित्रो म श्रृ गारिकता प्रधान है वही चमत्कार के विकृत रूप के भी दर्शन होते हैं। हयनारी, गजनारी आदि ऐसे ही चित्र हैं। 'अनेक नारियों के बहुरगी वस्त्रो तथा उसके विविध अगो के सयोजन द्वारा ये चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। स्त्रियो के अग प्रत्यगो को सुविधानुसार तोडमरोड कर हाथी और घोडे के चित्र बनाये गये हैं। जिन पर कहीं कृष्ण आरोहित हैं तो कहीं कोई मुगल सम्राट।'[२] प्रेरणा स्वरूप कवियो द्वारा 'गजगामिनी', 'अश्वगामिनी' आदि उपमाएँ ही ढूँढी जा सकती हैं। कवियो म भी इस प्रकार की नारी-सौन्दय विकृति के उदाहरण सरलता से खोजे जा सकते हैं।

---

१ हि० सा० का बृहत् इतिहास षष्ठ भाग, पृ० २०।
२ वही, पृ० २२।

वैयक्तिक चित्रों में नर प्रशस्ति काव्य के दर्शन मिलते हैं। कवियों ने आश्रयदाता के प्रशस्ति गायन में राजदरबार, दरबारी, नगर वर्णन, नीय-वर्णन, वैभव वर्णन आदि के ऊहात्मक वर्णन किये हैं। चित्रों में भी इन्हीं सब काव्य प्रतिपादों का चित्रांकन हुआ। मुगल और राजपूत राजाओं ने वैयक्तिक घटनाओं के चित्र बनवाकर अपने दरबारों में टाँगे।

मौलिकता का अभाव आलोच्यकाल का काव्य और चित्रकला दोनों ही रूढ़ि से बाहर न निकल सकी। नये विषय और नई चेतना इनमें नहीं रही। राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में मोईनुद्दीन आदि तत्कालीन चित्रकारों के चित्र प्रमाणस्वरूप देखे जा सकते हैं। ये चित्र पद्माकर आदि कवियों की कविताओं के आधार पर बने हैं।

रीति काव्य और स्थापत्य कला रीति साहित्य में संगीत और चित्र कला की भाँति स्थापत्यकला के तत्व भी समान रूप से घुले मिले हैं। साहित्य का इनसे निकट का सम्बन्ध है। मुगल राजप्रासादों के वर्णन रीतिकाल में यत्रतत्र बिखरे मिलते हैं।[1] 'ग्वाल कवि' ने आदर्श घर का एक नक्शा सा दिया है—

---

१ (अ) मंजुल अखण्ड खण्ड सातयें महल महा,
मंडल चौबारी चन्द्र मण्डल के चोटहीं।
भीतर हूँ लालन के जालन विलास जोति
बाहर जुन्हाई जगी जोतिन की ओट हीं॥
बसत बानी चौंर ढारत भवानी कर,
जोर रमारानी डाढी रमन के ओट हीं।
देव दिगपालन की देवी सुखदाइन तें
राधा ठकुराइनि के पायन पलोट हीं॥
— देव भवानी विलास।

(ब) बैठी सीस मन्दिर में सुन्दरि सवारही ते॥
देव भवानी विलास।

(स) फटिक सिलान सों सुधारयो सुधा मन्दिर॥
देव भवानी विलास।

(द) कहै पद्माकर सु पौन कौन-भौन जहाँ,ऐसे मौन उमगि उमग छाकियतु है।
—जगत विनोद।

गेह अति ऊँचे होंय, खुले होंय ढके होंय
दरें होय, गोखें होय रोस होंय, रग सी।
वन होंय बाग होंय, बीन होय, बक होय
केकी होय मेकी हाय पवन अभग सी॥

—षट ऋतु वर्णन छन्द सख्या ३४।

स्पष्टत ऐसे भवन की कल्पना स्थापत्यकला विशारद के समक्ष रखी गई होगी। नायक नायिका के रति विलास प्रसगो म स्फटिक शिलाओ के मन्दिर', 'विशाल आगन', 'झरोखा', आदि के वर्णन पुन पुन हुए हैं। महला बुर्जों, कगूरों, गुम्बजो बारहदरियो आदि के सन्दर्भ प्रचुर मात्रा मे पाये जाते हैं। निश्चय ही मुगलकालीन स्थापत्य कला के आदर्श कवियों के सामने रहे होंगे। नाभा नरश भरपूर सिंह के यश वर्णन प्रसग म ग्वाल कवि ने वहा के भवनादि का वर्णन भी किया है।[1] उत्तर रीति कालीन युग के इस कवि ने पजाब म बन इन राज भवनो म वास्तव म मुगल शिल्प की ही कल्पना की है।

मुगलकालीन स्थापत्य कला की विशेषताएँ बडे सहन, बडे बरामदे, पटावदार महराब गालाकार गुम्बद गोखें, छज्जे, बारहदरी, जालियाँ, झरोख, ऊँचे मुख्य द्वार, कगूरे, विशाल वक्ष आदि ऐसी विशेषताएँ हैं, जो मुगलकालीन वास्तुकला म आद्यन्त पाई जाती हैं। मुगला ने भवन लाल और सफेद पत्थर के बनवाये, सुन्दर पच्चीकारी के नमूने आकीर्ण कराये। पत्थर म सूक्ष्म कला के साथ सुन्दर चित्र मूर्तियो की रचना, कमनीयता, मनोरमता और आलकारिकता इस युग के स्थापत्य की विशेषताएँ हैं जो तत्कालीन काव्य, सगीत और चित्रकला म स्पष्ट दिखायी पडती हैं।

शाहजहा न स्थापत्य से सर्वाधिक प्रेम किया। अत इस का उत्कर्ष चरमबिन्दु पर पहुच गया था। दिल्ली की जामा मसजिद लाल किला, रग महल, दीवाने खास, दीवाने आम, खास महल शीश महल मुसम्मन बुज, मच्छी भवन तथा विश्व का विशिष्ट आश्चय ताजमहल शाहजहाँ द्वारा निर्मित प्रसिद्ध इमारतें हैं। य सभी निर्माण उन्नत शिल्प विधान, कलापूर्ण सुरुचि एव अनोखी सादगी म भी उच्चकोटि की कलात्मकता की देन है।[2] पजाब मे हुआ महाभारत का हिन्दी अनुवाद इस युग की सबसे बडी कृति है, जो ८२

१ इश्क लहर दरयाव—ग्वाल कवि ग्रन्थ कारण वर्णन, छ०स० ३ से १८।
१ हिन्दी विश्व भारती—पृ० २८७६।

महल दोनो की योजना हुमायू के मकबरे के अनुकरण पर हुई जो मुगल स्थापत्य परम्परा की प्रथम इमारत है।[1]

स्थापत्य की ह्रासावस्था औरगजब के शासन काल से ही काव्य, सगीत, चित्र और स्थापत्य कला का ह्रास आरम्भ होगया था। उसके पश्चात् की इमारतो मे शाहजहाँ कालीन आवेग दिखाई देता है। दिल्ली, लखनऊ, फैजाबाद, मसूर आदि मे बनी वर्णसकरी इमारतें विविध शैलियो के बमल सम्मिश्रित अनुकरण पर बनी। लखनऊ की छत्तर मजिल' और छोटे इमाम बाडे की तुलना मोती मसजिद आदि से कम की जा सकती है। ठीक इसी ह्रास युग में बने काव्य ग्र थो को पुराने ग्रन्थो की परम्परानुकृति ही कहा जा सकता है। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक न तो रीति काव्य का कोई बडा सरक्षक शेप रहा और न सगीत, चित्र आदि कलाओ का। रीति काव्य के साथ साथ कलायें भी ह्रासो मुखी बन गई।

1. हि० सा० ब० इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० ७५।

पचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन-वृत्त

महल दोनों की योजना हुमायू के मकबरे के अनुकरण पर हुई जो मुगल स्थापत्य परम्परा की प्रथम इमारत है।[1]

स्थापत्य की ह्रासावस्था औरगजब के शासन काल से ही काव्य, सगीत चित्र और स्थापत्य कला का ह्रास आरम्भ होगया था। उसके पश्चात् की इमारतो म शाहजहाँ कालीन आवेग दिखाइ देता है। दिल्ली, लखनऊ, फजाबाद, मसूर आदि म बनी वणसकरी इमारतें विविध शलियां क बेमल सम्मिश्रित अनुकरण पर बनी। लखनऊ की छत्तर मजिल' और छाट इमामबाडे की तुलना मोती मसजिद आदि से कस की जा सकती है। ठीक इसी ह्रास युग म बने काव्य ग्र थो को पुराने ग्र थो की परम्परानुकृति ही कहा जा सकता है। उन्नीसवी शताब्दी के मध्य तक न तो रीति काव्य का कोई बडा सरक्षक शेष रहा और न सगीत, चित्र आदि कलाओं का। रीति काव्य के साथ साथ कलायें भी ह्रासो मुखी बन गई।

---

[1] ० सा० वृ० इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० ७५।

पचम अध्याय

ग्वाल कवि का जीवन-वृत्त

५ | ग्वाल कवि का जीवन वृत्त

ग्वाल सज्ञक दो कवि हिन्दी साहित्य में ग्वाल नाम के दो कवियो का उल्लेख है—एक 'ग्वाल प्राचीन और दूसरा ग्वाल कवि बन्दीजन मथुरा वासी।'

१ ग्वाल प्राचीन शिवसिंह सेंगर, डा० ग्रियसन और मिश्रबन्धुओ के अनुसार 'ग्वाल प्राचीन' के छन्द कालिदास त्रिवेदी के हजारा' म मिलते हैं।[१] कालिदास के हजारा की रचना स० १७५५ वि० के आस पास हुई मानी जाती है।[२] गोपालसिंह 'नवीन, न अपने 'सुधासर' म मथुरा वाले ग्वाल के अतिरिक्त ग्वाल प्राचीन का नाम 'एक नाम रासी कवियो की सूची' म अकित किया है।[३] मिश्र बन्धुओ ने ग्वाल प्राचीन का जन्म स० १७१५ वि० और इनका कविता काल स० १७४० वि माना है।[४] डा० ग्रियसन भी इनका जन्म स० १७१५ वि० ही मानते है।[५] प्रभुदयाल मीतल के अनुसार यह कवि विक्रम की अठारहवी शताब्दी म हुए थे।[६] उक्त आधारो पर सिद्ध होता है कि ग्वाल प्राचीन ईसा की सत्रहवी शताब्दी मे हुए थ। शिवसिंह सरोज मे इनका केवल एक कवित्त ही उदाहृत मिलता है जिसके प्रथम चरण म 'ग्वाल कवि' की छाप है।[७] कालिदास का हजारा सम्प्रति अनुपलब्ध है।

---

१ (अ) शिवसिंह सरोज—सस्करण स० १८३४ वि०, पृ० ३७३।

(ब) हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—अनुवादक डा० किशोरी लाल गुप्त, प्रथम सस्करण, पृ० १८६।

(स) मिश्र बन्धु विनोद द्वि० भाग—तृतीय सस्करण स० १९८४ वि० पृ० ५११।

२ (अ) देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० १।

(ब) सरोज सर्वेक्षण—डा० किशोरीलाल गुप्त, स० सन् १९६७ ई० पृ० ६५।

३ सरोज सर्वेक्षण—वही, पृ० ६५।

४ मिश्र बन्धु विनोद—वही, पृ० ५११।

५ हि० सा० का प्रथम इतिहास—पृ० १८८।

६ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल, सस्करण स० २०१७ वि० पृ० १।

७ शिवसिंह सरोज—सस्करण स० १९३४ वि०, पृ० ६८।

इससे नहीं कहा जा सकता कि इस म इस कवि के कितन छन्द सग्रहीत हैं। साहित्य म ग्वाल प्राचीन का अधिक परिचय उपलब्ध नहीं होता।

२ ग्वाल कवि बन्दीजन दूसरे ग्वाल कवि बन्दीजन मथुरावासी प्रसिद्ध हैं। इन का उल्लेख गार्सा द तासी, ग्रियसन शिवसिंह सेंगर, मिश्र बन्धु, आचाय रामचन्द्र शुक्ल आदि प्रसिद्ध विद्वानों ने इतिहासों स लेकर वत मान कालीन सभी साहित्य-ग्रन्थों की रिपोट पजाब, राजस्थान और उत्तर प्रदेश की खोज विवरणिकाओं म उल्लिखित हैं। इनके हस्तलिखित और प्रकाशित काव्य-ग्रन्थ उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पजाब के कई प्राचीन ग्रन्थागारों मे सुरक्षित हैं। इनका कविता काल स० १८७६ वि० से स० १९१९ वि० माना गया है।[1] अत ये उन्नीसवीं शताब्दी ईस्वी के कवि हैं। इनकी लोकप्रियता का अनुमान इस बात से सहज ही हो सकता है कि इनक छन्दों को प्राचीन और अर्वाचीन अनेक प्रसिद्ध काव्य सग्रहों म सम्मानपूण स्थान मिला। इन म से कुछ काव्य सग्रह ये हैं—नख शिख हजारा (परमानन्द सुहाने) स० १८८३ वि० शृङ्गार सग्रह (सरदार कवि) स० १९०५ वि०, कुसुम वाटिका (वशी पडित—गुरुमुखी म) स० १९१९ वि० के आसपास दिग्विजय भूषण (गोकुल प्रसाद बिलग्रामी ब्रज कवि') स० १९१९ वि०, सुन्दरी तिलक (मन्नालाल द्विज कवि') स १०१६ वि०, इन्तखाबे यादगार (अमीर लखनवी—उर्दू म) स० १९३० वि०, उक्ति युक्ति रस कौमुदी (कृष्ण चैतन्य गोस्वामी) स० १९२५ ३१ वि० काव्य कानन (राजा चक्रधर सिंह रायगढ) स० १९३३ वि० शृङ्गार तिलक (मन्नालाल द्विज कवि) स० १९३७ वि०, नवीन सग्रह (हफीजुल्ला खा) स० १९८८ ईस्वी सुन्दरी तिलक (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र), हफीजुल्ला खा का हजारा स० १९४३ वि०, सुन्दरी सवस्व (मन्नालाल 'द्विज कवि') शृङ्गार सरोज (मन्नालाल द्विज कवि') स० १९४६ वि०, विजय हजारा (मौलवी अब्दुलहक, राजस्थान) स० १९७१ वि०, रीति शृङ्गार (डा० नगेन्द्र) सन् १९५४ ई०, ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौन्दय (प्रभु दयाल मीतल) स० २०१८ वि०, निम्बार्क माधुरी (ब्रह्मचारी बिहारी शरण) स० १९९३ वि० गोपी-प्रेम पीयूष प्रवाह (कवि प० नवनीत चतुर्वेदी) आदि। इसके अतिरिक्त सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ने 'काव्य कल्पद्रुम' में और डा० हरिशंकर शर्मा ने रस रत्नाकर' मे प्रभुदयाल मीतल ने ब्रजभाषा साहित्य के नायिका भेद निरूपण म ग्वाल कवि के छन्दों को उदाहृत किया है। इस प्रकार यह

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचाय रामचन्द्र शुक्ल।

कवि उत्तर रीतिकालीन आचार्यों की शृखला की अतिम कडी के रूप मे प्रसिद्ध और ग्वाल प्राचीन स लगभग १५० वष परवर्ती सिद्ध होते हैं। रीति के आचाय यही कवि ग्वाल हमारे अध्ययन का विषय है।

आधार सामग्री आलोच्य कवि के जीवन वृत्त और कृतित्व पर कोई प्रामाणिक और विशद विवरण एकत्र उपलब्ध नही होता। जो कुछ प्रयास इस विषय म हुए हैं, वे अत्यल्प हैं और अधिकाश खोज की सामग्री ही प्रस्तुत करत हैं। विषय पर सक्षिप्त प्रकाश डाल ने वाला पहला महत्त्वपूण ससमरणात्मक उदू-ग्रन्थ मुशी अमीर अहमद मीनाई 'अमीर' लखनवी कृत 'इतखाबे-यादगार' है। 'अमीर' रामपुर स्टेट (उत्तर प्रदेश) के दीवान थे। इन्होने रामपुर दरबार से सम्बन्धित उदू और हिन्दी के ३०० शायरो और कवियों के परिचय सग्रहीत कर के इस ग्रन्थ का प्रकाशन १२६० हिजरी (स० १६३० वि०) म रामपुर से किया था। ग्वाल अपने जीवन के अन्तिम दिनो में रामपुर दरबार म रहे और यही दिवगत भी हुए थे। अत इस दृष्टि से 'अमीर' के इस ग्रन्थ का पर्याप्त महत्त्व है। इसकी ग्वाल विषयक जीवन और कृतित्व सम्बन्धी सामग्री के निम्नांकित निष्कष हैं—

१ ग्वालराय बल्द सेवाराम राय वृन्दाबन के मूल निवासी और मथुरा के सुखवासी थे।

२ बरेली के कवि खुशहाल राय से कवि ने काव्य दीक्षा ली थी।

३ खुशहाल राय के सान्निध्य मे एक मस्त फकीर के आशीर्वाद स्वरूप कवि म आश्चयजनक काव्य प्रतिभा का स्फुरण हुआ।

४ बरेली से कवि सीधा लाहौर के महाराजा रणजीतसिंह के दरबार म पहुचा जहाँ उसके काव्य से महाराजा प्रसन्न हुए।

५ रामपुर के शाहजादा यम्दादुल्ला खा 'ताब' कवि क शिष्य थे।

६ अक्बर शाहजादा सयदुल्ला खा 'इल्म' के आग्रह से नवाब रामपुर ने कवि को मथुरा से रामपुर बुलाया था जहाँ कवि सात महीने रह कर मथुरा लौट गया।

७ दूसरी बार पुन कवि को रामपुर बुलवाया गया, जहाँ वह एक वष और नौ महीने रहकर ६५ वष की आयु मे जिमादी उल अव्वल की नौ तारीख को १२८४ हिजरी मे स्वगवासी हो गया।

८ कवि ने बडे चौदह काव्य सग्रह लिखे थे।[1]

---

१ इतखाबे यादगार—मु अमीर अहमद मीनाई 'अमीर', प्राप्ति स्थान सौलद लायब्रेरी तथा रजा लायब्रेरी, रामपुर, पृ० ३२० से ३३२।

इसके एक वर्ष पश्चात् फ्रांसीसी भाषा मे लिखे गये फ्रांसीसी विद्वान् गार्सां द तासी के इतिहास ग्रन्थ "इस्त्वार द ल लितरेत्यूर एँदूई ऐ एँदूस्तानी' मे कवि विषयक केवल इतना उल्लेख मिलता है कि ग्वाल ने पद्माकर कृत 'गगा लहरी' के क्रम मे जमुना लहरी' लिखी जिसका प्रकाशन बनारस से सन् १८६५ ई० मे २० २० पक्तियों के ३६ अठपेजी पृष्ठो मे हुआ।[1]

तासी के प्राय ६ वर्ष उपरान्त सन् १८७७ ई० मे शिवसिंह सेंगर द्वारा लिखित शिवसिंह सरोज' नामक प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ मे ग्वाल विषयक परिचय किंचित् विस्तार से है। इसमे कवि के ७ कवित्त और ३ दोहे भी सग्रहीत हैं जिनमें कवि के निवास स्थान, पिता, यमुना लहरी के रचनाकाल का भी उल्लेख मिलता है।[2] इस के कवि विषयक निष्कर्ष निम्नांकित हैं—

१ ग्वाल कवि वृन्दाबन के मूल निवासी और मथुरा के सुखवासी थे।

२ इनके पिता का नाम सेवाराम था।

३ इनको काव्य प्रतिभा जगदम्बा की कृपा से प्राप्त हुई।

४ यमुना लहरी की रचना कातिक पूणमासी सवत् १८७९ वि० को हुई थी।

५ इनके दो बडे सग्रहीत ग्रन्थ सेंगर जी के पास थे और नखशिख गोपी पच्चीसी, यमुना लहरी साहित्य दूषण साहित्य दपण, भक्ति भाव शृगार दोहा शृगार कवित्त बहुत सुन्दर ग्रन्थ हैं।[3]

डा० सर जार्ज अब्राहम ग्रियसन ने दि माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान नामक इतिहास लिखा है। इसमे कवि विषयक कोई नवीन सूचना नही मिलती। ग्रियसन ने सेंगर जी की ही सामग्री की कुछ उलट फेर से पुनरावृत्ति की है।[4]

मिश्रबन्धु विनोद मे कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर कुछ और विस्तार से विचार किया गया है। इसमे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की

---

१ हिन्दुई साहित्य का इतिहास—अनुवादक—डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, इलाहाबाद, प्रथम सस्करण सन् १९५३ ई०, पृ० ६७ व ६८।

२ शिवसिंह सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर सस्करण सवत १८३४ वि०, पृष्ठ ६१ व ६२।

३ वही पृ० ३७१ व ३७२।

४ हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास—अनुवादक—डा० किशोरी लाल गुप्त, सस्करण १९५७ ई०, पृ० २३३ व २३४।

खोज रिपोर्टों का भी उपयोग किया गया है। कवि विषयक नवीन सूचनायें कुछ और अधिक हैं। मिश्र बंधुओं ने कवि की अन्य रचनाओं—रसरंग, हम्मीर हठ, कवि हृदय विनोद, षट् ऋतु रसिकानन्द, राधामाधव मिलन, अलंकार भ्रम भंजन, वंशी बीसा और कवि दर्पण की भी चर्चा की।[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास में इस कवि की प्रामाणिक रचनाओं में यमुना लहरी, भक्त भावन, रसिकानन्द, रसरंग, कृष्ण जू को नखशिख, दूषण दर्पण, हम्मीर हठ और गोपी पच्चीसी को मान्यता प्रदान करते हुए इनका कविता काल संवत् १६१८ वि० निर्धारित किया। शुक्ल जी ने कवि के काव्य की संक्षिप्त आलोचना भी लिखी[2]

आलोच्य कवि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विशदरूप से विवरण प्रस्तुत करने वाले विद्वानों में कविरत्न श्री नवनीत चतुर्वेदी सबसे पहले लेखक हैं। विशाल भारत के अप्रैल तथा मई सन् १९२६ ई० के दो अंकों में समाप्य ग्वाल कवि शीर्षक लेख में चतुर्वेदी जी ने अपने स्मरण से तथा तत्कालीन स्थानीय विद्वानों से ज्ञान प्राप्त करके ग्वाल विषयक मूल्यवान् सामग्री प्रस्तुत की। वस्तुतः इस कवि पर वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करने वाले अध्येताओं के लिए यह लेख एक मात्र मूलाधार है। इस लेख के निष्कर्ष निम्नांकित हैं—

१ ग्वाल का जन्म माघ शीर्ष शुक्ला द्वितीया संवत् १८४८ वि० को हुआ।

२ कवि के पिता सेवाराम की मृत्यु इनके बाल्यकाल में ही हो गई थी अतः इनकी शिक्षा का प्रबन्ध इनकी निराश्रिता माता के कन्धों पर आ पड़ा।

३ कवि ने वृन्दावन में दयानिधि, काशी में एक विद्वान पंडित, मथुरा में दण्डी विरजानन्द और बरेली में खुशहाल राय कवि से शिक्षा ग्रहण की।

४ कवि देशाटन प्रिय था। उसने नाभा, लाहौर सुकेत मंडी, टोंक और रामपुर राज्यों में राज्याश्रय प्राप्त किया। पंजाब की पहाड़ी रियासतों और राजस्थान के रजवाड़ों में भी घूमे थे।

५ नाभा नरेश जसवन्त सिंह, लाहौराधिपति रणजीत सिंह, शेरसिंह

---

१ मिश्र बन्धु विनोद—द्वितीय भाग, संस्करण सं० १९८४ वि० पृ० ९९९ से ९९५।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, संस्करण २०१५ वि०, पृ० २९८ से ३००।

टोंक और रामपुर के नवाब कवि के प्रशसक थे, जिनसे कवि ने धन और यश अर्जित किया।

६ उरदाम चौबे हरदेव, आदि ग्वाल के प्रतिद्वन्दी और साधूराम, खड्ग किशोर, सुखदेव घटवारिया, इम्दादुल्ला खा 'ताव' आदि शिष्य-कवि थे।

७ खेमचन्द और खूबचन्द ग्वाल के दो पुत्र थे जिनमे से खूबचन्द कवि के जीवनकाल मे और खेमचन्द उसके मरणोपरान्त दिवगत हुआ। ग्वाल का वश न चल सका।

८ ग्वाल ने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे मथुरा म एक पक्की हवेली और ग्वालेश्वर महादेव का मन्दिर बनवाया था, जिस पर उसकी मृत्युपरान्त नाथूलाल शाह नामक उनके मित्र ने अधिकार कर लिया था।

६ ग्वाल ने काव्य प्रतिभा से अपार सम्पत्ति अर्जित कर के राजसी ठाठ का जीवन बिताया था। परन्तु उनके अन्तिम दिन कष्ट म व्यतीत हुए।

चतुर्वेदी जी ने श्री रामनरेश त्रिपाठी की रचना कविता कौमुदी भाग १ मे वर्णित ग्वाल की ७० ७५ पुस्तकों का सन्दर्भ देते हुए अपने पूववर्ती लेखको की ग्वाल साहित्य सूची मे साहित्यानन्द तथा 'नेह निवाह नामक दो ग्रन्थ और बढा दिये।[1]

ब्रह्मचारी बिहारी शरण ने 'निम्बाक माधुरी म ग्वाल को निम्बाक मतावलम्बी मानकर इनका जन्म स्थान मथुरा और निवास स्थान वृन्दाबन बतलाया। इससे पहली बार कवि के जन्म स्थान के विषय म मतभेद खडा हुआ।

उपयुक्त सामग्री का पूण उपयोग करते हुए आचाय विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने 'हिन्दी अनुशीलन' के 'धीरेन्द्र वर्मा विशेषाक' म इस कवि के व्यक्तित्व और कृतित्व पर अपना वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया, जिसकी विशिष्ट मान्यतायें इस प्रकार हैं—

१ ग्वाल कवि का जन्म स० १८५६ वि० और मृत्यु स० १८२४ वि० मे हुई।

१ विशाल भारत —भाग १ खण्ड १ और २, अप्रल तथा मई १९२९ ई० पृ० ३३६ ३७२।

२ संस्कृत साहित्य शास्त्र का सर्वाधिक आलोडन करने वाले सम्भवत ये प्रथम रीति-कवि थे।[1]

आगे चलकर यह लेख मिश्र जी के 'हिन्दी साहित्य का अतीत' द्वितीय भाग का अंग बन गया।

श्री प्रभु दयाल मीतल ने 'ब्रज भारती'[2] मे ग्वाल के जीवन वृत्तान्त पर विस्तृत विवेचनात्मक लेख लिखे, जिनमे नवनीत चतुर्वेदी की मान्यताओं की उन्होने पुष्टि की। तत्पश्चात् मीतल ने 'ग्वाल कवि' नामक स्वतन्त्र पुस्तक की रचना भी की जिसमे उन्होने अद्यावधि प्रकाशित प्राय समस्त साहित्य सामग्री का पूर्ण उपयोग किया है। श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी द्वारा खोजे गये दो नवीन ग्रन्थों-(१) विजय विनोद तथा (२) इश्क लहर दरयाव-के विवरणों को भी मीतल ने इस ग्रन्थ मे स्थान दिया है।[3] यह पर्याप्त महत्व-पूर्ण है।

कवि किंकर की 'ग्वाल रत्नावली'[4] में कवि का जन्म स० १८५१ वि० बताया गया है। 'दिग्विजय भूषण' मे कवि का निधन स० १६२८ वि० बताया गया है।[5] डा० ब्रज नारायण सिंह का शोध प्रबन्ध 'कविवर पद्माकर और उनका युग' इस प्रसंग में पर्याप्त महत्वपूर्ण है। इसमे कवि का जन्म काल स० १८५६ वि० और निधन तिथि स० १८२५ वि० मानी गयी है।[6]

कवि पर पत्र पत्रिकाओं मे कई छोटे लेख भी प्रकाशित हुए।[7] प्रस्तुत प्रसंग मे विविध खोज रिपोर्टों का विशिष्ट महत्व है। कवि की उपलब्ध काव्य रचनायें अन्त साक्ष्य के रूप मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं।

अन्त साक्ष्य और बहि साक्ष्य के आधार पर ग्वाल कवि के जीवन की झाँकी यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

---

१ हिन्दी अनुशीलन—धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३ अंक १-२, जनवरी जून १९६० ई० पृ० ३३१ व ३३६।
२ ब्रज भारती—वर्ष ६ अंक ४ तथा वर्ष ११ अंक ४।
३ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल स० २०१७ पृष्ठ
४ ग्वाल रत्नावली—कवि किंकर, १९४५ ई० भूमिका भाग।
५ दिग्विजय भूषण—सम्पादक-डा० भगवती प्रसाद सिंह, स० २०१६ वि० भूमिका भाग।
६ कविवर पदमाकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायण सिंह, सन् १९६१ ई० ग्वाल कवि।
७ सरस्वती जनवरी १९५६, देश बन्धु जनवरी १९५६ आदि।

वश परम्परा और पूवज कवि ने यमुना लहरी, रसिकान‍द नख शिख कवि दपण रसरङ्ग, बलवीर विनोद, साहित्यान‍, दृगशतक और भक्त भावन म अपने वश, पिता वासस्थान, गुरु आदि का उल्लेख करके हमारी समस्या को बहुत-कुछ सुलझा दिया है।[१] रसिकान‍द म कवि ने २१ दोहा म अपने वश-कुल, वश-परम्परा एव पूवजो का इतिहास वणन किया है। कवि ब‍दी विप्र वश म उत्प‍न था। इस प्रसग म उसने ब‍दी के समा नार्थी सूत और मागध शब्दो की व्याकरणिक व्युत्पत्ति भी की है। बन्दी को 'ब इ' धातु स व्युत्पन्न बता कर अपने वश का इतिहास कवि ने निम्नाकित रूप म प्रस्तुत किया है—

कहत स्तुति वहि धातु यह, सोजा मे विदिमान।
सो बदी कहियै कवि यह निरुक्ति जिय जान ॥५५॥
ता बदी के बस मे, प्रगटे माथुर राय।
पडित परम सुजान मति, सज्जन सुमति सुभाय ॥५६॥
जग‍नाथ जू प्रघट हुए, तिनके तनय प्रसस।
विद्या बोध उदार मति, जिन जीते बुधबस ॥५७॥
तिनके प्रगटे सुखद सुत, श्रीमन राय मुकद।
मुरलीधर जू तिन तनय, रक्षक श्री ब्रजचद ॥५८॥
श्री मुरलीधर राय जू, काव्य छद लवलीन।
राजा सूरज मल्ल को सभा जाय बस कीन ॥५९॥
दये अस्व कच्छी ति‍ह, हिमत बहादुर भूप।
राजमान अति ही भये, सुहृद उदार अनूप ॥६०॥
श्रीमन सेवा राय जू, तिनके सुत अवतस।
काव्य गान रस मे भये, सुहृद उदार प्रसस ॥६१॥
ग्वाल राय तिनको तनय, श्री ब‍दावन बास।
देख्यौ कछु साहित्तमत, ग्र‍य पथ रसरास ॥६२॥[२]

---

१ यमुना लहरी छ‍द सख्या २–३, रसिकान‍द, प्रथम प्रकरण छ‍द सख्या ४२ से ६२, नखशिख छ‍द सख्या ९ कवि दपण, प्रथम क्राति छ‍द सख्या ३, रसरग, प्रथम उमग छ‍द सख्या ५, साहित्यान‍द प्रथम स्क‍ध छ‍द सख्या २, दगशतक छ‍द स० २।

२ रसिकान‍द (हस्तलिखित) ग्वाल कवि प्रथम प्रकरण, कवि वश वणन।

मुरलीधर राय प्रतीत होते हैं। कवि द्वारा वर्णित राजा सूरजमल भरतपुर का राज्यकाल संवत १८१२ १८२० वि० है।[1] राजा हिम्मत बहादुर ने रज धान जिला बांदा म संवत १८०७ वि० से १८५२ वि० तक राज्य किया।[2] पद्माकर इन्हीं के आश्रित (संवत् १८३५-१८५२ वि०) रहे, मुरलीधर राय इस प्रकार सूरजमल और हिम्मत बहादुर दोनो के समसामयिक सिद्ध होते हैं। कवि के पिता सेवाराम भी कवि थे। बा श्याम सुन्दर दास ने इनको मथुरा निवासी ब्रह्मभट्ट ब्राह्मण बताया है।[3] श्री जवाहरलाल चतुर्वेदी ने इनके लिख 'भवरगीत' नामक काव्य ग्रन्थ की चर्चा की है तथा इनको मथुरा निवासी प्रसिद्ध कवि ग्वाल का पिता माना है।[4] बाबू श्याम सुन्दर दास एव श्री चतुर्वेदी दोनों ही संवत १८७६ वि० म इनकी उपस्थिति स्वीकार करते हैं। अत अन्तसक्ष्य और बहिसाक्ष्य से सिद्ध होता है कि कवि के पिता और पितामह दोनो ही कवि थे। श्री नवनीत चतुर्वेदी एव प्रभुदयाल मीतल को इन दोनो के कवि होने का कोई प्रामाण्य-साक्ष्य नही मिला।[5]

नवनीत जी को कवि के पिता के नाम म भ्रान्ति हुई है। वे लिखते हैं कि 'ग्वाल ने अपने को इन्ही मुरलीधर का पुत्र लिखा है। अब यहाँ पर यह प्रश्न होता है कि ग्वाल के पिता का नाम मुरलीधर था अथवा सेवाराम ? यमुना लहरी के प्रमाण से, मिश्रबन्धु विनोद, कविता कौमुदी सब मे सेवाराम ही लिखा है। हमने भी बडे लोगो के मुह से ऐसा ही सुना है। पर न मालूम रसिकानन्द म ग्वाल जी ने सवाराम न लिखकर मुरलीधर क्या लिखा है हमारा तो ऐसा अनुमान है कि या तो सेवाराम और मुरलीधर एक ही व्यक्ति के दो नाम हैं अथवा इन दोनो म से ग्वाल एक के औरस और दूसरे के दत्तक पुत्र होंगे। अब तक ग्वाल जी के पिता का नाम निश्चित था पर रसिकानन्द के कारण यह विषय भी विवादग्रस्त होगया है।'[6] इस सम्बन्ध म

१ वही। २ दि फाल आफ दि मुगल एम्पायर— सर जदुनाथ सरकार भाग ३, १९३८ ई० पृ०, ३१२ ३१३।

३ हस्तलिखित हिन्दी पुस्तकों की खोज का संक्षिप्त विवरण—प्रथम भाग स० बा० श्यामसुन्दर दास पृ० १८८ खो०रि० १६ १-कवि संख्या १० १६०५ कवि संख्या १४।

४ राष्ट्रभाषा परिषद पत्रिका, पटना—हिन्दी का भवर गीत साहित्य एक परिचय, ले० प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, पृ० १८।

५ विशाल भारत–वर्ष २ अंक १, पृ० ४३८, ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल पृ० ७ और ८।

६ विशाल भारत, वर्ष २ अंक १, प० ४३८।

मे हमन नवनीतजी के पुस्तकालय द्वारा रसिकानन्द की यह प्रति देखी। इसा लिपिकार श्री रामलाल शर्मा, मुहल्ला सतघडा, मथुरा निवासी,[1] से एक अनुलिपि सम्बन्धी भूल हुई है, जिससे यह बखेड़ा उठा। उसम दोहा सख्या ६० क पश्चात् ६१ वां दोहा लिपिबद्ध होने से छूट गया है जो रसिकानन्द की जोधपुर वाली दोनों प्रतिया एव राजा श्री प्रकाशसिंह मन्नापुर (सीतापुर) की प्रतियो म उपलब्ध है। दोहा यह है—

श्रीमन सेवाराम जू, तिनके सुत अयलस।
काव्य गान रस मे भये, सुहृद उदार प्रसस ॥६१॥[2]

तत्पश्चात निम्नाकित दोहा के पढन स स देह का यह बखेड़ा स्वयं ही समाप्त हो जाता है—

ग्वाल राय तिनको तनय, श्री वृन्दावन वास।
देख्यौ कछु साहित मत ग्रन्थ पथ रसरास ॥६२॥[3]

लिपिकार की एक दूसरी भूल से डा० ब्रजनारायण सिंह सेवाराम के स्थान पर सवाराय नाम अधिक उपयुक्त समझते हैं। उनका कथन है—'कवि ने अपन पिता का नाम सेवाराय लिखा है। मिश्र बन्धु तथा प० रामचन्द्र शुक्ल न इन्हे सेवाराम का पुत्र माना है। 'इन्तखाब यादगार' म भी इनके पिता का नाम सेवाराम तथा सेवा राय दोनों वर्णित हैं। यमुना लहरी के अन्तगत कवि ने अपने पिता का नाम सवाराम लिखा है। उक्त विवरण से ज्ञात हो जाता है कि कवि सेवाराय का पुत्र था। यमुना लहरी मे कवि ने किस प्रकार सवाराम लिखा कहा नहीं जा सकता। सम्भव है किसी लिपिकार की भूल के कारण ऐसा हो गया हो। क्योंकि वंश में पूवजों के नाम को देखने से भी पता चलता है कि इन म पूव पुरुष माथुर राव, मुकुन्दराव, मुरलीधर राय आदि थ। इसलिय 'राव' या 'राय' इन के नाम म परम्परागत ही जुड़ा था। इस दृष्टि से इनके पिता का नाम सवाराय ही मानना अधिक उपयुक्त जान पडता है।"[4]

---

१ श्री नवनीत पुस्तकालय की रसिकानन्द की हस्तलिपि की पुष्पिका के अन्त मे लिपिकार ने लिखा है। 'स० १९५० भाद्रपद कृष्ण ४ गुरौ लिपित श्री मथुरायाम् सतघडा मध्ये रामलाल शमणा।

२ ३ रसिकानन्द की जोधपुर वाली प्रतियाँ—प्रथम प्रकरण, कविवश वर्णन।

४ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० बृजनारायण सिंह, १९६६ ई० पृष्ठ १८२।

डाक्टर साहब के इस कथन से हम पूर्ण सहमत हैं कि 'राव' या 'राय इनके पूर्वजों के नाम में परम्परागत ही जुड़ा था। हमारा नम्र निवेदन है कि यह सेवाराम में भी जुड़ सकता है जैसा कि मुरलीधर में जुड़ा है। वास्तव में कवि के पिता का नाम सेवाराम ही है, जो कवि ने यमुना लहरी (१८७८ वि०) से भक्त भावन (संग्रह काल १९१८ वि०) तक में लिखा है। वंश की अल्ल राय' इसमें जुड़ती है। कवि के ग्रन्थों की हमें ऐसी कोई प्रतिलिपि नहीं मिली जिसमें कवि के पिता का नाम सेवाराय लिखा हो। मिश्र बन्धु विनोद से लेकर अद्यतन हिन्दी साहित्य के प्रत्येक प्रकाशित इतिहास में सेवाराम' ही लिखा मिलता है। यमुना लहरी की प्रकाशित प्रति में भी 'सेवाराम' मुद्रित है।[1] डा० सिंह द्वारा सन्दर्भित इन्तखाबे यादगार में भी अमीर साहब लिखते हैं—'ग्वाल राय कविशर बल्द राय सेवाराम कदीम वृन्दावन के रहने वाले थे।'[2] इस में सेवाराय कहीं भी नहीं लिखा है। ऐसा प्रतीत होता है कि डा० सिंह को प्राप्त रसिकानन्द की प्रति में सेवाराम' के स्थान पर सम्भवतः 'सेवाराय' लिखा है। 'म और य' की लिपि बनावट में सूक्ष्म सा ही अन्तर तो है अतः यह लिपि की भूल सहज ही सम्भाव्य हो सकती है। वास्तव में कवि के पिता का नाम सेवाराम राय था, जो संक्षेप में सेवाराम लिखा जाता है।

जन्म स्थान कवि के जन्म स्थान के विषय में अधिक विवाद नहीं है। ठा० शिवसिंह सेंगर[3] डा० जी ए ग्रियर्सन,[4] प० रामचन्द्र शुक्ल[5] प० रामनरेश त्रिपाठी[6] डा० रसाल,[7] डा० राम कुमार वर्मा,[8]

---

१ प्रकाशक नवलकिशोर प्रेस लखनऊ, तृतीय संस्करण सं० १९४५ वि०।
२ इन्तखाबे यादगार—पृष्ठ ३२०।
३ शिवसिंह सरोज—श्री शिवसिंह सेंगर संस्करण १९३४ वि० पृ० ३७१।
४ हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास अनुवादक—डा० किशोरी लाल गुप्त पृष्ठ २३३।
५ हिन्दी साहित्य का इतिहास—प० रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २९८ सं० २०१८ वि०, प० २६८।
६ कविता कौमुदी—सप्तम संस्करण प० रामनरेश त्रिपाठी १९९७ वि०, पृष्ठ ४०४।
७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रमाशंकर शुक्ल रसाल प० ४८०।
८ हिन्दी साहित्य का ऐतिहासिक अनुशीलन—डा० रामकुमार वर्मा प० ३६५।

डा० भागीरथ मिश्र,[१] प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[२] डा० किशोरी लाल गुप्त,[३] डा० महेन्द्र कुमार,[४] प० सूयकान्त शास्त्री,[५] आचाय चतुरसेन,[६] डा० सत्येन्द्र,[७] डा० गुलाबराय,[८] प० अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध,[९] प्रभृति अधिकारी विद्वानो ने ग्वाल को मथुरा निवासी माना है। जो अन्त साक्ष्य से भी प्रमाणित होता है। अमीर साहब ग्वाल को कदीम वृन्दावन के रहने वाले' मानते हुए लिखते हैं—'बाद अजा मथुरा मे आकर अक्रामत अख्त्यार की,[१०] प० नवनीत चतुर्वेदी,[११] प्रभुदयाल मीतल,[१२] श्रीकृष्ण दत्त बाजपेयी,[१३] राम नारायण अग्रवाल,[१४] डा० ब्रज नारायण सिंह,[१५] प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[१६] डा० महेन्द्र कुमार,[१७] इत्यादि सम्भाय

१ हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास–डा० भगीरथ मिश्र पृष्ठ १८१।
२ हिन्दी साहित्य का अतीत—तृतीय भाग, शृंगारकाल, स० २०२३, प० वि० ना० प्र० मिश्र पृष्ठ ६०३।
३ सरोज सर्वेक्षण–डा० किशोरीलाल गुप्त, १९६७ ई० पृष्ठ २५८।
४ हि० सा० का बृहत इतिहास–सम्पादक डा० नगेन्द्र पृ० ३७८ ३७९।
५ हि० सा० का इतिहास–प० सूयकान्त शास्त्री, ग्वाल कवि।
६ हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास–आचाय चतुर्सेन पृष्ठ ३५८ सन १९४९ ई० सस्करण।
७ ब्रज सा० का इतिहास–डा० सत्येन्द्र, प० ४३२–४३३।
८ हि० सा० का सुबोध इतिहास–डा० गुलाबराय, पृ० २३३।
९ हि० भा० तथा साहित्य का विकास–हरिऔध, पृ० ४७२ स० १९९७ वि० सस्करण।
१० इ तख्वाबे यादगार–अमीर अहमद मीनाई अमीर, (उर्दू) पृ० ३२०।
११ विशाल भारत—वष २ अक १ अप्रल १९२९ ई०।
१२ ग्वाल कवि–प्रभुदयाल मीतल, २०१७ वि० प० ६ ८।
१३ सरस्वती—वष ५७ खड १ स० १ जनवरी १९५६ ई० प० ४७ ४८।
१४ देशबन्धु, जनवरी १८५६ ई०।
१५ कविवर पद्माकर और उनका युग–डा० ब्रजनारायण सिंह, १९६६ ई० पृ० १८२।
१६ हिन्दी साहित्य का अतीत—द्वि० भाग, शृंगार काल, प० ६०३–६०४।
१७ हि०सा० का बृहत इतिहास षष्ठ भाग प्रधान सम्पादक—डा० नगेन्द्र प० ३७८।

विद्वानो ने भी कवि का जन्म स्थान वृन्दाबन और निवास स्थान मथुरा माना है। यह भी अन्त साक्ष्य से प्रमाणित होता है।

कवि ने अपने ग्रन्थो मे अपने को वृन्दाबन बासी लिखकर अपने मथुरा सुखवास का उल्लेख किया है।

बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास।
श्री जगम्ब दई हम कविता विमल विलास॥[1]
ग्वालराय तिनको तनय, श्री वृन्दावन बास।
देख्यौ कछु साहित्त मत, ग्रन्थ पथ रस रास॥[2]
वृन्दावन से मधुपुरी किय सुखबास प्रमानि।
विदित विप्र वन्दी विसद, नाम ग्वाल कवि जानि॥[3]
श्री जगदम्बा की कृपा ताकरि भयौ प्रकास।
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखबास॥[4]
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास।
वन्दी विप्र सुग्वाल कवि करत सुग्रन्थ प्रकास॥[5]
श्री जगदम्बा की कृपा, ताकरि भयौ प्रकास।
बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखबास॥[6]
वदी विप्र सुग्वाल कवि श्री मथुरा सुखधाम।
प्रघट कियौ या ग्रन्थ कौं, कवि दपन यह नाम॥[7]

उक्त प्रबल प्रमाणो के आधार पर कवि वृन्दाबन का (आदि) वासी और मथुरा का सुखवासी सिद्ध हो जाता है। रसरङ्ग के दोहे मे स्वय कवि ने वृन्दाबन से मधुपुरी (मथुरा) आकर रहने की बात प्रमाणित की है। फिर भी ब्र० बिहारी शरण लिखते है कि ग्वाल मथुरा मे जन्मे और वृन्दावन मे रहे।

वन्दी विप्र सुवश, जन्म मथुरा पुरि पावन।
विपिन राज वसि कीन्ह भक्ति श्री जुगल रिझावन॥[8]

---

१ यमुना लहरी—नवल किशोर प्रस, लखनऊ, १६४५ वि०, प० १ छ० २।
२ रसिकानन्द—(१८७६) प्रथम प्रकरण छ० स० ६२।
३ रसरग—ग्वाल कवि (१६०४ वि०) प्रथम उमग छ० ५।
४ नख शिख—ग्वाल कवि १६१९ वि० छ० स० ६।
५ साहित्यानन्द—ग्वाल कवि १६०५ प्रथम स्कध छ० २।
६ भक्त भावन—ग्वाल कवि १६१६ वि० छन्द।
७ कवि दपण—ग्वाल कवि १८८१ छ० ३ प्रथम क्रांति।
८ निम्बाक माधुरी—ब्र० बिहारी शरण स० १६६७ वि०, पष्ठ ५४८।

कदाचित ग्वाल का उक्त कोई ग्रन्थ उनके देखने मे तब तक न आया था, अन्यथा वे ऐसा न लिखते।

जन्म सवत निधन सवत ग्वाल के जन्म और निधन की तिथियाँ अब तक सर्वाधिक विवाद ग्रस्त रही हैं। 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास, षष्ठ भाग' से पूर्व लिखे गये सभी इतिहास इस विषय मे मौन हैं। कवि के जन्म और निधन सम्बन्धी चार तिथियाँ अब तक मान्य चली आरही हैं–जन्म तिथि—(१) सवत् १८४८ विक्रम (२) सवत् १८५१ विक्रम, (३) सवत १८५६ विक्रम, (४) सवत १८८० विक्रम।

निधन तिथि (१) स० १९२४ वि० (२) स० १९२५ वि० एव (३) स० १९२८ वि०।

निम्नाकित तिथि तालिका के अवलोकन से विभिन्न विद्वानो के मत-मतान्तर एक ही दृष्टि मे स्पष्ट हो जाते हैं—

लेखक का नाम	जन्म तिथि	निधन तिथि
अमीर अहमद मीनाई 'अमीर'[1]	स० १८५६ वि०	स० १९२४ वि०
प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र[2]	स० १८५६ वि०	स० १९२४ वि०
डा० भ्रजनारायण सिंह[3]	स० १८५६ वि०	स० १९२४ वि०
डा० किशोरी लाल गुप्त[4]	स० १८५८ वि०	स० १९२४ वि०
कवि किंकर[5]	स० १८५१ वि०	—
प० नवनीत चतुर्वेदी[6]	मार्गशीर्ष शुक्ला २ स० १८४८ वि०	स० १९२५ वि०
श्री प्रभुदयाल मीतल[7]	मार्गशीर्ष शुक्ला २ स० १८४८ वि०	१६ अगस्त १८६७ ई० (स० १९२४ वि०)
प० श्रीकृष्ण दत्त वाजपेयी[8]	स० १८४८ वि०	१६ अगस्त १८६७ ई० (स० १८२४ वि०)

---

१ इतखावे यादगार—पृ० ३२३।

२ हिं० सा० का अतीत—द्वितीय भाग, श्रृंगार काल, पृ० ६०३–६०४ स० २०२३ सस्करण।

३ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृ० १८३ व १८४।

४ सरोज सर्वेक्षण—पृ० २८८।

५ ग्वाल रत्नावली—भूमिका पृ० १

६ विशाल भारती—वर्ष २, अक १, ग्वाल कवि।

७ ग्वाल कवि—पृ० ७ तथा ३७।

८ सरस्वती—जनवरी [illegible] पृ० ४७ ४८।

श्री रामनारायण अग्रवाल[1]	सं० १८४८ वि०	सं० १९२४ वि०
डा० महेन्द्र कुमार[2]	सं० १८४८ वि०	सं० १९२५ वि०
डा० सत्येन्द्र[3]	सं० १८४८ वि०	सं० १९२८ वि०
डा० भगवती प्रसाद सिंह[4]	सं० १८४८ वि०	सं० १९२८ वि०
डा० गणपति चन्द्र गुप्त[5] मार्गशीर्ष शुक्ला ७	सं० १८४८ वि०	सं० १९२८ वि०
डा० शिव लाल जोशी[6]	सं० १८८० वि०	—

कवि की जन्म तिथि सं० १८४८ वि० और निधन तिथि सं० १९२५ वि० मानने वाला में पं० नवनीत चतुर्वेदी सर्वाधिक प्राचीन लेखक हैं। चतुर्वेदी जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि उन्होंने जो कुछ लिखा है, वह अपनी जानकारी और बड़े-बूढ़ों से सुना हुआ लिखा है।[7] उसका कोई ठोस और पुष्ट प्रमाण नहीं है। अतः उन की मान्यता प्रामाणिक सिद्ध नहीं होती है। उनके मत के अनुगामी विद्वानों द्वारा अनुमानित जन्म एवं निधन तिथियाँ भी मान्य नहीं ठहरतीं। कवि किंकर[8] तथा डा० जोशी ने भी अपने मतों के कोई पुष्ट आधार नहीं दिये, अतः यह भी तिथियाँ मान्य नहीं कही जा सकती।

सर्वाधिक प्राचीन लेख अमीर साहब का मिलता है, वे अपने युग के ख्यातनामा शायर और रियासत रामपुर में ४० वर्ष पर्यन्त राज्याश्रित रहे। ग्वाल भी इसी दरबार में लगभग ढाई वर्ष राज्याश्रित रहे। अमीर साहब उनके समसामयिक अभिन्न मित्र कहे जाते है।[9] अमीर साहब का कथन है—

---

१ देशबन्धु मथुरा—जनवरी १९५६ ग्वाल कवि श्री रामनारायण अग्रवाल।

२ हि० सा० का बृहत इतिहास—षष्ठ भाग, पृ० ३७८ ३७८।

३ ब्रज साहित्य का इतिहास—सत्येन्द्र, २०२४ वि० पृ० ४,२ ४३३।

४ दिग्विजय भूषण—सम्पादक डा० भगवती प्रसाद सिंह, सं० २०१६ वि० भूमिका पृ० २८।

५ हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास—डा० गणपति चन्द्र गुप्त सन् १९६५ ई०, पृ० ५०७।

६ रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृ० भूमि-शिवलाल जोशी १९६२ ई० पृ० २६३।

७ विशाल भारत-वर्ष २ अंक १ अप्रैल १९२९ ई० ग्वाल कवि श्री नवनीत चतुर्वेदी।

८ ग्वाल रत्नावली-कवि किंकर, भूमिका पृ० १।

९ ग्वाल कवि-श्री मीतल पृ० ३४।

उम्र पसठ साल थी। जिमादी उल अव्वल की नौवीं तारीख बारासौ चौरासी हिजरी म राहिए मुल्के अ न्म हुए।'[1] हिन्दू पचाग के अनुसार यह अरबी तिथि भाद्र पद शुक्ला एकादशी स० १८१४ वि० और अग्रेजी सन् के अनुमार १० सितम्बर सन् १८६८ ई० का पडती है।[2] अमीर साहब की सूचना का आधार स्वय कवि था जो उनके साथ ही उमी दरबार म रहता था दूसरे अमीर साहब की विशाल पुस्तक की रचना निश्चय ही ग्वाल के जीवन काल म हो गई होगी इतना न भी हुआ हो, तब भी इसके लिखने की तैयारियाँ तो कवि की मृत्यु तक पूण हो ही चुकी होगी। पुस्तक लीथो मे १२६० हिजरी सन्[3] म छप कर प्रकाशित हुई थी और इसी वृहत् आकार की पुस्तक साल छ महीने मे लिखना और प्रकाशित कराना असम्भव है। स्वय लेखक जिसकी निधन तिथि का द्रष्टा और साक्षी हो, वह एक पुष्ट तथ्य है। अमीर साहब द्वारा मा य मृत्यु तिथि को ही प्रामाणिक मानना सर्वाधिक तक सम्मत है। निधन तिथि म मे ६५ वप घटाने पर कवि की ज म तिथि स १८५६ वि० निकलती है। इसी तिथि को प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र डा० किशोरी लाल गुप्त तथा डा० व्रज नारायण सिंह ने भी ठीक माना है।

श्री मीतल न इस ज म तिथि का नोटिस लेकर इस मत का निम्ना कित तर्कों के आधार पर खडन करते हुए नवनीत चतुर्वेदी के मत की पुष्टि की है—

(१) कवि ने रसिकान द की रचना स० १८७८ वि० म की थी। मीनाई साहब के कवि की ज म तिथि मानी जाय तो रसिकानन्द की रचना क समय कवि की आयु २० वप के लगभग होती है। बीस वप की आयु म इस प्रौढ ग्रथ की रचना सम्भव नही है। नवनीत जी क मतानुसार आयु ३१ वप की रही होगी। इस आयु म रचना सम्भावित है[4] मीतलजी नवनीत जी क मत को ही मानने क पक्ष मे हैं।

पर मीतल जी का यह तक अति शिथिल एव तथ्यो के विपरीत है। रीतिकाल म ही देव न कवल १६ वप की अल्पायु म भाव विलास' और

१ इन्तखाबे यादगार—पृ० ३२२।

२ देखिये काशी का हिन्दू प्रेस—पचाग सख्या १८२४वि० पृ० १५ पक्ति ११ स्तम्भ स १, ११ १५ और १७।

३ तदनुसार स० १९३० वि०, अर्थात ग्वाल की मृत्यु के लगभग ६ वप पश्चात।

४ ग्वाल कवि—श्री मीतल, पृ० ६ और ७।

'अष्टयाम' जैसे प्रथम कोटि के उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना कर डाली थी।[1] बाबा दीनदयाल गिरि ने २० वर्ष की अवस्था में ही 'दृष्टान्त तरङ्गिणी' की रचना पूर्ण की थी।[2] ऐसे अन्य दृष्टान्त भी मिलते हैं। दूसरे यदि गहराई से देखा जाय तो इस कवि के ग्रन्थों में रसिकानन्द उसके रीति के अन्य ग्रन्थों से निम्न स्तर का ही ग्रन्थ सिद्ध होता है। आगे चलकर कवि दर्पण, रस रङ्ग साहित्यानन्द आदि ग्रन्थ क्रमशः प्रौढ से प्रौढतर होते चले गये हैं। डा० ब्रजनारायण सिंह का भी मत है कि कवि का जन्म संवत् १८४८ वि० न होकर संवत् १८५८ वि० मानना अधिक उपयुक्त है।[3] अब रही कवि के निधन संवत की बात वह अधिक विवादास्पद नहीं है। अमीर साहब के उल्लेख—प्रामाण्य के विपक्ष में कोई अन्य प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अतः कवि की मृत्यु तिथि भाद्रपद शुक्ला एकादशी सं० १९२४ वि० तदनुसार १० सितम्बर १८६७ ई० अखण्डित और अतर्क्य रूप से प्रामाणिक और मान्य तिथि है।

आरम्भिक जीवन और शिक्षा दीक्षा सेवाराम का परिवार संक्षिप्त था—स्वयं, पत्नी और बालक ग्वाल। सेवाराम कवि वृन्दावन के राधारमणीय और राधा वल्लभीय गोस्वामियों के राय थे। ये वृन्दावन में ही अपनी जीविका चलाते थे, आर्थिक दृष्टि से ये अधिक सम्पन्न नहीं प्रतीत होते। इनका मकान कोलिया घाट पर यमुना किनारे वृन्दावन में था। पर आजकल इन राय लोगों का वहाँ कोई परिवार नहीं रहता। नवनीत जी के जीवनकाल तक यहाँ ब्रह्मभट्टों के मकान अवश्य रहे होंगे।[4] नवनीत जी के अनुसार जब ग्वाल केवल ८ वर्ष के थे तभी इनके पिता की मृत्यु हो गई थी। बालक ग्वाल के पालन पोषण और शिक्षा दीक्षा का भार इनकी निराश्रित माता के कन्धों पर आगया। रायों के कुल धर्मानुसार ग्वाल को किसी काव्य शिक्षक से शिक्षा दिलाने को कवि की माँ व्यग्र रही।[5] उन दिनों वृन्दावन में दयानिधि आचार्य अपनी पाठशाला में कवियों को शिक्षा देते थे। इनका प्रकृत नाम दयालाल गोस्वामी और कवि नाम दयानिधि था। ये वृन्दावन के राधा वल्लभीय गोस्वामियों के परिवार में हुए। श्री राधाचरण गोस्वामी ने इनका जन्म काल सं० १६०० वि० बताया है और इनको अन्योक्ति पच्चीसी, उद्धव पच्चीसी

---

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० ३६ और ४४।

२ हि० सा० का इतिहास–आचार्य शुक्ल, पृ० ३७१ व ३७२।

३ कविवर पदमाकर और उनका युग पृ० १८३।

४ विशाल भारत–वर्ष २ अंक १ अप्रैल १६२६ पृ० ४३७। ५ वही।

तथा नसिंह चरित्र नामक काय ग्र थो का कर्त्ता लिखा है।[१] इनके छद विजय हजारा, पडऋतुहजारा आदि मे सग्रहीत मिलते हैं। मिश्रबधु विनोद म भी इस कवि का वणन है।[२] ग्वाल की माता ने पुत्र को दयानिधि के चरणो म डाल दिया। इसी पाठशाला मे प्रसिद्ध कवि गोपालसिंह नवीन भी पढ़े थे।[३] कवि हरदेव[४] भी ग्वाल क सहपाठी थे। ग्वाल की शिक्षा यहा अधिक दिन तक न चल सकी।[५] ग्वाल की माता ग्वाल को लकर अपने पितृगृह काशी चली गई, जहाँ कवि ने लगभग ४ ५ वष तक मनोयोग पूवक सस्कृत क नाटयशास्त्र, कुवलयानन्द, वृत्तरत्नाकर, रसतरगिणी, रस मजरी काव्य प्रकाश, साहित्य दपण, चन्द्रालोक आदि का अध्ययन किया। अमीर साहब का कथन है—'आगाजि सिने शऊर म वहरवउलूम बनारस गये।'[६] अर्थात् समझदार होने पर वे बनारस गये।

नवनीत जी के अनुसार कवि ने काशी से मथुरा आकर दडी विरजानन्द से 'काय प्रकाश' पढा।[७] इस विषय म नवनीत जी का आधार क्या रहा कहा नहीं जा सकता। दडी विरजानन्द जी के जिन १८ शिष्यो का महाशय लेखराम ने उल्लेख किया है उनम ग्वाल का नाम नहीं है। दूसरे दडी जी याकरण मातड कहलाते थे और अष्टाध्यायी महाभाष्य निरुक्त, निघटु एव वदिक साहित्य की शिक्षा दत थे,[८] काय की नहीं। तीसर कवि ने दडी जी का अपने ग्र थो म कहीं भी स्मरण नहीं किया। चौथे दडी जी ग्वाल के समवयस्क थ। उनका ज म पजाब म स० १८५४ वि० म हुआ[९] और ग्वाल का स० १८५८ मे। ग्वाल ने १६ १७ वष की आयु तक मथुरा काशी, बरेली म शिक्षा समाप्त करके १८ वें वष म राज्याश्रय प्राप्त कर लिया था। पाचव जब दडी जी का मथुरा आगमन स० १८८३ वि० म हुआ[१०] तब व ३६ वष के थे और कवि की आयु ३४ वष थी। इस समय तक कवि राज्यश्रय

---

१ मोहन चद्रिका—कला ८ किरण ३ ज्येष्ठ स० १९३८ वि०, पृ० ४८ ५०।
२ मि ब वि १९८४ सस्करण पृ० ६६३।
३ मोहन चद्रिका—पृ० ५०।
४ विशाल भारत—वष २ अक १ अप्रल १९२९ ई०, पृ० ४३६। ५ वही।
६ इतखावे यादगार—पृ० ३२०।
७ विशाल भारत—वष २ अक १ पृ० ४३९।
८ आर्येन्द्र धम जीवन—रामविलास वैदिक यन्त्रालय, अजमेर स० १९६१ वि० विरजानद दडी का जीवन चरित्र ले० लेखराम पृ० ३७७।
९ वही, पृ० ३६७। १० वही, पृ० ३७१।

के १४ सुखद वर्ष भोग चुका था और लाहौर दरबार से सम्बद्ध था। अतः ग्वाल द्वारा दंडी जी से मथुरा में रहकर काव्य प्रकाश पढ़ने की परिस्थिति ही नहीं बनती। दंडी विरजानंद कवि की गुरुपरम्परा में नहीं आते। यह सम्भव हो सकता है कि कवि ने दंडी जी से कभी काव्यशास्त्र चर्चा मथुरा में की हो। दंडी यहाँ पर्याप्त समय तक रहे थे और ग्वाल भी मथुरा आते रहते थे।

काशी से लौटकर कवि ने बरेली के खुशहाल राय नामक कवि को काव्य गुरु बनाया। दयानिधि को सम्भवतः वह गुरुरूप में स्वीकार नहीं कर सके थे। कवि ने गुरुरूप में दयानिधि का कहीं भी स्मरण नहीं किया जब कि खुशहाल राय को कवि मुकुटमणि विशेषण के साथ स्पष्टतः गुरु घोषित किया है।[1] अमीर साहब इस विषय में लिखते हैं—*खुशहाल राय कवीश्वर बरेली के यहाँ वारिद थे मुलाकात हुई। बाज किताबें उनसे पढ़ी और हुस्न खिदमत से उस्ताद को अपनी तरफ ऐसा मुतवज्जह कर लिया कि उनको* बहुत मुहब्बत हो गई।[2] श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा ने भी बरेली निवासी खुशहाल राय की जीवनी में ग्वाल को उनका शिष्य लिखा है।[3] बरेली में इनकी एक पाठशाला चलती थी जिसमें कविगण शिक्षा पाते थे। शर्माजी खुशहाल राय का जन्म संवत १८८५ वि० मानते हैं।[4] ग्वाल ने इनको सर्वत्र सम्मान सहित स्मरण किया है।

कवि ने दयाल नामक एक और गुरु का एक कवित्त में गुणगान किया है—

> कामदेव श्री गुरु दयाल महाराज जून,
> कियो उपदेश जामें नेकना धड़क है।
> रसिक समाज ज्ञान सुनि सुख पावे भागे
> प्रीति की समाधि लागे चाहे ना धड़क है।।
> ग्वाल कवि वाला रूप ब्रह्म मे मगन है यो,
> हाव भाव साधे होत ज्ञानिन धड़क है।
> नीबी गहि मन की गरीबी सो मुकति कर्यो,
> जीवन मुकति की बया सूधी सड़क है।।[5]

---

१ श्री खुशाल कवि मुकटमनि तासि शिष्य बिकास।
वासी बृन्दाविपिन के श्री मथुरा सुखवास।। नखशिख छन्द संख्या ८।

२ इन्तखावे यादगार—पृ० ३२० ३२१।

३ महाकवि ग्वाल भी आपके ही शिष्य थे।' ब्रह्मभट्ट कवि सरोज २०५४ वि० पृ० २२३ छ० सं० १६६। ४ वही, पृ० २२३।

५ कवि हृदय विनोद सं० मु० हरिप्रसाद, काशी समान प्रेस मथुरा १८८८ ई०।

प० रामनरेश त्रिपाठी तथा सेठ कन्हैयालाल पोद्दार ने दयाल गुरु को दयानिधि का ही दूसरा नाम बताया है।[1] परन्तु सम्भवत दयालकवि काशी निवासी गुजराती ब्राह्मण है, जिनके 'दया दीपक' का पता खोज मे लगा है, जिसकी रचना स० १८८७ वि० मे हुई थी।[2] कुछ गहराई से विचार करने पर निष्कर्ष निकलता है कि दयानिधि और ग्वाल दो पृथक कवि है। ग्वाल ने दयानिधि के छन्दो को दयालाल गोस्वामी और दयानिधि नाम से उदाहृत किया है और दयाल का नाम दयाल ही पृथक लिखा है। दयालाल गोस्वामी का उपनाम दयानिधि है, दयाल नही। श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा ने 'ब्रह्मभट्ट कवि सरोज' मे ग्वाल के आठ गुरुओ का उल्लेख किया है, जिनमे दयानिधि से पृथक काशी के एक अनाम महामहोपाध्याय की भी चर्चा हुई है[3] ऐसा प्रतीत होता है कि वे अनाम गुरु काशी निवासी यही दयाल कवि रहे होगे, जिन्होने दया दीपक' लिखा है। ग्वाल की गुरु परम्परा मे दयानिधि दयाल कवि और खुशहालराय के ही नाम प्रामाणिक मानना युक्तियुक्त प्रतीत होता है।

कविता काल आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने स० १८७९ वि० से स० १९१८ वि० तक ग्वाल का कविता काल माना है।[4] अधिकाश विद्वान् इसी मत के पोषक हैं परन्तु यह मत युक्तियुक्त और समीचीन नही है। ग्वाल के दो आरम्भिक ग्रन्थो—१ निम्बार्क स्वाम्यष्टक और २ नेह निवाह तथा दृग शतक के उपलब्ध हो जाने के पश्चात् ये दोनो ही तिथियाँ परिवर्तित हो जाती हैं। 'निम्बार्क स्वाम्यष्टक' एव नेह निवाह दोनो ही लघु ग्रन्थ भाव भाषा और शैली के देखते हुए कवि के आरम्भिक काव्याभ्यास काल की अत्यन्त सामान्य कोटि की कृतियाँ सिद्ध होती है। भले ही इनमे रचना काल का उल्लेख नही हैं परन्तु ये प्रत्येक दशा मे यमुना लहरी (स० १८७८ वि०) और रसिकानन्द (स० १८७८ वि०) जैसे प्रौढ ग्रन्थो से पर्याप्त पहले लिखी गई थी। श्री नवनीत चतुर्वेदी का कथन है कि अध्ययनोपरान्त कवि स० १८७५ वि० के लगभग नाभा की ओर रवाना हुआ था।[5] हमारे मत मे ये रचनाएँ इसी तिथि के आसपास कुछ ही पहले की हैं। अत इनका कविता काल १८७६ वि० से पूर्व

१ कविता कौमुदी–पृ० ४०७ ब्रजभारती–वर्ष १ अक १ पृ० १३।

२ हि० ख० रिपोर्ट १९०४—१५३ पृ० ४०७।

३ ब्रह्मभट्ट कवि सरोज–श्री दुर्गाप्रसाद शर्मा पृ० १६६।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० २६८।

५ विशाल भारत वर्ष १ अक १ अप्रल १९२८ ई०।

ही मानना उचित है। जहाँ तक कविता काल की अंतिम तिथि (सं० १६१८ वि०) के निर्धारण का प्रश्न है, दृगशतक का रचना काल सं० १६१९ वि० है।

६ १ ६ १

सवत् निधि ससि निधि ससी, फागु पाख उजियार।

द्वितीया रवि आरभ किय, द्रग सत सुख को सार ॥३॥ दृगशतक।

भक्त भावन का संग्रह काल भी सं० १८१८ वि० है।

६ १ ९ १

सवत् निधि ससि निधि ससी, मास असाढ़ बखान।

सित पख द्वतिया रवि विषै प्रगट्यौ ग्रन्थ सुजान ॥४॥ भक्तभावन।

इस प्रकार इनका कविता काल सं० १८७८ वि० के पूर्व से सं० १६१६ वि० तक है।

राज्याश्रय मु० अमीर अहमदमीनाई 'अमीर' ने कवि के राज्याश्रय के विषय में इतना लिखा है–

बाद चन्द रोज पंजाब जाकर महाराजा रनजीतसिंह के दरबार में नौकर हुए बीस रुपये रोज मुकरर हुए। जब रनजीतसिंह ने इस जहान से कूच किया महाराज शेरसिंह के पास रह जागीर पाई और आबरू हासिल की। महाराज के सामने उनके खास अजाजो के साथ बराबर कुर्सी पर बैठते थे। जब राजा शेरसिंह मारे गये ग्वालराय अपने वतन को आये और मरफुल हाल बसर करते रहे।[२]

अमीर साहब के उक्त कथन से न तो अन्तर्साक्ष्य पूर्णत सहमत है और न बहिर्साक्ष्य। कवि का महाराजा रणजीतसिंह के दरबारी कवियों की सूची में नाम है।[३] इससे यह निश्चित है कि कवि लाहौर में रणजीतसिंह के समय से शेरसिंह के राज्यकाल तक रहा।[४] सत्यपाल गुप्त राजा दलीपसिंह के समय तक लाहौर में उपस्थित मानते हैं।[५] इससे अमीर साहब के कथन की अंशत सम्पुष्टि होती है। कवि सर्वप्रथम लाहौर पहुंचा यही यह विवादग्रस्त विषय है। कवि को वहाँ २० रु० नित्य वृत्ति मिलती रही, इसका बहुत खोज करने पर भी कोई आलेख्य प्रमाण नहीं मिला।

---

१ इन्तखावे यादगार—पृ० ३२३।

२ पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास–प० चन्द्रकान्त बाली १९६२ ई०, पृ० २००। ३ वही, पृ० १९६।

४ पंजाब का हिन्दी साहित्य–श्री सत्यपाल गुप्त १९५६ ई०, पृ० १०३।

५ रसिकानन्द–ग्वाल कवि, प्रथम प्रकरण, छन्द संख्या २७ से ३३ तक।

नाभा दरबार मे यदि हम कवि के ग्रथा के रचना काल एव रचना स्थान उल्लेख का अन्तर्साक्ष्य के आधार पर अध्ययन करते हैं तो कवि का नाभा दरबार म राज्याश्रित होना सिद्ध होता है लाहौर म उसके पश्चात् । कवि ने रसिकानन्द की रचना स० १८७८ वि० मे नाभा नरेश की आज्ञा के परिपालन म नाभा म की ।[1] नाभा राजवश वणन, नगर वणन, हय तुरग राजसभा वणन[2] प्रसग एव ग्र थ की पुष्पिका कवि के नाभा निवास को प्रमाणित करने को पर्याप्त हैं । नवनीत जी का मत है कि ग्वाल वृन्दावन स स० १८७५ के लगभग नाभा पहुचे और वहाँ १८७६ वि० म रसिकानन्द की रचना की[3] ठीक प्रतीत होता है ।

अमृतसर म कवि ने नाभा कब छोडा इसका उल्लेख नही मिलता । पर ग्वाल ने स० १८८३ वि० म अमृतसर म 'हम्मीरहठ की रचना की, यह तथ्य ग्रथ के निम्नाक्ति दाहे से प्रमाणित है—

३ ८ ८ १

सवत गुन निधि सिधि ससी कातिक कुहू बखान ।

श्री हम्मीर हठ प्रगटयो, अमृतसर सुभ थान ।। (छ० स० १००)

अमृतसर मे ही स० १८८१ वि० म कवि ने कवि दपण की रचना की, जसा कि ग्र थ की प्रतियो के अन्त के उल्लेखो और इतिहास क तारतम्य से सिद्ध होता है । जो इस प्रकार है—

इति श्री सव गुन गाहक असि वाहक परम उदार रिझवार श्री सरदार साहिब श्री मल्लहना सिह जी कृत ग्वाल कवि विरचित दूषण-दपणे ।'

इसस सिद्ध है कि कवि सरदार लहना सिह का आश्रित था । इतिहासकार सयद मुहम्मद लतीफ क अनुसार सरदार लहनसिह मजीठिया, देश राज सिह मजीठिया का पुत्र था, जो महाराजा रणजीत सिह द्वारा पहाडी राज्य का शासक नियुक्त किया गया था परन्तु वह अमृतसर मे ही रह कर राजकाज करता था ।[4] डा० दशराज लिखते हैं कि लहनासिह ने अपने पिता देसासिह की मृत्यु (स० १८८६ वि०) क उपरान्त स० १६०० वि० तक सफलतापूवक शासन काय किया । लहना सिह की मृत्यु काशी यात्रा म स० १८०१ वि० म हुई ।[4]

---

१ रसिकानन्द —ग्वालकवि प्रथम प्रकरण छन्द सख्या ४ से २६ तक ।

२ विशाल भारत वर्ष २ अक २ नइ १९२९ इ० ।

३ हिस्ट्री आफ दि पजाब — सयद मुहम्मद लतीफ पृ० ४५८ ।

४ सिख इतिहास—डा पृ० ४८५ ।

उपयु क्त ऐतिहासिक प्रमाणो के आधार पर सिद्ध होता है कि कवि ने कवि दपण की रचना अमृतसर के इसी सरदार लहनासिह के आश्रय मे की तथा हम्मीर हठ उसने देसासिह क समय म लिखा। यद्यपि कवि ने देसासिह का नाम ग्रन्थ मे नही दिया तथापि इतिहास प्रमाण है कि देसासिह स १८६६ से १८८६ वि० तक पहाडी राज्यो के सूबेदार रहे थे।[1] लहना सिंह कई भाषाओ के ज्ञाता और ज्योतिष के अच्छे जानकार थे।

लाहौर दरबार मे महाराजा रणजीतसिंह (स० १८३७ १८६६ वि०) ने अल्पावस्था में ही स० १८४७ वि० म राजकाज सभाला था और १८५८ वि० म महाराजा की उपाधि धारण की। इनकी मृत्यु १८६६ ई० की २७ जून को हुई।[2] कवि ने *विजय विनोद म इनकी मृत्यु की तिथि इस प्रकार* दी है—

अट्ठारा सौ छयानवें, सवत मानो जान।
मास असाढ सु किसन पख, पडवा भयौ पयान।। छ स ६५

विजय विनोद की रचना स० १६०१ वि० म पूर्ण हुई।[3] महाराज शेरसिंह की मृत्यु गोली से स० १६०३ वि० म हुई।[4] अत विजय विनोद की रचना शेरसिंह के समय की सिद्ध होती है। विजय विनोद म महाराजा रणजीत सिंह के राज्य स शेरसिंह के काल तक का लाहौर दरबार के षड यन्त्रो और युद्धों का कवि ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि कवि ने जैसे स्वय सब कुछ आँखो से देखा हो। ये जीते जागते चित्र रणजीत सिंह के दरबार मे कवि की उपस्थिति के प्रबल उद्घोषक हैं। परन्तु कवि लाहौर

---

१ वही, पृ० ४८५ २ रणजीत सिंह के जन्म की तिथि स० १८३७ के माघ मास बताई जाती है (पृ० २८७) जिस समय उनके पिता महासिंह की मृत्यु हुई थी, रणजीत सिंह की उम्र १० साल की थी इनकी मां ने दीवान लखपतराय को इनके सलाहाकार के तौर पर नियुक्त किया (पृ० ३०५) लाहौर मे सन १८०१ में उन्होंने एक बडा दरबार किया और महाराजा की उपाधि धारण की (पृ० ३०८) सन् १८३९ ई० की २७ वीं जून को महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये (पृ० ३२७)'— सिख इतिहास डा० देशराज।

३ सवत ससि नभ निधि ससी सावन सुकल समोद।
तिथि जु अष्टमी भौम कौ प्रगट्यौ विजय विनोद।। छ० स० ७

४ सिख इतिहास—डा० देशराज, पृ० ३१०।

दरबार म रिस सवत म उपस्थित हुआ, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। यह तो निश्चित ही है कि रणजीत सिंह का दरबार हाशम, गणेश, शिवदयाल, जय सिंह, बुध सिंह, ग्वाल जैसे कवियो से अलकृत था।[१] कवि १८८३ वि० तक अमृतसर था, जैसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है। इसके पश्चात ही कभी वह रणजीत सिंह की मृत्यु (स० १८८६ वि०) से पूव लाहौर आया होगा जहाँ पर स० १६०१ वि० तक उसका रहना सिद्ध होता है।

पटियाला मे बाली जी का कथन है कि 'लाहौर से चलकर ग्वाल पटियाला आये तथा जीवन के अन्तिम दिनों म नाभा रहे।[२] ग्वाल का नाम पटियाला राज्य की कवि सूची मे नही मिलता और न वहाँ उनका कोई ग्रथ ही उपलब्ध है। इसमे कवि का पटियाला मे राज्याश्रित रहना सिद्ध नही होता भ्रमणाथ ही गय होंगे।

पुन नाभा मे बाली जी का मत है कवि लाहौर दरबार छोड कर पुन नाभा पहुचा था।[३] राजा जसवन्त सिंह की मृत्यु (स० १८६७ वि०) के उपरान्त उनक १८ वर्षीय पुत्र देवेन्द्र सिंह नाभा के शासक हुए जो सवत १८०४ वि० म अग्रेजो द्वारा अपदस्थ कर दिये गय। इसके पश्चात उनके पुत्र भरपूर सिंह ८ वष की वय म राजा बनाये गये।[४] कवि भरपूर सिंह के आश्रित रह और यही कवि ने गुरुपचासा (मौलिक काव्य) तथा मीरहसन की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान' का 'इश्कलहर दरयाव' नाम से स० १६१७ वि० म काव्यानुवाद प्रस्तुत किया।[५] जो स० १६२० वि० म मुद्रित और प्रकाशित भी हुआ।[६] यह ग्रथ राजा की आज्ञा से ही लिखा गया था।[७] अत नाभा म कवि दूसरी बार भी आश्रित रहा प्रमाणित हो जाती है।

श्री नवनीत चतुर्वेदी लिखते हैं कि 'ग्वाल ने लाहौर से चलकर पजाब

---

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—बाली, पृ० १९९।
२ वही पृ० १९६। ३ वही, पृ० १९६।
४ सिख इतिहास—डा० देशराज, पृ० ४०६ ४०७।

७ १ ९ १
५ सवत रिति ससि निधि ससी, माघ चांदनी चाव।
तोदस ससि कों प्रगट हुआ, इश्कलहर दरयाव॥

पहली दास्तान, छ० स० ४७
६ सप्तसिंधु—पटियाला वष ३ अक १२ दिसम्बर १९५६ ई०, पृ० ५६।
७ इश्कलहर दरयाव—पहली दास्तान, गुरुपचासा छ० सं० ५ से ७ तक।

उपयु क्त ऐतिहासिक प्रमाणो के आधार पर सिद्ध होता है कि कवि ने कवि दपण की रचना अमृतसर के इसी सरदार लहनासिंह क आश्रय म की तथा हम्मीर हठ उसने देसासिंह के समय मे लिखा। यद्यपि कवि ने देसासिंह का नाम ग्रन्थ मे नही दिया, तथापि इतिहास प्रमाण है कि देसासिंह स १८६६ से १८८६ वि० तक पहाडी राज्यो के सूबेदार रह थ।[1] लहना सिंह कई भाषाओ के ज्ञाता और ज्योतिष के अच्छे जानकार थे।

लाहौर दरबार मे महाराजा रणजीतसिंह (स० १८३७ १८९६ वि०) ने अल्पावस्था मे ही स० १८४७ वि० म राजकाज सभाला था और १८५८ वि० मे महाराजा की उपाधि धारण की। इनकी मृत्यु १८९६ ई० की २७ जून को हुई।[2] कवि ने विजय विनोद म इनकी मृत्यु की तिथि इस प्रकार दी है—

अट्ठारा सौ छयानवें, सवत मानो जान।
मास असाढ सु किसन पख पडवा भयो पयान।। छ स ९५

विजय विनोद की रचना स० १९०१ वि० म पूण हुई।[3] महाराज शेरसिंह की मृत्यु गोली से स० १९०३ वि० म हुई।[4] अत विजय विनोद की रचना शेरसिंह के समय की सिद्ध होती है। विजय विनोद म महाराजा रणजीत सिंह के राज्य से शेरसिंह के काल तक का लाहौर दरबार क षड यन्त्रो और युद्धो का कवि ने ऐसा सजीव चित्रण किया है कि कवि ने जसे स्वय सब कुछ आँखो स दखा हो। ये जीत जागते चित्र रणजीत सिंह के दरबार मे कवि की उपस्थिति क प्रबल उद्घोषक हैं। परन्तु कवि लाहौर

---

१ वही, पृ० ४८५ २ रणजीत सिंह के जन्म की तिथि स० १८३७ के माघ मास बताई जाती है (पृ० २८७) जिस समय उनके पिता महासिंह की मत्यु हुई थी रणजीत सिंह की उम्र १० साल की थी इनकी मां ने दीवान लखपतराय को इनके सलाहाकार के तौर पर नियुक्त किया (पृ० ३०५) लाहौर मे सन १८०१ मे उन्होने एक बडा दरबार किया और महाराजा की उपाधि धारण की (पृ० ३०८) सन १८३९ ई० की २७ वीं जून को *महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये* (पृ० ३२७) — सिख इतिहास डा० देशराज।

३ सवत ससि नभ निधि ससी सावन सुकल समोद।
तिथि जु अष्टमी भौम को प्रगटचो विजय विनोद।। छ० स० ७

४ सिख इतिहास—डा० देशराज पृ० ५१०।

दरबार में किस सवत मे उपस्थित हुआ, इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। यह तो निश्चित ही है कि रणजीत सिंह का दरबार हाशम, गणेश, शिवदयाल, जय सिंह, बुध सिंह, ग्वाल जैसे कवियो से अलकृत था।[1] कवि १८८३ वि० तक अमृतसर था, जैसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है। इसके पश्चात ही कभी वह रणजीत सिंह की मृत्यु (स० १८९६ वि०) से पूव लाहौर आया होगा जहाँ पर स० १९०१ वि० तक उसका रहना सिद्ध होता है।

पटियाला मे बाली जी का कथन है कि 'लाहौर से चलकर ग्वाल पटियाला आये तथा जीवन के अन्तिम दिनों मे नाभा रहे।[2] ग्वाल का नाम पटियाला राज्य की कवि सूची म नही मिलता और न वहाँ उनका कोई ग्रन्थ ही उपलब्ध है। इससे कवि का पटियाला म राज्याश्रित रहना सिद्ध नही होता, भ्रमणाथ ही गये होंगे।

पुन नाभा में बाली जी का मत है कवि लाहौर दरबार छोड कर पुन नाभा पहुचा था।[3] राजा जसवन्त सिंह की मृत्यु (स० १८९७ वि०) के उपरान्त उनक १८ वर्षीय पुत्र देवेन्द्र सिंह नाभा के शासक हुए जो सवत १९०४ वि० मे अग्रेजो द्वारा अपदस्थ कर दिये गये। इसके पश्चात उनके पुत्र भरपूर सिंह ८ वष की वय मे राजा बनाये गये।[4] कवि भरपूर सिंह के आश्रित रहे और यही कवि ने गुरुपचासा (मौलिक काव्य) तथा मोरहसन की प्रसिद्ध मसनवी 'सिहर उल बयान' का 'इश्कलहर दरयाव' नाम से स० १९१७ वि० म काव्यानुवाद प्रस्तुत किया।[5] जो स० १९२० वि० म मुद्रित और प्रकाशित भी हुआ।[6] यह ग्रन्थ राजा की आज्ञा मे ही लिखा गया था।[7] अत नाभा म कवि दूसरी बार भी आश्रित रहा प्रमाणित हो जाती है।

श्री नवनीत चतुर्वेदी लिखते हैं कि ग्वाल ने लाहौर से चलकर पजाब

---

१ पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—बाली, पृ० १९९।
२ वही पृ० १९६। ३ वही, पृ० १९६।
४ सिख इतिहास—डा० देशराज पृ० ४०६ ४०७।

७ १ ९ १
५ सवत रिसि ससि निधि ससी, माघ चाँदनी चाव।
त्रोदस ससि को प्रगट हुआ, इश्कलहर दरयाव॥

पहली दास्तान, छ० स० ४७

६ सप्तसिंधु—पटियाला वष ३ अक १२ दिसम्बर १९५६ ई०, पृ० ५६।
७ इश्कलहर दरयाव—पहली दास्तान, गुरुपचासा छ० स० ५ से ७ तक।

की सुकेत मण्डी म अपना डेरा डाला। वहाँ क शासक ने उनका स्वागत किया, ग्वाल वही रहने लगे और अपन दोनो लडको, खूबचन्द और रामचन्द, को भी वही बुला लिया। यहाँ ग्वाल को जीविका के लिये एक गाँव भी मिला था। कुछ समय पश्चात् ग्वाल खूबचन्द के साथ मथुरा आगये और रामचन्द को वही मण्डी म गाँव आदि क प्रबन्ध के लिये छोड दिया। मथुरा आकर ग्वाल जी कभी-कभी राजपूताने की रियासतो म भी दौरा लगा आते थ। टोंक के नवाब के लिये उन्होने खडी बोली म कृष्णाष्टक बनाकर सुनाया जिसे उन्होंने खूब पसन्द किया।[1] यह प्रमाणित नहीं होता।

मण्डी मे ग्वाल का सुकेत मण्डी मे रहना प्राय निश्चित है। यहा के शासक बलवीर दयाल की आज्ञा से कवि न बलवीर विनोद ग्रन्थ की रचना की थी, यहाँ कवि को एक गाँव मिलने की भी चर्चा साहित्य म हुई है। परन्तु इस तथ्य के प्रामाण्य साक्ष्य नहीं मिलते।

टोंक म कृष्णाष्टक म न तो इस ग्रन्थ का रचना काल है और न शासक का नाम सकेत ही है। कृष्णाष्टक की भाषा अरबी फारसी मिश्रित खडी बोली है। इसस स्पष्ट है कि किसी उर्दू फारसी क ज्ञाता को सुनाने को कवि ने य छन्द लिखे थ जो हिन्दू भी हो सकता है और मुसलमान भी। टोंक का नवाब भी हो सकता है और रामपुर का भी कवि रामपुर म भी राज्याश्रित रहा था। टोक म इसका कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता अत नवनीत जी क इस कथन की नही की जा सकती।

अलवर मे कवि का अलवर के दरबारी कवि पूर्णसिंह ब्रह्मभट्ट के साथ शास्त्रार्थ हुआ था। डा० मोतीलाल गुप्त इस विषय मे लिखते है—

'पूणमल्ल जी अलवर नरेश महाराज विनय सिंह जी क राजकवि थे। इन का जन्म स० १८८७ वि० मे हुआ। हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि ग्वाल से इनका काव्य विवाद हुआ था। अपनी पराजय स्वीकार करते हुए ग्वाल कवि ने कहा था—इस समय सरस्वती आप पर ही प्रसन्न हैं।'[2] इस विषय म हम कोई मूल आलेख प्रमाण नही मिल पाया।

रामपुर मे ग्वाल का अन्तिम जीवन रामपुर मे व्यतीत हुआ वहाँ क शासक विद्या व्यसनी हिन्दी उर्दू के ज्ञाता और साहित्यकार थे। उर्दू के

---

१ विशाल भारत—वष २ अक २ ग्वाल कवि श्री नवनीत चतुर्वेदी।

२ मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन—डा० मोतीलाल गुप्त स०२०१९ वि० परिशिष्ट ३, पृ० २८७।

प्रसिद विद्वान और शायर 'अमीर लखनवी ४० वर्ष तक रामपुर मे रहे ।[1] नवाबजादा इमदादुल्ला खा 'ताब' ग्वाल के शिष्य हो गये थे ।[2] यही कवि का हाल हुआ, अमीर साहब ने अपने ग्वाल विषयक सस्मरणो म निम्नाकित उल्लेख किया है—

'शाहजादा इमदादुल्ला खा 'ताब जिनका जिक्र खर हरफ ताय करस्त म गुजरा उनके शागिर्द थे। एक जमाने म शाहजादा मौसूफ मथुरा गये हुए थे कि उनके साथ अक्सर शाहजादा सयदुल्ला खा 'दर्म अपन वालिद के पास गये। ग्वाल राय स मुलाकात हुई। शाहजादा सैयदुल्ला खा न उसी माफन साबिका क ऐतबार स नवाब फिर ऐश मकान नाजिब मराह के हुजूर म उनका जिक्र किया। नवाब ममदूह न उनकी मारफत उनको बुलाया। बहुकुम मह मान नवाजी मदारात से मौरुफ इनायत फरमाया। नौकरी उन्होंने मजूर न की। सात महीने क बाद रुखसत हुए। जब बन्दगाने आलीदाम अक्वालहू ने सन्द पर जलूस फरमाया तो रहमियत अरबाब कमाल आया फिर ग्वाल राय को तलब फरमाया। हरचन्द बमारत से हौसला नक्ल ओ हरक्त का बाकी तनहा मगर शहरी कदर अफजाइ बन्दगान हुजूर का जा सुना बिला ताम्मुल आये और कदर दानिया क मज उठाय। सौ रुपये मशाहिरा करार पाया। एक साल नौ महीने यह ताल्लुक रहा। पैंसठ वर्ष की उम्र थी कि जमादी उल अव्वल की नवी तारीख बारा सौ चौरासी हिजरी में राहिय मुल्के अदम हुए।[3]

मकान निर्माण कवि ने अपने जीवन के अन्तिम दिनो में मथुरा म यमुना किनारे एक पक्का मकान भी बनवाया जो ग्वाल की हवेली के नाम से आज भी प्रसिद्ध है। यह मुगल स्थापत्य कला का एक सामान्य प्रतीक है।[4] यह तीन मजिल का १८ कमरा, तिदरिया और चौडे सहन वाला पक्का मकान है। भूमिगत तहखाने भी बडे हैं। मकान स सलग्न एक शिवालय भी है जो कवि न स० १८२१ वि० म अपनी भजन पूजा के लिय निर्माण कराया था। मन्दिर म शिव जगदम्बा की मूर्तिया हैं।[5] इस पर एक छोटा सा लाल पत्थर

---

१ उर्दू साहित्य का परिचय—प० हरिशकर शर्मा, पृ० २३१ २३२।

२ इतखावे यादगार—अमीर अहमद मीनाई, पृ० ३२३।

३ इतखावे यादगार—पृ० ३२४। इनकी निधन तिथि हिन्दू पचाग के अनुसार भाद्रपद शुक्ला ११ स० १९२४ वि० है।

४ देखिये परिशिष्ट। ५ वही।

भी लगा है। जिस पर हि ी म मन्दिर मे मूर्तियां पधराने की तिथि इस प्रकार उत्कीर्ण है—

उनइस सत इक बीस धरि निवरात्री भगुवार।
पधराये प्रभु ग्वाल कवि, गवरि समु सुखसार॥

यह पटिया काली हो रही है इसस इसका छाया चित्र नही बन सका। परन्तु इस का लेख पठनीय है। यह मन्दिर ग्वालेश्वर के नाम से विख्यात है और मन्दिर वाला चबूतरा ग्वाल चबूतरा कहलाता है। चबूतरा और मन्दिर सावजनिक सम्पत्ति है और हवली एक स्थानीय जोहरी के अधिकार म है।

ग्वाल इस भवन सम्पत्ति का उपयोग कम ही कर पाये। मकान निर्माण के लगभग ४ वष उपरा त वे दिवगत ही हो गये थे और उसस पूव लगभग २ वष तक व रामपुर म रहे थ।

सन्तान कवि के दो पुत्र थे। खूबच द और छाट खेमचन्द थे दोना ही विवाहित थे। कविता करने की प्रतिभा दोना ही म थी। नवनीत जी के अनुसार निस्सन्तान खूबचन्द की मृत्यु युवावस्था म ही हो गई थी। खेमचन्द कवि के साथ मण्डी म रहने लगा था, जहाँ से वह लौट कर पुन मथुरा नहीं आया। न जाने उसका क्या हुआ? उसकी पत्नी कवि की मृत्यु तक हवेली मे रही। हवेली को कवि के एक विश्वासघाती मित्र नाथूलाल शाह ने छीन कर उसे निकाल दिया जिससे वह उन्मादावस्था म जीवन पयन्त घूमती रही और मथुरा मे ही वही मर गई। श्री नवनीत जी ने उसे देखा था, वह भी निस्सन्तान थी। कवि का कोई वशधर शेष नही रहा। खूबचन्द की मृत्यु के उपरान्त कवि को *मिला गाँव भी राज्य ने छीन लिया था।*[1] हवली और ग्वालेश्वर मन्दिर का छोड कर और कोई अचल सम्पत्ति कवि के स्मृति रूप म शेष नहीं।

मित्र और प्रशासक मथुरा म कवि का प्रमुख मित्र नाथूलाल शाह था, जिसका मकान कवि के पास ही था। कवि अपने मकानादि को इसी को दख रेख म छोड जाया करते थे। कवि की पुत्रवधू यही रहा करती थी। कवि की मृत्यु के पश्चात शाह ने कवि क हवली स्थित विशाल पुस्तकागार म आग लगा दी, जिसम सस्कृत और हिन्दी के अपार ग्रन्थ और कवि का पर्याप्त हस्त लिखित साहित्य विलुप्त हो गया। शाह कवि का विश्वासघाती मित्र सिद्ध

---

1 विशाल भारत—वष १ अक १ अप्रल १९२९ ई०।

हुआ। स्वामी शिवान ?, गोस्वामी पुरषोत्तमलाल के बगाली घाट स्थित मदिर पर कवि बैठकर कवितायें सुनाया करता था। गो० पुरुषोत्तमलाल जी ने कवि का काव्य प्रशसा मे एक स्वण की अगूठी पुरस्कार स्वरूप दी थी।[१] मथुरा के उरदाम चाव ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी थे। दोना म बडी लागडाट रहती थी।[२] वाहरी कवियो मे नाभा क वशी पडित और बीरसिंह 'बल' ग्वाल के अभिन्न सखा कहे जाते हैं। प० चन्द्रशेखर वाली के शब्दो म 'ग्वाल की वशी पडित के साथ गहरी छनती थी। दोनो का काव्यास्वादन एक दूसरे का पूरक बन गया था।'[३] चन्दौसी के प० मधुसूदनदास कवि के मित्र थे, जिनसे कवि लाहौर स लौटते समय अन्तिम बार मिला था।[४] रामपुर के अमीर अहमद मीनाई और लाहौर क काश्मीरी जल्हा पडित कवि के अन्य प्रशसको म से थे। राजाओ और नवाबो म तजाब केशरी महाराजा रणजीतसिंह, नाभा के राजा जसवन्तसिंह, देवेन्द्रसिंह, भरपूरसिंह, मडी के बलवीर दयाल, अमृतसर क देसासिंह और लहनासिंह, रामपुर के नवाब कल्बे अली खा, इम्दादुल्ला खा ताव', सयदुल्ला खा 'इल्म और टोक के नवाब कवि के अनन्य प्रशसक रहे थ। दयानिधि तथा खुशहालराय का तो आशीर्वाद ही इनको प्राप्त था।

शिष्य कवि के पाडित्य और काव्य प्रतिभा का लोहा इसके प्रतिद्वन्द्वी कवि भी मानते थे। दूर दूर के साहित्यकार ग्वाल स काव्य की शिक्षा लेने को आते थे। इनके शिष्यो की तालिका पर्याप्त बडी बनती है। सवश्री खड्ग किशोर, साधूराम, मोहन, सुखदेव और इम्दादुल्ला खा 'ताव ने मथुरा मे ही कवि का शिष्यत्व ग्रहण किया था।[५] पजाब मे सरदार देसासिंह, लहनासिंह और काहनसिंह कवि के शिष्यो म प्रमुख हैं।[६] इनम से खड्ग किशोर और साधूराम प्रसिद्ध कवि हुए हैं।

प्रतिद्वन्द्वी कवि समसामयिक प्रातिभ कवियो म परस्पर प्रतिद्वन्द्वता होना स्वाभाविक है। कविवर पद्माकर और चन्द्रशेखर बाजपेयी ग्वाल के प्रमुख

१ नवनीत चतुर्वेदी-ग्वाल कवि विशाल भारत वर्ष २ अक १।
२ ग्वाल कवि-प्रभुदयाल मीतल पृ० ४२।
३ प० प्रा० हि० सा० का इतिहास, पृ० ३५२।
४ ग्वाल कवि-प्रभुदयाल मीतल, पृ० ३६।
५ वही पृ० ३८ से ४०।
६ लेखक द्वारा सम्पादित महाकवि ग्वाल स्मृति ग्रन्थ' (१९६८ ई०) थी शमशेरसिंह अशोक का लेख महाकवि ग्वाल और उनकी काव्य साधना, पृष्ठ ४३।

ईश्वर का विश्वास करने वाला हो तो भी यदि पास में धन है तो निश्चिन्त बना रहेगा।

कवि गौडेश्वरों की भक्ति उपासना पद्धति से प्रभावित था, उसने स्वकीया के रूप मे ही राधाजी के श्रृंगार का वर्णन किया है। परन्तु परकीया प्रेम को भी उन्होंने गम्भीरता के साथ मान्यता प्रदान की है, परन्तु इस क्षेत्र में वे प्रेम निर्वाह को अनिवार्य मानते हैं। मानव का धर्म है कि जिसे एक बार प्रेम किया, उसे फिर त्यागना कसा ?

ग्वाल जहाँ जीवन मे चार्वाक के 'यावज्जीवेत् सुख जीवेत् ऋण कृत्वा घृत पीवेत्', सिद्धान्त के अनुयायी थे, वहाँ मानवता के सात्विक गुणों के समाहार करने के भी पक्षपाती थे। मानवता की कसौटी लोक जीवन है। जिसकी लोकप्रियता यहाँ है, उसकी चाह परलोक मे भी होती है। जो इस लोक मे बदनाम है उसकी सवत्र ही निन्दा होती है।

अनुश्रुति है कि कवि का ज्येष्ठ पुत्र खूबचन्द अल्पायु मे ही काल कवलित हो गया था। इसके जन्म पर कवि ने भारी हर्षोल्लास मनाया था। 'दिया है खुदा ने खूब खुसी करो ग्वाल कवि' वाला कवित्त कवि ने इसी के जन्म पर लिखा था। खूबचन्द होनहार था और उसमे अच्छी काव्य प्रतिभा थी।[1] उसके निधन ने कवि को आहत कर दिया और शोक मे कवि की करुणा फूट पडी। इससे कवि के अन्तर्मन की झांकी मिलती है।

ग्वाल के काव्य से प्रकट होता है कि उनके जीवन मे हास्य का अभाव था यद्यपि वे श्रृंगारी थे और श्रृंगार तथा हास्य दोनों मित्र रस हैं। हाँ, ग्वाल मे व्यग्य के दर्शन पर्याप्त मात्रा मे होते हैं।

मानव स्वभाव का ग्वाल को गम्भीर अनुभव था। संघर्षों ने कवि को जीवन के कटुतिक्त अनुभवो का अच्छा ज्ञान करा दिया था। इससे कवि के कथनो मे एक तीखापन आ गया है जो कवि की स्पष्टवादिता और स्वभाव की रूक्षता को मार्मिक बनाता है। कवि ने पर्याप्त पर्यटन और दान के आधार पर कलियुगी विडम्बनाओ को मार्मिकता से वर्णित किया। कवि को दानी और सूम दाताओ के कटु मधुर अनुभव हुए थे। जो उनके काव्य मे स्पष्ट हैं।

ग्वाल भाग्यवाद के सिद्धान्त मे विश्वास करते हैं। जो ईश्वर की इच्छा है उसी के अनुसार मनुष्य को चलना पडता है। इसी मे उसे सन्तोष करना चाहिये। ईश्वर मे उनका अनन्य विश्वास था।

---

१ ग्वाल कवि—प्रभुदयाल मीतल, पृ० २८।

ग्वाल के घुमक्कड़ी स्वभाव 'देस देस घूम घूम दिल बहलाना है' पंक्ति से ज्ञात होता है। जीवन में वे पर्याप्त घूमे थे, जिसके कारण वे कई भाषाओं के ज्ञाता और अनुभवी हो गये थे। अपने ज्ञान और पांडित्य पर उनको इतना विश्वास था कि अपने ग्रंथों में उन्होंने कई दर्पोक्तियां भी लिखी हैं। इनके साहित्य को देखकर ये विश्वासोक्तियां लगने लगती हैं।

कहने की आवश्यकता नहीं कि कवि का आत्म विश्वास उनके ग्रंथों में झलका है और वह इन दर्पोक्तियों का अधिकारी भी है। वे ग्रन्थ कवि को स्पष्टवादी, साहसी और सक्षम सिद्ध करने को पर्याप्त हैं। ग्वाल में कवि सुलभ भावुकता, आक्रोश और भर्त्सना आदि के दर्शन भी दुर्लभ नहीं हैं। विद्रोही अतरसिंह, लहनासिंह तथा अजीतसिंह द्वारा लाहौर नरेश शेरसिंह, उनके मन्त्री ध्यानसिंह और कुंवर प्रतापसिंह की विश्वासघातपूर्ण हत्या पर कवि की भावुकता सहसा आक्रोश में परिणत होकर तीव्र भर्त्सना के रूप में प्रस्फुटित होती है। कवि की अन्तमचेतना अन्याय, विद्रोह, विश्वासघात और हत्या को सहन नहीं कर सकती। वह घातकों को 'नीच' और 'महानीच' तक कहने में नहीं चूकता।

प्रतिभा ग्वाल ने एक सामान्य स्थिति के परिवार में जन्म लिया परन्तु अपनी प्रतिभा और अध्यवसाय के बल पर उसने प्रभूत सम्पत्ति और प्रचुर यश गौरव अर्जित किया। स्वयं एक कुकुरमुत्ता ने शाही उद्यानों में उगे गुलाबों की सी सुरभि दिगन्तों में विकीर्ण की, यह अध्ययन का विषय है। कवि के आत्म निर्माण की पृष्ठभूमि में महानता की आकांक्षा का एक कठोरव्रत छिपा हुआ है। जाति और निर्धनता की हीन भावना-ग्रंथि ने रचनात्मक क्षेत्र में कमाल कर दिखाया। कवि में जन्मजात प्रतिभा तो थी ही, परन्तु महत्वाकांक्षा ने उस पर शाण रखी। मनोयोग, ध्येय की एकाग्रता, कर्मनिष्ठा और सबसे ऊपर कठोर अध्यवसाय ने कवि में असामान्य चमक उत्पन्न कर दी। यह महत्वाकांक्षा ही थी जिसने कवि को शिक्षा के लिये काशी और बरेली तथा राज्याश्रय को लाहौर, नाभा, टोंक और रामपुर तक पहुंचाया। मनोयोग ने कवि को संस्कृत शास्त्र का पंडित, ध्येय की एक निष्ठा ने सफल कवि, कर्मनिष्ठा ने साहित्यानन्द जैसे महाग्रन्थ का रचयिता और महत्वाकांक्षा ने प्रचुर धन सम्पत्ति का स्वामी बनाया था।

जनश्रुतियां ग्वाल के विषय में अनेक जनश्रुतियां प्रचलित हैं, अधिकांश उसकी काव्य प्रतिभा के उद्भव तेज, विद्वता, गौरव और ख्याति से

तदुपरान्त कवियों द्वारा हिन्दू धर्म ग्रन्थों—रामायण, महाभारत, भागवत आदि पर निरन्तर कई पीढियों तक लिखा जाता रहा।[1] इन्हीं विशेषताओं ने ग्वाल को सर्वधर्म समन्वयक दृष्टिकोण प्रदान किया। हिन्दुओं का बहुदेववाद इसके मूल में था।

कवि ने अपने विस्तृत देशाटन के अनुभवों से व्यवहार कुशलता, वाग्विदग्धता और प्रत्युत्पन्नमति को पैना किया था। यही कारण था कि हिन्दू होते हुए भी वह मुसलमान और सिखों द्वारा प्रशंसित और पुरस्कृत हुआ। राय होकर भी उसने उच्च वर्ण के चतुर्वेदी ब्राह्मण और वैश्यों को शिष्यत्व प्रदान किया। उसके काव्य में न तो ऊल-जलूल नाराशंसा के प्रति आग्रह है और न स्वाभिमान का बहिष्कार। उसके आश्रयदाताओं में प्राय सभी उच्चकोटि के साहित्य प्रेमी, गुणज्ञ और कवि शासक थे। उनकी प्रशंसा में भी कतिपय छन्द ही कवि ने लिखे। इनमें तिल का ताड़ प्राय कहीं भी नहीं बनने पाया है। अपने पूर्ववर्ती और समसामयिक विद्वान् और आचार्यों के काव्यगत दोषों को उसने लक्ष्य किया, उनकी आलोचना की परन्तु शालीनता के साथ। यहाँ भर्त्सना प्राय दृष्टव्य नहीं। कवि में आचार्य सुलभ स्वाभिमान था, अभिमान हम शायद ही कहीं देखने को मिले।

कुल मिलाकर ग्वाल का व्यक्तित्व प्राय असाधारण कहा जायगा। ●

१ पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास—चन्द्रकान्त बाली, पृ० २०१।

षष्ठम् अध्याय
ग्वाल कवि के ग्रन्थ

साहित्येतिहासिक अनुशीलन ग्वाल कृत ग्रन्थों के विषय में विद्वानों में पर्याप्त वमत्य रहा है। कहीं कहीं तो इनकी सख्या ६० ७० तक पहुच गई है।[1] एक एक ग्रन्थ के कम से कम दो दो, तीन तीन नाम भी हो गये हैं।[2] कवि के निजी तथा उसके छन्दों के अन्य सग्रहों को इस ग्रन्थ सूची में सम्मिलित करने की प्रवृत्ति भी इस ग्रन्थ सख्या को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है।[3] गार्सां द तासी ने कवि की केवल 'यमुना लहरी' का उल्लेख किया,[4] डा० शिव सिंह सेंगर और डा० सर जार्ज ग्रियर्सन दोनों ने कवि के (१) नखशिख (२) गोपी पच्चीसी (३) यमुना लहरी, (४) साहित्य दूषण (५) भक्ति भाव, (६) दोहा शृङ्गार और (७) शृङ्गार कवित्त के नाम लिखे हैं।[5] मिश्र बन्धुओं ने (१) कवि हृदय विनोद, (२) रसरङ्ग (३) रसिकानन्द (४) राधा माधव मिलन, (५) राधाष्टक, (६) हमीर हठ, (७) भक्त भावन, (८) अलंकार भ्रम भञ्जन, (९) बंशी बीसा और (१०) कवि दर्पण नामक ग्रन्थों को इस सूची में और जोड़ा, जिनमें क्रमाङ्क ४ व ५ को छोड़ कर शेष खोज रिपोर्टों के विवरणों के आधार पर थे।[6] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनमें से (१) यमुना लहरी, (२) भक्त भावन, (३) रसिका

१ प० अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध—हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास सवत १९९७ वि०, ग्वाल कवि, पृष्ठ ४७२। प० रामनरेश त्रिपाठी—कविता-कौमुदी प्रथम भाग स० १९९० वि०, पृ० ४९०।

२ यथा, कवि दर्पण को दूषण दर्पण साहित्य दर्पण एव साहित्य भूषण नाम दिये गये हैं।

३ यथा, भक्त भावन और कवि हृदय विनोद नामक सग्रह।

४ गार्सां द तासी—हिन्दुई साहित्य का इतिहास, अनुवादक—डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय १९५३ ई० पृ० ६३६।

५ डा० शिवसिंह सेंगर—शिवसिंह सरोज, सप्तम सस्करण कवि सख्या ४१ पृ० ४०८। डा० सर ए० जा० ग्रियर्सन—हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास अनुवादक डा० किशोरीलाल गुप्त कवि स० ५०७ पृ०

६ मिश्रबन्धु—मिश्रबन्धु विनोद द्वितीय सस्करण ग्वाल पृ० ९१३।

न = (४) रसरङ्ग, (५) कृष्ण जू को नखशिख, (६) दूषण-दर्पण (७) हम्मीर हठ, (८) गोपी पच्चीसी एव (८) कवि हृदय विनोद को प्रामाणिक माना। दो अन्य ग्रन्थों का नामोल्लेख करते हुए व लिखते हैं कि 'और भी दो ग्रन्थ इनके लिख कहे जाते हैं'—राधामाधव मिलन और राधा अष्टक।[१] श्री रामनरेश त्रिपाठी ने शुक्ल जी द्वारा गिनाये ग्रन्थों के अतिरिक्त १ नेह निबाहन, २ कुब्जाष्टक, ३ कृष्णाष्टक, ४ गणेशाष्टक, ५ गणेशाष्टक दूसरा, ६ राधिकाष्टक ७ दगशतक, ८ साहित्यानन्द, ६ कवित्त ग्रन्थ माला, सनक नो नये ग्रन्थो का उल्लेख करके कहा है कि इनके १५ ग्रन्थ कहीं न कहीं से छप भी गये हैं।[२] श्री नवनीत चतुर्वेदी ने पूर्ववर्ती विद्वानों के उल्लेखों के आधार पर कवि के समस्त चर्चित ग्रन्थों की विवेचना प्रस्तुत की, उन के निष्कर्ष निम्नलिखित थे—

(१) साहित्य दूषण और साहित्य दर्पण इनके कवि दर्पण के ही अलग अलग दो नाम हैं।

(२) नखशिख, गोपी पच्चीसी यमुना लहरी राधाष्टक, कृष्णाष्टक रामाष्टक, गणेशाष्टक आदि पुस्तकों के संग्रह का नाम ही भक्त भावन है।[३]

डा० रमाशकर शुक्ल रसाल,[४] डा० राम कुमार वर्मा[५] अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध',[६] डा० भगीरथ मिश्र,[७] प० सूयकान्त शास्त्री,[८]

१ प० रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, स० २०१८ वि० ग्वाल कवि, स० ५५, पृ० २९८।

२ प० रामनरेश त्रिपाठी—कविता कौमुदी, (प्रथम भाग) छठा सस्करण पृ० ४९०।

३ प० नवनीत चतुर्वेदी—ग्वाल कवि विशाल भारत, वष २ अक १ व २, अप्रल मई १९२९ इ०।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रमाशकर शुक्ला रसाल, १९३१ ई० ग्वाल कवि, पृ० ४८० ४८२।

५ डा० रामकुमार वर्मा—हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, ग्वाल कवि, पृ० ३६५।

६ हिन्दी भाषा तथा साहित्य का विकास—प० अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, द्वि० सस्करण ग्वाल कवि पृ० ४७२ ४७३।

७ डा० भगीरथ मिश्र—हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, स० २०२५ वि० ग्वाल कवि, पृ० १८१ से १८४।

८ प० सूयकान्त शास्त्री—हिन्दी साहित्य का इतिहास ग्वाल कवि।

आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र,[१] डा० ब्रज नारायण सिंह,[२] डा० महेन्द्र कुमार,[३] डा० किशोरी लाल गुप्त,[४] श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी[५] प० सुरेन्द्र मोहन मिश्र[६] श्री वेद प्रकाश गर्ग[७] श्री प्रभुदयाल मीतल[८] आदि विद्वानो द्वारा इस विषय पर आनुषगिक और स्वतन्त्र लेखो के रूप मे विस्तृत प्रकाश डाला गया। साहित्येतिहासकारो ने इस विषय मे नागरी प्रचारिणी सभा काशी की 'हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज रिपोर्टों की सामग्री का पूरा उपयोग करने की चेष्टा की है। इनमे से डा० किशोरी लाल गुप्त का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिन्होने राजस्थान और पजाब की खोज रिपोर्टों पर भी दृष्टिपात किया है। श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी ने सप्त सिन्धु' के माध्यम से कवि के दो नवोपलब्ध ग्रन्थो—१ विजय विनोद और २ इश्क लहर दरयाव का परिचय हिन्दी जगत को दिया था। मैंने अपनी खोज मे श्री विद्यार्थी और श्री ब्रज वल्लभ शरण, से क्रमश १ गुरु पचासा और २ निम्बार्क स्वाम्यष्टक नामक दो अचर्चित दुर्लभ ग्रन्थ प्राप्त किये। ग्वाल के समस्त चर्चित और अचर्चित, हस्तलिखित और मुद्रित ग्रन्थो और सग्रहो का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करने पर निम्नाकित निष्कर्ष निकलते हैं—

१ आलोच्य कवि की रचनाओ की अद्यावधि कोई सुपरीक्षित और प्रामाणिक एकत्र तालिका उपलब्ध नही होती।

२ अन्तसाक्ष्य और बहिसाक्ष्य के तुलनात्मक अनुशीलन के आधार पर निर्मित ग्रन्थ सूची सदोष और अति आवृत्तिमूलक है।

३ प्राय देखने मे आया है कि कवि दर्पण सदृश कोई कोई ग्रन्थ कई-कई नामो से कवि की ग्रन्थ सूची को विस्तार दे रहा है।

---

१ प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—ग्वाल कवि हिन्दी अनुशीलन वर्ष १३ अक ४, अक्टूबर दिसम्बर ६० पृ० ५७ ६३।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायण सिंह १९६६ ई० कवि ग्वालराय पृ० १८० २११।

३ डा० महेन्द्र कुमार—हिन्दी साहित्य का वृहद् इतिहास, षष्ठ भाग ग्वाल कवि पृ० ३७८-३८४।

४ डा० किशोरी लाल गुप्त—सरोज सर्वेक्षण १९६७ ई० पृ० २५८ २६०।

५ श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी—सप्त सिन्धु, वर्ष , अक १२, पृ० ४४ ५३।

६ वीणा—जुलाई १९५८ ई०।

७ ब्रजभारती—वर्ष १४ अक १ पृ० ९।

८ श्री प्रभुदयाल मीतल—ग्वाल कवि, स० २०१७ वि०।

४ कवि के 'साहित्यानन्द' जैसे ग्रन्थ के कुछ अध्याय स्वतन्त्र ग्रन्थो के रूप मे जाने माने जा रहे है। उदाहरणार्थ साहित्यानन्द का षोडश स्कन्ध **अलकार भ्रम भजन'** अलकारो का स्वतन्त्र ग्रन्थ माना जाने लगा जिसका सालोचना प्रकाशन सेठ कन्हैया लाल पोद्दार ने **'ब्रजभारती'** पत्रिका मे धारावाहिक रूप से कराया था।

५ कवि के कुछ ग्रन्थो के नाम अशुद्ध लिख जाते रहे हैं, यथा **भक्त भावन** को 'भक्ति भाव' या 'भक्ति भावना' आदि।

ऐसी परिस्थिति मे उक्त समस्त प्रमाण समूह को समक्ष रखते हुए कवि के नाम से चर्चित समस्त कृतियो का एक सूक्ष्म वैज्ञानिक परीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। इन परीक्षणीय ग्रन्थो मे स्थूल रूप से तीन प्रकार के नाम अवलोकनीय हैं—१ कवि के स्वतन्त्र ग्रन्थ २ कवि के अपने हाथ के किये गये सग्रह ग्रन्थ और ३ कवि के समसामयिक एव परवर्ती साहित्य प्रेमियो द्वारा किये गये सग्रह ग्रन्थ जिनके नाम उन्होने इच्छानुसार रख। दूसरे और तीसरे वर्ग के सग्रह ग्रन्थो का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नही है। इस दृष्टि से इन सग्रहो पर विचार करके पहले इन्ही का निरसन करके स्वतन्त्र ग्रन्थो की तालिका प्रस्तुत करना युक्तियुक्त और समीचीन होगा।

(अ) कवि कृत सग्रह ग्रन्थ

भक्तभावन[1] यह ग्वाल के फुटकर ग्रन्थो का एक वृहत्काय सग्रह है जिसे कवि ने स्वय अपनी लेखनी से स० १९१९ वि० मे किया था। ग्रन्थ मे रचना हेतु और सग्रहकाल इस प्रकार दिया है—

तिनके चरनाबुजन कौं, करि साष्टांग प्रनाम।
ग्रन्थ फुटकरन कौ करत एक ग्रन्थ अभिराम॥
८ १ ६ १
सवत निधि ससि निधि ससी मास असाढ बखान।
सितपख दुतिया रविदिन प्रगट्यौ ग्रन्थ सुजान॥[2]

---

१ खोज रिपोर्ट—नागरी प्रचारिणी सभा काशी, १९०५-१४ १९१७-६५ बी पृ० १६३।
ब्रजभाषा रीति शास्त्र ग्रन्थ कोश—प० जवाहरलाल चतुर्वेदी हि० सा० सम्मेलन प्रयाग १९६५ ई०, पृ० ४५।
हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० रामचन्द्र शुक्ल स० २०१५ वि०, पृ० २९८।
प्राप्ति स्थान—१ श्री नवनीत पुस्तकालय मथुरा दो प्रतियाँ स० ४४। २५ तथा ५३।१०।
२ देखिये परिशिष्ट —१ भक्तभावन के प्रथम पृ० का छायाचित्र स० ४।

इस सग्रह की पुष्पिका इस प्रकार लिखित है—'इति श्री भक्तभावन ग्रन्थ सम्पूर्णम ॥ सवत् १६ ॥'[1]

ग्र थ पर लिपिकर्ता का नाम नही है। यह सग्रह बडी साबी के ११८ पत्रो मे पूर्ण हुआ है। इसका एक कोना थोडा सा दग्ध भी है। यह ग्वाल की हवेली क उनके दग्ध पुस्तकालय की प्रति बताई जाती है। इसका देशी कागज और हस्तलेख इसकी प्राचीनता के साक्षी हैं। इस प्रति को कवि के हाथ से लिखी हुई मानने म कोई अडचन दिखाई नही देती। इसमे निम्नांकित १६ छोटे ग्रन्थ नामोल्लेख सहित सग्रहीत हैं। प्रत्येक ग्रन्थ की छन्द क्रम सख्या १ स आरम्भ की गई है। इससे इनके पृथक्करण की समस्या भली भाँति समाधान पा जाती है। सग्रहीत ग्रन्थ निम्नांकित हैं—

१ यमुना लहरी [खोज रिपोर्ट १६०१ ८८, १६२०-५८ बी पृ० ६८], छन्द स० १ से १०६ तक सम्पूर्ण–पत्र स० १ से २५ तक।

२ श्री कृष्ण जू को नखशिख [खो० रि० ना० प्र० सभा काशी १६०१ ८६, १६२०-५८ डी पृ० २४१, १६२३ १४६ बी पृ० ६०२, १६२६ १६१ सी पृ० २७८, १६२८ १३५ सी पृ० २६२], छन्द स० १ से ६६ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या २५ स ४२ तक।

३ गोपी पच्चीसी [खो० रि० १६०१ ६०, १६२० ५८ ए पृ० ६८ १८२३ १४६ सी पृ० ६०२ १६२६ १६१ ए, पृ० २७६, १६२६-१३५ ए पृ० २६२, १६३२-७३ एफ पृ० १५४] छन्द सख्या १ से २५ तक सम्पूर्ण–पत्र स० ४२ से ४७ तक।

४ राधाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या ४७ से ४८ तक।

५ कृष्णाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या ४८ से ५० तक।

६ रामाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या ५० से ५२ तक।

७ गगा स्तुति छन्द सख्या १ से १५ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या ५२ से ५५ तक।

८ महाविद्या स्तुति छन्द सख्या १ से १५ तक सम्पूर्ण–पत्र सख्या ५५ स ५७ तक।

---

१ देखिये परिशिष्ट १—भक्तभावन के अन्तिम पृ० का छायाचित्र सख्या ५।

९ उग्रनाष्टक छन्द सख्या १ से २० तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ५७ से ६० तक।

१० प्रथम गणेशाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ६० से ६१ तक।

११ द्वितीय गणेशाष्टक छन्द सख्या १ से ८ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ६२ से ६३ तक।

१२ शिवादि स्तुति छन्द सख्या १ से २३ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ६४ से ७२ तक।

१३ षड्ऋतु वर्णन तथा अन्योक्ति (खो० रि० १९३५ ३३ ए बी सी प० ३१, १९३८ ५५ बी प० १८४), छन्द सख्या १ से १२४ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ७२ से १०४ तक।

१४ प्रस्तावक कवित्त—(खो रि १९३८ ५५ डी पृष्ठ १८५) छन्द १ से ४० तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या १०४ से ११० तक।

१५ दशशतक छन्द सख्या १ से १०३ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ११० से ११४ तक।

१६ भक्ति और शान्त रस कवित्त—(खो रि १९३५ ३३ जी पृष्ठ ३१) क्रम सख्या १ से २२ तक सम्पूर्ण—पत्र सख्या ११४ से ११८ तक।

उक्त ग्रन्थ स्वतत्र हैं, जिनमे से कुछ मे रचनाकाल का भी निर्देश है। अत भक्तभावन का स्वतत्र अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

(आ) इतर सग्रहकारो के सकलन

१ कवि हृदय विनोद—(खो रि १८२० ५८ सी पृष्ठ ६८ १८२३ १४६ ए पृष्ठ ६०२ १८२८ १३५ बी पृष्ठ २८२) छन्द सख्या २३८, मुन्शी हरप्रसाद द्वारा सकलित सम्पादित तथा सन् १८८८ ई०[1] मे कासी समान प्रेस मथुरा से प्रकाशित पृष्ठ सख्या ६२ पक्ति प्रति पृष्ठ १३ आकार $5\frac{3}{2}'' \times 4\frac{3}{2}$। क्रम सख्या २१२ से २३८ तक कंगव, आलम, ऊधीराम, नारायण कालीदीन, दयानिधि देवीराम तथा इतर अज्ञात कवियो के २७ छन्द भी सकलित हैं। क्रम सख्या १९६ से २११ तक सम्पूर्ण गोपी पच्चीसी के २५ छन्द और शेष १६६ छन्द कवि के अन्य स्वतन्त्र ग्रन्थों से सकलित है। नीचे कवि हृदय विनोद के छन्द क्रम के कोष्ठक मे स्वतत्र ग्रन्थो की छन्द सख्या दी गई है जिनसे वे लिए गए हैं। कोष्ठक मे खडी पाई से पूर्व ग्रन्थ के प्रकरण या अध्याय दिये हैं। रसरग के अध्याया का नाम उमग और रसिकानन्द के प्रकरण हैं—

१ देखिये परिशिष्ट १ कवि हृदय विनोद के अन्तिम पृष्ठ का छाया चित्र सख्या ६।

क—'रसरग' मे—३(८।६८), ४(१२।६१), ५(१०४), ६(८।७१), ११(८।७३), १८(८।६३), १९ ८।६४) २०(८।६१), २१(८।६७), २२ (८।६६), २५(८।५४), २६(८।५३), ३०(८।५६), ३६(७।८४), ३७(७।७६), ३८(७।८०), ४०(७।६७), ४१(७।८८), ४३(७।६८), ४४(७।८८), ४५ (६।३८), ४८(७।८४), ४९(७।८३), ५०(६।३२) ५२(२।१०८), ५५(७।१०४), ५६(७।१०३), ५७(७ १०७ , ५९(७।११०), ६०(७।१०८) ६१ (७।११२) ६२(७।११७), ६३(७।१११) ६४(७।११५), ६५(७।११६), ६६(७।१२२), ६७(७।१२३) ६९(७।१२१), ७०(७।१२४), ७१(७।१२७), ७२(७।१२८' ७३(७।१२२) ७४(७।१३०) ७५(८।१२६), ७६(७।७५) ७७(७।७३), ७९(७।७६), ८०(७।७७), १०१(५।१२), १०२(७।८), १०३ (६ ४२), १०५(२।१०४। १०७(२।५२), १०८(२।५२), ११३(६।३७), ११७(१।१६२), ११८(५।१६) ११८(४।४२), १२५(३।५१), १२६(२।४३), १२८(२।१०३),१२९(२।८२) १३०(६।४८), १३१(१।१५२), १३२(१।१६९) १३३(३।१७०), १३६(३।४१), १३५(५।१४), १३६(५।१५), १३ (२।५४), १३९(४।४१) १४०(४।४३), १४१(८।४३) १४२(४।२१), १४३(२।४४) १४४(३।७३), १४५(३।३४), १४६(३।७६), १४७(५।१८), १४८(५।१७), १४९(५ १६), १५१(६ ४५), १५२(५।२४), १५३(६।२८), १५४(२।६३), १५५(६।४९), १५६(५।२०), १५७(४।१२) १६०(१।१८७), १६१(२।६०), १६२(७।८), १६३(५।३), १६४(२।१०९) योग ६३ छन्द।

ख—रसिकानन्द मे—७(३ १३८) २७(११।३१), २८(११।३२), २९(११।३४), ५३(१०।१४) ५४(१०।१६) ८१(१०।२१), ८२(७।१०), ११६(५।११) १२१(३।६६), १२८(५।४४), १५९(३।५०), १६६(३।६८), १६७(४।१०८), १६८(८।५५), १६९(६।८५), १७०(६।७६), १७१(६।७५), १७२(६।७७), १७३(३।६०) १७४(३।६४) १७५(३।७०), १७६(३।७६), १७७(३।६८), १७८(३।२६) १७९(३।३४), १८०(३।३८), १८१(३।३२), १८२(५।७२), १८३(३ ७४), १८४(५।३४), १८५(३।१४२), १८६(६।४९), योग ३३ छन्द।

ग—षड्ऋतु वर्णन मे—३६(६), ३७(१), ३८(२) ३९(१३), ४० (१८), ४१(१९), ४२(२१) ४३(२४) ४४(२५) ४५(३७), ४८(३१) ४९ (३०), ५०(४१), ५१(४०), ५२(३८) ५४(४६) ५६(४७), ५७(५०) ५९ (५४) ६०(५१) ६१(६२), ६२(५८) ६३(५५), ६४(६०), ६५(५९), ६७ (६२) ६६(६४), ७०(८१), ७१(८२), ७२(७६), ७४(७३), ७६(८७), ७७ (११०), ७९(८८), ८०(८९), ८१(१०२) ८२(१०९), ८८(११ १०१६) योग ३८ छन्द।

११ होरी आदि के कवित्त (खो० रि० ३८ ५५ सी)

१२ ग्वाल कवि के कवित्त (३२ सी, ३५ ३३ ई)

१३ श्रृंगार कवित्त तथा १४ श्रृंगार दोहा।

अध्ययन के परिणाम अन्तर्साक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के सूक्ष्म वैज्ञानिक अध्ययन परीक्षणोपरान्त ग्वाल के स्वतन्त्र ग्रन्थों की एकत्र वर्गीकृत तालिका एक विहंगम दृष्टि में निम्नांकित रूप में अवलोकनीय है—

ग्वाल की कृतियाँ

- रीतिग्रन्थ
  - लक्षणग्रन्थ
    - १–रसिकानन्द (रस)
    - २–कवि दर्पण (दोष)
    - ३–रसरंग (रस)
    - ४–बलवीर विनोद (रस)
    - ५–साहित्यानन्द (सर्वांग)
    - ६–प्रस्तार प्रकाश (पिंगल)
  - रीतिबद्ध ग्रन्थ
    - १–श्रीकृष्ण जू को नखशिख वर्णन*
    - २–षट्ऋतु वर्णन*
    - ३–दृगशतक
- रीतिमुक्त ग्रन्थ
  - नेह निबाह
- भक्ति ग्रन्थ
  - देव भक्ति विषयक
    - १–राधाष्टक
    - २–कृष्णाष्टक
    - ३–रामाष्टक
    - ४–ज्वालाष्टक
    - ५–गणेशाष्टक प्रथम
    - ६–गणेशाष्टक द्वितीय
    - ७–कुब्जाष्टक*
    - ८–गोपी पच्चीसी
    - ९–वंशी बीसा
    - १०–यमुना लहरी*
    - ११–गंगा स्तुति
    - १२–महा विद्या स्तुति
    - १३–शिवादि देवतान के कवित्त
    - १४–भक्ति शान्त रस के कवित्त
    - १५–इतर भाषाओं के कवित्त
  - नर भक्ति विषयक
    - १–निम्बार्क स्वाम्यष्टक
    - २–गुरुपचासा
- नीति ग्रन्थ
  - प्रस्तावक
- प्रबन्ध काव्य
  - १–हम्मीर हठ
  - २–विजय विनोद*
- अनुवाद ग्रन्थ
  - इश्क लहर दरयाव*

---

* ये ग्रन्थ प्रकाशित हैं।

ग्वाल के ग्रन्थों की प्रामाणिकता (१) नेह निवाह (२) रसिकानन्द, (३) नखशिख (४) कवि दर्पण, (५) रसरङ्ग (६) बलवीर विनोद, (७) यमुना लहरी तथा (८) साहित्यानन्द—ये आठ ग्रन्थ—अन्तसाक्ष्य के आधार पर इस प्रकार प्रमाणित होते हैं—

१ 'नेह निवाह' का उल्लेख 'रसिकानन्द' के पंचम प्रकरण के २४ वें सवैया में हुआ है और यही सवैया 'नेह निवाह' का दसवां छन्द है।

२ साहित्यानन्द का उल्लेख 'रस रङ्ग' की द्वितीय उमंग के ६५ वें छन्द में हुआ है।

'परत्रिय में नहिं मान जिमि, तिन हेतु नविस्तार।
ग्रन्थ साहित्यानन्द में, लखि रीतेंरिझवार'॥

३ 'साहित्यानन्द के प्रथम स्कन्ध के दोहा संख्या ९ व १० में रसिकानन्द, नखशिख, कवि दर्पण, रसरंग बलवीर विनोद और यमुना लहरी इस भांति प्रमाणित होते हैं—

जिन जिन निज निज ग्रन्थ के, लिखिहों कछु कछु लक्ष।
तिनतिनके नामनु कहो लखिय हृदय प्रतक्ष॥ ९॥
रसिकानन्द सु नखसिख रु कवि दरपन रसरंग।
पुनि बलवीर विनोद है जमुनालहर प्रसंग॥१०॥'

उपर्युक्त आठों ग्रन्थ साहित्य में बहुचर्चित और प्रसिद्ध हैं। ग्वाल की विशिष्ट सानुप्रासिक भाषा और सार्वभौमिक संगीतात्मक शैली तो इनमें मिलती ही है कवि के नाम की छाप भी सवैया कवित्त और दोहों में अंकित है। इस प्रकार उक्त ८ ग्रन्थों की प्रामाणिकता असंदिग्ध है।

'भक्त भावन' का पर्यवेक्षण पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है। यह ग्वाल का अत्यन्त सुपरिचित और बहुचर्चित ग्रन्थ है, जिसका कवि ने स्वयं सं० १९१९ वि० में संग्रह किया था। इसकी प्रामाणिकता में कोई संदेह नहीं है अतः इसमें संग्रहीत १६ ग्रन्थ स्वयं ही प्रामाणिकता की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यमुना लहरी की यहाँ पुनरावृत्ति हुई है। इस प्रकार उक्त २३ ग्रन्थ प्रामाणिक सिद्ध होते हैं।

ग्वाल कृत 'हम्मीर हठ' को आचार्य शुक्ल ने प्रामाणिक माना है।[1] श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र, श्री प्रभुदयाल मीतल एवं पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने भी इसे ग्वाल के ग्रन्थों में मान्यता दी है। ग्वाल चूंकि शृङ्गार के कवि हैं,

१ हिं० सा० का इतिहास पृष्ठ २९८।

इस कारण यह धारणा, कि उन्होंने कोई वीर काव्य नहीं लिखा, उनके दूसरे वीर काव्य विजय विनोद की खोज में प्राप्ति से निर्मूल हो जाती है। भाषा शैली छाप, छन्द विधान आदि ग्वाल की सभी विशेषताओं के कारण इसकी प्रामाणिकता में कोई सन्देह नहीं रहता है। 'विजय विनोद' इनका दूसरा वीर काव्य है, जिसका प्रकाशन अमृतसर से ग्वाल के पौत्र शिष्य श्री शमशेर सिंह 'अशोक' ने 'जंगनामा' नाम से सन् १९५० ई० में किया है। श्री अशोक और श्री देवेन्द्र सिंह विद्यार्थी इसे ग्वाल की प्रामाणिक रचना मानते हैं। गुरुमुखी लिपि में होने के कारण यह हिन्दी के विद्वानों की दृष्टि से ओझल रहा था। ग्वाल की शिष्य परम्परा में होने के कारण अशोक जी[1] की मान्यता भी पर्याप्त वजन रखती है। इस ग्रन्थ की भाषा शैली कवि और राजवंश वर्णन रचना काल, ग्रन्थ हेतु-वर्णन आदि सभी अन्तर्साक्ष्य ग्रन्थ के ग्वाल रचित होने की स्पष्ट घोषणा करते हैं। अतः 'विजय विनोद' की प्रामाणिकता में लेशमात्र भी सन्देह नहीं रह जाता।

इश्क लहर दरयाव ग्वाल की उर्दू से अनूदित रचना है। इसकी रचना नाभा नरेश भरपूर सिंह की आज्ञा से हुई। ग्वाल के जीवन काल में सं० १९२० वि० में नाभा दरबार से इस ग्रन्थ का लीथो में मुद्रण हुआ था जिसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी के पास सुरक्षित है। वे इसे ग्वाल की प्रामाणिक रचना मानते हैं।[2] ग्रन्थ की भाषा, शैली छाप ग्रन्थ हेतु वर्णन भरपूरसिंह का यश वर्णन, नाभा नगर वर्णन ग्रन्थ का मंगलाचरण रचना काल इसकी पुष्पिका आदि सभी इसके ग्वाल रचित होने की साक्षी देते हैं। निस्सन्देह यह ग्वाल की प्रामाणिक रचना है।

गुरु पचासा जिसे कुछ विद्वान् दश अवतार भी कहते हैं[3] पंजाब की गुरु पचासिका परम्परा में ग्वाल रचित एक ऐसा ग्रन्थ है जो गुरुमुखी में हस्तलिखित है और जिसकी चर्चा हिन्दी साहित्य में अभी तक नहीं हुई। इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी को सरदार गंडासिंह से प्राप्त हुई थी। गुरु पचासा में कवि के दो अन्य ग्रन्थों के दो छन्द उदाहृत हुए हैं। गुरु पचासा का ५० वां छन्द— 'वेद व्यास वाक्य तें अद्वैतता प्रगट की हो' और 'विजय

१ 'लेखक द्वारा सम्पादित' ग्वाल स्मृति ग्रन्थ में अशोक जी का लेख—महाकवि ग्वाल की काव्य साधना पृष्ठ ४३।

२ सप्तसिन्धु—वर्ष ३ अंक १२, पृष्ठ ४४।

३ ग्वाल स्मृति ग्रन्थ—पृष्ठ ४३।

विनोद' का तृतीय छन्द दोना न्श एक हैं। इस ग्रन्थ का प्रथम छन्द—'ठाली मत वठ बनजा री बुद्धिवाली यहा' ग्वाल के स्वरचित ज्वालाष्टक' का १७ वा छन्द है। इससे 'पचासा' एक प्रामाणिक रचना सिद्ध होती है। इस ग्रन्थ मे ५० कवित्त हैं जिनम से प्रत्यक के तृतीय चरण म 'ग्वाल कवि' की छाप उसकी प्रामाणिक रचना होने की साक्षी दती है। ग्वाल ने अपनी छाप सवत्र ही एक नियम से अकित की है। उनक सवैया और कवित्त के तृतीय चरण म और दोहे की द्वितीय पक्ति मे 'ग्वाल' नाम आता है। इस नियम का कही भी उल्लघन नहीं हुआ है। इस रूप म भी गुरु पचासा भी प्रामाणिक है।

प्रस्तार प्रकाश[1] ग्वाल का पिंगल निरूपक ग्रन्थ है। इसका प्रथम दाहा—*श्री गुरुबानी मन जू ति हे बन्दि सहुलास। बदी विप्र सु ग्वाल कवि किय प्रस्तार प्रकास'*, इसकी प्रामाणिकता सिद्ध करने को पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त इसके छन्द स० ३ ५, ७, १६ १६, २०, २१ के प्रस्तार क स्वरूप ज्यो क त्या साहित्यानन्द क पृष्ठ ६, १५ २० ६८, ६६ ७१ और ७२ पर उदाहृत हुए हैं। वास्तव म यह लघु पिंगल ग्रन्थ साहित्यानन्द के प्रथम स्कन्ध का साररूप है। अत यह निस्सन्देह ग्वाल की प्रामाणिक रचना है।

वशी बीसा (खा० रि० १६१७ ६५ डी, १६३२ ७३ ई०) एक दोहा और उन्नीस कवित्तो म श्री कृष्ण की मुरली के प्रभाव को प्रस्तुत करने वाली कवि की यह एक और प्रौढ रचना है। ग्रन्थ म रचना काल नही दिया गया है। प्राप्त प्रति पर किन्ही नारायण मिश्र के हस्ताक्षर अकित हैं। इसके अधिकाश छन्द कवि ने सम्भवत अपने अतिम जीवनकाल म रचे प्रतीत होते हैं क्योकि केवल एक कवित्त—'गोधन को पूजिवे का गोपी चली जात हुती' को छोडकर जो रसिकानन्द म स्थान पा गया है, अन्य कोई छन्द ग्वाल कवि क ग्रन्थो म उदाहृत नही मिलता। स्पष्ट है कि इसके छन्दो की रचना एक समय म नही हुई। भाषा और भावो की परिष्कृति तथा शली की प्रौढता स यही अनुमान होता है कि इस की रचना स० १६१६ वि० के पश्चात् की है, अन्यथा यह भक्त भावन' के सग्रह म स्थान अवश्य पाता। ऊपर उदाहृत छन्द रसिकानन्द क अतिरिक्त *मीनाई साहब क 'इतखाब यादगार* म भी ग्वाल क अन्य छन्दो क साथ स्थान पा गया है। इससे इसकी प्रामाणिकता की पुष्टि होती है तथा इसकी पुष्पिका भी इस ग्वाल की कृति घोषित करती है जो इस प्रकार है—'इति श्री ग्वाल कवि विरचित वसी बीसा समाप्तम

---

१ खोज रिपोर्ट—ना० प्र० सभा, काशी १६३८ ५५ ए।

(हस्ताक्षर नारायण मिश्र क) भाषा शली, छन्द एव छाप, 'वशी वीसा' को कवि की प्रामाणिक रचना सिद्ध करने को पर्याप्त साक्ष्य हैं।

निम्बाक स्वाम्यष्टक महात्मा निम्बार्काचाय की यशोगाथा म ८ कवित्त प्रस्तुत करने वाला लघु ग्रन्थ है। कवित्तो म ग्वाल कवि की छाप शली तथा भाषा छन्द विधान इसके ग्वाल कृत होने की साक्षी देते हैं। निम्बाक मत म ग्वाल नामक कोई दूसरा कवि नही हुआ। इस से यह ग्वाल की ही प्रामाणिक रचना सिद्ध होती है।

सक्षेप म ग्वाल के उक्त विवेचित तीसो ग्रन्थो की प्रामाणिकता स देह से परे है। अब आगे के पृष्ठो म इनके वण्य विषयो का सक्षिप्त परिचय इनके रचनाकाल क्रमानुसार प्रस्तुत किया जाता है।

१ **निम्बाक स्वाम्यष्टक** इसका रचना काल उल्लिखित नही है। परन्तु भाषा और शली की दृष्टि स यह ग्वाल के व दावन वास क समय की आरम्भिक कृति प्रतीत होती है। इसमे अत्यानुप्रास के अतिरिक्त भाषा और भाव का अन्य कोई सौन्दय नही मिलता, जो बाद म ग्वाल की लेखनी का विशिष्ट गुण बना। छ दा म भी यति भग और गति भग दोष सुलभ है। अक के वजन पर खडक को खक', कडक को कक, आदि बना कर भाषा को विकृत कर दिया है। यही नही इस तुक के अन्य शब्दो—नक फक, आदि को भी दो कवित्ता म चमत्कार के लिये बलात ठूस दिया गया है। यही प्रवत्ति इनके 'नेह निवाह म भी परिलक्षित है। लगता है जस ग्वाल का भावी कवि उदय होने का कवित्तो स जूझ सा रहा है। स्वामी जी का यश-वणन भी स्वच्छतापूवक नही हो पाया।

ग्वाल की मत सम्ब धी मान्यता की इस लघु पुस्तिका से यही सम्भावना बनती हैं कि आरम्भिक जीवन मे वे निम्बाक मत स प्रभावित थे। रचना का अ त इस प्रकार है —'इति श्री ग्वाल कवि कृत निम्बाक स्वाम्यष्टक (सपूण)। शुभमस्तु॥'

२ **नेह निवाह** यह घनान द बोधा और ठाकुर आदि रीतिमुक्त कविया की विशुद्ध प्रेम की परिपाटी पर लिखा गया ३२ छन्दो का कवि का दूसरा आरम्भिक मुक्तक है। इस क छ दा की भाषा, शली, अनुभूति और काव्य सौष्ठव अति सामान्य स्तर के हैं। छन्दो म एक ही भाव और भाषा की पुन पुन आवत्ति कवि के आरम्भिक अभ्यास प्रयास की साक्षी है।

रचना काल—पुस्तक म उसका रचना काल नही दिया गया है। पर

इसे स० १८७६ वि० के पूर्वार्ध अथवा उससे पहले की रचना मानने में कोई अड़चन नहीं दिखाई देती। परन्तु यह निम्बार्क 'स्वाम्यष्टक' की परवर्ती रचना है, क्योंकि अष्टक की भाषा और शैली से इसकी भाषा और शैली में कुछ कोमलता मिलती है। पुस्तक की जो प्रति नवनीत पुस्तकालय मथुरा में उपलब्ध है उस पर लिपि काल इस प्रकार उल्लिखित है 'शुभ सवत् १६१४ वि० चैत्र शुक्ला १२, रविवासरे।' जनश्रुति के अनुसार कवि उरदाम के भ्रातृज गणेश चतुर्वेदी ने कवि के जीवनकाल में ही इसे लिपिबद्ध किया था। प्रति के साथ ग्वाल के ८ उत्कृष्ट छन्द और लिपिबद्ध हैं।

वर्ण्य—पुस्तक के ७ दोहों १४ सवैयों और ११ कवित्तों में विशुद्ध प्रेम के निर्वाह इसकी उत्पत्ति और आधार, कारण, स्थान, नेह दशा और उस निभाने की रीतियों का वर्णन किया गया है। ग्रन्थारम्भ में कवि ग्रन्थ नाम का उल्लेख करता है।

अथ ग्रन्थ गुन वर्णन—

सुखदायक साचे सुजन, रसनायक विरहीन।
घायक है कपटीन कों नेह निवाह नवीन ॥३॥
नाम धरयो या ग्रन्थ को, नेह निवाह अछेह।

यहां कवि ने प्रश्न उठाये हैं—

उपजि कहां अरु है कहा, करत कहा यह नेह ॥४॥

क्रमानुसार इन्हीं प्रश्नों के उत्तर शेष ग्रन्थ के वर्ण्य विषय हैं। पुस्तक का समापन इस प्रकार होता है—'इति श्री नेह निवाह ग्रन्थ सम्पूर्णम्।'

३ यमुना लहरी[1]—कवि का यह तृतीय ग्रन्थ है। इसे लिखने की प्रेरणा पण्डितराज जगन्नाथ की संस्कृत रचना 'गंगा लहरी' से मिली पद्माकर की गंगा लहरी से नहीं। पद्माकर की वास्तव में ग्वाल की यमुना लहरी के ४ ५ वर्ष उपरान्त की रचना है।[2]

रचनाकाल—ग्रन्थ के अन्त में इसका रचनाकाल कार्तिक पूर्णमासी संवत् १८७६ वि० दिया हुआ है—

१ यमुना लहरी का प्रथम प्रकाशन कवि के जीवनकाल में ही सन् १८६५ में काशी से हुआ। तत्पश्चात् नवलकिशोर प्रेस लखनऊ से छपी। लेखक के पास इसी का तृतीय संस्करण स० १६४५ का है। निम्बार्क माधुरी में भी यह ग्रन्थ संग्रहीत है।

२ देखिये इस शोध प्रबन्ध का दशम अध्याय।

६ ७ ८ १
सवत निधि रिति सिद्धि ससि, कातिक मास सुजान।
पूरनमासी परमप्रिय राधा हरिको ध्यान ॥१०८॥
भयो प्रगट वाही सुदिन, यमुनासहरी ग्रन्थ।
पढ सुन आनद मिल जानि पर सब पथ ॥१०९॥

वण्य विषय—ग्रन्थ क नाम स ही इसक प्रतिपाद्य का स्पष्ट सकेत मिल जाता है। यमुना की पावनता, नाम महिमा, स्नान-माहात्म्य दर्शन-फल कीर्ति, लोकव्यापी ख्याति यमुना जल, इसका श्यामरग, धार्मिक सामाजिक और नतिक महत्व, पौराणिक प्रसिद्धि आदि पक्षो पर कवि ने काव्यमय विवरण प्रस्तुत किया है। इसम नवरस और षड ऋतु वणन भी है जो भक्ति क इतर काव्यो म बहुधा दृष्टव्य नही होता। आचाय रामचन्द्र शुक्ल ने कवि की इस प्रवृत्ति को रीति की सनक सज्ञा दी है।[1] इसक १४ कवित्त नवरस और ८ षडऋतु वर्णन को अर्पित है, आरभ क चार दोहे मगला चरण और कवि परिचय क हैं।

४ रसिकानद[2] खोज रिपोट १८००-८४, १६२६-१६१ वी पृष्ठ २७६।

रीति परम्परा का प्रथम ग्रन्थ—कवि कृत ग्रन्थों म यह चतुथ और रीति परम्परा म कवि की प्रथम निश्चित है। यह इस कारण भी महत्वपूण है कि राज्याश्रय म लिखी गई यह कवि की प्रथम रचना है। नवनीत पुस्तकालय की अनुलिपि हमारा आधार है। ग्रन्थ म ६२४ छन्द है जिनम ५७३ दोहे ३३४ कवित्त १४ सवया २ छप्पै १ अमृतध्वनि और १ सोरठा है। लक्षण दोहा और उदाहरण कवित्त सवयों म हैं, जो कवि के स्वनिर्मित हैं। कठिन स्थलों को कवि ने गद्य और वार्ताओ द्वारा स्पष्ट किया है। ग्रन्थ म १२ प्रकरण हैं। काममूत्र, रति रहस्य रसमजरी भक्ति रसामृत सिन्धु उज्ज्वल नीलमणि रस तरगिणी, काव्य प्रकाश, ध्वन्यालोक आदि सस्कृत ग्रन्थो का इसमे आधार लिया गया है। केशव, बिहारी, कुलपति मिश्र, पद्माकर आदि

१ आचाय रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृ० २९९।
२ हस्तलिखित प्राप्ति स्थान–१ नवनीत पुस्तकालय मथुरा १६५० वि० का लिपिबद्ध, २ राजा श्री प्रकाशसिंह मल्लापुर सीतापुर का पुस्तकालय १९४२ वि० ३ भुवनेश्वरी-पीठ पुस्तकालय, गोंडल सौराष्ट्र १९३१ वि० का लिपिबद्ध ४ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर २ प्रतिया ५ आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद का निजी पुस्तकालय, वाराणसी।

के उदाहरणों को भी ग्रन्थ म स्थान दिया गया है और उनके मतों का खडन करके कवि ने अपने स्वतन्त्र मतो की स्थापना की है। रीति निरूपण पर कवि की यह प्रौढ रचना है इसम कवि के कवित्व, वदुष्य और बहुश्रुत होने के प्रमाण मिलते हैं।

रचना का कारण, स्थान तथा समय—ग्रन्थ के प्रथम प्रकरण म इसकी रचना का हेतु आश्रयदाता नाभानरेश महाराजा जसवतसिंह की आज्ञा, रचना स्थान नाभा, एव लेखन काल चैत्र कृष्णा द्वादशी रविवार स० १८७६ वि० उल्लिखित है, जो दोहा क्रम २८, २६, ३१, ३२ एव ३८ स स्पष्ट है।

वर्ण्य विषय—नायिका भेद मतान्तर भ्रम भजन हेतु रस निणय ही ग्रन्थ का प्रमुख वण्य है। इसम शृङ्गार रस का प्रधानत एव अन्य रसो का गौण निरूपण प्रस्तुत किया गया है। नायिका भेद का वणन विशदतापूवक और रसों के मित्र शत्रु भी सम्मिलित वणित हैं। ग्रन्थ निम्नलिखित १२ प्रकरणों मे लिपिबद्ध है।

प्रथम प्रकरण के ६७ छन्दों म कारण करण वणन है। आरभिक छन्दो म गुरु और जगदीश्वरी देवी का मगलाचरण पितृ स्मरण, नाभा नगर की शोभा, राजकीय गज, अश्व और दरबार का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता हुआ कवि ग्रन्थ के महत्व पर इस प्रकार प्रकाश डालता है—

कूर उलूकन कौं कहौं, दीखे नहीं अभेद।
मान भयो जगभान सम, ग्रन्थ सु रसिकानन्द ॥३६॥

कवि की यह गर्वोक्ति उसके पाडित्य की परिचायक है।

जो चरचा करि कवित्त म भयौबहुत है चद।
तौ चित द कविवाल कौ, पढ सु रसिकानद ॥

शेष प्रकरण कवि के वश गोत्र उपगोत्र वश और पूवजो के सविस्तार विवरण को अर्पित हैं।

द्वितीय प्रकरण के २८ छन्द काव्य लक्षण काव्य स्वर, स्वर सिद्धान्त व्यग्य ध्वनि लक्षण, काव्य भेद काव्य कारण कविभेद, काव्य काय-वणन आदि को समर्पित है। लक्षण लक्ष्य कवि के स्वनिर्मित है कुलपति मिश्र के रस रहस्य का लक्षण देकर विमश करके अपना लक्षण इस विधि मे बनाया है—

जगत अद्भुत सुख सदन, सब्दरु अय कवित। —कुलपति।

कवि की शका—या सु लोक मे उसरहि चमतकार जह होय।

जाते अद्भुत सुख कहयो असमजस ये होय

कवि ने कुलपति के 'जग तें' पद के स्थान पर 'जग मे' पद बनाकर लक्षण से सहमति प्रकट की है। अपना लक्षण इस भांति लिखा है—

सब्द अर्थ सगम सहित भरे चमत्कृत भाय।
जग अद्भुत मे अद्भुतहिं, सुखदा काव्य बनाय ॥११॥

कवि ने टीका द्वारा इसे स्पष्ट किया है—'सब्द अथ कौ सगम हाय सो कैस सब्द अथ मिले हाय। सहित कहो जो सुनै ताके हित ही लग और भरे होइ चमत्कारी भाव जाम वह जग जो यह अद्भुत है ताम अद्भुत सुखदायक होय सो काव्य कहिये।'

काव्य तथा कवि के १ उत्तम २ मध्यम और ३ अवर के तीन-तीन भेद परम्परानुसार किये गये हैं।

तृतीय प्रकरण का शीर्षक भाव वर्णन है जिसम १६६ छन्द हैं। कवि ने रस का कारण भाव माना है अत रस से पूर्व वह भाव का निरूपण करना उचित समझता है। वह लिखता है—'आगे रस को निरूपन करेंगे ताते रस कौ कारन भाव है, सो प्रथम भाव और भाव भेद लच्छन कहियत है। संस्कृत के अमरकोश के सूत्र 'विकारो मानसो भाव' के अनुसार कवि की मान्यता है कि मन का विकार ही भाव है।[1] कवि ने चार प्रकार के भाव माने हैं १–विभाव २–अनुभाव ३–सचारी और ४–स्थायी। सचारी के दो उपभेद और किये हैं १–तनज और २–मनज। तनज सचारियो के आठ और मनज के चौतीस उपभेद किये गये हैं। तनज सचारी आठ सात्विक भावो के पर्याय है। कवि ने कुलपति मिश्र के मत का खडन करके मतिराम के अनुसार रस बोध कराने वाले अनुभावो को ही सात्विक भावो के अन्तर्गत माना है। सचारियो के वर्णन प्रसग म ही कतिपय काव्य दोषो की चर्चा की गई है। भाव अनुभाव सचारी और सात्विक भावो के विशद विवेचन के उपरान्त कवि ने रस की परिभाषा इस प्रकार की है—

कारन कह्यौ विभाव है थिति बिन कारन नाहि।
थितिन भाव के मिलत ही रस ही होत सुचाहि ॥१५९॥

रस निष्पत्ति म कवि भरतमुनि का अनुगामी है।[2]

---

१ बस वासना अचल हिय रहे होय के सग।
मन विकार सौभाव है, लहियत पाय प्रसग ॥ रतिकानन्द तृतीय प्रकरण छन्द स० १।

२ विभावानुभाव व्यभिचारि सयोगाद्रस निष्पत्ति'—(नाट्यशास्त्र)

कवि ने नायिकाओं के जातिगत विभाजन में रति रहस्यानुसार १ पद्मिनी, २ चित्रिणी, ३ शंखिनी और ४ हस्तिनी चार भेद[1] कामसूत्र के आधार पर १ मृगी २ बडवी और ३ हस्तिनी तीन भेद मानकर उनके लक्षण लक्ष्य दोहे और कवित्त दोनों में ही दिये हैं।[2] गुणगत भेदों में १ उत्तमा २ मध्यमा, ३ अधमा। उत्तमा के (१) दिव्या (२) अदिव्या और (३) दिव्यादिव्या तीन उपभेद। धर्मानुसार १ स्वकीया २ परकीया और सामान्या तीन भेद और अवस्थागत ८ भेद १–प्रोषित पतिका २–खंडिता, ३–अधमा ४–विप्रलब्धा, ५–वासक सज्जा ६–स्वाधीन पतिका ७–अभिसारिका और ८–कलहांतरिता माने गये है। गुणादि के आधार पर वर्गीकृत नायिकाओं की गणना कवि ने भानुदत्त मिश्र की रसतरंगिणी के नायिका भेद के अनुसार की है।[3]

कवि द्वारा प्रोषित पतिका के दस भेद माने गये हैं जो अवस्था के अनुसार हैं। अभिसारिका के परम्परागत भेदों के अतिरिक्त कामा, प्रेमा, मत्ता इन तीन भेदों को कवि ने प्रौढा के उपभेदों के अंतर्गत माना है। इस सम्बन्ध में कवि का कथन है कि 'कामा अभिसारिका, प्रेमाभिसारिका, ये तीन भेद कोऊ और हू कहत हैं सो प्रौढा ही मे लीन होत है। काम हू की प्रेम हू की आधिक्यता प्रौढा मे होत है। परकीया हू मे होत है ताते जुदी जुदी न कही।[4]'

कवि ने ४६०८ नायिका भेदों की गणना इस प्रकार की है–मध्या प्रौढा स ६ धीरादिक, ज्येष्ठा-कनिष्ठा स दूने करके १२, तेरहवीं 'मुग्धा' य स्वकीया के १३ भेद हुए। परकीया में ऊढा, अनूढा और सामान्या मिलाकर १६ भेद होते है। आठ नायिकाओं में ये १२८ बने। उत्तमादि में तिगुने किये जो ३८४ हुए। पुन ३८४ के दिव्यादिक में तिगुने किये तो ११५२ हुए इनको पद्मिनी आदिक में चौगुने करके कुल ४६०८ भेद हुए।[5]

---

१ पद्मिनी तदनु चित्रिणी तत, शंखिनी तदनु हस्तिनी विदु।
उत्तमा प्रथमा भाविता, ततो हीयते युवतिरुत्तरोत्तराम्। —कोक्कोक— रति रहस्य, श्लोक स० १० प्रथम अध्याय।

२ नायिका पुनर्मृगी बडवा हस्तिनी चेति। —वात्सायन—कामसूत्र, द्वितीय अधिकरण श्लोक संख्या १।

३ भानुदत्त ने जो लिख्यो रसतरंगिनी माहि।
सो लच्छन हम लिखत हैं हमे दोस कछु नाहि॥—रसिकानन्द, ४।६८।

४ ग्वाल कवि—रसिकानन्द, षष्ठ प्रकरण छंद स० ८२ की टीका।

५ वही छंद स० ८८ से ९४।

सप्तम प्रकरण शीर्षक—सखी लक्षण, छन्द संख्या ४३। कवि ने सखियों के (१) मंडन, (२) उपालम्भ, (३) शिक्षा और (४) परिहास ये चार कर्माचार माने हैं और दूतियों के दो (१) संघटना, (२) विरहनिवेदना। कवि ने परम्परानुसार दूतियां १६ प्रकार की और मिलन स्थल १० प्रकार के गिनाये हैं।

अष्टम प्रकरण में शृङ्गार रस का १११ छन्दों में निरूपण है। शृङ्गार के भेद (१) संयोग, (२) वियोग, बता कर हाव के (१) लीला, (२) विलास, (३) विछित्ति, (४) विभ्रम, (५) किलकिंचित, (६) मोट्टायित, (७) कुट्टमित, (८) विब्बोक, (९) सुललित और (१०) विहित—ये दस नाम लिखे हैं। कवि ने इनके अतिरिक्त (१) हेला, (२) मद, (३) बोधक, (४) मदन (५) अभिनयन, (६) चतुर, (७) क्षीम और (८) गुन ये आठ और मानकर हावों की संख्या १८ करदी है। वियोग पक्ष में (१) पूर्वानुराग (२) करुणा, (३) मान और (४) प्रवास—ये चार भेद और उनके लक्षण लिखे हैं। विरह की दस अवस्थाओं का वर्णन भी इसी प्रसंग में किया गया है।

(१) अभिलाषा, (२) चिन्ता, (३) स्मृति, (४) गुण कीर्तन, (५) उद्वेग, (६) प्रण, (७) प्रलाप, (८) उन्माद, (९) व्याधि और (१०) जड़ता। विरह में चार प्रकार के दर्शनों का वर्णन है। (१) श्रवण, (२) स्वप्न, (३) चित्र और (४) साक्षात् दर्शन।

नवम प्रकरण शीर्षक—विषयालम्बन विभाव, नायक निरूपण, छन्द संख्या ७७। इस प्रकरण में नायक के चार जातिगत भेद लिखे हैं और इस विषय में पांचाल दत्त, कुचमार और भद्र विद्वानों के नाम सन्दर्भ में दिये हैं। नायक भेद (१) पति, (२) उपपति (३) वैशिक। पति के भेद (१) धीर ललित, (२) धीरप्रशान्त, (३) धीरोदात्त और (४) धीरोद्धत। कवि ने परम्परानुसार पति के ४ और भेद लिखे हैं—(१) अनुकूल, (२) दक्षिण, (३) धृष्ट और (४) शठ। तत्पश्चात् (१) उत्तम, (२) मध्यम, (३) अधम, (१) दिव्य, (२) अदिव्य (३) दिव्यादिव्यादि के अनुसार कवि ने नायक पति के ५७६ भेद गिनाये हैं।[१] कवि ने उप पति भी चार प्रकार के माने हैं जिनमें—(१) मानी और (२) चतुर प्रमुख हैं चतुर भी दो प्रकार के हैं—(१) वाक्य चतुर और (२) क्रिया चतुर। वैशिक नायक को भी उत्तम मध्यम, अधम श्रेणियों में विभाजित किया गया है। कामसूत्र के आधार पर

१ वही—अष्टम प्रकरण, छन्द संख्या २९ से ३२ तक।

(१) नाशक, (२) वृषभ तथा (३) अश्व तीन नायको का भी वणन कवि ने कर डाला है। नायक के सचिव ४ है जो इस प्रकार वर्णित हैं—

पीठ भदे, विट, चेटकहि, बहुरि विदूषक मान।
चारि भाति के सचिव ये नायक पास सुजान ॥६८॥

दशम प्रकरण का शीषक—उद्दीपन विभाव वणन है, छद सख्या ३२ है। कवि ने उद्दीपन विभाव के अ तगत रीति परम्परानुसार निम्नलिखित उपकरण गिनाये हैं—

"चोवासार, घनसार, च दन, अगरसार
चद्रमा, चिराक चित्रसाला, सेज मानिय।
कोकिला पपीहा मोर हस बगबस और
बीजुरी, घनावली गरज पहिचानिय॥
'ग्वाल कवि भूपन, बसन पडरितु देखौ
गायक, गुनीजन, सुमन तरु आनिय।
रस की कहानी अतरादिक, सुका पवानी
त्रिविधि समीर ये उदोपन बखानिय ॥१॥

परम्परा के अनुरोध म कवि ने पटऋतु के जो छन्द लिख हैं, व उच्च कोटि के हैं।

एकादश प्रकरण के ३८ छदों म शृङ्गारेतर हास्यादि रसा के लक्षण लक्ष्या का कवि ने परम्परागत ही वणन किया है जो विस्तृत नहीं है।

द्वादश प्रकरण के ४८ छन्दो मे कवि ने रीति कविया की परम्परा को नकार कर गौडीय सम्प्रदाय के लक्षण ग्रन्थ 'भक्ति रसामृत सिन्धु' की उपासना पद्धति के अनुसार मधुर रस का भी वणन किया है। इससे कवि के ज्ञान की विशिष्टता और बहुज्ञता का परिचय मिलता है। श्री रूप गोस्वामी के अनुसार कवि ने (१) दास्य (२) सख्य और (३) वात्सल्य इन तीन रसो के लक्षण लिखकर अपने उदाहरण बनाये हैं। सख्य के (१) समता और (२) विश्वास दो उपभेद और किये गये हैं। इसी प्रकरण म कवि ने रस के मिश्र और अमिश्र रसो को गिनकर उनके उदाहरण दिये हैं। मिश्रामिश्र रसो का वणन रीति के एक या दो आचाय ही कर पाये हैं।

ग्रन्थ के अन्त म आश्रयदाता का आशीर्वाद लेकर कवि ने ग्रन्थ का समापन कर दिया है। पुष्पिका इस प्रकार है—इति श्री म महाराजाधिराज सुषमा समाज बलवत छितिकत श्री जसवतसिह जी हेतवे ग्वाल कवि विरचित

ग्र थे तीन रस, रमन के मित्र सत्र् नाम द्वादसो प्रक्रर ॥१२॥ सवत १६५० भाद्रपद कृष्णा ४ गुरो लिखित श्री मथुरायां सतघडा मध्ये रामलाल शमणा ।

५ हम्मीर हठ खो० रि० १६०५-१३, १८४१ ८६१ ।

वीर काव्य यह एक छोटा सा प्रब ध काव्य है जो १०१ दोहे, ३० कवित्त और १०८ छन्दो म पूण हुआ है । च दौसी निवासी प० सुरन्द्र मोहन मिश्र के अनुसार इसकी एक प्रति मथुरा क बा० श्याम चरण क पास वगा धरो म थी, जिसका देवनागरी लिप्य तर मथुरा क मुव् उल उलूम प्रेस स लीथो म मुद्रित होकर प्रकाश म आया था, यह प्रति हमार दखने म नही आई मिश्र जी न भी इस प्रति को दुलभ ही लिखा है ।[1] हम इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी से प्राप्त हुई है जो कि ही लाला नरायन दास साकिन पिकरपुर मुकाम छतरपुर द्वारा स० १६५७ वि० म लिपिबद्ध की गई थी जसा कि प्रति की पुष्पिका से विदित होता है ।[2] इसकी एक प्रति बिसौली (वदायू) निवासी प० लक्ष्मणाचाय उपाध्याय के सग्रह म होने का उल्लख भी मिलता है पर यह सम्प्रति उपलब्ध नही होती । हम्मीर हठ की एक दुलभ मुद्रित प्रति हम मथुरा क म० श्यामलाल हीरालाल श्यामकाशी प्रेस के श्री महेशच द्र अग्रवाल एम० ए० क प्राचीन ग्र थ सग्रह स उपलब्ध हुई है । यह प्रति इसी प्रेस म मुद्रित हुई थी । इस मुद्रित प्रति एव श्री विद्यार्थी द्वारा गुरमुखी स लिप्य तरित प्रति म छन्द सख्या व छ दानुक्रम एक ही है । कि तु पाठ मे कही कही भेद है । यह प्रति भी अत्य त भ्रष्ट पाठ म सम्पादित हुई है । फिर भी इस मुद्रित प्रति का अपना महत्त्व है । हमन अपना अध्ययन इन्ही दोनो प्रतियो के आधार पर दिया है ।

रचना काल कवि न 'हम्मीर हठ' स० १८८३ वि० को कार्तिक कृष्णा अमावस्या को अमृतसर म पूण किया । जसा कि ग्र थ के अ त क इस उल्लेख स विदित होता है—

३ ८ ८ १

"सवत गुन सिधि सिधि ससी, कात्ति कुहू बखान ।
श्री हमीर हठ प्रगट्यौ अमतसर सुमथान ॥१००॥

---

१ वीणा—नवम्बर १९५८ ई० ग्वाल कवि का हम्मीर हठ—श्री सुरेन्द्र मोहन मिश्र ।

२ पुष्पिका—"इति श्री हम्मीर हठ सम्पूरणम् शुभमस्तु । पौषवदी स० १९५७ दिसम्बर १९०० ई० मु० छत्तरपुर, लिखित ला० नरायन दास साकिन सिकरेपुर ॥

कुछ विद्वानो ने 'गुन' के स्थान पर 'गुनि' मानकर इसका रचनाकाल १८८१ वि० ही मानने के पक्ष मे हैं। हमारी प्रति मे 'गुन' शब्द है।

वर्ण्य विषय—ग्रन्थारम्भ इस प्रकार है—

"श्री गणेशायनम" अथ हमीर हठ लिख्यते।

'मेघवरन तन रतन गम, चदमाल भुज चार।
प्रनपाली वाली सदा, श्री काली रिझवार ॥१॥
तिन पद पकज को करत बहु बदन कवि ग्वाल।
रचि हमीरहठ दीजिये, पूरन करो खुसाल ॥२॥

ग्रन्थ मे जोधराज कृत हम्मीर रासो की इतिहास प्रसिद्ध अलाउद्दीन खिलजी और रणथमौर के वीर शासक हम्मीर देव के बीच हुए युद्ध की कथा का वर्णन है। काव्य मे ऊहात्मक वर्णनों का आधिक्य है। बेगम मरहट्ठी और मीर महिमा मगोल के रति वर्णन म कवि शालीनता की रक्षा नही कर सका। कथोपकथनो मे मूलकथा प्रवाह टूट जाता है। नारी आभूषण, हाथी, घोडे, रथ, शस्त्रास्त्रादि के वर्णनो मे रीति परम्परा के ही अधिक दर्शन होते हैं वीर रस का तो आभास ही मिलता है। फिर भी रीति के आचार्य के हाथो की यह रचना सामान्यत सन्तोषजनक कही जा सकती है।

६ श्रीकृष्ण जू को नखशिख[1] खो० रि० १६०१ ८८, १८२० ८८ डी, पृष्ठ २४१, १९२३ १४६ बी, पृष्ठ ६०३, १९२६ १६१ सी, पृष्ठ २६१ १९२९ १३५ सी, पृष्ठ २६२।

शृ गार ग्रन्थ—५६ कवित्त ६ दोहे और १ सवैया कुल ६६ छन्दो का यह लघु ग्रन्थ ग्वाल की एक प्रसिद्ध शृङ्गार रचना है। मुरादाबाद से प्रकाशित और भक्त भावन मे सग्रहीत 'ग्रन्थ' का हमने मिलान किया है। दोनों अक्षरश एक है। नखशिख के पर्याप्त छन्द कवि के रसिकानन्द रसरग बलबीर विनोद और साहित्यानन्द म उदाहृत हैं। भक्त भावन म कवि ने इसे अविकल रूप म सग्रहीत किया है।

रचना काल—कवि के ग्रन्थगत निम्नांकित दोहे से नखशिख कार्तिक शुक्ला दशमी स० १८८४ वि० को पूर्ण हुआ था—

बेदि सिद्धि अहि रनिकर सबत आश्विन मास।
भयो दसहरा कों प्रगट नखशिख सरस प्रकास' ॥२॥

---

१ लक्ष्मीनारायण प्रेस मुरादाबाद से नखशिख' नाम से प्रकाशित सवत १९०३ वि० द्वितीय सस्करण के सम्पादक—श्री गोवर्धन लाल, वृन्दावन स० १९६० वि०।

वेद=४, सिद्धि=८, अहि=८, रनिकर (चन्द्रमा)=१। गणना से
सं० १८८४ वि० निकलता है। यही तिथि सर्वमान्य है।[१]

वर्ण्य विषय—कवि ने श्रीकृष्ण को आलम्बन बनाकर उनके चरण, चरण भूषण, जघा, नितम्ब, लक, काछनी, लक भूषण, नाभि, त्रिवली, रोमराजि, उदर, हृदय, भृगुलता, वक्षस्थल, बनमाल, पाणि, लकुट, बासुरी, भुजा कठ, कठ भूषण, पीठ, चोटी, चिबुक, अधर, दशन, रसना, मुख सुवास, हास्य, नासिका, कपोल, कान, कर्णाभूषण, नेत्र चितवन, भ्रकुटी, भाल, खोरि, श्रीमुख, केश, मोर मुकुट, गति और पीत पट का विशद काव्यमय वर्णन प्रस्तुत किया है। मगला चरण म कवि ने राधा और सरस्वती की श्लेष से सुन्दर वन्दना प्रस्तुत की है। तत्पश्चात गुरु जगदम्बा पिता, कृष्णचन्द्र, महेश, गणेश का भी स्मरण किया है।[२] ग्रन्थ की समाप्ति निम्नांकित रूप म होती है—'इति श्री महाराजाधिराज श्री कृष्णचद जू को नखसिख सम्पूर्ण।'

७ विजय विनोद

वीर काव्य—ग्वाल के ग्रन्थो की शृ खला म यह एक नवीन कडी है, जिसे गुरुमुखी से हिन्दी जगत म लाने का श्रेय श्री देवेन्द्रसिंह विद्यार्थी नाभा निवासी को है। सवत् १९२० वि० मे इस ग्रन्थ का लीथो म गुरुमुखी म प्रथम प्रकाशन हुआ, तब कवि भी जीवित था। इसकी एक हस्तलिखित प्रति भाई बागडिया जी के पास थी। दूसरी हस्तलिपि श्री शमशेरसिंह 'अशोक' के निजी पुस्तकालय में थी। अशोक जी ने श्री शिरोमणि गुरु द्वारा प्रबन्धक समिति अमृतसर से एक प्राचीन जगनामे नामक पुस्तक का गुरमुखी सम्पादन व प्रकाशन सन् १९५० ई० म किया था, इसके पृष्ठ १०७ से १६६ तक विजय विनोद छपा है। इसकी मुद्रित प्रति हमने विद्यार्थी जी के पास देखी है, जिसका हिन्दी लिप्यन्तर भी हमको उन्ही से उपलब्ध हुआ है। विजय विनोद कवि की वीररस की प्रथम कृति हम्मीर हठ की परम्परा मे दूसरी मूल्यवान कृति है, जो कवि के वीर रस लेखक होने की साक्षी पर एक और छाप लगाती है।

रचना काल—इसकी रचना के कारण और समय के विषय म कवि ने लिखा है कि राजा हीरासिंह की इच्छा से उनके विश्वासपात्र सभासद काश्मीरी पडित जल्हा के आदेश से उसने श्रावण शुक्ला अष्टमी भौमवार

१ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृष्ठ २९८ आदि। डा० किशोरीलाल गुप्त—सरोज सर्वेक्षण, पृ० २५९। डा० महेन्द्रकुमार—हि० सा० का वहत् इतिहास, षष्ठ भाग पृ० ३७९ आदि।

२ श्रीकृष्ण जू को नखशिख—ग्वाल, छन्द स० १ से ३ तक।

स० १६०१ वि० म विजय विनोद की रचना सभी इतिहास वृत्त। की जांच परख कर की। कवि कथन इस प्रकार है—

हीरासिंह महाराज की, लखि इच्छा अनुरूप।
श्री ल्हा महाराज न कियो विचार अनूप ॥४॥
श्री जल्हामहाराज ने हुकम दियो खुशहाल।
जे लहौर लीला भई त बरनौ कवियाल ॥५॥
श्री पडित को हुकम सुनि माच्यौ हिय मे मोद।
तब हवाल जांच्यौ सकल राच्यौ विजय विनोद ॥६॥

१ ० ६ १
सवत ससि नभ निधि ससी सदन सुकुल सुमोद।
तिथि सुअष्टमी भौम कों प्रगटयौ विजय विनोद ॥७॥

इस प्रकार इसकी रचना तिथि कवि क प्रथम वीर काव्य हम्मीर हठ (स० १८८३ वि०) क १८ वष उपरा त और पटियाला पति के आश्रित कवि चन्द्रशेखर वाजपेयी के हम्मीर हठ (स० १६०२) से एक वष पूव हुई थी।

वर्ण्य विषय—४८७ विविध छन्दा म वर्णित इस प्रब ध काव्य के इतिवृत्त म लाहौर लीला का यथातथ्य चित्रण ही अभिप्रेत विषय रहा है। कवि ने अपन आश्रयदाता लाहौर दरबार क प्रधान मत्री राजा ध्यानसिंह के पुत्र राजा हीरासिंह की इच्छा पूर्ति के हतु महाराजा रणजीतसिंह (मृत्यु स० १८६६ वि०) से लकर महाराजा दलीपसिंह तक लाहौर राज्य सिंहासन से सम्बन्धित समस्त इतिहास को कथा काव्य म उभारन का सफल प्रयत्न किया है। कवि इस दरबार म स० १८६१ वि० के लगभग प्रविष्ट हुआ और स० १६०१ वि० तक इस दरबार की घटनाओ का वह प्रत्यक्ष द्रष्टा रहा। महाराजा रणजीतसिंह खडगसिंह नौनिहालसिंह शेरसिंह और तदुपरा त महाराजा दलीपसिंह स सम्ब धित तिथियो और घटनाओ के उल्लेख एव औचित्यपूण विवरण एतद्विषयक इतिहास के तथ्यो से इतने पुष्ट होते हैं कि यह आभासित जसे लेखक स्वय इनम समीप मे कही सम्मिलित रहा है। मगला चरण होता है कि उपरा त कवि गुरु गोविन्दसिंह जी की स्तुति के साथ महाराजा की यशोगाथा आरभ करके उनकी दानशीलता, कमनिष्ठा शौय बल पराक्रम, शान शौकत आतक, गुणग्राहकता गो द्विज वेद रक्षा व्रत आदि का विशद वणन करता है। इनकी मृत्यु क सम्ब ध म कवि लिखता है—

अट्ठारह सौ छ्यानव समत जानौ मान।
मास आषाढ सु किसन पख पडवा भयौ पयान ॥६५॥[1]

---

१ सन् १८३९ ई० की २७ जून को महाराज इस ससार से प्रस्थान कर गये
डा० देशराज सिख इतिहास, पृ० ३२७।

कवि ने महाराजा खडगसिंह और कुंवर नौनिहालसिंह की मृत्यु की तिथियां इस प्रकार लिखी है—

बीते सोलह मास अरु चौबिस दिन सुभसाज।
तब पयान हरिपुरकियौ खडगसिंह महाराज ।।१२४।।

महाराजा रणजीतसिंह के पश्चात् खडगसिंह १६ माह चौबीस दिन ही राज्य कर पाये थे कि परलोक वासी बने और उसी दिन पिता की दाह क्रिया करके जसे ही कुंवर नौनिहालसिंह लौटे कि दव दुर्विपाक से सिंह पौर के एक छज्जे ने टूटकर उनके भी प्राण ले लिये। कवि ने इन दोनों की मत्यु तिथि कार्तिक शुक्ला एकादशी सवत् १८८७ वि० लिखी है।

उनिस सत सों तीन वस सवत कातिक मास।
सुकुल इकादसि को करयौ पितसुत हरिपुर बास ।।१२९।।[1]

इस दुघटना के पीछे इतिहासकारों ने किसी षडयन्त्र की दुर्गन्ध पाई है।[2] पर कवि ने अपने बुद्धि कौशल से इस दूसरे प्रकार से ही चित्रित किया है। काव्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि डोगरा राजा ध्यानसिंह म० खडगसिंह का प्रधान मन्त्री था, जो उनके पिता के काल से ही राज्य का प्रभावशाली व्यक्ति था। उधर अतरसिंह लहनासिंह और अजीतसिंह सन्धावालिया ध्यानसिंह की इच्छा के विरुद्ध विधवा रानी चन्दरकौर को शासक बनाना चाहते थे जब कि राजा साहब म० रणजीतसिंह के द्वितीय पुत्र शेरसिंह का सिंहासनारूढ देखना चाहते थे। सरदार गुलाबसिंह डोगरा भी इसी मत का था। भारी संघर्षों के पश्चात् शेरसिंह सिंहासनस्थ होता है। पर राजनीतिक षडयन्त्रों की विनाशकारी शृंखला कुछ ऐसी चलती है कि पर्याप्त गुणवान बलवान, नीतिज्ञ और प्रजावत्सल होते हुए भी शेरसिंह को लाहौर का तख्त शूलों की सेज सिद्ध हुआ। सन्धावालिया के संघर्षों में शेरसिंह भी सवत् १९०० वि० में वीरगति को प्राप्त हुए। तत्पश्चात् रणजीतसिंह के तृतीय अल्पवयस्क पुत्र दलीपसिंह अपनी माता के अभिभावकत्व में महाराजा घोषित हुए। इनके प्रधान मन्त्री राजा हीरासिंह थे, जो राजा ध्यानसिंह के सुयोग्य पुत्र थे। यहीं तक काव्य की कथा चलती है। वर्णना में कवि ने जहाँ घटना चक्र ऐतिहासिक दिया है, वहीं नाराशंसा अतिरंजनापूर्ण की है। अनेकानेक शस्त्रास्त्रों की गिनती, भोजन के सैकड़ों नाम, वस्त्रालंकारों के विविध वर्णन,

१ जिस दिन महाराज खडगसिंह जी का देहान्त हुआ वह सन् १८४० ई० की ५ वीं नौम्बर थी।'—डा० देसराज–सिख इतिहास, पृ० ३४१।
२ वही, पृ० ३४० ३४१।

युद्धो का अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण रीति परम्परा का स्मरण दिलाते हैं। पर काव्य में इतिहास पक्ष का निर्वाह कवि ने पूर्ण सिद्ध हस्तता के साथ निभाया है, यह मानना पड़ता है।

८ गोपी पच्चीसी—खो० रि० १६०१ ६०, १८२० /८ए पृ० २४०, १६२३ १४६ सी पृ० ६०४, १६२६ १६१ ए पृ० २७६, १६२६ १३५ ए पृ० २६१, १८३२-७३ एफ पृ० १५४ (हस्तलिखित)।

उपालम्भ काव्य—जसा कि ग्रन्थ के नाम से सुस्पष्ट है यह साहित्य की पच्चीसी परम्परा म २५ कवित्त सवयो का कृष्ण भक्ति परक एक उपालम्भ काव्य है।

वर्ण्य विषय—श्रीकृष्ण गोपियो के आराध्य देव हैं। उद्धव व्रज म गोपियो को योग की ज्ञान दीक्षा प्रदान करने आये हैं। साक्षात् रस रूप कन्हैया की रसिक लीलाओ को छोडकर गोपिया उद्धव क शुष्क ज्ञान उपदेश को कसे ग्रहण कर सकेंगी। ग्रहण करना तो दूर की बात है, वे उद्धव की व्रज म उपस्थिति से ही प्राणान्तक पीडा से छटपटा उठती हैं।

जसे कान्ह जान तसे ऊधो सुजान आये, हैं तो महमान पर प्रानन निकारे लेत।
लाय बर अजन भजाये इन हायन सों तिनकों निरजन कहत मू ठ धारे लेत॥
ग्वाल कवि हास ही तमालन मे बालन म
ख्यालन मे खेलें है कलौल किलकारे लेत।
हयां न परचेरी परचेरी सग पर चेरी
जोग परच हयां भेजि परचे हमारे लेत॥१॥

९ कुब्जाष्टक—८ छन्दो की उपालम्भ सम्बन्धी इस रचना का रचनाकाल कवि ने नही दिया। यह भक्त भावन में सग्रहीत है। इसका कोई छ द कवि के किसी ग्रन्थ म उदाहृत नही हुआ। अत यह कवि के जीवन के अन्तिम दिनो की ही हो सकती है।

वर्ण्य विषय—इसमे गोपिया क प्रति कुब्जा की उपालम्भ भरी कटूक्तिया लिखी गई हैं। गोपियो को कुब्जा से शिकायत रही है कि उसने उनके प्रिय कृष्ण को मोह लिया है। गोपी उद्धव प्रसग मे गोपियो के कुब्जा के प्रति अनेक उलाहने मिलते हैं। कुब्जा ने इन्ही के प्रत्युत्तर म गोपियो के प्रति कुछ खरी खरी बातें पहली बार यहां कही हैं। कुब्जा की उक्तिया कुछ तीखापन तो लिये हुए हैं हीं, कही-कही बाजारू भी हो गई हैं। रचना की कुछ पक्तिया यहां उद्धृत की जाती हैं—

'ग्वाल कवि' कहै एक घाटी तो जरुर,
मोमें गोबर न थाप्यो औ न खोयो म उकर है।
घर घर द्वार द्वार गली गली फिरवया,
भोर तें घसत सास जिनकी कहादर है ॥४॥

आपने न ओगुन गनत पर पति पागी ऐसी बेशरम करे मोही सो ठिठोली वे।

'ग्वाल कवि' छिप छिप अंधियारी रातिन मे,
सोये पति त्यागि कें किवारें मुदी खोली वे।
बनन मे बागन मे जमुना किनारेन मे,
खेतन खदान मे खराब होत डोली वे ॥६।

कहने की आवश्यकता नही कि ग्वाल इसमे शालीनता का निर्वाह नही कर पाये। इसीलिये उनको आचाय शुक्ल[1] और आचाय पदमसिह शर्मा[2] की फक्कारें खानी पडी हैं। इसी भांति विविध युक्ति उक्तिया के दशन इस काव्य म मिलते हैं। ग्र थ का समापन निम्नलिखित रूप मे होता है—
'इति श्री गोपी पच्चीसी सपूण शुभमस्तु।'

६ राधाष्टक[3]—(हस्तलिखित) यह लघु ग्र थ कवि ने स्वय सग्रह 'भक्तभावन' मे अविकल रूप म सम्मिलित किया है।

रचना काल—ग्र थ म कोई रचनाकाल नही दिया गया। भक्त भावन म सकलित ग्र थों के क्रम से इसकी रचना का स० १८८४ वि० के नखशिख के पश्चात् होने का अनुमान लगाया जा सकता है।

वर्ण्य विषय—राधा महारानी की स्तुति ही यहाँ कवि का वण्य विषय है। ग्र थ का समापन इस प्रकार है—'इति श्री राधाष्टक सम्पूण शुभमस्तु।

१० ज्वालाष्टक[4]—(हस्तलिखित)

---

१ 'इनकी बहुत सी कविता बाजारी है।'–हि० सा० का इतिहास पृ० २९९।

२ उस समय कुब्जा पक्षपाती महाराज को और गोपी भक्त नवनीत जी को मालूम न था कि बहुत पहले कुब्जा के पक्षैती ग्वाल कवि हवके हम सायगी अदा कर गये हैं। कुब्जा की ओर से गोपियों को वह चाुना चाुर्नी को सुना गये हैं कि सुनकर लखनऊ वालिया भी शरमा जाय। ग्वाल कवि की कुब्जा की कटूक्तिया सुनकर बेचारी गोपियां कट कर रह गई होंगी। पदमसिह शर्मा, माधुरी वष ६ खड २, सख्या ४, पृ० ४५७।

३ आचाय प० रामचन्द्र शुक्ल—हि० सा० का इतिहास, पृ० २९८ एव डा० महेन्द्रकुमार—हि० सा० का वहत् इतिहास षष्ठ भाग, पृ० ३७९।

४ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्र स० ५७ से ५९।

वर्ण्य विषय—जैसा कि ग्रन्थ के नाम से ही प्रकट है इसमें ग्रीष्म पावस, शरद, हेमन्त, शिशिर और बसन्त पर क्रमश २१, २३, ४, ६, ४७ १५ छन्द उपलब्ध होते हैं। ग्रन्थ के अन्त में १४ छन्दों मे तोता, गुलाब, मालती सिरस, कदम्ब, बागवान, भौंरा हाथी, उलूक, कौआ, हस, कमल गोवत्स आदि पर अन्योक्तियाँ हैं। अधिकतर वर्णन उद्दीपन रूप में आये है, पर स्वतत्र प्रकृति चित्रण भी यत्र-तत्र द्रष्टव्य है।

१३ प्रस्तावक[1]

रचना काल—कवि ने स्वय स० १९१९ वि० में इस ग्रन्थ को 'भक्त भावन' में सम्मिलित किया है। ग्रन्थ में रचनाकाल का उल्लेख न होने से 'भक्तभावन' के रचनाकाल को ही इसका रचनाकाल मान लेना युक्तियुक्त होगा। कवि के इस समय तक के किसी भी ग्रन्थ में प्रस्तावक के कवित्त अव तरित नहीं हुए।

वर्ण्य विषय—कवि ने अपने जीवन के कटुतिक्त अनुभवों को काव्य भाषा में लिपि बद्ध कर दिया है। सासारिक सघर्षों ने कवि को जो परिपक्व विचार दिये, उनमें मानवता, मैत्री शत्रुता, प्रेम निर्वाह, कवि कर्म, कवियों के प्रति अकृतज्ञता आदि विषयों पर कवि ने अपने निजी विचार प्रस्तुत किये हैं।

१४ कवि दर्पण[2] खोज रिपोर्ट १९०९ १०२, पृष्ठ २२ १९१७-६५ सी पृष्ठ १९३, १९३५-३३ पृष्ठ ३१ राजस्थान खोज रिपोर्ट भाग ३ पृष्ठ ११२।

तत्कालीन आलोचना का यह एक अभिनव ग्रन्थ है। साहित्य में इसकी चर्चा भी बहुत हुई है। परन्तु इससे पूर्व इसकी कोई भी सम्पूर्ण प्रति उपलब्ध नहीं हो सकी थी। डा० ब्रजनारायण सिंह ने 'दूषण दर्पण नाम से कवि के जिस ग्रन्थ का परिचय पद्माकर और उनका युग' में दिया है, वह यही ग्रन्थ है और उसमे इसके केवल चार अध्यायों–द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पचम क्रान्तियों—का ही परिचय मिलता है। इसकी एक खडित प्रति आचार्य प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने भी अपने पास बताई है। इसकी प्रथम, द्वितीय और तृतीय क्रान्तियों की एक पुरानी प्रतिलिपि हमारे निजी सग्रह में है। और केवल प्रथम क्रान्ति की एक पुरानी प्रति श्री नवनीत पुस्तकालय में

१ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्रसख्या १०० से १०८ तक।

२ कवि दर्पण के प्रथम पृष्ठ का छायाचित्र देखिये परिशिष्ट चित्र ७।

लेखक न देखी है। सिख रिफरेंस लाइब्रेरी, अमृतसर म गुरुमुखी लिपि मे इसकी एक पूण प्रति—साता क्रातिया, सुरक्षित हैं। श्री विद्यार्थी जी की कृपा स इसका हिन्दी लिप्य तर लेखक को प्राप्त हुआ है। प्रति म रचनाकाल और लिपिकाल नही लिखा, जबकि मथुरा वाली दोनो प्रतिया की प्रथम क्राति के आरम्भ म रचनाकाल लिखा हुआ मिलता है। शेष विषय इन प्रतियो म अक्षरश ज्यो के त्यो एक ही है। कवि राव मोहनसिंह उदयपुर के यहाँ इसकी एक पूण प्रति बताई जाती थी पर अब यह वहा उपलब्ध नही होती।

रचना काल—अ त साक्ष्य क अनुसार इसकी रचना आश्विन शुक्ला दशमी, रविवार स० १८८१ वि० म हुई थी। देखिये ग्रन्थ का यह दोहा—

१ ८ ८ १

'सवत ससि निधि सिद्धि ससि आस्विन उत्तम मास।
बिजदसमि रवि प्रगटयौ कविदरपन प्रकास" ॥४॥

आचाय रामचन्द्र शुक्ल, डा० ब्रजनारायण सिंह आदि विद्वानो ने भी कवि दपण का रचना काल यही लिखा है।[१] इस ग्रन्थ की रचना दूपण दपण नाम स अमृतसर के सरदार लहनासिह के लिये की गई थी, जसा कि ग्रन्थ की क्रान्तियो के अ त म लिखा मिलता है—'इति श्री सवगुन गाहक असि वाहक परम उदार रिझवार श्री सरदार साहिब श्री मल्लहनासिह जी कृते ग्वाल कवि विरचिते दूपण दपण पद पदास दोप निणय प्रथमो कान्ति।" डा० सिंह के अनुसार ग्रन्थ की प्रत्यक क्राति के आरम्भ मे जो दोह वर्णित है, उनम लहनासिह का नाम इस प्रकार आया है—

श्री लहना सिंह वीर को अदल तेज अति दीख।
तसकर ठग बटमार सब मागिखात हैं भीख ॥[२]

लेखक की देखी प्रतियो मे यह दोहा नही मिलता। अमृतसर वाली प्रति स्वत त्र रूप स लिखी गई प्रतीत होती है, क्योंकि इसमे लहनासिह का नाम न किसी दोह म है और न क्राति क अन्त म। इसकी क्रातियाँ इस प्रकार समाप्त हाती हैं—इति श्री कवि दरपने ग्वाल कवि विरचिते वाक्य दोप निरनये नाम द्वितीयो क्राति।' सम्भवत बाद म कवि ने इस ग्रन्थ को उसका नाम डाल कर लहनासिह को भेंट कर दिया होगा।

१ हि० सा० का इतिहास—आ० रामचन्द्र शुक्ल २०१५ वि० सस्करण, पृष्ठ ३९८। एव पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रजनारायण सिंह, स० १९६६ ई०, पृष्ठ २०१।

२ पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १८९।

वर्ण्य विषय—ग्रन्थ को सात क्रान्तियो मे बाटा गया है जिनम काव्य शास्त्र की दृष्टि से क्रमश १–पद पदाश दोष, २–वाक्य दोष ३–अर्थ दोष, ४–रस दोष, ५–दोषैक्ताकरण ६–दोषोद्धार वणन और ७–प्रश्नावली गुण वणन के विषय मे विस्तारपूर्वक विमर्श प्रस्तुत किये गये हैं। सातो क्रान्तियो म कुल छन्द स० ४८६ है। दोष निणय के लिये हिन्दी के प्रसिद्ध कवि केशव बिहारी, पद्माकर आदि के छन्दो को उदाहरणो म स्थान दिया गया है। आलोचना म कवि का दृष्टिकोण शास्त्रीय रहा है। उदाहरणो म दोषो को सिद्ध करके उनको निदुष्ट बनाकर दिखाया गया है। एक एक उदाहरण कवि ने अपना भी दिया है। दोषो के लक्षण गद्य पद्य दोनो मे है। दोषो क भेदो की चर्चा मे कवि का आधार मम्मटाचाय रहे हैं।

ग्रन्थ के आरम्भ म मगलाचरण, ग्रन्थ नाम, रचनाकाल, ग्रन्थ के गुण और दोषो के सम्बन्ध मे कवि की मान्यता आदि का वणन मिलता है। कवि बडे आत्म विश्वास के साथ ग्रन्थ की विशेषता के विषय मे लिखता है—

बहिक नीति प्रमान करि, करियतु काव्य नवीन।
दोस हरन खलमुख कुलफ लखि रीझें परवीन॥
जो कवि दरपन सम सदा निरखें याहि बनाय।
कविता आनन माहितिहि दोस न दरस आय॥
लिखत चले आये सब अगिल सुकवि अपार।
भूलचूक जो होयसो लीजो सुकवि सुधार॥
कवित्त पुराने घरन की कारन यह विस्तार।
दोस लखाय बनाय पद दहों ताहि सुधार॥[1]

कौन सा कवि और कौन सी कविता दोषो हाना है इसक लिय कवि ने निणय का एक अपना मानदण्ड बनाया है जो वनानिक न होते हुए भी उसकी सूझ का परिचायक है। यह निम्नाकित है—

चाके सिगरे ग्रन्थ मे आधे दोस कवित्त।
ताक सिगरे कवित अरु कवि हू दूसित नित्त॥
जो कहु सिगरे ग्रन्थ में परें पांच मे दोस।
तौ तिनही मे जानिये, कविकों गिनो अदोस॥
जो वरनन बहु करत हैं, ते काहू इक ठौर।
चूकि गये तौ चूक वहि, सबमे चूक न दौर॥[2]

---

१ कवि दपरण—१।५ से ७।
२ कवि दपरण—१।१० से १२।

तत्कालीन काव्यालोचन का मापदड क्या था, इसका अनुमान इससे लगाया जा सकता है।

इसक अन तर कवि लक्षण का लक्षण और लक्ष्य का लक्षण देकर कवि दोष की परिभाषा इस प्रकार करता है—'सुनत और समुझत सम, नियमवान आनन्द। ताको जो रोके दुखद, सो दूसन बुधि वृद ॥'[१] पद और वाक्य के सुनने और रस के समझने म नियामक आनद को जो रोके वही दोष है। कवि ने शब्दगत, अर्थगत और रसगत—ये तीन प्रकार के दोष गिनाये हैं। पद दोषो म (१) श्रुति कटु (२) च्युत सस्कृति, (३) अप्रयुक्त, (४) असमर्थ, (५) निहितार्थ, (६) अनुचितार्थ, (७) निरर्थक, (८) अवाचक (९) अश्लील, (१०) ग्राम्य, (११) सन्दिग्ध, (१२) अप्रतीतत्व, (१३) नेयार्थ (१४) क्लिष्ट, (१५) अविमृष्ट विधेयाश और (१६) विरुद्धमतिक्रम का वर्णन किया है। पदाश दोषो म भी इ ही की पुनरावृत्ति हुई है।

वाक्य दोषों मे (१) प्रतिकूल वर्ण, (२) हतवृत, (३) न्यूनपद, (४) मात्रा हतव्रत, (५) रसानुकूल हतवृत्त, (६) अधिक पद, (७) कथित पद, (८) पतत्प्रकर्ष, (९) समाप्त पुनराप्त, (१०) अर्धा त रकवाचक, (११) अभवन्मत योग, सम्ब ध, (१२) अपदस्थ, (१३) अमतपराथ, (१४) भग्न प्रक्रम, (१५) अनभिहित वाच्य, (१६) प्रसिद्धहत, (१७) अक्रम और (१८) अपदस्थ समास वर्णित किये हैं।

अर्थ दोषों म (१) अपुष्टार्थ (२) कष्टार्थ, (३) व्याहत (४) अर्थ पुनरुद्ध, (५) दुष्क्रम, (६) ग्राम्यार्थ, (७) सदिग्धार्थ, (८) निर्हेतुक, (९) अप्रसिद्ध, (१०) विद्या विरुद्ध, (११) अनवीकृत, (१२) सनियम परिवृत, (१३) अनियम परिवृत, (१४) विशेष परिवृत (१५) अविशेष परिवृत, (१६) साकाक्ष (१८) अपद प्रयुक्त (१८) सहचर्गीभि न, (१९) प्रकाश विरुद्ध, (२०) विधि अयुक्त (२१) अनुवाद अयुक्त, (२२) त्यक्त पुन स्वीकृत और (२३) अश्लीलत्व दोषो के लक्षण लक्ष्य देकर उनको निदुष्ट बनाकर दिखाया है। थोडे बहुत नामा के परिवतन एव कुछ उपभेदों को छोडकर कवि मम्मट से पूर्ण प्रभावित है।

इसी प्रकार चतुर्थ क्राति म रस दोषा म मम्मटानुसार (१) सचारी नाम, (२) रसशब्द कथन, (३) स्थायी कथन, (४) विभाव व्यक्ति कष्ट, (५) अनुभाव व्यक्ति कष्ट, (६) विभाव प्रतिकूल कष्ट, (७) अनुभाव प्रतिकूल, (८)

१ कवि दर्पण—१।२०।

दीप्त पुन पुन (९) अकाड प्रकथन, (१०) अकाड छ्द, (११) अग विस्तार, (१२) अगिमानुसधान, (१३) पक्रति विपयय, और अमगामिधान दोपो का वणन मिलता है।

पचम क्राति म दोपों के साकयर्याभास का वणन है। एक दोप दूसरे दोप से मिलता हुआ आभासित होता है। कवि ने श्रुतिकटु और वण प्रतिकूल, असमथ और निहिताथ, अनुचिताथ और विरुद्ध मतिक्रम, सन्दिग्ध पद और सदिग्धाथ, पद ग्राम्य और अथ ग्राम्य, क्लिष्ट और कष्टाथ न्यून पद और साकाक्ष, लोक विरुद्ध और कवि नेम विरुद्ध, पतत्प्रकर्ष और भग्न प्रक्रम त्यक्त और स्वीकृत प्रथम समाप्त पुनराप्त और पुनराप्त और अपदमुक्त न्यून पद और अनमिहित, अक्रम और विधि अयुक्त दोपा म दिखने वाले साक्य के आभास को शास्त्रीय रीति से समझाकर इनके लक्षणो की विशेपताओ को स्पष्ट किया है। इसके अन तर कवि ने केशव की कविप्रिया क १७ दोपा के साथ अपने वर्णित १७ दोपो को रखकर केवल नामो का ही भेद मात्र लिखा है। कवि लिखता है—

नाम भेद करि ही जुदे दोखत हैं ये जान।
इन ही मे सब मिलत हैं सो अब करौं बखान ॥१०॥

षष्ठ क्राति म दूपणोद्धार का वणन है। श्रुति कटु दोप रौद्र वीर बीभत्स, शा त रसा म गुण है। नीरस वणन म श्रुति कटु न दोप है, न गुण। जिसका दूसरा नही हो, वहाँ भी श्रुति कटु दोप नही होता। अप्रयुक्त व निहिताथ यमक और श्लप म गुण बन जाते हैं। काम क्रीडादि म लज्जा अश्लील दोप गुण हैं। ग्लानिदोप शान्त औ वीभत्स म ग्राम्य दोप ग्रामीण की उक्ति म या ग्रामीण के प्रति उक्ति म न्यून दोप दुख और मोह म, अविश पद दोप भीत और उत्साही वक्ता म अप्रतीतत्व दोप शास्त्र क ज्ञाता म कथित दोप (१) विहित कथन म, (२) विषाद म, (३) लाटानुप्रास म, (४) विस्मय म, (५) क्रोध म, (६) दीनता म (७) विधि अलकार म (८) भय म, (९) प्रसादन म (१०) मोद म, (११) निश्चय म (१२) आदर म, (१३) यमक म, (१४) दया म दोप नही कहाते। इसी प्रकार कवि ने अन्य दोपों के गुण स्थानों का काव्य प्रकाश, कविप्रिया बिहारी सतसई, सप्तम क्राति म शेष सम्बन्धी शकायें उठाकर उनका निराकरण किया है। कवि ने कुलपति मिश्र के रस रहस्य के प्रश्न को आरभ म इस प्रकार उठाया है—

इस रहस्य मे प्रश्न ये नयारथ है शुद्ध।
न्यून भग्नप्रक्रम सखो अधिक पद जु अविरुद्ध ॥२॥

हतव्रत टीका आदि मे कहत कनवट्ठ दोस।
मात्रा हतव्रत जो लिख्यो सो वह जानि अदोख ।।३।।
अभव मत मत टीका विष न्यून दोस पहिचान।
अफस दूजो जो लिख्यो विधि अजुक्तसो मान ।।४।।
विधि अनुवाद अजुक्त के लक्षन लिरकें उक्त।
उदाहरन विधि कौन दिय दिय अनुवाद अजुक्त ।।५।।

कुलपति के उदाहरण—

बल सो नैनन की झलक मीन किये मदहीन।
बदन कमल तेरे अली चन्द कमी नाकीन ।।

की ग्वाल न इस प्रकार आलोचना की है— या क आगे लिख्यो चन्द नो कभी ना करिबो नाही सभवत तब लक्षणा करिके जीतिबो जानो तो कछू प्रयोजन नाही। ऐसे लिख्यो सो या दोहा म नयारथ होई नही। यहाँ खासो लक्ष। लक्षना है औ अथ की रीति ही तीन है अभिधा लक्षना, व्यजना। सो यह लक्षना त खासो अय होय है।' इसी प्रकार कवि ने केशव आदि कवियो के दोषो की आलोचना की है। काव्य प्रकाश आदि के सदभ देकर मत की पुष्टि भी की गई है। यह प्रकरण पर्याप्त महत्वपूण है। इसी क्रान्ति म कवि ने माधुय, ओज और प्रसाद गुणो का विशद विवेचन भी किया है। शुद्ध माधुय, शुद्ध ओज मधुरनिष्ठ प्रसाद, आजनिष्ठ प्रसाद और उभयनिष्ठ प्रसाद के कवि ने बडे स्पष्ट और स्वच्छ उदाहरण दिये है। गुण सम्बधी सभी सम्भव शकाओ का कवि ने समाधान प्रस्तुत किया है।

सक्षेप म यह यह ग्रथ अपने प्रकार का अनूठा ग्रथ है जिससे कवि का शास्त्र ज्ञान, बहुज्ञता, और आलाचना शक्ति का परिचय मिलता है।

१५ रसरग[१]—खोज रिपोट १८०५ ११, १६३२ ७२ डी पृष्ठ १५४ ब्रज भाषा रीतिग्रथ कोश—(हस्तलिखित) पृ० ६३।

रीति ग्रन्थ—कवि की यह एक और प्रौढ लक्षण रचना है। हमने सेठ कन्हैयालाल पोद्दार मथुरा की प्रति से अध्ययन प्रस्तुत किया है। यह प्रतिपूण है और स्वय सेठ जी द्वारा स० १६२२ वि० की प्रति म स० १६६० वि० म अनुपलिपि की हुई है। इसम आठ उमग (अध्याय) हैं जिनम ३८० दोहा, ३७० कवित्त, ६० सवया—कुल ८१० छन्द लिये है।

---

१ प्राप्ति स्थान—१-नवनीत पुस्तकालय मथुरा। २-काशी नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी। ३-सेठ कन्हैयालाल पोद्दार पुस्तकालय मथुरा स० १९२२ की प्रति। ४-केप्टेन शूरवीरसिंह एम० डी० एम० अलीगढ का निजी सग्रह। प्रथम पृ० का छायाचित्र देखिये परिशिष्ट चित्र सं० ८।

का भेदों महित विविधि मान वणन प्रस्तुत किया है। इस वणन म रसिकानन्द का नायिका वणन शैली से कुछ अधिक प्राजलता दृष्टिगोचर होती है। भेदो म कोई भिन्नता नही है। अपने अन्तिम ग्रथ 'साहित्यानन्द' का म दभ देत हुए कवि परकीया म मान की विद्यमानता नहीं मानता—

परकिय मे नहि मान जिमि, तिन हेतु न विस्तार।
ग्रथ साहितानन्द मे लखि रिझिहैं रिझवार ॥९४॥

ततीय उमग—परकीया लक्षण छन्द सख्या ७४। परकीयाओ के अन्तगत कवि ने ऊढा, अनूढा सुखसाध्या, दुखसाध्या असाध्यासाध्या, वहु कुटुम्बिका, वहु रक्षिता, विदग्धा अनिका त्था भूत गुप्ता भविष्य गुप्ता वत्तमान गुप्ता, वाक विदग्धा स्वयदूतिका क्रिया विदग्धा लक्षिता अनुसना मुदिता, गणिकादि के विस्तृत लक्षण और लक्ष्य लिख कर इन के भेदो की स्थूल गणना इस भाति कराई है—

परकीया के भेद गनि ऊढ़ अनूढा होय।
सुख साध्यादिक तिहुन म तिगुने करि षठ होय ॥६७॥
सभवा पाचन म मिल, अभया द्वै बिन मूल।
सात जुदे षट प्रथम के त्रोदस विधि के थूल ॥६८॥

चतुथ उमग—नायिका भेद म स्वकीया के व्यापक भेद अवस्था करि (छ०स० १११) कवि ने स्वकीया म अ य सुरति दुखितादि १८ भेदों के नामोल्लेख[1] करके विस्तारपूवक इन के लक्षण लक्ष्यो का निदशन कराया है। आगे अ य सभाग दुखिता वक्रोक्ति गविता के तीन तीन भविष्यत्पतिपतिका गच्छत्पतिपतिका प्रोषितपतिका खण्डिता, कलहान्तरिता विप्रलब्धा उत्कण्ठिता वासकसज्जा स्वाधीन पतिका, आगमिष्यतपतिका, आगच्छतपतिका आगत पतिका के पाच पाच तथा अभिसारिका के ८ भेद और किये गये हैं।

पचम उमग—सखा दूती दशन वणन, छ द सख्या ३२। इस छोटे स अध्याय म कवि ने अपने पूव ग्रथ रसिकानन्द के समान ही सखी दूती कर्म चार बताकर (१) सघट्टना और (२) विरह निवदिता के लक्ष्य सहित लक्षण प्रस्तुत किय हैं। भानुदत्त के अनुसार दशन तीन प्रकार के हैं—(१) स्वप्न, (२) चित्र और (३) साक्षात। पर भाषा म श्रवण दशन भी कवि ने परम्परा स चौथा दशन भेद गिना है।[2]

षष्ठ उमग—दीपक—सयोग शृङ्गार भेद, छन्द सख्या ८१। इसम

---

१ रसरग—४।१ से ४। २ वही, ५।२८।

सयोग और वियोग अथवा विप्रलम्भ दो भेद बताकर सयोग के लीलादिक दस हावो का विस्तृत वणन किया गया है।[1] वियोग शृङ्गार पक्ष म प्रवास, पूर्वानुराग (श्रुत्वा और दृष्ट्वा) मान विरह, दवयोगात विरह आदि के साथ निम्नाकित दसो वियोग दशाओं का वणन है—

दसाभुदस बरनन करत, सुकवि वियोग मझार ।
अभिलाषा चिंता समति पुनि गुनिकथन उचार ॥५९॥
कहि उद्वग प्रलाप पुनि है उनमाद जु व्याधि ।
जडता मान बखानहीं, जिनकी बुद्धि, प्रसाधि ॥६०॥

सप्तम उमग—नायक, सखा एव उद्दीपन वणन, छद सख्या १३४। नायक और सखाओ के भेद उपभेद कवि ने अपने पूव रचित ग्रन्थ रसिकानन्द के समान ही गिनाये हैं।[2] षड्ऋतु वणन मे क्रमश बसन्त, ग्रीष्म, पावस नरद हेमन्त और शिशिर के ६३ कवित्त सवैया दिये गये हैं। उद्दीपन के उपकरण वही प्राचीन हैं। उदाहरण विनद हैं।

अष्टम उमग—हास्यादि अष्ट रस वणन, छन्द सख्या ७५। शृगार रस का कवि पीछे विशद वणन कर ही चुका है। यहाँ शेष आठों रसो का विवेचन मिलना है। स्वनिष्ठ परनिष्ठ केवल ६ रसो में ही मिलता है शेष दो म परनिष्ठ होत हैं—

हास्य आदि बसु रसन मे, षट स्वनिष्ठ परनिष्ठ ।
रौद्र वीररस ये दुहू हैं केवल परनिष्ठ ॥१॥

ग्वाल ने यहाँ परम्परा का ही अधिक निर्वाह किया है। रसिकानन्द के हास्य, सख्यादि के वणन को छोड दिया गया है। वीर रस के यहाँ ४ ही उपभेद मिलते हैं। साहित्यानन्द म बढकर य ६ हो गय हैं।

१७ साहित्यानन्द

ग्वाल का अन्तिम रीति ग्रन्थ—यह ग्रन्थ कवि का अन्तिम और सबसे प्रौढ रीति शास्त्रीय साहित्य ग्रन्थ है, इसम किसी विवाद को स्थान नहीं है। इसमे कवि के प्रगाढ पाडित्य का परिचय मिलता है। कवि न सस्कृत और भाषा के प्रमुख आधार ग्रन्थो का गूढ अध्ययन और मनन किया था। रसिकानन्द म इसकी प्रारम्भिक झाँकी मिलती है। तत्पश्चात् नखशिख, कवि दपण, रसरग और बलवीर विनोद म उसकी प्रतिभा क्रमश प्रौढ से प्रौढतर होती चली गई है। साहित्यानन्द के निर्माण तक उसके ज्ञान की परिधि म पर्याप्त

१ रसरग—६।६ ७।   २ वही, ७।२ ३।

विस्तार-वृद्धि हुई है। भाषा और शैली में परिपक्वता, विचारों में स्थिरता और अभिव्यंजना शिल्प में स्पष्टता एवं गूढ़ता परिलक्षित हुई है। विषय विवेचन गत आलोचना में भी गांभीर्य दृष्टव्य होता है। ग्रन्थ के विषय में पंडित ओंकार नाथ मिश्र की मान्यता है कि 'यह हिन्दी साहित्य के रीति ग्रन्थों में सबसे बड़ा है।'[1] हमने भी ग्रन्थ के अध्ययन से यही मत स्थिर किया है कि यह तत्कालीन साहित्यशास्त्र का सबसे बड़ा और प्रामाणिक ग्रन्थ है।

कलेवर—ग्रन्थ कलेवर विशाल है। इसको सोलह स्कन्धों में विभाजित किया गया है। जिन में से ग्यारह स्कन्ध ही उपलब्ध होते हैं। पंचम से नवम स्कन्ध तक बहुत खोज करने पर भी उपलब्ध नहीं हुए। प्राप्त प्रति में कुल मिलाकर २४४३ छन्द,५६७ गद्य टीका और वार्ताएँ तथा ३८२मानचित्र (*Diagrams*) हैं। छन्दों मे २१३७ दोहे १३० वर्ण वृत्त, ८६ कवित्त और १३ सवैया सम्मिलित हैं। वृत्ति विनोद लक्षणा व्यंजना और अलंकार भ्रम भंजन नामक तीन ग्रन्थ जो पृथक् पृथक् मिलते हैं और अब तक जिनका स्वतन्त्र अस्तित्व माना जाता रहा है साहित्यानन्द के ही क्रमशः प्रथम एकादश और षोडश स्कन्ध हैं। ग्रन्थ मे भरत मुनि कृत नाट्य शास्त्र, राजशेखर कृत काव्य मीमांसा, मम्मट कृत काव्य प्रकाश, विश्वनाथ कृत साहित्य दर्पण जयदेव कृत चन्द्रालोक, भानुदत्त कृत रस तरंगिणी और रस मंजरी रूप गोस्वामी कृत भक्ति रसामृत सिन्धु और उज्ज्वलनीलमणि अप्पय दीक्षित कृत कुवलयानन्द वात्सायन कृत कामसूत्र, कोकोक्क कृत रति रहस्य आदि रीति के प्रसिद्ध आधार ग्रन्थों को आधार मानकर लक्षण विवेचन किया गया है। लक्षणों में कवि ने सर्वत्र अपने रचित छन्द ही रखे हैं पर आधार ग्रन्थों की छाया से भी कहीं-कहीं वह बच नहीं पाया है। लक्षण कथन में दोहा शैली अपनाई गई है। अधिकांश उदाहरण कवि ने अपने पूर्वरचित ग्रन्थों के अथवा नये बनाकर रखे हैं। पर अपने पूर्ववर्ती केशव बिहारी मतिराम देव कुलपति मिश्र, कवीन्द्र जसवंतसिंह भूषण दास, दूलह पद्माकर आदि के भी प्रसिद्ध ग्रन्थों के कतिपय लक्ष्यों को सादर उदाहृत किया है। संस्कृत के कुमार सम्भव कर्पूर मंजरी सवंत नाटक वीर चरित्र नाटक, रत्नावली आदि की भी प्रासंगिक चर्चा है। शब्द व्युत्पत्ति में अमरकोश और अनेकार्थ मंजरी का आधार लिया गया है।

---

१ ओंकारनाथ मिश्र—ग्वाल कवि , सम्मेलन भाग २१, २००१ वि०

प्राप्ति स्थान—यह ग्रन्थ अति दुष्प्राप्य रहा है। इसकी एक प्रति मथुरा के सुखदेव घटवारिया के पास कविवर श्री नवनीत चतुर्वेदी ने देखी था। पर उसका पता आज तक नही चला कि कहा गई। एक प्रति श्री ओंकार नाथ मिश्र ने राजा श्रीप्रकाश सिंह, मल्लापुर विसवा (सीतापुर) के निजी पुस्तकालय म देखी थी, जो अब वहा उपलब्ध नही है। एक प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के पोथीखाने मे है, जिसे हमने देखा है। इसम पचम से नवम स्कन्ध तक के पृष्ठ नहीं हैं। चतुथ स्कन्ध म केवल ३८ छन्द हैं। इसकी एक अति प्राचीन जीणशीण प्रति वाराणसीस्थ आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के निजी पुस्तकालय म है। इस अन्तिम प्रति से ही हम ने अध्ययन प्रस्तुत किया है। खोज म इस ग्रन्थ की कोई अन्य पूण प्रति हमारे देखन सुनन म नहीं आई।

रचनाकाल—ग्रन्थ म इसका रचनाकाल क्वार शुक्ला १५ स० १६०८ वि० दिया है।

५ ० ६ १ ५ १
सवत् सर नभ निधि ससी क्वार सुकुल सर चद।
सादिन प्रगट भयो सु यह ग्रन्थ साहितानन्द ॥७॥

सर=५, नभ=०, निधि=६, ससी=१ सर=५ चन्द=१ अकानाम वामतो गति नियम स, उक्त तिथि निष्पन्न होती है। इसकी रचना का आरभ स० १८०४ वि० से पूव ही हो गया था, जैसा कि रसरग ग्रन्थ की द्वितीय उमग के मान वणन प्रसग मे इसके नामोल्लेख सन्दभ स ध्वनित होता है।[1] रसरग का रचनाकाल वैशाख शुक्ला पचमी स० १६०४ वि० है। दोनो ग्रन्थो के निर्माण काल का मध्यान्तर १ वष ५ माह १० दिन है। परकीया मानवणन साहित्यानन्द के चतुथ स्कन्ध तक नहीं आता। इससे निष्कष निकलता है कि रसरग पूण होने तक साहित्यानन्द के कम से कम ४ स अधिक अध्याय लिखे जा चुके थे। इससे हम इस परिणाम पर पहुचते हैं कि इस वहत् ग्रन्थ को पूण करन म कवि को कम स कम २ वष का समय लगा होगा।

वण्य विषय प्रथम स्कन्ध—'श्री गणेशाय नम। अथ साहितानन्द लिख्यत। मगलाचरण कवित्त" के उल्लेख के साथ कवि राधिका और जगदीश्वरी देवी की स्तुति म एक श्लिष्ट कवित्त आशीर्वादात्मक मगलाचरण के रूप म देकर ग्रन्थ का श्रीगणेश करता है।[2] मगलाचरण की शास्त्रीय गद्य टीका

१ ग्रन्थ साहितानन्द मे सखि, गिनिहैं रिसवार—रसरग, २।१५।
२ देखिये परिशिष्ट भाग—चित्र सख्या ९।

के उपरान्त कवि अपना संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करके ग्रन्थ के नाम और महत्व का वर्णन प्रस्तुत करता है—

या साहित्यानन्द को, सुरतरु के सम हेर।
और ग्रन्थ के पढ़न की चाह रहै नहिं फेर ॥४॥
पढ़ साहितानंद के फल द्वै मिलत सुमुक्ति।
साहितानंद मिल सब, हरिगुन ते हैव मुक्ति ॥५॥

कवि की इस गर्वोक्ति में उसके आत्म विश्वास का आभास मिलता है।

अन्य रीति कवियों की भांति ग्वाल ने भी राधा कृष्ण का गुणगान करने का दावा किया है। अनुचित वर्णनों के लिये उसका कहना है कि उनमें अन्य संसारी नायक नायिकाओं को माना जाय।

पिंगल मतानुसार वृत्ति निरूपण इस स्कन्ध का वर्ण्य विषय है। लक्षण और लक्ष्य से पूर्व कवि दर्पण की भांति कवि ने लक्षण के लक्षण और लक्ष्य के लक्षण लिखे हैं। पिंगल की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—

प्रथम वन ते पिङ्है गन ते गुरु लघु रासि।
तातें तिनकों जोरिकर, तातें पिंगल भाषि ॥१६॥

छन्द के बिना कविता नहीं बनती और प्रस्तार के बिना छन्द सम्भव नहीं। अतः छन्द लक्षण लिखकर प्रस्तार का विस्तृत परिचय लिखा गया है। छन्द वेद के पडंगों में से एक है। यह मात्रिक और वर्ण वृत्त दो प्रकार के होते हैं। इन दोनों में षट प्रत्यय ही प्रधानता रखते हैं।

छंद बिस्तार जु विविध विधि, जाते जाने जाय।
प्रत्यय सो सरपादि लखि कविपहित हरसाय ॥२२॥

कवि ने प्रमुख प्रत्ययों की संख्या ६ ही मानी है—(१) प्रस्तार, (२) उद्दिष्ट (३) नष्ट (४) मेरु, (५) पताका और (६) मर्कटी। इन्हीं में (१) सूची (२) पाताल और ( ) मेरु सम्मिलित कर लिए जाय तो प्रत्ययों की संख्या नौ हो जाती है। कवि ने सूची को उद्दिष्ट और नष्ट का और पाताल को मर्कटी का अंग माना है।

ये नो हैं अरु पिंडज सु, दसहू होत सुभाव ॥१।२७।

पर पिंडज वास्तव में कोई स्वतन्त्र प्रत्यय नहीं है, बल्कि मर्कटी का ही एक अंग है—

---

१ निरुक्त कल्पो व्याकरण निरुक्त छन्दो ज्योतिष मिति षडंगानि'—साहित्यानन्द में उद्धृत।

पिंड कम ते पिंड ही, मालुम होत न और ।।१।२८ ।
ह्व न सक्त प्रत्यत जु यों लखिये कवि सिरमौर ।।१।२९ ।
है मर्कटि को अग यह ताते जुदो नहिं होय।
या प्रकार त मुख्यता षट प्रत्यय ही जोय ।।३०।।

इस विषय म कवि की द्वितीय युक्ति यह है कि वेद के ६ अग हैं और छन्द भी वेदाग हैं अत उसके भी ६ उद्योत है। अत कारण काय सम्बध स ६ ही प्रत्यय मानना उचित है।[1] इसके पश्चात् जिन शीर्षकों का विवेचन इस स्कन्ध म प्रतिपादित है व क्रमश इस प्रकार हैं—मात्रा, नाम, लघु और गुरु के लक्षण और लक्ष्यरूप, मात्रा प्रस्तार विधान, मात्रा प्रस्तार बढ़ावन विधि, सूची लक्षण षटमात्रा सम और मष्ट मात्रा प्रस्तार स्वरूप मात्रा पाताल स्वरूप मात्रा मेरु लक्षण षटमात्रा स्वरूप, एकावली मेरु लक्षण और स्वरूप मात्रा मेरु नाम प्रयोजन कथन षटमात्रा का षट मेर स्वरूप, मात्रा पताका लक्षण, षटमात्रा पताका स्वरूप, मर्कटी लक्षण, मात्रा गुण, अकरादि क्रम स अरिल्ल से लेकर हनूफाल तक के ७६ मात्रिक छन्दों और उनके विविध रूपों का वणन और प्रस्तार विधि। लक्षण कथन दोहा शैली म दिये है। दोहे की प्रथम पक्ति म लक्षण और दूसरी म उदाहरण हैं। स्कन्ध मे कुल ३८० छन्द हैं जिनम दोहा की सख्या २६७ कवित्त और सवैयो की सख्या क्रमश ७ व २ है। ४४ गद्य टीका वार्ताओं और २३ मानचित्रो द्वारा विषय को सरल और बोधगम्य बनाने की चेष्टा की गई है। आर्या के प्रस्ताररूप ८० और दोहा के १६०, ४५५६२५ प्रस्तार लिखे गये है। छप्पय क ७१ दोहा क २३ और सुगति दोहा के २, ६२ ४८, ४६४ भेद गिनाये गय हैं। स्कन्ध की समाप्ति इस प्रकार होती है—

इति श्री साहितानद ग्वाल कवि विरचित पिंगल मतातर मात्रा छन्द वनन प्रथम स्कन्ध ।।१।।"

द्वितीय स्कन्ध—रसिक बिहारीलाल श्रीकृष्ण की स्तुति म एक दोहा देकर कवि गणो का वणन प्रस्तुत करता है क्योकि वणवृत्तो के लिये गण विचार अनिवाय है।[2] गण तीन वण का होता है। एक कवित्त द्वारा गणो क

---

१ दुतिय जुक्ति यह जानिय वेद अगषट् होत ।
छदहु है वेदाग यह, याते षट् उद्योत ।।१।३१ ।
कारन को कारज विस कछु न कछू गुन होत ।
हेतु काल सबधते षट् प्रत्यय कविगोत ।।१।३२ ।

२ साहित्यानन्द २।२ ।

लक्षण लक्ष्य बताये गय हैं। एक मानचित्र बनाकर आठो गणो के नाम, स्वामी, फल, मास, पक्ष, तिथि, वार नक्षत्र, वण वस्त्र, रग भूषण, कुल माता, पिता, और लोको के नामोल्लेख किये गय है। ग्वाल ने १७ दग्धाक्षरो का उल्लेख किया है, जिनका कविता म प्रयोग करना अशुभ फलदायक बताया गया है। शास्त्र दवता भगवान और भद्र रसो क प्रसग म दग्धाक्षरो के प्रयोग की स्वीकृति देता है। सुर हरि भद्र रसादि म इनको कछु न विवाद।' सुअरो का काव्य म प्रयोग सुखदायक और विविध शुभ फलदायक है। कवि का मत है कि छ दो क नियमो म वधकर गुरु लघु और लघु गुरु भी हो जात हैं—

लघु गुरु गुरु लघु होत है छ द नियम बस मान।
पिंगल मत यह है सही प न अवाक आन ॥२।१७।

वण वृत्त तीन प्रकार के बताये गये है १–सम, २–अद्ध मम और ३–विषम।[1] तीनो प्रकार के भेदो के लक्षण लक्ष्य लिखकर कवि इनकी सनाओ क लक्षण लक्ष्य लिखता है। सम और विषम वर्णों की प्रस्तार विधि और प्रस्तार स्वरूप पर विस्तारपूवक विचारपूण विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस स्क ध के वण्य विषय क अन्य शीषक क्रमश निम्नलिखित हैं—समवत्तिक सख्या विधि, विषम वत्तिक सख्या विधि, प्रत्यय वणन, वण प्रस्तार विधान, वण सूची और उसका स्वरूप, वण पताका लक्षण, वर्णोदिष्ट का विचार लक्षण और स्वरूप, वण नष्ट विधि लक्षण और स्वरूप वण मरु विधि, लक्षण और स्वरूप एकावली मेरु विधि लक्षण और स्वरूप मरू प्रयोजन पट वण मेरु एकावली स्वरूप, पट वण मरु प्रयोजन स्वरूप, पटवण खड मरु स्वरूप, वन पताका विधि लक्षण एव स्वरूप वण मकटीकी विधि लक्षण एव स्वरूप, विविध वण प्रस्तार की सब जोड विधि।

तत्पश्चात एक वण की उक्ता सज्ञा और श्री छन्द से आरभ करके वत्तीस वर्णों की जलतरण सना तक का दोहो म वणन किया है। प्रत्येक सज्ञा के छन्द लक्षण और उदाहरण भी दिये गये हैं। वत्ति अनुसार १३० वणवत्तो के लक्षण और उदाहरण लेकर इस स्कन्ध का समापन किया गया है।

तृतीय स्कन्ध—कृष्ण की स्तुति म एक दोहा लिखकर कवि अपनी शैली को गद्य म स्पष्ट करता है। (वार्ता) ग्रन्थ म लक्षन लक्ष दोहान म करेंगे वारवार दोहा सब्द न लिखिवे हेत ग्रन्थ म जनायो है और कहूँ कहूँ और छन्द होयगो ताको वस ही नाम लिखेंगे।

१ साहित्यानन्द २।१८।

स्कन्ध का वर्ण्य विषय रस का जनक है भाव। अत कवि पहले भाव का लक्षण इस प्रकार लिखता है—

'मन तें होत विकार जो सो कहियत है भाव।' ३।३।

'भाव का सम्बन्ध तन से है यह प्रश्न उठाकर कवि कहता है कि चक्षु, कान, रसना नाक और त्वचादि इन्द्रिया तो जड हैं पर ये मन के संयोग से ही चेतन बनती हैं तथा अपने अपने स्वाद प्राप्त करती हैं। दूसरा प्रश्न एक और उठा कि जब भाव मन मूलक है तो शरीर के आठ सात्विक भाव क्यो कहे गये हैं? इस शका का समाधान कवि ने इस प्रकार किया है—

उत्तर याको है जु यों मन मे ही सचार।
ते तेतीस मन के कहे, सुकविनु कर सुविचार ॥३।८
मन सजोग करि तन विस, जे सचरत सुभाव।
ते तन सचारी कहे सात्विक आठ गनाव ॥३।६

तन सचारियो से सिद्ध होता है कि मन के विकार ही भाव हैं। भाव का दूसरा प्रसिद्ध लक्षण इस प्रकार दिया गया है—

रसहि करें अनकूल जो यते हैं जु विचार।
भाव कहत तासो सुकवि, बुधजन करौ विचार ॥

रस के प्रतिकूल कविकारो को कवि भाव नही मानता।[1] उत्साह शोक क्रोध निर्वेद आदि मनोविकारो की प्रस्फुरण प्रक्रिया का विस्तारपूर्वक विवेचन करके कवि अपना मन स्थिर करता है कि कोई भी विकार वास्तव मे रस प्रतिकूल नही होता। जो विकार अवसर पाकर जिसी परिस्थिति मे उत्पन्न होता है वह उसी प्रकार के रस के अनुकूल बन जाता है। अत रस प्रतिकूलक भाव का अस्तित्व ही नही है।[2] भावो में रसानुकूलता की ही व्याप्ति है।

भाव के ५ भेदो का ग्वाल ने इस प्रकार क्रम रखा है १–विभाव, २–स्थायी भाव, ३–सात्विक भाव, ४–सचारी भाव तथा ५–अनुभाव।

विभाव शब्द की परिभाषा करते हुए आलबन और उद्दीपन, इसके दो भेद किये गये हैं। रति, हसी, शोक, क्रोध, उत्साह, भय ग्लानि, विस्मय और निर्वेद स्थायी भावो के इन ९ भेदो के लक्षण और लक्ष्य श्रवण कर और देखकर दो-दो उपभेदो के साथ लिखे गये है। उत्साह के युद्ध, दान और दया नामक तीन उपभेद किये हैं। आठ सात्विक भावो के पाँच कर्मेन्द्रियो के सम्बन्ध, व्यवधान और प्रत्यक्ष इन तीन प्रकार से किये गये २४ भेदो को अमान्य घोषित,—

१ साहित्यानन्द—३।१२। २ वही, ३।२३ २४। ३ वही, ;

किया है क्योंकि वह व्यवधान और प्रत्यक्ष को भी सम्बन्ध ही मानता है।[1] ग्वाल ने रस तरंगिणी के आधार पर 'जम्भा' नामक नवां सात्विक भाव भी माना है[2] जिसका लक्षण इस प्रकार किया है —

मुख छिनेक लो खुलि रहै, मुहैं जु मिट विकार।
जम्भा सात्विक भाव सो कविजन करत उचार। ३।१३२।

संचारी की परिभाषा कवि इस प्रकार बनाता है -

मन सजोग करि तन बिस, जो सचरत सुभाव।
ते तन सचारी कहैं सात्विक आठ गनाव ॥३।७।

भरत मुनि के अनुसार कवि ने ३३ संचारी और रसतरंगिणी के आधार पर छल को भी चौंतीसवां संचारी माना है—

विभिचारी तेतीस ये, भाषे भरत प्रभान।
चौंतिसवें को भेद जो, सो अब करत बखान ॥३।३०६
और कह्यो नूतन सु इक छल संचारी जोइ।
रस तरंगिनी कारन, थापित कीनो सोइ ॥३।३०७

स्मृति संचारी के दो भेद १-प्रतिभिज्ञा और २-सुमिरन ज्ञान के आधार पर और किये है।

सस्कार ते जनित जो ज्ञान जु स्मृति द्व रीति।
प्रतिभिज्ञा इक जानिय सुमिरन बहुरि सुनीति ॥३।२६४

इनका लक्षण इस प्रकार किया गया है—

है अद्रिष्ट ते ज्ञानजो, सो प्रतिभिज्ञानाम।
द्रिष्टित की करिये जु सुधि सुमिरन सो बुधिधाम ॥३।२९५।

ग्वाल ने वितर्क के चार और भेद किये हैं —

प्रथम विचारात्मक कहैं, ससयात्मक केर।
अध्यवसायत्मक त्रतिय विप्रति प्रत्यात्मक हेर ॥३।२९६।

संचारी भावों की २० प्रकार की दृष्टि हैं। ३४ संचारियों की २० दृष्टियां क्यों मानी इसका कवि कोई समाधान नहीं कर सका है।[3]

भाव ध्वनि में, देवरति और राजरति दो भेद माने हैं। विरूप संधि के चार भेद स्थापित किए हैं—भावोन्य भावसंधि स्वरूप विरूप संधि

---

१ साहित्यानन्द—३।९३। २ वही ३।१३१।
३ संचारी चौंतीस की चौंतिस चहिय द्रिष्टि।
किहि कारन बीसहि लिखीसो न लख्यौ कछु इष्ट ॥३।३१८।

भावशवलता, भावशान्ति, भावाभास। विवेचन स्पष्ट और सुलझा हुआ है। कवि ने स्थायी भाव शोक मद हप आवेग, जडता, विपाद और निद्रा के लक्षणो को उनके पूरा रूप में ग्रहण करने म अपनी असहमति प्रकट की है और सूक्ष्म परीक्षण के उपरान्त उनके नवीन लक्षण निर्माण किये हैं। कवि ने अपने पूव रचित लक्षण ग्रन्थ रसिकानन्द, रसरग, बलवीर विनोद के अतिरिक्त बिहारी क लक्षणो को भी उदाहृत किया है। यह उपयोग कवि ने अपने नवीन बनाय ग्रन्थो की सम्पुष्टि म किया है।

चतुथ स्कन्ध—रस की परिभाषा भरतमुनि के नाट्यशास्त्र के आधार पर प्रस्तुत की गई है।[1]

कहि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचार।
इन करि इनकी पूणता सोरस भरत उचार ॥४।२।

ग्वाल ने वेद की उक्ति रसो व स' के अनुसार रस को ब्रह्म के समान माना है। रस क लौकिक और पारलौकिक दो भेद मानकर अलौकिक के तीन भेद किय हैं—

ह जु अलौकिक रसत्रिधा, स्वाप्निक प्रथमहिं हेर।
मानोरथिक वथानिय, औपनायिकहिं फेर ॥४।६।

औपनायिक रस काव्य, पदाथ और चमत्कार म होता है। पूण रस को कवि ने धम अथ काम और मोक्ष का हेतु माना है।[2] ग्वाल नी मान्यता है कि शृङ्गार स गोपियो, की मधुर स सूपनखा की, रौद्र से रावण की, युद्ध वीर रस से मधु कटभ की और भयानक रस से कस की मुक्ति हुई। यहा प्रश्न होता है कि वेदों क अनुसार ज्ञान क बिना मुक्ति नही हो सकती।[3] इसका समाधान कवि इस प्रकार करता है।

अन्य ज्ञान के ब्याज तें वत्ति सु एकाकार।
सोइ ज्ञान स्वरूप है, इक मे ह्वै बहसार ॥४।१४
येकाकार सुवत्ति कौं ह्व करि का हू मांहि।
सब मे व्यापक ब्रह्म है ब्रह्म मुक्ति दो नांहि ॥४।१६
सव निपिलमिदं ब्रह्म 'इति श्रुति'

---

१ तत्र विभावानुभाव व्यभिचारि सयोगाद्रस' निष्पत्ति—नाट्यशास्त्र काव्य माला ४२, सन् १९४३ ई०, पृष्ठ ९३।

२ पूरन रस जा होत ह, जानहु बुद्धि निकेत।
धम अथ अरु काम पुनि मोक्षसहित सब हेत ॥४।९।

३ 'ऋते ज्ञानान्न मुक्ति' इति श्रुति—वही ४।१३।

कवि ने औपनायिक रस के नाटक मे आठ रस और काव्य मे एक नवा और शात रस माना है। इन रसो मे शृङ्गार सवप्रथम वणनीय है क्योकि इसके स्वामी भगवान विष्णु और अन्य के अधिपति अन्य देवता है। विष्णु से ही सब देवताओ की उत्पत्ति है। अत प्रथम शृङ्गार ही आता है शृङ्गार को रसराज कहा जाता है क्योकि विष्णु सब देवताओ के राजाधिराज हैं।

'शृङ्गार' शब्द की व्युत्पत्ति करके कवि ने इसकी परिभाषा दी है—

'श्र ग' कहत प्राधान्य कों सम ताते आकार।
कहत 'रकार' मनोप कों, अक्षराय उर धार ॥४।३५
'श्र ग' 'आर' की सधि करि, होत तब श्रृ गार।
ह प्रधानता भलीविधि, जिहि मनोज की धार ॥४।३६

अपने कथन के प्रमाण म कवि ने एकाक्षरी कोश का प्रमाण दिया है।

शृङ्गार रस के लक्षण उदाहरण, नायक, नायिका भेद, उनके गुण कम आदि का वणन सविस्तार किया गया है। यह स्कध २२४ छन्द के पश्चात् समाप्त हो गया है। अत कहा नही जा सकता कि शेष स्कन्ध मे और विषय क्या क्या हैं।

स्कन्ध सख्या ८ से ६ तक ग्रन्थ की प्रति म अनुपलब्ध हैं।

दशम स्कन्ध—भगवान कृष्ण के प्रति श्रद्धा व्यक्त करके कवि इस स्कन्ध का वण्य विषय 'हास्यादि रस का निरूपण' आरम्भ करता है। शृङ्गार रस को छोडकर शेष रस यहाँ वर्णित हैं। रौद्र वीर रस को छोडकर शष छहो रसो म स्वनिष्ठ और परनिष्ठ दो भेद अवश्यमेव किये गये हैं। भक्ति रसामृत सिन्धु के आधार पर सख्य दास्य और वात्सल्य रसो का वणन भी यहाँ किया गया है। पूरे ग्रन्थ म लक्षण और लक्ष्य कवि के अपने हैं। पूरे स्कन्ध म १७६ दोहे और ६ कवित्त लक्षण म ही दिये गये हैं।

हास्य रस के स्वनिष्ट परनिष्ठ उत्तम मध्यम और अधम भेदो के आधार पर बारह उपभेद और किये गये है। (१) स्मित (२) हसित, (३) विहसित (४) उपहसित (५) अपहसित और (६) अतिहसित को स्वनिष्ठ और परनिष्ठ म विभक्त करके लक्षण और लक्ष्य किय गये हैं। करुण रस के स्वनिष्ठ और परनिष्ठ केवल दो लक्षण हैं वीर रस को विस्तारपूवक लिया गया है। इसके युद्धवीर, विद्यावीर दानवीर, दयावीर और धमवीर पाच भेद और युद्धवीर के दो और उपभेद विद्वानो ने किए हैं (१) शस्त्र और (२) शास्त्र का व्यवहार करने वाले। ग्वाल कवि शास्त्रवीर को विद्यावीर ही मानन के पक्ष म हैं—

लिखित है। तात्पर्याख्या वृत्ति से दो लक्षणाएँ कही गई हैं। कवि की मान्यता है कि लोगों ने यों लक्षणा के ८० तक भेद खींचतान कर गिना दिये हैं, परन्तु प्रमुखतया लक्षणा चार ही हैं।

ग्यारह स बावन किये जसे न्यारे भेद।
तसे अस्सी लच्छना गनती करत कुरेद॥
उपादान त आदि व साध्यवसाना अत।
चार लच्छना मुख्य मे जानि लेहु बुधवन्त॥
गौनी सुद्धा होत सो इनके आश्रित होत।
इतनो जुदो न हैं सकें वसु ये साफ उदोत॥ ११।४४ से ८६।

ग्वाल ने यहाँ स्वतन्त्रता-पूर्वक अपना मत प्रतिष्ठापित किया है। या उसने लक्षणा के ८० भेदों की गणना भी करादी है।

व्यजना (१) अभिधामूलक तथा (२) लक्षणामूलक दो प्रकार की प्रथमत कही गई है। अभिधामूलक व्यजना के तेरह भेद वर्णित हैं। लक्षणा मूलक व्यजना (१) गूढ और (२) अगूढ दो प्रकार की मानी है। शाब्दी व्यजना का वर्णन बडा विशद है।

आर्थी व्यजना दस प्रकार की लिखित हैं—(१) वक्ता के प्रभाव से व्यग (२) बोधव्य वशिष्टय (३) काकु वशिष्टय, (४) वचन वशिष्ट्य, (५) वाच्य वशिष्ट्य (६) अन्य सन्निधि, (७) प्रस्तावन, (८) देश (९) काल और (१०) चेष्टा। इस विषय में भी कवि ने पाडित्यपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है।

द्वादश स्कन्ध—ग्वाल ने काव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है—

शब्द अर्थ सुन्दर सुमिलि नमिक धन विचार।
छन्दबन्ध बहुचमत्कृत, ताकों काव्य उचार॥ १२।१३।

काव्य पुरुष का शारीरिक निर्माण यह है—

सब्द अर्थ हैं सरीर, सब्द अग्रभाग जाकौ,
अर्थप्रिष्ट भाग बडभाग पहिचानिय।
व्यग ध्वनि जीव अतिस ज व्यग सोई ध्वनि
कहू व्यग कहू ध्वनि यस जीवन जानिय॥
ग्वाल कवि अद्भुत जुक्ति ते वसन वेस,
माधुरज आदि गुन गुन सनमानिय।
भूषन ते भूषन यो काव्य रूप कहियत,
अर्थ व्याधि व्रण कफ दोष दुषदानिय॥ १२।४।

काय रचना का कारण सुचित सुचित का कारण शक्ति है, जो तीन प्रकार की होती है— (१) सत्सग बल, (२) शास्त्र ज्ञान और (३) देव वरदान। काव्य के उत्तम, मध्यम और अधम तीन भेद किये गय हैं। कवि ने यग्य या ध्वनि प्रधान रचना को उत्तम काव्य माना है। उत्तम काव्य लक्षण, व्यग्य लक्षण, ध्वनि लक्षण पर विस्तारपूर्वक विचार प्रस्तुत किये हैं। ध्वनि दो प्रकार की है—(१) अविक्षित वाच्य और (२) विक्षित वाच्य। अविक्षित वाच्य के दो भेद किये हैं—(१) अर्थान्तर सक्रमित और (२) अत्यन्त तिरस्कृत। विक्षित वाच्य के भी दो भेद हैं—(१) असलक्ष्यक्रम और (२) सलक्ष्य क्रम। इनका वणन शब्द शक्ति और अथशक्ति दोनो के सम्बन्ध म किया गया है। एक तीसरे प्रकार की ध्वनि शब्दाथ शक्ति है। शब्द शक्ति से वस्तु आर अलकार ध्वनि बनती है।

अथशक्त्युद्भव प्रसग म अथ शक्ति पहले तीन और फिर बारह प्रकार की कही गई है। पहले प्रकार की (१) स्वत समवी (२) कवि प्रौढोक्ति और (३) कवि निबन्ध वक्ता प्रौढोक्ति हैं। इन तीनो के फिर चार चार भेद किये गये है—(१) वस्तु से वस्तु, (२) वस्तु से अलकार, (३) अलकार से वस्तु और (४) अलकार से अलकार।

विद्वाना ने ध्वनि गिनती का विस्तार १०,४५५ भेदो तक किया है। इस विषय मे ग्वाल का मत है कि यह कथन मात्र ही है। इसमे व्यावहारिकता नहीं है।

सूक्ष्म विवेचन के उपरान्त कवि ने ध्वनि के भेदोपभेद निरूपण रूप म इस प्रकार दिये हैं—अविक्षित वाच्य के दो, विक्षित वाच्य के पन्द्रह, शब्द शक्ति के दो, अथशक्ति के पन्द्रह—इस प्रकार कुल १७ भेद हुए। नौ रसो म इनकी सख्या १५३ होती है।

स्कन्ध म कुल ८६ छद ३० टीका वार्ताएँ हैं। इसमे १ कवित्त, १० सवैया और ३ छप्पय सम्मिलित हैं।

त्रयोदश स्कन्ध—मध्यम काय अप्रधान और अचमत्कृत व्यग्य लिय हुए होता है। इसके आठ भेद हैं। (१) अगूढ (२) इतराग, (३) तुल्यप्रधान, (४) वाच्य व्यग्य, (५) अस्फुट व्यग्य, (६) सदिग्ध व्यग, (७) काकु और (८) असु दर। पुरा पडितों ने ये आठ भेद किये हैं परन्तु ग्वाल प्रथम छ भेदो को ही प्रामाणिक मानते हैं—

जद्यपि पूरब पडितनु लिये आठ ही भेद।
तद्यपि उनें प्रनाम करि, लिखियत षट बिनभेद ॥ १३।१४

अधम का लक्षण इस प्रकार है—

सब्द चित्र या अर्थ को, किंचित व्यंग्य होय।
अधम काव्य तासों कहैं, बहुविधि कीन सोय॥ १३।३६।

शब्द चित्र के अनेक भेद हैं जिनमें से अनुप्रास निष्ठ यमकनिष्ठ, बहिर्लापिका, आद्याक्षरी मध्याक्षरी अन्याक्षरी, अन्तर्लापिका मुक्तावणग्राही जलभिनाथ श्लेषोत्तर, गतागत बंधरचना, मात्रा रहित द्वाक्षरी, एकाक्षरी आदि। अश्वगति, गोमूत्रिका, पदगुप्त कपाटबंध हारबंध, कमलबंध, अष्टदल कमल, त्रिपदी सर्वतोभद्र गतागत छत्रबंध सवैया, चौकीबंध वृक्षबंध समुद्रबंध, चक्रबंध, कामधेनु आदि छन्दों के स्वरूप को मानचित्रों द्वारा भी समझाया गया है। अर्थचित्र के अन्तर्गत उपमा चार विधान और नौ विधान के लक्ष्य लिखकर ६५ वें छन्दो ४८ वार्ताओं २५ मानचित्रों सहित स्कन्ध समाप्त होता है।

चतुर्दश स्कन्ध—गुण रस उत्कर्ष का हेतु है। काव्य में इसका वही महत्व है जो मुख का मनुष्यादि में है।

मुख्य जु रस उत्कर्ष को हेतु स्वरूपा होय।
सूरतादि जो जीव में त्यों गुन काव्य जु जोय॥ १४।२।

माधुर्य ओज और प्रसाद गुण के ये तीन भेद कहे गये हैं। ओज की स्थिति वीर रौद्र और वीभत्स रसों में होती है। ग्वाल ने गुण के छः और भेद किये हैं—(१) शुद्ध माधुर्य (२) शुद्ध ओज, (३) शुद्ध प्रसाद (४) माधुर्य निष्ठ प्रसाद, (५) ओजनिष्ठ प्रसाद और (६) उभयनिष्ठ प्रसाद।

गौड़ी, वदर्भी पांचाली और लाटी चारों रीतियों का ग्वाल ने आनुषंगिक हुआ वर्णन करके अपने नवीन लक्षण लक्ष्य लिखे हैं। कवि शुद्ध प्रसाद और ओज को गौड़ी में शुद्ध माधुर्य को वदर्भी में उभयनिष्ठ प्रसाद को पांचाली में माधुर्य और प्रसाद की स्थिति लाटी रीति में मानने के पक्ष में है।

परुषा, उपनागरी और कोमल वृत्तियों को क्रमशः गौड़ी, वदर्भी और लाटी रीतियाँ कही हैं। परुषा नागरिका मिलकर पांचाली रीति बनाती हैं।

५४ वें छन्द के पश्चात यह स्कन्ध समाप्त हो गया है।

पंचदश स्कन्ध—मम्मटाचार्य ने काव्य दोष की परिभाषा इस प्रकार की है—

। सूत्र ७१। मुख्यार्थ हतिर्दोषो रसश्च मुख्यस्तदाश्रयाद्वाच्य।
उभयोपयोगिन स्युः शब्दाद्यास्तेन तेष्वपि स।[1]

---

१ मम्मटाचार्य—काव्य प्रकाश, प० हरिमंगल मिश्र, काशी सं० १९८३ वि०, सप्तम उल्लास, श्लोक ४९, पृष्ठ १६८।

वाच्य (पद और वाक्य) को सुनने तथा अर्थ और रस को समझने से जो हर्ष होता है उसे जो रोके उसे दोष कहते हैं। मम्मट की परिभाषा को ग्वाल ने सरल करके इस प्रकार लिखा है—

सुनिबे मे जौ समुज में, नमिय हर्ष प्रमान।
तिहि कों जो रोक दुषद, सो दूषन पहिचान ॥ १५।३।

कवि ने स्थूल रूप से दोषों के पांच भेद किये हैं—(१) पदगत, (२) पदांश गत, (३) वाक्यगत (४) अर्थगत और (५) रसगत। ग्वाल ने पद दोष के १३ भेद माने है—(१) श्रुति कटु (२) च्युत संस्कृति, (३) अप्रयुक्त (४) असमर्थ (५) निहितार्थ, (६) अनुचितार्थ, (७) निरर्थक, (८) अवाचक,(९) लज्जा अश्लील, ग्लानि अश्लील, अमंगल अश्लील (१०)संदिग्ध, (११) अप्रतीत (१२) ग्राम्य, (१३) नेयार्थ। मम्मट के १४, १५ और १६ वें क्लिष्ट, अविमृष्ट विधेयांश और विरुद्धमति कृत[1] को ग्वाल पद में न मान कर समास में ही मानता है और उनका पृथक वर्णन करता है[2]। दोषों के नाम संख्या और क्रम कुल मिलाकर मम्मट का ही रखा गया है। ग्वाल के लक्षणों में भी मम्मट की ध्वनि है। वाक्य दोष ग्वाल ने १० माने हैं—(१) श्रुति कटु (२ अप्रयुक्त, (३ निहितार्थ (४) अनुचितार्थ, (५) अवाचक, (६) तीनों प्रकार के अश्लील, (७) संदिग्ध, (८) अप्रतीत (९) ग्रामीण (ग्राम्य), (१०) नेयार्थ। मम्मट ने ये दोष १३ माने हैं[3]। ग्वाल ने उनके क्लिष्ट अविमृष्ट विधेयांश और विरुद्धमतिकृत को वाक्य दोषों में स्थान नहीं दिया।

संस्कृत के २१ वाक्यगत दोषों में से ग्वाल ने केवल १८ ही ग्रहण किये हैं—(१) प्रतिकूल वर्ण (२) हतवृत्त (३) न्यून पद, (४) अधिक पद,

---

१ दुष्टं पदं श्रुतिकटु च्युत संस्कृत्य प्रयुक्त मसमर्थमम्।
निहितार्थमनुचितार्थं निरर्थकमवाचकं त्रिधाश्लीलम् ॥
संदिग्धमप्रतीतं ग्राम्यं नेयार्थमथ भवेत्क्लिष्टम्।
अविमृष्टविधेयांश विरुद्धमतिकृत समासगतभवम् ॥
—वही सूत्र ७२ श्लोक ५० व ५१, पृ० १६८।

२ तीन दोष और हू समास गत होत जानौ।
याते सब इन्हें करें जुदे ही उचार हैं॥ १५।१५।

३ अपास्य च्युत संस्कार मसमर्थं निरर्थकम्।
वाक्येऽपिदोषा सन्त्येते पदस्यांशे ऽपि कचन ॥
काव्य प्रकाश—मम्मटाचार्य, टी० प० हरि मंगल मिश्र, सप्तम उल्लास, श्लोक ५२, पृ० १८४।

(५) कथित पद (६) पतत्प्रकर्ष, (७) समाप्त पुनरात्त, (८) अर्थान्तरैक वाचक, (९) अभवन्मतयोग, (१०) अनभिहित वाच्य (११) अपदस्थ पद (१२) सकीर्ण, (१३) प्रसिद्धहत, (१४) भग्न प्रक्रम, (१५) अक्रम, (१६) अमतपराय (१७) सन्धि (१८) अपदस्थ समास। कवि की मान्यता है कि भाषा म सस्कृत क ये तीन दोष नही आते—(१) उपहत (२) विसग लुप्त और (३) विसधि[1]।

मम्मट के अनुसार कवि ने अर्थदोष २३ ही माने हैं। अन्तर यह है कि कवि ने मम्मट के सनियम परिवृत्त का नाम बदल कर अनियम बल नियम अनियम परिवृत्त का नाम कवि नियम विरुद्ध विध्ययुक्त का विधि अनुक्त विशेष परिवृत्त का विशष म अविशेष, अविशेष परिवृत्त का अविशेष म विशष और प्रसिद्धि विरुद्ध का नाम अप्रसिद्ध कर दिया है[2]। कवि की मौलिक उद्भावना यह है कि अप्रसिद्ध क उसने ६ उपभेद किये हैं—(१) देश विरुद्ध (२) काल विरुद्ध, (३) लोक विरुद्ध, (४) वय विरुद्ध, (५) शील विरुद्ध, और (६) वण विरुद्ध। दूसरी उल्लेख बात यह है कि कवि ने प्राय गद्यांशो में सक्षेप म लक्ष्य समझाये हैं।

रस दोषो का निरूपण सात प्रकार से किया गया है—(१) सचारी नाम दोष, (२) रस शब्द कथन, (३) स्थायी नाम कथन, (४) अनुभाव की कष्टसाध्य व्यक्ति (५) विभाव प्रतिकूल, (६) विभाव की कष्टसाध्य व्यक्ति (७) अनुभाव प्रतिकूल। रस दोषो को मम्मट के अनुसार ज्यो का त्यो ग्रहण किया है जिसे उसने ग्रन्थ म स्वीकार भी किया है[3]। प्रबन्ध दोषो का कथन तो कवि ने ज्यो का त्यो अनुवाद कर दिया है।

---

१ आगे तीन दोष हैं न भाषा उपहत लुप्त,
लुपत विसग औ विसधि ताई मानिये। १५।२३।

२ अर्थोऽपुष्ट कष्टो व्याहतपुनरुक्तदुष्क्रम ग्राम्या ॥
सदिग्धो निर्हेतु प्रसिद्धि विद्या विरुद्धश्च।
अनवीकृत सनियमानियम विशेष परिवृत्ता ॥
साकाङ्क्षोऽपदयुक्त सहचरभिन्न प्रकाशित विरुद्ध।
विध्यनुवादा युक्त स्त्यक्त पुन स्वीकृतोऽश्लील ॥
काव्य प्रकाश—मम्मटाचाय टी० प० हरि मगल मिश्र, पृष्ठ २३२, छन्द सख्या ५५ ५६, ५७।

वार तजलक्ष इन कहे लिखे मम्मट जू,
सोई अवज्यो के त्यों सुजनावत है टेर टेर ॥ १५।१८।

ग्वाल ने अलकार दोष अपने पूर्व कृत रीति ग्रन्थ कविदर्पण के आधार पर लिखे हैं। जो कवित्त और दोहा में हैं।

दूषणोद्धार प्रसंग में कवि ने श्रुतिकटु अप्रयुक्त, निहितार्थ, अश्लील, अप्रतीत, ग्राम्य, न्यूनपद अधिकपद, कथितपद, पतत्प्रकर्ष, समाप्तपुनरात्त अपदस्थसमास, गर्भित, अपुष्टार्थ, व्याहत, संदिग्ध, निर्हेतु आदि गुण दोषों के उदाहरण देकर दूषणों का निरूपण किया है। विषय का उल्लेख विस्तारपूर्वक है। इतर हिन्दी कवियों के ग्रन्थों का भी उदाहृत किया गया है। दोष कहीं-कहीं गुण बन जाता है इसका भी विवेचन है। स्कन्ध के अन्त में रसों का अविरोधत्व विवेच्य है। अनुकरण में दोषप्रदोष बन जाते हैं। इस स्कन्ध में १५६ दोहे और ३१ कवित्त इस प्रकार कुल १८७ छन्द हैं। १८९ टीका वार्ताओं एवं अनेकानेक इतर उदाहरणों से स्कन्ध का कलेवर बना हुआ है।

षोडश स्कन्ध—कवि ने इसका शीर्षक 'अलंकार भ्रम भंजन' लिखा है, जिस से लेखक का प्रमुख उद्देश्य स्पष्ट है। अभी तक इस नाम के ग्वाल के एक बहुचर्चित स्वतन्त्र ग्रन्थ का हिन्दी साहित्य में पृथक अस्तित्व रहा है। किन्तु ग्वाल कृत 'साहित्यानन्द' की उपलब्धि से अब इसका स्वतन्त्र अस्तित्व समाप्त होगया है, जैसा कि इस स्कन्ध की परिसमाप्ति की पुष्पिका से स्पष्ट है[1]। स्कन्ध में ८२५ दोहे और ७५ गद्य टीकाएं हैं। कवि के अलंकार विवेचन का आधार अप्पय दीक्षित के 'कुवलयानन्द' की वैद्यनाथ सूरिकृत चन्द्रिका टीका है। अकारादि क्रम से इन अलंकारों का निरूपण कवि ने किया है—
अनन्वय अक्रमातिशयोक्ति, अत्यन्तातिशयोक्ति आवृत्त दीपक, अप्रस्तुत प्रशंसा, आक्षेप, असंभव असंगति, अधिक, अर्थान्तर न्यास, अविज्ञा, अनुज्ञा, अतद्गुण, अनगुन, अत्युक्ति अनुमान, अर्थापत्ति, अनुपलब्ध, उल्लास, उत्प्रेक्षा, उल्लास, उन्मीलित, उदात्त, ऊर्जस्व, उपभाग, एकावली, एतिह्य, कैतवापह्नुति, कारण माला, कारकदीपक, काव्यार्थापत्ति, काव्यलिंग, गूढोत्तर गूढोक्ति चित्र, चपलातिशयोक्ति छेकानुप्रास, छेकापह्नुति, छेकोक्ति, यमक युक्ति, तुल्ययोगिता, तद्गुण, दीपक दृष्टान्त, निदर्शना, निरुक्ति, पुनरुक्तवदाभास, पूर्णोपमा, पर्यायोपमा, प्रतीप, परिणाम - पर्यस्तापह्नुति, प्रतिवस्तूपमा, परिकर, परिकरांकुर, प्रस्तुतांकुर, पर्यायोक्ति, पर्याय, प्रत्यनीक, प्रौढोक्ति, प्रहर्षण, पूर्वरूप, विहित, प्रतिरोध प्रेयसि प्रतीक्षा प्रश्नोत्तर, वृत्त्यनुप्रास, व्यतिरेक, विनोक्ति, व्याज स्तुति, व्याजनिन्दा, विरोधाभास, विभावना, विशेषोक्ति, विषम, विचित्र,

[1] पुष्पिका—इति श्री साहित्यानंदे ग्वाल कवि विरचिते **शब्दार्थालंकार भंजन** नाम षोडसो स्कन्द ॥१६॥

विशेष, व्याघात, विकल्प, विकस्वर, विषाद, व्याजोक्ति, विवृत्तोक्ति, विधि, भ्रम, भ्रान्तापन्हुति, भेदकातिशयोक्ति, भाविक, मालोपमा, मालादीपक, मिथ्याध्यवसत, मुद्रा, मीलित, यथासङ्ख्य, रसनोपमा रूपक रूपकातिशयोक्ति, रत्नावली, रसवत, लाटानुप्रास लुप्तोपमा, उलालत, लेखा लोकोक्ति सुमिरन, सन्देह शुद्धापन्हुति, सम्बन्धातिशयोक्ति सहोक्ति, श्लेष, समा सार, समुच्चय, समाधि, सभावना सामान्य सूक्ष्म, स्वभावोक्ति समाहित शब्द, सभव ससृष्ट सकर हेतापन्हुति, हेतु।

आरम्भ मे कवि ने व्रज चन्द की वन्दना के व्याज से भूषण अलंकार की वन्दना की है। तदनन्तर अलकार की महिमा स्वर्णालिकारो से कविता कामिनी के अलकारो की विशेषता और फिर अलकार शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए अलकार के शब्द और अर्थ दो भेदो का सुन्दर वर्णन है। उपमान उपमेय की व्याख्या सुन्दर है। समता बोधक, वाचक और धर्म कारण और कार्य आधार और आधेय उपमेय को वर्णनीय वर्ण्य और प्रस्तुत कह कर उपमान को अवर्णनीय अप्रस्तुत तथा अवर्ण्य भी कहते हैं। प्रधान अलकारो की परिभाषा उदाहरण निरूपण करने का ढग विशद और भाषा एव शैली सुबोध है। अलकार का लक्षण इस प्रकार दिया है—

> रस आदिक ते व्यग ते, होय भिन्नता जाय।
> सब्दारथते भिन्न है सब्दारथ के माहि॥ १६।४।
> होय विषय सम्बन्ध करि चमतकार को कम।
> ताहीकों सब कहत हैं, अलकार इमि मन॥ १६।५।

१८ प्रस्तार प्रकाश खो० रि० १६३८ ५५ ए पृष्ठ ८३।

पिंगल का लघु ग्रन्थ—यह मात्रा प्रस्तार विधान प्रस्तुत करने वाला सक्षिप्त ग्रन्थ है, जो साहित्यानन्द के प्रथम तथा द्वितीय स्कन्ध का सार रूप है। इसकी प्रति हमे प० बाल मुकुन्द चतुर्वेदी मथुरा से उपलब्ध हुई है जो १० × ६½" के आकार का १५ पत्रों की है। कुल छन्द सख्या ४० और प्रस्तार रूप चित्र १७ हैं।

रचना काल—ग्रन्थ म इसका रचना काल नही दिया गया। किन्तु इसमे साहित्यानन्द (सवत् १६०५ विक्रमी) के उद्धरणो का समावेश है[1]

१ देखिये साहित्यानन्द का विषमकल सप्त मात्रास्वरूप, पटमात्रामेरु स्वरूप, वर्णन प्रस्तार विधि, पटवर्ण मेरुस्वरूप, पटवर्ण मेरुखडस्वरूप, वर्णपताका वर्णमकटी क्रमश छन्द सख्या—१ ७४, १ ९१ १ ४० से ४६, २ ८७, २ ९६, २ १०७, ३ २४।

इससे इसकी रचना का समय स० १८०५ वि० के उपरान्त का ही निश्चित होता है।

वर्ण्य विषय—जसा कि ग्रन्थ के निम्नलिखित दोहे स स्पष्ट है, इसम विविध छन्द शाखाओ के मूल प्रस्तार का सक्षिप्त वर्णन है—

छन्द जु साखाविविध है, मूल प्रस्तार विचारि।
कह्यौ ग्वाल कवि अल्पकरि, जगदबा, उरधारि॥ ४०।

ग्रन्थ का आरम्भ निम्नाकित दोहे से होता है—

॥ श्री गणेशायनम ॥ अथ प्रस्तार प्रकाश लिष्यते।

श्री गुरुबानी सेसजू, तिन्है बदि सहुलास।
बदी विप्र सुग्वालकवि, किय प्रस्तार प्रकास॥१॥

तत्पश्चात् मात्रा प्रस्तार स्वरूप और उसके भेदो के सक्षिप्त विवरण उदाहरण सहित वर्णित हैं।

१९ गणेशाष्टक प्रथम और २० गणेशाष्टक द्वितीय[1] (हस्तलिखित)

देव स्तुति ग्रन्थ—ग्वाल ने अपने भक्त भावन मे दो गणेशाष्टक लिखे हैं। दोनो म आठ आठ कवित्त हैं।

रचनाकाल—इन दोनों अष्टको मे से कोई भी कवित्त हम ऐसा नही मिला जो ग्वाल के किसी मौलिक ग्रन्थ अथवा इतर सग्रहों म सकलित हुआ हो और इन मे भी रचना काल का कोई उल्लेख दृष्टव्य नही। ऐसी दशा म इनका काल निर्धारण करना कठिन ही है। एसा प्रतीत होता है कि कवि ने अपने कवि जीवन के आरम्भिक दिनो मे आदि पूज्य देवता गणेश की वन्दना म ये १६ कवित्त लिख होग।

वर्ण्य विषय—पहले गणेशाष्टक के आठो कवित्तो म यह पक्ति अन्त मे सवत्र आई है—"रीझैं बारबार बार लावें नहि, एकौ बार, ऐसौ को उदार जग महिमा अपार है।" दूसरे गणेशाष्टक के आठो छदो की अन्तिम पक्तियाँ इस प्रकार आती हैं—

सुजस सुवासन के दायक हुलासन के, नाम के प्रकासन गनेस महाराज हैं।

दूसरे गणेशाष्टक क आरम्भ म 'अथ दुतिय गनेसाष्टक लिष्यत।" लिख कर अन्त म लिखा है—"इति श्री गनेसाष्टक। दोनों म गणेश की पारम्परिक वन्दना के स्वर हैं।

---

१ भक्त भावन—ग्वाल कवि, पत्र सख्या ६० से ७२।

कवि क प्रोन्काल की रचना कहने म कोई सकोच नही होना चाहिए। यहाँ एक कवित्त उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत है —

सद शका चद के समान दुति दमकत, गौर देह उदभव त्रिजग अधार जान।
घनौ घन नाद घोष वारौ घटा सूल तीखौ हल अरु सय सुभ्र मूसल सवायमान॥
ग्वाल कवि कहैं धग धनुष जुमायक सौ, जुक्त कर कमल सुकीजियत है बखान।
सु भ आदि दीरघ सु दत्यन दलन वारो, महासरमुनि जू को ए सें करौनित ध्यान॥

२५ गुरु पचासा—कवि ने ५७ छन्दो के इस काव्य की रचना नाभा नरेश भरपूरसिंह क लिये की थी। इनकी प्रशसा म इस ग्रन्थ के आरम्भ म तीन छन्द लिख गये हैं जिनकी एक-एक पक्ति नीचे उद्धृत की जाती है—

नाभ पति भरपूरसिंह मालवे इ महाराज॥२॥
याही तें गरीब कौ निवाज रघुराज जू नें,
राख्यौ महाराज भरपूरसिंह नाम है॥३॥
ग्रीषम कौ कठिन कृपान है कि भान है,
कि महाराज भरपूरसिंह बलवान ह॥४॥

ग्रन्थ रचना का कारण कवि न इस प्रकार लिखा है—

ऐसे श्रीमहाराज ने कही एक दिन बात।
सब गुरु को सक्षप ते बरनन करौ विख्यात॥५॥
हुकम पाय यों ग्वाल कवि रचन गुरुन गुनग्राम।
या कारन याकों करत गुरुपचासा नाम॥६॥

रचनाकाल—कवि ने इसकी रचना स० १९१७ वि० म नाभा म की जसा कि छन्द सख्या ७ से प्रकट है—

७ १ ९ १
सवत् रिसि ससि निधि ससी कातिक कृष्णो पक्ष।
त्रितिया गुरु कौ प्रगट हुअ गुरु पचासा स्वच्छ॥

वण्य विषय—कवि ने इस रचना म सिख धम के दसो गुरुओ के यश का वणन किया है। ग्रन्थारम्भ म १ छन्द मगलाचरण का, ३ छन्द राजा भरपूरसिंह की प्रशसा के, ३ छन्द रचना कारण और रचनाकाल के हैं। शेष ५० छन्दो म गुरु महिमा वर्णित है। प्रथम पादशाही (गुरु नानकदेव) पर ५, द्वितीय पादशाही (गुरु अगददेव) पर २, तृतीय गुरु अमरदास पर २ चतुथ गुरु रामदास पर २ पचम गुरु अजु न देव पर २, षष्ठ गुरु हरगोविन्द देव पर २ सप्तम गुरु हरिराय पर २, अष्टम गुरु हरेकृष्ण पर २ नवम गुरु तेग बहादुर पर २ और दशम गुरु गोविन्दसिंह पर २९ छन्द लिख गये हैं। दशम गुरु के

अग मडन पोशाक भूषण, क्लगी, कणभूषण, उरभाल, दाढी, खड्ग, कटार वाण, कोप, दान, तुरग, गयन्द, शिकार और सर्वोत्कृष्ट का पृथक पृथक वणन किया गया है। अन्तिम छन्द स० ५७ इस प्रकार है—

वेद व्यास वाक्य ते अद्भुतता प्रकट कीहीं
ना तौ जग जीवन को द्रुतताई जटती।
चारिहू वरन कीन्हें एक ब्रह्म दरसाय,
मेघ ब्रह्मचय दियौ जो न होय घटती॥
ग्वाल कवि कहे पथ खालसा अखड भइयौ,
लालमा कौ पूरन करया ह सु झटती।
होते जो न ऐसे श्री गुविदसिंह महाराज तौ,
न कलिकाल की करालताई कटती॥

काव्य की दृष्टि स रचना सामान्य कोटि की है।

२६ इश्क लहर दरयाब (गुरमुखी लिपि)।

कान्यानुवाद—यह काव्य ग्रन्थ कवि की मौलिक उद्‌भावना न होकर उदू के प्रसिद्ध कवि मीर हसन की लोक प्रख्यात मसनवी 'सिहरु-ल-बयान' का उदू फारसी मिश्रित हिन्दी अनुवाद है। कवि की यह नवीनोपलब्ध रचना है। नाभापति भरपूरसिंह की आना से[1] कवि ने स० १६१७ वि० म यह रचना की जो राज्य द्वारा स० १६२० वि० मे गुरुमुखी म लीथो में मुद्रित होकर प्रकाशित हुई थी।[2] इसकी एक प्रति श्री विद्यार्थी जी क पास हमने देखी है। इसी के हिन्दी रूपान्तर से यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

रचनाकाल—इस ग्रन्थ का प्रकाशन कवि के जीवनकाल मे हो ही गया था। ग्रन्थ म रचनाकाल माघ शुक्ला त्रयोदशी सोमवार स० १६१७ वि० इस प्रकार दिया हुआ है—

---

१ इश्कलहर दरयाब छ० स० ४२ से ४४—

ऐस श्री महाराज नें कहीं सुनौ कवि ग्वाल।
इश्क लोगन कौं सहज समझ पड सब ख्याल॥
हसन मसनवी कौ करौ उल्था खूबखुलास।
जसा जसा उन कहा तसा करौ प्रकास॥
हुकम पाय यौ नृपति कौ सुरु करत हौं ग्रन्थ।
भाषा पथ सुओ रह और फारसी पथ॥

२ सप्तसिन्धु–वष ३, अक १२, दिसम्बर १९५६, पृ० ४४, इश्कलहर दरयाब–

७ १ ८ १
सवत् रिसि ससि निधि ससो माघ चादनी चाव।
तोदसि ससिको प्रगट हुअ इस्कलहर दरयाव।।

वण्य विषय—ग्रन्थ म सिहरन बयान की एक प्रेम गाथा का २८ दास्ताना और ११८६ विविध छन्दा म वणन है मूलकथा का सक्षिप्त निम्नाकित है। किसी देश के एक यशस्वी बादशाह को एक ज्योतिषी की भविष्यवाणी के फलस्वरूप एक पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। भविष्यवाणी के अनुसार बालक को १२ वष की आयु तक किसी परी या जिन द्वारा उठाये जाने का भय था। अत बादशाह ने १२ वष तक उसे सुरक्षित किले म बन्द रखा। पर तु इस अवधि की समाप्ति की रात को जब शाहजादा महल की छत पर था एक परी उसे उठा ले गई। परी ने शाहजादे से स्वप्न वापिस न जाने और किसी दूसरी स्त्री स प्रेम न करने का वचन लेकर एक घोडे पर नित्य एक पहर सर करने की छूट द दी। एक दिन शाहजादा बनजीर सर करता हुआ शाहजादी बदरेमुनीर के बाग म जा पहुचा जहाँ दोनो प्रेमपाश म बध गये। यह भेद खुल गया और परी ने शाहजादे को एक कुए म डाल दिया। बेनजीर के वियाग म बदरे मुनीर तडपने लगी। मत्री की बेटी नजमुन्निसा शाहजादे का खोजने निकली। जोगिन रूप मे नजमुन्निसा के नत्य स जिनो का राजकुमार फीरोज मुग्ध हो गया। नजमुन्निसा ने उसकी सहायता से शाहजादे को कुए से निकालकर बदरे मुनीर स मिला दिया। शाहजादी बदरे मुनीर ने फीरोज और नजमुन्निसा की सहायता से धन और फौज एकत्र करके मकान बनवाया और बनजीर के पिता को विवाह का प्रस्ताव भेजा। प्रस्ताव की स्वीकृति के उपरा त बनजीर और बदरे मुनीर दोनो प्रेमियो का विवाह हुआ और वे अपने दश जोडा सुखपूवक रहने लगा। अ त म शाहजादा अपनी पत्नी को लेकर ससुराल को चला गया। पिता पुत्र मिले और सुखपूवक रहने लगे।

कवि ने मीर हसन की कथावस्तु म कोई परिवतन नही किया है केवल वता के स्थान पर कवित्त, दोहा, छप्पय, भुजग प्रयात आदि छदो म सफलता के साथ उसे प्रस्तुत किया है। आरम्भ म मगलाचरण, लिपि निरूपण ग्रथ कारण वणन नगर शोभा आश्रयदाता यशगान तथा ग्रथ रचनाकाल वणन के ८७ दोहे देकर मीर हसन की खुदा की तारीफ के १२ छन्द देकर कथा आरभ कर दी है। ग्रन्थ के अन्त मे नाभापति के यश के १७ छ द देकर इसे सम्पूण कर दिया गया है।

२७ वशी बीसा[1]—खोज रिपोट १६०१ ६०, १६१७ ६४ डी पृ० १६५, १६३२ ७३ ई पृ० १२४।

अतिम काय—यह लघु ग्रथ कवि ने अपन जीवन के अतिम दिना म लिखा था जिसमे केवल २० छन्द हैं जो अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के हैं। नारायण मिश्र ने इसे लिपिवद्ध किया है।

रचनाकाल—ग्रथ म रचनाकाल का उल्लेख नही है। कवि के निजी काव्य सग्रह भक्तभावन म इसका काई छन्द नही आया, इससे यह अनुमान है कि यह इसके पश्चात् की लिखी गई रचना है। इसके काव्य की प्रौढ़ता भी इस बात की साक्षी है कि यह कवि का अतिम ग्रथ है।

वण्य विषय—इस के छन्द भगवान श्री कृष्ण की वशी और उसकी महिमा को अर्पित है। सम्मोहन आकषण उच्चाटन और मारण चारो मन्त्रो का प्रभाव वशी की ध्वनि म कवि न देखा है। आरम्भ इस भाति है—

'श्री जगदम्बाय नम । अथ श्री वशी बीसा लिष्यते ॥

बन्त बिहरीलाल की, बसी बीसा बेस।
विदुष बदन विकसावहीं, बुधिबल कर विसेष ॥

समापन इस प्रकार है—

काहू तने कामरु की करामात सीखी कब,
कब ते जमाई जोर जभन की जोत हू।
कौन कन्दरा म बठि कर करतूत कला,
कौन से परवसिद्ध कीयौ मत्र गोत है॥
ग्वाल कवि गोपिन के पेंचि लेइ प्रान यह
वसी एक नाली जाकी हरित उदोत हू।
दस नाली थमन को उच्चाटिबे को सात
नाली मोहिबे को अजब हजार नाली होत है॥

इति श्री ग्वाल कवि विरचिते वसी बीसा समाप्तम् ॥ हस्ताक्षर नारायण मिश्र क ॥ शुभ भव ॥

२८ दग शतक (हस्तलिखित) भक्त भावन म पद्य सख्या १०८ से ११४ तक सग्रहीत अय ग्रथो की भाति यह भी ग्वाल की एक प्रामाणिक रचना है। श्री विद्यार्थी के पास इसकी एक पृथक प्रति विद्यमान है। हमने भक्त भावन वाली प्रति का उपयोग किया है। इस म १०३ दोह हैं।

---

१ प्राप्ति स्थान—प० जवाहरलाल चतुर्वेदी, मथुरा।

रचनाकाल—ग्रन्थ मे इसका रचना आरम्भ फाल्गुन शुक्ला द्वितीया स० १८१६ वि० लिखित है—

६ १ ६ १

सवत निधि ससि निधि ससी, फागु पच्छ उजियार ।
द्वितीया रविआरम्भ किय, दृग सत सुख कौ सार ।।

वर्ण्य विषय—रीति परम्परा म कवि ने आँख पर १०० दोहे प्रस्तुत किये हैं। आरम्भ म मगलाचरण, कवि और ग्रन्थ का परिचय है।

दोहा सख्या १०३ के साथ ग्र थ की समाप्ति इस प्रकार होती है—

'प्यारी लोचन ब्रह्म मे मन लय हुवे यो जुक्ति ।
नजर और प जात नहि होत जगत मे मुक्ति ।।
इति दग सतक सम्पूण ।।'

२९ शान्त रसादि के कवित्त—खा० रि० १८३५ ३३ जी पृ० ३१। भक्त भावन म पत्र सख्या ११४ से ११८ तक सग्रहीत है।

रचना काल—इसके ३ छन्द रसिकान द और १३ छन्द रसरग म सग्रहीत हैं रसिकानन्द मे छन्दो को स्थान मिलने से इसकी रचना स० १८७६ वि० स पूव की सिद्ध होती है।

वर्ण्य विषय—जसा कि इस सग्रह के नाम से प्रकट है इसम शान्त रस के और भक्ति के २३ कवित्त हैं। अन्त मे एक कवित्त दिवाली का देकर समापन का दोहा दिया है। कवित्त इस प्रकार है—

छाई छवि छिति प छहर छवि छलन की
छमकें छपाकर छटा सो बाल त्यारा प।
उन्नत अनार अलगारन अगारन प,
आसमान तार उठे ऊपर अगारी प।।
ग्वाल कवि जाहर जवाहर जगत जोर
जागत जुआरी जाम जाम जर जारी प।
दीप दीप दीपन की दीपति दबरि आइ,
जबूदीप दीपन मे दिपति दिवारी प।।२२।।

दो० श्री जगदम्बा राधिका त्रिभुवनपति की प्रान।
तिनके पदमें मन रह श्रीसिव दीज दान।।२३।।

३० बलबीर विनोद (अप्राप्य)—ग्वाल का यह ग्रन्थ अभी तक अचर्चित रहा है। साहित्यानन्द की खोज के उपरान्त ही यह ज्ञात हो सका कि इस नाम का कोई ग्रन्थ इस कवि न लिखा था। साहित्यान द के प्रथम

स्कन्ध के नवें दोहे में कवि ने उक्त ग्रन्थ का नाम अपने उन ग्रन्थों के नामों के साथ लिखा है, जिनके उदाहरणों को साहित्यानन्द में अंगीकृत किया गया है, यह दोहा निम्नलिखित है—

रसिकानन्द जु नखसिख रु कवि दरपन रसरंग।
पुनि बलवीर विनोद है, जमुना लहरि प्रसंग ॥

इस सन्दर्भ के आधार पर इस ग्रन्थ को मैंने उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पंजाब के सार्वजनिक और व्यक्तिगत ग्रन्थागारों में खोजा, हिन्दी के कई गण्यमान्य खोजकर्त्ता विद्वानों के साथ भी सम्पर्क स्थापित किया, किन्तु यह ग्रन्थ अप्राप्य ही रहा है। अतः इसके विषय में साहित्यानन्द में उदाहृत छन्दों के आधार के अतिरिक्त अन्य विकल्प नहीं है।

निर्माण काल—साहित्यानन्द में उदाहृत होने से इस ग्रन्थ का रचना काल सं० १९०५ वि० से पूर्व का ठहरता है। परन्तु रसरंग (१९०४ वि०) या उससे पूर्व लिखित ग्रन्थों में न तो इस ग्रन्थ का कहीं नाम ही लिखा मिलता है और न साहित्यानन्द में उदाहृत इसके छन्दों में से कोई छन्द ही कहीं मिलता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बलवीर विनोद की रचना सं० १९०४ वि० और सं० १९०५ वि० के बीच हुई होगी। परन्तु जब तक कोई अन्य प्रमाण नहीं मिलता, इस विषय में निश्चित रूप से इससे अधिक और कुछ नहीं कहा जा सकता।

वर्ण्य विषय—साहित्यानन्द और कवि दर्पण में इस ग्रन्थ के जो छन्द लिये गये हैं, उसमें श्रृङ्गार रसान्तगत नायिका भेद और दोष निरूपणान्तगत काव्य-दोष विषयक १८ छन्द हैं।[1] इन छन्दों से पूर्व सर्वत्र कवि ने, अथ बलवीर विनोदे" शब्द सन्दर्भ का उल्लेख किया है। अतः यह असन्दिग्ध रूप से कहा जा सकता है कि ये छन्द बलवीर विनोद के ही हैं। इससे हम केवल यह अनुमान करने की स्थिति में अवश्य हैं कि बलवीर विनोद रीति शास्त्र का विविधाग निरूपक ग्रन्थ रहा होगा। ग्रन्थ के वर्ण्य विषय के सम्बन्ध में अभी इससे अधिक और कुछ नहीं कहा जा सकता।

---

१ उदाहरणार्थ 'साहित्यानन्द से दो दोहे यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

बलवीर विनोदे—श्री राधा को एक टक, तकत बिहारीलाल।
हलन चलन बोलन हसन भूलि गये सब ख्याल ॥
वही, ३।३०

अन्य बलवीर विनोदे—हरि लखि कामिनी अलक लं, दिय तुलसी पं डार।
जल ऊपर फिर डारिकैं पोछन लागी बार ॥

७ | ग्वाल के काव्य की प्रवृत्तियाँ और प्रतिपाद्य

अन्य रीति कवियों की भांति ग्वाल कवि के काव्य का प्रस्फुरण, पल्लवन और विकास विभिन्न राजा और नवाबों के राज्याश्रय में हुआ। इन्होंने रीतिकालीन परम्परा के अनुसरण में तत्कालीन सभी प्रचलित प्रमुख विषयों और प्रवृत्तियों को अपने काव्य का प्रतिपाद्य बनाया। दूसरे शब्दों में इन्होंने रीति कविता की परम्परा को ही चलाए रखने का प्रयत्न किया।

रसिकानन्द, रसरंग कवि दर्पण, प्रस्तार प्रकाश और साहित्यानन्द ग्वाल के रीति निरूपक ग्रन्थ हैं, जिनमें से अंतिम साहित्यशास्त्र की विविधांग निरूपक वृहत् रचना है। श्रीकृष्ण जू को नखशिख, दृगशतक, षट्ऋतु वर्णन रीतिबद्ध काव्य हैं। जमुना लहरी, गोपी पच्चीसी, कुब्जाष्टक कृष्णाष्टक, राधाष्टक गणेशाष्टक, ज्वालाष्टक, वंशी बीसा, निम्बार्क स्वाम्यष्टक, गुरुपचासा, देवी देवताओं के कवित्त भक्ति परक रचनाएँ हैं। हम्मीर हठ और विजय विनोद वीररससिक्त काव्य प्रबन्ध हैं। इश्क लहर दरयाव उर्दू से अनूदित रचना है। नीति और वैराग्य पर इन्होंने प्रस्तावक कवित्त, अन्योक्ति कविता और वैराग्य कवित्त लिखे। नेह निबाह में विशुद्ध प्रेम की परिपाटी का वर्णन किया गया है। नरप्रशंसा और राजवैभव के वर्णन इनके रीति ग्रन्थों और अनुवाद काव्य में मिलते हैं। नीति भक्ति और वैराग्य विषयक कथनों की प्रायः सभी ग्रन्थों में यत्र तत्र स्फुट चर्चा हुई है। इस प्रकार ग्वाल ने विभिन्न विषयों को अपनी कविता में समाविष्ट करने का प्रयास किया है।

संक्षेप में ग्वाल की कविता के निम्नांकित पक्ष हैं—

(अ) रीति निरूपण (१) रस वर्णन (शृङ्गार हास्यादि, शृङ्गारान्तगत नायिका भेद, नखशिख, षटऋतु वर्णन आदि) (२) अलंकार विवेचन, (३) पिंगल वर्णन, (४) काव्य दोष वर्णन, (५) शब्द शक्ति, रीति, गुण और वृत्ति विवेचन, (६) काव्य निरूपण।

(आ) नराशंसा तथा राजवैभव वर्णन।

(इ) भक्ति वैराग्य और नीति वर्णन, (ई) वीर काव्य रचना, (उ) उर्दू भाषा का काव्यानुवाद, (ऊ) रीतिबद्ध काव्य, (ए) रीतिमुक्त रचना।

अन्तःसाक्ष्य के अध्ययन पर आधृत इनके काव्य की प्रमुख **प्रवृत्तियों** का [illegible] नीचे की पंक्तियों में प्रस्तुत किया जाता है।

(अ) रीति निरूपण रीति निरूपण मे दो अतप्रवृत्तियाँ काम कर रही है—एक तो एकत्र विविधाग निरूपण और दूसरी रस अलकार पिंगल, काव्यदोष, काव्य रूप काव्य भेद शब्द-शक्ति आदि का पृथक पृथक विवेचन करने की प्रवृत्ति। ग्वाल ने विविधाग निरूपण म 'साहित्यानन्द की रचना की। इसमे काव्य के सभी अगो के विवेचन का चेष्टा है। अकेल रस निरूपण की प्रवृत्ति के अनुरोध म इनके तीन स्वतन्त्र ग्रन्थ हैं—(१) रसिकानन्द, (२) रसरग और (३) बलवीर विनोद। 'प्रस्तार प्रकाश म सक्षिप्त शली म पिंगल का प्रस्तार वर्णित है। कवि दपण' का पूरा कलेवर दोष विवेचन और दोषापहार को अर्पित है। काव्य के शेष अगो पर कवि ने स्वतन्त्र ग्रन्थ नहा लिखे। ग्वाल के समकालीन गोविन्द, जगतसिंह रामसहायदास प्रतापसाहि निहाल कवि ने अपने विविधाग निरूपक ग्रन्थो म पिंगल के प्रकरण को नहीं रखा है। इनमे से कई ग्रथो मे शब्द शक्ति प्रसग भी छूट गए है। ग्वाल ने पिंगल अलकार, शब्दशक्ति, आदि सर्वांग का वणन 'साहित्यानन्द म किया है। यह प्रयास ग्वाल को इस प्रवृत्ति का प्रतिनिधि लेखक बना देता है।

ग्वाल ने नायिका भेद नखशिख और षटऋतु गर्भित शृङ्गार वणन, हास्यादि रस, अलकार पिंगल, शब्द शक्ति रीति गुण, वृत्ति काव्य स्वरूप और काव्य भेद का विवेचन इस प्रवृत्ति के अतगत किया है। कवि न अनुशीलन और विमश द्वारा प्राचीन मतों को निरखा और परखा है। अधिकाश म पुराने आचार्यों की मान्यताओ को कवि ने रीति निरूपण म ज्यो का त्यों ग्रहण कर लिया है। परन्तु कई विवादास्पद स्थलों पर उसने पुराने मतो पर विमश प्रस्तुत करते हुए खडन और मडन भी किया है और अपना तक सम्मत मत स्थापित किया है। यहा उसका आचार्यत्व उभरा है।

१ रस निरूपण—रस प्रसग में ग्वाल ने सबसे पहले भाव को लिया है क्यो कि रस भावो से उद्बुद्ध होता है।[१] मन के विकार ही भाव बताये गये हैं।[२] 'विकारो मानसो भाव से इसकी पुष्टि की गई है। भाव की सैद्धान्तिक परिभाषा रसिकानन्द मे इस प्रकार की गई है।

बस बासना अचल हिय रहैं जीव के सग।
मन विकार सो भाव हैं लहियत पाय प्रसग॥ २।१॥

यहाँ वासना' शब्द का प्रयोग अवलोकनीय है। रस निष्पादन के लिये 'वासना' का स्थायी रूप से हृदय म रहना अनिवार्य है। रस के मूल म वासना' की यह महत्त्व स्वीकृति है। ग्वाल ने भाव को वासना के पर्याय के

---

१ (अ) साहित्यानन्द—३।२। (ब) रसरग २।८ २ साहित्यानन्द ३।२।

रूप म ग्रहण किया है।[1] उसके अनुसार भाव वह मनसिज विकार है, जो अवल रूप से हृदय म वासना के रूप म रहते और अनुकूल अवसर पाकर उद्बुद्ध होत हैं। भाव की प्रकृति के सम्बन्ध मे कवि की मान्यता है कि वह रस को अनुकूल करता है अत भाव की रस अनुकूलक परिभाषा वह साहित्यानन्द म इस प्रकार करता है—

रसहि करैं अनुकूल जो ऐसे हैं जु विकार।
भाव कहत तासों सुकवि, बुधजन करौ विचार ॥३।१२॥

अर्थात केवल रस के अनुकूल मनोविकार ही भाव कहलाने के अधिकारी हैं। प्रश्न उठता है कि क्या रस प्रतिकूलक मनोविकारो को भाव नही कहग। इसका उत्तर कवि इस प्रकार देता है —

जसो जौन विकार जह उपजत समयो पाय।
तसो रस अनुकूलक जु होत भाव वह आय ॥३।२३॥
ताते रस प्रतिकूलक जु कोऊ नहीं विकार।
याते रस अनुकूलक सु भाव लच्छन उरधार ॥३।२४॥

जो विकार जहाँ अवसर पाकर उत्पन्न होता है वह वहाँ उसी प्रकार के रस के अनुकूल भाव बन जाता है। अत रस के प्रतिकूल विकार का कोई अस्तित्व ही नही है। अत भाव का रस अनुकूलक लक्षण ही अवधारणीय है। कवि ने एक उदाहरण द्वारा इसको स्पष्ट किया है। वह कहता है कि विप्रलब्धा को मान लिया कि आरम्भ म कोई हर्ष उत्पन्न हुआ। परन्तु प्रिय के न मिलने से वह विषाद म परिणत हो गया। यहा विषाद ने आकर हर्ष का नाश कर दिया। अत यहा विषाद शृङ्गार रस अनुकूलक भाव न रहकर करुणा अनुकूलक बन गया।[2] परन्तु मनोविकार एक ही रहा। एक अवसर पर वह 'हर्ष' बन कर शृङ्गार अनुकूलक बना, दूसरे अवसर पर करुणा के अनुकूल हो गया। ऐसी दशा म रस प्रतिकूलक भाव का अस्तित्व है ही नही। सभी भाव रस अनुकूलक होते हैं।

कवि ने अपने कविता काल के आरम्भ म भावो के चार भेद माने हैं— (१) विभाव, (२) अनुभाव, (३) सचारी और (४) स्थायी भाव।[3] अपने अन्तिम काल के प्रौढ ग्रन्थ साहित्यानन्द म उसने भावो के पाच भेद किये हैं— (१) विभाव, (२) अनुभाव (३) स्थायी (४) सात्विक और (५) सचारी भाव।[4] कवि ने विभावो का भी भाव के भेदो म रखा है जबकि विभाव

१ भावित वासित कृतमित्यनर्थान्तरम्। भावित का अर्थ है वासित। नाट्य शास्त्र पृ० १०४।

२ साहित्यानन्द–३।१३ १४ व २१। ३ रसिकानन्द–२।२ तथा रसरग–२।१० ११। ४ साहित्यानन्द–३।३६।

मनोविकार नही होते। कवि दृष्टिकोण यहाँ व्यापक रहा है। यहाँ उसका भाव' का अभिप्राय पूरी रस व्यंजक सामग्री का है, केवल मनोविकारो का नहीं। भरत के नाट्य शास्त्र मे भाव की सत्ता वस्तुगत ही मानी गई है। वह रस की सामग्री का भी वाचक है। डा० नगेन्द्र लिखते हैं—'आधुनिक शब्दावली मे प्राचीन आचार्यों के मतानुसार भाव' या तो काव्य अथवा नाट्य के 'सवेद्य तत्व' का वाचक है या सवेदक तत्वो का मनोवेग (मानसिक शारीरिक अनुभूति) या 'चेतना की मात्रा का द्योतक नहीं है।'[1] इसी कारण ग्वाल ने विभाव को अनुभावादि मनोवेगो मे पृथक नही किया। 'रसव्यंजक सामग्री के अन्तर्गत स्थायी, सचारी के साथ विभाव और अनुभाव भी आ जाते हैं।[2] ग्वाल की विभाव सम्बन्धी इस मान्यता को इसी परम्परा के अन्तर्गत मानना चाहिए।

ग्वाल ने सात्विक भावो की पृथक सत्ता मानी है इसी कारण उपर उन्हे भाव का पाचवा भेद उन्होंने मान लिया है। सस्कृत मे सात्विको को अनुभाव के अन्तर्मुक्त कर लिया गया है—

पृथग् भावा भवन्त्य ये नुभावत्वे पि सात्विका[3] (दशरूपक) और भाव का प्रयोग सामान्यत स्थायी तथा सचारी के लिये ही होता रहा है—ते च स्थायिनो व्यभिचारिणश्चेति वक्ष्यमाणा (दशरूपकावलोक, धनिक पृ० १२४)[4] ऐसी दशा मे ग्वाल की सात्विको की स्वतन्त्र सत्ता की मान्यता पुरानी है अत शास्त्र सम्मत नही।

कवि यहाँ मतिराम से ही प्रभावित हुआ है। इसका प्रमाण यह है कि कवि ने पहले मतिराम की सात्विको की स्वतन्त्र सत्ता की मान्यता का रसिकानन्द' मे खडन करते हुए सात्विको को सचारियो मे रखा है।[5] सात्विक भाव आठ हैं। ग्वाल ने भानुदत्त की रस तरगिणी के आधार पर नवा सात्विक जम्भा' भी स्वीकार कर लिया है।[6] इसी प्रकार तरगिणी के आधार पर 'छल' नामक ३४ वें सचारी को भी ग्वाल ने अपनाया है।[7] रसिकानन्द मे कवि ने इन्हें छोड दिया था। कवि ने ५ कर्मेन्द्रियो के सम्बन्ध से ८ सात्विक भावो के ४० भेद किये हैं।[8] ग्वाल के अनुसार रस सामग्री के भेदोपभेदों के नाम व सख्या निम्नोक्त हैं—

१ रस सिद्धान्त—डा० नगेन्द्र पृ० २१८।
२ वही पृ० २१८। ३ वही, पृ० २१९। ४ वही पृ० २१९।
५ रसिकानन्द २।१४। ६ (अ) रसरग ६१। (ब) साहित्यानन्द ३१।
७ (अ) साहित्यानन्द ३०६ व ३०७। (ब) रसरग १८८।
(अ) रसरग ४२। (ब) साहित्यानन्द ९५।

विभाव	आलम्बन और उद्दीपन।[1]
स्थायी भाव	रति हास्य, शोक क्रोध, उत्साह, ग्लानि, विस्मय, भय और निर्वेद।[2]
सात्विक भाव	स्तम्भ, स्वेद, रोमाच, स्वरभग, कम्प, ववण्य, प्रलय, अश्रु[3] और जम्भा।
सचारी भाव	निर्वेद[4] ग्लानि, शका, असूया, म", श्रम, आलस्य, द य, चि"ता, मोह स्मृति, धृति, वीडा, चपलता, हृष, आवग, जडता, गव, विषा", औत्सुक्य, निद्रा, अपस्मार, सुपुप्ति, प्रबोध अमष, अवहित्था, उग्रता, मति, व्याधि, उ"माद, मरण त्रास, वितक और छल।

कवि ने स्थायी भावो को दशन, श्रवण और स्मरण द्वारा उत्प"न माना है। पर तु लक्ष्य और लक्षण केवल दशन और श्रवण के ही ि"य है। उत्साह के युद्धोत्साह दानोत्साह और दयोत्साह तीन भेद और किये है। बाद मे आठा स्थायियो के चक्षु श्रोत घ्राण, रसना त्वचा, सम्ब"ध मे उदाहरण दिये गये हैं। स्थायी भावा की आठ[5] और सचारियो की बीस दृष्टिया[6] गिनाई गई है। ३४ सचारियो की २० ही दृष्टि क्से रह गई, इसका कवि ने कोई कारण नही लिखा।[7] यह परम्परागत ही हैं।

'निज रस म थिर भाव जो, सो पररस विभिचारि" ॥८५॥ साहित्या न"द के अनुसार रति शा"न करुणा आर हास्य म, हसी व शोक शृङ्गार म, क्रोधवीर म, उत्साह रौद्र और हास्य मे भय करुणा म, ग्लानि भयानक म तथा विस्मय और उत्साह का सभी रसो म सचार होता है।

कवि ने वितक सचारी के (१) विचारात्मक, (२) सशयात्मक, (३) *अनध्यवसायात्मक* और (४) *विप्रतिपत्यात्मक* ये चार भेद और किये हैं, जो अनुभावो क आधार पर हैं।

भावो के वणन के उपरा"त कवि ने भावध्वनि—देवरति और राजरति, भावोदय भाव सधि, पाँचो भेदों सहित—सरूप, विरूपसधि, भावशबलता, भावशान्ति, भावाभास का विशद वण"न किया है। विरूप भावसधि को भिन्न२

१ अ) रसरग १२। (ब) साहित्यान"द ३७। २ (अ) रसरग १६।
(ब) साहित्यान"द ४२ व ४३। ३ (अ) रसरग ४०।
(ब) साहित्यान"द ९०। ४ (अ) साहित्यान"द ६५, ६६ ६७।
(ब) साहित्यान"द १३७। ५ साहित्यान"द ८३ व ८४।
६ वही ३१३, से ३१७। ७ वही, ३१८।

कारणो से भिन्न भिन्न 'काय विरूप संधि', एक कारण से 'बहुत काय विरूप संधि' के रूप म भी वर्णित किया है।

ग्वाल ने अनुभावा को रस के साथ वर्णित किया है। ये प्रत्येक रस के भिन्न भिन्न हैं।

ग्वाल ने रस की परिभाषा रसिकानन्द एव रसरग म इस प्रकार की है—

कारन विभाव थाई भाव अनुभाव करि,
मिलि बिभिचारी होत प्रगट प्रमानिये।
नाट्यो काव्य देखें सुनें अन्य ग्यान विगत ह्वै,
जाते जो जनित ताही मे थिति आनिय॥
श्रुति हू कहत रस ब्रह्म को सरूप एक
याते ब्रह्मानन्द सम आनन्द प्रमानिय।
चारु है चतन्य अदभुतता सहित अति,
परम प्रकास मूल आनि मत जानिय ॥१॥

जह विभाव अनुभाव अरु सात्विक औ सचार।
ये मिलिथिति को पूरहीं, सो रस सुकवि उचार॥१॥
चिदानद घन ब्रह्म सम, रस है श्रुति परमान॥२॥—रसरग।

कहि विभाव अनुभाव अरु, सात्विक पुन विचारि।
इन करि इति की पूणता सोरस भरत उचारि॥—साहित्यानन्द।

स्पष्ट है कि कवि ने भरत के सूत्र विभावानुभाव व्यभिचारिसयोगाद्रस निष्पत्ति को ही अगीकृत करके रस की निष्पत्ति लिखी है। कवि ने श्रुति के रसो वै स। रस ह्येवाय लब्ध्वानन्दी भवति' के आधार पर अन्य ज्ञान विगत, एकमेव वृत्ति' रूप रस को 'चिदानन्दघन ब्रह्म' के समान माना है। अपने मत की पुष्टि म कवि ने भरताचाय, अभिनव गुप्त, मम्मट और विश्वनाथ के मतो को गद्य म प्रस्तुत किया है। कवि के रस के उक्त आचार्यो का समन्वय मिलता है।[1]

---

१ अथ प्रथ भरताचाय को मत—विभाव अनुभाव सचारी इन करि थाई भाव यग कीयो सोई रस आनन्द सरूप प्रगट होत है।

अथ अभिनव गुप्ताचाय को मत—नाट्य काव्य देखि सुनि आवरनादि जहाँ विगत होंय अरु आनन्द रूप प्रकासित चतन्य सोई रस होत हैं।

अथ काव्य प्रकास का मत—कारन कारज सहायक ये मिलि कर प्रगट होंय थाई भाव सो रस। कारन कारज सहायक इन ही कों नाट्य काव्य मे विभाव अनुभाव सचारी भाव कहत हैं। अरु भावादिक मे एक ही होय। जहा और भावन की कल्पना करि लीजियत है।

अथ साहित्य दरपन को मत—स्वय प्रकास आनद सरूप सुद्धता अखड अन्य ज्ञान रहित ब्रह्मानन्द स्वाद तुल्य ऐसो रस होत है।

कवि ने रस को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का हेतु कहा है—

पूरन रस जो होत है, जानों बुद्धि निकेत।

धर्म, अर्थ औ काम पुनि मोक्षसहित सब हेत ॥१॥—साहित्यानन्द।

वास्तविक ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं होती। कवि ने श्रुति-सूत्र 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः' को देकर अपने मत को पुष्ट किया है—

ग्यान बिना नहिं मुक्ति है, लिख्यौ सु वेद मझार ॥१३॥ साहित्यानन्द।

ग्वाल की रस की परिभाषा ज्ञानमूलक है।

रस की स्थिति और उसके स्वरूप वर्णन के उपरान्त कवि ने रस के दो भेद माने हैं—(१) लौकिक और (२) अलौकिक।[1] लौकिक रस का उद्भव लौकिक सन्निकर्ष से और अलौकिक का जन्म अलौकिक सन्निकर्ष से होता है।[2] लौकिक में घट इन्द्रियगत सन्निकर्ष की विद्यमानता मानी गई है।[3] विद्वानों ने अलौकिक रस के मूल में पूर्वजन्म के अनुभाव में ज्ञान को निहित माना है[4] अर्थात् पूर्व जन्म के अलौकिक संस्कारों से ही अलौकिक रस उद्भूत होता है। अलौकिक रस के कवि ने तीन भेद किये हैं—(१) स्वाप्निक (२) मानोरथिक और (३) औपनायिक। (साहित्यानन्द ४।६)

ग्वाल ने भी इस वर्गीकरण को सीधा भानुदत्त की रसतरंगिणी से ही लिया है।[5] ग्वाल ने यद्यपि इन तीनों के लक्षण तो नहीं लिखे, परन्तु औपनायिक अलौकिक रस की स्थिति वाद्य काव्य, पद, पदार्थ और चमत्कार में मानी है। कहीं प्रधान और कहीं अप्रधान रूप में यह रस इनमें से प्रत्येक में विद्यमान रहता है। (साहित्यानन्द ४।७-८)

ग्वाल ने शृङ्गार हास्यादिक रसों को औपनायिक अलौकिक रस के अन्तर्गत साहित्यानन्द के स्कन्ध ४ में वर्गीकृत किया है—

औपनायिक हि रस ... रौद्र बखान ॥२७॥

वीर भयानक ... माँहि निरधार ॥२८॥

पहले आठ ही रस गिनाये गये। नवां बाद में जोड़ा गया। कारण स्पष्ट है—

---

१ साहित्यानन्द ४।४। २ वही ४।५।

३ लौकिक जो सन्निकर्ष घट इन्द्री विषगत ॥ वही।

४ पूर्वजन्म अनुभाव ताको ज्ञान कहैं वह रस सो अलौकिक है विबुध करैं विचार ॥ वही।

५ स च रसो द्विविधः लौकिको लौकिकश्चेति। अलौकिको रसस्त्रिधा स्वाप्निको मानोरथिक औपनायिकश्चेति। (रस तरंगिणी, षष्ठ तरंग,)।

"सात रस काव्य में वर्णित हैं, नाट्य में नाहीं। नाट्य में आठ ही कहे हैं।" (रसिकानन्द छन्द सं० ३ के पश्चात) यह वर्गीकरण मम्मट के काव्य प्रकाश पर ही आधृत है।[1]

शृंगार—ग्वाल ने शृङ्गार को ही सर्वोच्च रस मान कर साहित्यानन्द में उसका सर्वप्रथम वर्णन किया है। इसकी व्याख्या उन्होंने भक्तिमूलक की है। कवि प्रश्न करता है—

रस सिंगार ही आदि में, कहत सु कारन कौन।
क्यों न और रस प्रथम में, बरनत है बुधि भौन ॥४।३०॥

उत्तर— होत विष्णु ही ते सकल, देवन की उतपत्ति।
वही विष्णु सिंगार के है विख्यात अधिपत्ति ॥३१॥
और रसन के देवता इहाँ, ठीक सुविचार।
रस सिंगार के विष्णु प्रभु याते प्रथम सिंगार ॥३२॥

शृङ्गार रसराज क्यों है[2] इसका उत्तर कवि इस प्रकार देता है—

जसें विष्णु विख्यात हैं, सब देवन सिरताज।
तसें विष्णु प्रताप ते है सिंगार रसराज ॥४।३४॥

कवि ने 'शृंगार' पद का अर्थ 'एकाक्षरी' से प्रमाणित किया है। 'शृंग को प्राधान्य' और 'आर' को काम का वाचक बतलाते हुए मनोज की प्रधानता प्रतिपादित की है।[3] साहित्यानन्द में वह लिखता है—

शृंग कहत अपराध उरधार ॥४।३५॥
शृंग आर को मनोज को धार[4] ॥४।३६॥

कवि ने शृंगार की पदवी[5] रसों के राजा की मान कर उसका लक्षण इस प्रकार दिया है—

नायिका औ नायक करत उदोत हैं[6] ॥४।३७॥

---

१ शृंगार हास्य करुण रौद्र वीर भयानका।
बीभत्साद्भुत संज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसा स्मृता ॥२९॥
काव्य प्रकाश—चतुर्थ उल्लास।
'निर्वेद स्थायी भावो स्ति शान्तो पिनवमो रस।' वही।
२ साहित्यानन्द ४।३३।
३ प्रमान अनेकार्थ—'शृंग प्राधान्यमीक्षति' पुन प्रमान एकाक्षरी आर काम।' वही, छंद सं० ३६ के उपरान्त उद्धृत।
४ (अ) रसिकानन्द ४।४ व ५ (ब) रसरंग २।७ व ८। ५ रसरंग १।२।
६ रसिकानन्द ४।६ (ब) रसरंग २।९ से ११।

शृंगार के भेद   संयोग और वियोग (विप्रलम्भ) शृंगार रस के दो भेद कवि ने रसरंग में परम्परानुसार ही किये हैं—

रस शृंगार के भेद द्वै, इक संयोग सिंगार।
विप्रलंभ सिंगार दुअ यही वियोग सिंगार[1] ॥६।१॥

संयोग लक्षण   प्रिय और प्रिया हित चित से मिल कर जो अभीष्ट सिद्ध करें, वहाँ संयोग शृंगार होता है—

प्यारी पिय हित चित मिलें करें अभीष्ट जो सिद्ध।
सो संयोग सिंगार है, बरन सुकवि जों वृद्ध ॥६।३॥
—रसरंग।

अथवा— प्यारी पिय दोऊ जहाँ, करें केलि की खान।
सो संजोग सिंगार है बरनत परम सुजान ॥८।२॥
—रसिकानन्द।

पहले दोहे में 'वृद्ध' शब्द अवलोकनीय है। रसरंग की रचना के समय कवि वृद्ध हो गया था, इससे उसने 'अभीष्ट सिद्धि' लिखकर काम चला लिया है। रसिकानन्द की रचना युवावस्था की कृति है, अतः यहाँ 'केलि की खान' संयोग पक्ष में लिखना उसे अभीष्ट था।

संयोग का उदाहरण—

मौंहनि ते कछुक   छाती तें[2] ॥६।३॥ —रसरंग।

प्यारी और प्रिय क्रमशः नायिका और नायक दोनों आलम्बन विभाव हैं। उचौंही पटियाँ माँग नैन कपोल, बेसर आदि उद्दीपन विभाव हैं। उलटि परिवौ' यह अनुभाव है। रति रीति स्थायी और सकुचि सकुचि' पद संचारी है। इस प्रकार विभाव, अनुभाव और संचारी संयोग से रस निष्पन्न हुआ।

कवि शृंगार के प्रच्छन्न और प्रकाश उपभेदों के चक्कर में न पड़कर संयोग के दसों हावों[3] के लक्षण लक्ष्य में लीन हो गया है। हावों का वर्णन परम्परानुसार हुआ है। इसके अन्तर कवि ने अन्य कवियों के आधार पर ८ और हावों का वर्णन किया है। वे हैं—१-हेला, २-मद ३-बोधक, ४-मदन, ५-अभिनयन, ६-चतुर, ७-खीझ और ८-गुण।[4] पदमाकर ने १-हेला,

१ रसिकानन्द ८।१।   २ वही, ८।३।
३ (अ) रसरंग ६।६ व ७   (ब) रसिकानन्द ८।६ व ७।
४ रसिकानन्द ८।३० व ३१।

२–बोधक दो अतिरिक्त हाव लेकर इन की संख्या १२ कर दी है। हावों का वर्णन ग्वाल ने मर्मवत किया है। जहाँ नायक नायिका लज्जा विगत प्रेममय और मुदित होकर हँसे वहाँ हेला[1] पूर्ण परम प्रीति में जहाँ मद बढ़े वहाँ 'मद'[2] जहाँ कोई गूढ़ क्रिया करके भाव बोध किया जाय, वहाँ बोधक[3] काम की बातें करते हुए जहाँ अंगों में ज्योति बढ़े वहाँ मदन[4] हाव, जहाँ शृंगार में अभिनय किया जाय वहाँ अभिनयन'[5] जहाँ चतुर्य के साथ और की ओर बातें कर के अपना अर्थ बताया जाय, वहाँ चतुर'[6] हाव जहाँ नायिका नायक से रस पूर्वक क्रोध करे और उस दुख कर हर्षित हो वहाँ धीम[7] हाव और जहाँ नायिका गायन आदि से प्रिय को वश में करन वहाँ गुन[8] हाव होता है। कवि ने इन आठ हावों के मात्र लक्षण लिख कर छुट्टी पाली है उदाहरण नहीं दिये। हाव वर्णन प्रसंग में अन्य कवियों द्वारा हावों को ३२ की संख्या तक बढ़ाने की भी चर्चा की है। परन्तु ग्रन्थ में वे दिये नहीं। क्योंकि उसके मत में वे चमत्कारी नहीं प्रतीत हुए।[9]

वियोग शृंगार—कवि ने वियोग का लक्षण इस प्रकार लिखा है—

प्यारी पिय में वाछित जु, अप्रापति सु निहार।
हिय सजोग आसा रहे सो वियोग सिंगार॥[10] ६।३६–रसरंग।

वियोग भेद—चार हैं—(१) प्रवास (२) पूर्वानुराग (३) मान और (४) दवयोगात्। पूर्वानुराग को पुनः श्रुत्वानुराग और दृष्टवानुराग में तथा दवयोगात् को मेहावरोध और अन्यावरोध विभेदों में विभाजित किया गया है।

नायक के परदेश चले जाने पर प्रवास'[11] विरह जहाँ सुन कर या देखकर प्रेमांकुर उत्पन्न हो वहाँ पूर्वानुराग[12] जहाँ मान में मनाने वाले की ओर से विलम्ब होने से विरह की अग्नि बढ़े वहाँ मान'[13] विरह और जहाँ दवयोग से ही नायिका नायक दूर दूर हो जायँ, वहाँ दवयोगात[14] विरह कहलाता है। यह शाप, मेघ, पावक, पवन, उपबन्ध बीमारी, सिंहादिक के भयद शब्द उत्सव और भीड़ के भय आदि कई कारणों से हो सकता

---

१ रसिकानन्द ८।३२ २ वही, ८।३३ ३ वही, ८।३४
४ वही, ८।३५ ५ वही, ८।३६ ६ वही ८।३७
७ वही ८।३८ ८ वही ८।३९
९ वही ८।४० १० वही ८।४१। ११ रसरंग, ६।३१
१२ वही ६।३३ व ३४ १३ वही ६।५१ १४ वही, ६।५३।

है।[1] कवि ने करुणा विरह का भी सकेत किया है, परन्तु उसका वणन नही किया।[2]

प्रवास उदाहरण (रसरग)
तेरे *मन भावन* गरजि गरजि क ॥८।३२॥
श्रवणानुराग उदाहरण (वही)
जब तें सुनाई टूटि जाय कान री ॥८।३५॥
दृष्टवानुराग उदाहरण (वही)
नैनन मिलाय गयौ मिलौंगी बिछवारे पैं ॥८।३६॥
मान उदाहरण (वही)
पाती परनारि की पीरी परि गई है ॥८।५२॥
शाप उदाहरण (वही)
प्रीतम ल जलकेलि कहा हाथ म आयौ ॥८।५६॥

वियोग दशायें वियाग की दशाओ का वणन ग्वाल ने पारम्परिक ही किया है। कवियो ने वियोग की दस दशा मानी हैं—(१) अभिलाषा, (२) चिन्ता, (३) स्मृति (४) गुण कथन, (५) उद्वेग, (६) प्रलाप, (७) उन्माद, (८) याधि, (६) जडता और (१०) मरण।[3] जहा प्रिय मिलन की आकाक्षा बनी रहे वह 'अभिलाषा,[4] जहा प्रिय के दशना की चाह म चिन्तन जारी रहे वह 'चिन्ता',[5] किसी से श्रवण करके या कुछ देखकर प्रिय *का स्मरण हो,* वह 'स्मृति',[6] विरह म *प्रिय गुन कथन* 'गुणकथन',[7] विरह म जहाँ हित अहित समान लगें, इतनी व्याकुलता हो जाय वहाँ 'उद्वेग',[8] विरह-व्याकुलता म जहा व्यथ की बातें की जायें वहा 'प्रलाप'[9] अति व्याकुल हाकर जहाँ अविचार के काय हों वहा 'उन्माद',[10] जहा अति सतप्त होकर उष्णता उत्पन्न हो जाय वहा 'व्याधि',[11] जहाँ अति सन्ताप से बुद्धि ही जड हो जाय वहा जडता',[12] जहाँ विरहिन शरीर त्याग करने को उद्यत हो जाय, वहाँ 'मरण[13] दशा हाती है। कवि ने लक्षण और उदाहरण स्पष्ट

---

१ रसरग ६।५४ व ५५। २ रसिकानन्द, ८।४९।
३ (अ) रसरग ८।५९ व ६०। (ब) रसिकानन्द, ६।५७-५८।
४ रसरग, ८।६१। ५ वही, ८।६३। ६ वही, ८।६५।
७ वही, ८।६८। ८ वही ८।७०। ९ वही, ८।७२।
१० वही, ८।७४। ११ वही, ८।७६। १२ वही, ८।७८।
१३ वही, ८।८०।

और स्वच्छ हैं। कवि ने एक 'करुणरस' दशा लिखकर उसका वियोग से अन्तर इस प्रकार दिखाया है—

आसा है जह मिलन की सो सिंगार वियोग।
आस नही जह मिलनकी सो करुणाके जोग ॥[1]

वियोग मे दर्शन वर्णन ग्वाल ने स्थूल रूप म (१) श्रवण (२) स्वप्न (३) चित्र और (४) साक्षात् ये चार प्रकार के वियोग के दर्शनो का वर्णन किया है। इनके नाम से ही लक्षण स्पष्ट हैं, अत इनके उदाहरण मात्र ही दे दिये गये हैं। इन चारो क चार चार और उपभेद कवि ने दिखाये हैं, जो इस प्रकार हैं—

१ श्रवण बोल श्रवण, गुण श्रवण, पत्र श्रवण, नाद ध्वनि श्रवण।
२ स्वप्न ध्यान दर्शन, मूर्छा दर्शन टकटकी दर्शन, स्वप्न-दर्शन।
३ चित्र चित्र दर्शन मुकुरान्त दर्शन,[2] जलान्त दर्शन[3] मणिनान्तर-दर्शन।
४ साक्षात् साक्षात दर्शन, पटान्तर दर्शन,[4] जालान्तर-दर्शन[5] यवनिका दर्शन।[6]

इस सभी के लक्षण नामो से ही स्पष्ट हैं। कवि ने केवल इनके उदाहरण भर लिखे हैं। इस प्रसग म कवि ने पूर्वानुराग और श्रवण दर्शन के सूक्ष्म भेद को पहले पद्य म फिर गद्य म समझाया है जो इस प्रकार है—

टीका—श्रुत्वा अनुराग दृष्ट्वा अनुराग के विषय पहिल प्रेम नही होत। जब ही प्रेम को अकुर लगत है तब गुन रूप सुनत हैं अथवा लखत हैं। तब यह अकुर बढ्यो फेर जो वा प्रेम को कथन दूतिका प्रति कर सो पूर्वा अनुराग अरु श्रवन दरसन म पहिल नायक नायिका को मिलाप भयो होत है। पहिलई प्रेम जम्यो होत है। फेर वियोग म उनके गुन रूप की अवस्था सुनिकें जीव तृप्त होत है। तब सब मनोरथ पूरन होत है। इतनो भेद जानिय। —रसिकानन्द—छ०स० ८६ ८७ की टीका।

---

१ रसिकानन्द, ६।७७।
२ दर्पण के कोने मे।
३ जल के कोने मे।
४ परदे के भीतर।
५ जाल के छिद्रो मे होकर।
६ चिक आदि मे होकर।

२ नायिका भेद विवेचन   रीति काल मे यह विषय स्वतन्त्र और सवप्रधान रीति के विषय के रूप मे विवेचित हुआ है। ग्वाल न भी का य क अ य अगो की अपेक्षा नायिका भेद को ही अधिक महत्व प्रदान किया है। उनका अधिकाश काव्य साहित्य इसी विषय को किसी न किसी रूप म सम पित हुआ है।

"आश्रय आलबन कहै, प्यारी को कवि लोग"

अर्थात् नायिका शृङ्गार रस का आश्रय आलम्बन है। अत ग्वाल ने शृङ्गार के वणनोपरा त नायिका भेदो को[1] पहले और तत्पश्चात् नायक प्रसग को ग्रहण किया है। कवि ने नायिका की सामा य परिभाषा उसके रूप, चातुय और गुणो को लेकर इस प्रकार की है—

ता लिय तकि तरुनिनहु को, चल चित्त अममान।
भरे सु बहुविधि जायका, वहै नायिका जानि॥
—रसिकान द ४।१०।

तथा   रूपवती हू लखि लुभ, अति प्रवीन गुन खानि।
वहुन जायका दायका वहै नायिका जानि॥
—रसरग २।१४।

कवि के अनुसार ऐसी रूपवती रमणी, जो प्रवीण हो और नाना गुणो की भडार हो और जिसे देखकर पुरुष तो क्या सु दर स्त्रिया भी मुग्ध हो जायँ, नायिका कहलाती है। इसम उसका 'बहुत जायका दायका' होना अनि वाय है। 'जायका' शब्द नारी-प्रसग मे कुछ श्लील की कोटि म न आते हुए भी बडा सटीक है। कवि की नायिका की परिभाषा मौलिक प्रतीत होती है। *मोहि न नारि नारि के रूपा।* पर तु वह नायिका ही क्या जिस पर रमणी मुग्ध न हो, पुरुष तो मुग्ध होगा ही। ग्वाल की नायिका की परिभाषा म इतर कवियो की परिभाषा से वशिष्ट्य है। कवि ने अ य कवियो की

---

१ याते प्रथमहि नायिका करियत है निरधार।
—रसिकानन्द ४।९।

यातें वरनो नायिका पुनि नायक रस केतु।
—रसरग २।१२।

परिभाषा[1] से पृथक नायिका की विशषताओं मे उसके शारीरिक सौन्दय, प्रवीणता, गुणो और रति जनित विविध विलास सुख पर विशेष बल दिया है। मन की अपेक्षा नारी का शरीर ही कवि की दृष्टि म प्रधान रहा है।

जाति—ग्वाल ने गोणिका पुत्र न दकेश्वर आदि प्राचीन आचार्यों के मतानुसार नारी की चार जातियाँ लिखी हैं—(१) पद्मिनी, (२) चित्रिणी, (३) शखिनी और (४) हस्तिनी।[2] वात्सायन के कामसूत्र पर आधृत मृगी, बडवी और हस्तिनी[3] के भी लक्ष्य-लक्षण इन्होने दिये हैं। कामशास्त्र क अनुसार ही कवि ने इन नायिकाओ की नाना रति विधियो के भी वणन किय है। अन्तरग और बहिरग दोनो प्रकार की रतियो के सात सात भेद बताये गये हैं।

---

१ (अ) जा कामिनी मे देखिये, पूरन आठहु अग।
ताही बरन नायिका त्रिभुवन मोहन रग ॥—देवरस विलास।

(ब) उपजत जाहि बिलोकि क चित्तबीच रतिभाव।
ताहि बखानत नायिका जेप्रवीन कविराय ॥—मतिराम रसराज।

(स) रस सिंगार को भाव उर उपजहि जाहि निहारि।
ताको कवि नायिका बरनत विविध प्रकार ॥
—पद्माकर—जगत विनोद।

(द) जाहिलख उपज हिय रतियाई मनमांहि।
ताहि बखानत नायिका कविजन सुनतिसराहि ॥
—प्रतापसाहि—व्यग्यार्थ कौमुदी।

(य) चतुरन के चित मे बढ़ जेहि लखिसुचि रतिभाव।
ताहि बखानत नायिकाजे प्रवीन कविराय ॥
—चन्द्रशेखर—रसविनोद।

(फ) रूपभरी अति गुनभरी सीलभरी सुखदान।
ताकों कामिनि कहत है कोविद अति सज्ञान ॥
—नन्दकिशोर—श्यामाश्याम विनोद।

२ *कहियत ताको जाति अब चार चारहों नाम।*
पद्मिनी चित्रिनि सखिनी बहुरि हस्तिनोवाम ॥—रसिकानन्द।
होतनायका प्रथम ही जातभेद करि चार।
पद्मिनी चित्रित सखिनी फेरि हस्तिनी उचार ॥—रसरग २।१७

३ रसरग, ४।५४ ५५।

गुण—गुणों के अनुसार भानुदत्त[१] की पद्धति पर नायिकाओं के तीन भेद किये गये हैं। (१) उत्तमा, (२) मध्यमा और (३) अधमा।[२] इनका विस्तार सभी नायिकाओं में पाया जाता है।[३]

अंश—अंश के विचार से दिव्या अदिव्या और दिव्यादिव्या ये तीन प्रकार की नायिकाओं के नाम लिखे हैं। ये क्रमशः देवानी, मानुषी और देवमानुषी भी कहलाती हैं। सुरी पुलोमजा आदि दिव्या, दमयंती आदि रानियाँ अदिव्या और सीता रुक्मिणी, राधा आदि दिव्यादिव्या[४] हैं। सभी नायिका भेदों में इनका विस्तार है।

कर्म—ग्वाल ने कर्मानुसार तीन नायिकाओं के लक्षण-लक्ष्य लिखे हैं। वे हैं—(१) स्वकीया, (२) परकीया और (३) गणिका।[५] स्वकीया के तीन भेद और किये हैं—(१) मुग्धा (२) मध्या और (३) प्रौढ़ा।[६] कवि ने मुग्धा का दूसरा नाम 'वय संधि अंकुरित नवयौवना' लिखा है।[७] वय संधि के अनुसार ग्वाल ने 'मुग्धा' के चार भेद किये हैं—(१) अज्ञात यौवना, (२) ज्ञात यौवना, (३) नवोढा और (४) विश्रब्ध नवोढा।[८] ये ही नाम वल्लभमत के हैं गौड़ी मत में (१) नवल वधू (२) नवयौवना, (३) नवल अनंग और (४) सलज्जरति[९] ये चार भेद हैं। इन दोनों मतों के नामों में ही अंतर है। लक्षण चारों के एक से हैं। मतिराम, पद्माकर और सुंदर ने मुग्धा के केवल दो ही भेद माने हैं—(१) अज्ञात यौवना और (२) ज्ञात यौवना।[१०] ग्वाल के मतानुसार जिस रमणी को शरीर में आये यौवन का ज्ञान नहीं होता वह 'अज्ञात यौवना', जिसे उसका ज्ञान रहे वह 'ज्ञात यौवना' जिसे पति रति में लज्जा और भय रहे वह नवोढा और जिसे पति की प्रतीति हो जाय वह विश्रब्ध नवोढा कहलाती है।[११] प्रौढ़ा के भी आगे चलकर दो भेद किये गये हैं (१) रति प्रीता और (२) आनन्द सम्मोहिता।[१२]

१ रसिकानन्द, ४।६४। २ रसरंग, २।२६। ३ रसिकानन्द, ४।६६।
४ रसरंग २।३३ से ३।५ ५ वही, २।३६। ६ वही, २।४०।
७ रसिकानन्द, ४।८७। ८ वही, ४।८९ व ९०। ९ वही, ४।९२।
१० (अ) मुग्धा के द्वै भेदवर भाषत सुकवि सुजान।
इक अग्यात यौवन बहुरि ग्यात यौवनामान॥—रसराज।
(ब) मुग्धा द्विविधि बखानहीं प्रथम कही अज्ञात।
अज्ञात सुयौवना दूसरो भाषतमति अवदात॥—जगतविनोद।
(स) तामुग्धा द्वै भाँति की पंडित करत विवेक।
इक अज्ञात सुयौवना, ज्ञानयौवना एक॥—सुन्दरशृंगार।
११ (अ) रसिकानन्द ४।१०७। (ब) वही, ४।१०९। (स) वही, ४।१११।
(द) वही, ४।११४। १२ वही ४।१२३

पादाचाज सवक लेप त पल्यो आव है क स्वकीया म ही मान होत है तिनकी आग्या उ लघन करि क अपनो नवीन मत मिणि करिवो अति अनुचित है ।[१] यहाँ प्रश्न उठना है कि फिर ग्वाल कवि न परकीया म धीरादि भेदान्तगत खाडता, कलहा तरिता दोना कोपजम्य भेद क्या दिखाये हैं। इसका उत्तर कवि ने इस प्रकार दिया है— बहुत कवि सस्कृत अर भाषा म खण्डिता कलहातरिता परकीया कों वरनत हैं उनक लिखने वमूजिव हमहू परकीया खडिता कलहातरिता आगे वरनन करि देंगे ।[२]

पट्ऋतु वणन— ग्वाल ने रीतिकालीन शृङ्गारिक प्रवत्ति क अ तगत नायक-नायिकाआ के विविध भावा तथा उनके रूप सौ दय का चित्रण प्रधानता से किया है । अत स्वभावत प्रकृति चित्रण प्राय शृङ्गार के उद्दीपन रूप म ही अधिक हुआ है । तथापि प्रकृति वणन की अ य विधाएँ —निरपेक्ष प्रकृति चित्रणादि—उपेक्षित नही हैं । पर तु स्वत त्र छन्द सख्या म अल्प ही हैं ।

आलम्बन—ग्वाल ने आलम्बन रूप क प्रकृति चित्रण मे किसी मानवीय भाव का आरोप न करके उसे एक पृथक दृश्य के विशुद्ध रूप म ही अकित किया है । कवि ने निम्नाकित कवित्त मे वर्षा ऋतु की गगन व्यापी टेढी सीधी, गोल, चौकोर, रीती भरी, खुली, मुन्दी, काली, घोरी धुमरारी, धुरवारी आदि घनघटाआ का कसा मनोरम चित्र खीचा है और वह भी ऐसा कलामय कि एक के पश्चात् दूसरी और दूसरी के उपरा त तीसरी दृश्यावली नेत्रो के समक्ष सिनेमा की रील की भाति विविध सचल विम्ब चित्र प्रस्तुत करती चली जाती है । ग्वाल की चित्र ग्राहिणी क्षमता और प्रस्तुतीकरण की कुशलता की बरबस वाह वाह करनी पडती है । यह चित्र केवल नेत्र जगत की वस्तु है । पट्ऋतु वणन के उदाहरण देखिये—

---

१ रसिकानन्द—चतुथ प्रकरण छ० स० ३८ के पश्चात् की वार्ता ।
सखी भेद—मडना उपालम्भिका शिक्षिका और उपहासिका ।
दूती भेद—सघट्टना घोर निवेदना ।
नायक—पाचाल दत्त कूचमार और भद्र, शशक, वृषभ और अश्व (जातिगत)
गुण—उत्तम, मध्यम और अधम । अश-दिव्य, अदिव्य और दिव्यादिव्य ।
कम—पति। धीरललित धीरशान्त धीरोद्धत धीरो नत उपपति। ।उत्तम मध्यम अधम।, वशिक ।उत्तम मध्यम अधम। अनुकूल, दक्ष, चतुर, धृष्ठ, शठ मानी, प्रोषित पति ।
सचिव—पीठमद, विट, चेट और विदूषक । २ वही ।

प्यारी आऊ छात प " यह और है ॥३१॥

नीचे के कवित्त मे शीत का प्रभाव अपने पूण उत्कष पर दिखाई दे रहा है—

सीत को सवाई सी होत हैं ककोरा से ॥८२॥

शारच्चन्द्रिका की शोभा का एक निरपेक्ष चित्र देखिये—

भोरन के सोरन की चांदनी सरद की ॥४७॥

उद्दीपन—ग्वाल भाव विश्लेषण क कवि हैं। उन्होंने रीति परम्परा मे प्रकृति चित्रण के अन्तगत मानव स्वभाव और मानवेतर पदार्थों के स्थायी गुणो का परस्पर सापेक्ष रूप म वणन किया है। आश्रय की मनोदशा के अनुकूल ही प्रकृति के गुण, रूप आदि प्रस्तुत किये गये हैं। शृङ्गार के सयोग और वियोग दोनों पक्षो को दृष्टि म रखकर ही प्रकृति के विभिन्न उपादानो का चित्रण ग्वाल ने भी किया है। नायक-नायिका के सयोग म प्रकृति उनकी शृङ्गार-भावनाओं को तीव्रतर करती है। उनके शारीरिक और मानसिक सामीप्य की स्थिति म मानवेतर पदाथ भी उपभोग्य बन जाते हैं। वर्षा ऋतु म—

गेह अति ऊँचे होंय दामिनी के सग सो ॥३५॥

प्रकृति मानो चिल्ला चिल्लाकर मानिनी को मान विमोचन का आदेश सा देती है-

मान की बेर सनमान चचल चमाके सौं ॥३८॥

वियोगावस्था म प्रकृति ये ही उपादान शत्रु बन जाते हैं—

मेरे मनभावन गरजि गरजि क ॥रसरग ५।३२॥

विरहावस्था म कभी कभी यह प्रकृति अपने समस्त उपादाना के साथ विरहिन के विरहताप को आशातीत बढा देती है—

कूकें कोकिलान की फूकें डारती ॥षट्ऋतु ३७॥

कभी कभी विरही प्रकृति के विरुद्ध विद्रोह करके उसके उपादानों को नष्ट करने की भी कल्पना करने लगता है—

प्यारी बिन जानि मरोर डार ॥षट्ऋतु २९॥

'वर रहे झरसे मै गजरे गुलाब के', 'लिपट तमालन सौं धीर न धरत हैं,' हाय हाय धीर विरहागिनि म बारि दई बरी बलवन्त या [illegible]

नें,' 'कुसु भ पलासन डारि प ई तें, अगार भभू कें,' कारी कसाइन कूर कल-किनि रविन ववलिया काटती कूकें,' आदि इसी मनोदशा के भाव हैं।

सयोग म भी एक मनोदशा ऐसी होती है, जब प्रिय के भावी विरह की कल्पना प्रिया को व्याकुल कर देती है और वह उसे रोकने को प्रकृति का सहारा खोजती है—

जिन जाउ पिया लुए लागती हैं ॥ रसरग ४।२८ ॥

अप्रस्तुत—रीतिकालीन कवियो की परिपाटी पर ग्वाल ने भी अप्र स्तुत रचना विधान द्वारा प्रकृति का उपयोग भावो के उत्कर्ष हेतु किया है। मूर्त्त पदार्थों के लिये प्राकृतिक पदार्थों को अप्रस्तुत क रूप म प्रस्तुत करने मे ग्वाल का ध्यान दोनों के स्थूल रूप, गुण तथा क्रिया आदि के प्रभाव साम्य पर केंद्रित रहा है। निम्नाकित दोहे मे नायिका क रूप म प्रयाग त्रिवेणी तथा बकुण्ठ के रूपक की कल्पना की गई है—

प्यारी तन सु बकुण्ठ अपार ॥दृग शतक ४॥

निम्नोक्त दोहे मे अरविन्द, मकरद और मलिद के रूपको को ग्रहण किया गया है—

प्यारी तो तन ताल मो मन भयो मलिद ॥ वही ६ ॥

ऐसे दो और दोहे यहाँ और दिये जाते हैं—

सारस[1] दृग तेरे निरखि सारस[2] बेद बिजात।
सारस[3] दलदल दल नये सारस[4] जोट सुहात ॥वही ३२॥
पचलाइ तो दगन की लखि लखि खजन मीन।
सीखत प आवत नहीं लखि लखि खजन मीन ॥वही ५८॥

मूर्त्त दृश्यो क लिये प्रकृति के स्थूल अप्रस्तुतो का उपयोग हुआ है। उदाहरणार्थ

फाग की फल करी डालन ऊपर ॥ षटऋतु ७३ ॥

×

फाग म राग की रग फुहार हजार ॥ षटऋतु ७४ ॥

×

मानों स्याम कबु बठयो अलिनन्द है ॥ नखशिख ३६ ॥

×

मानों नीलमनि की चपा में चढाय हैं ॥ नखशिख ३७ ॥

सारस=शुद्ध सालस। २ छद विशेष, ३ कमल ४ पक्षी विशेष।

षटऋतु वणन विस्तार के साथ हुआ है । इसमे कवि ने हिन्दी की पूव परम्परा का ही पालन किया है ।

हास्यादिरस वणन रीतिकालीन कवियो ने शृङ्गार रस का विवेचन तो विशद किया किन्तु इतर रसो को चलता कर दिया । सभी रस ग्रन्थो मे प्राय यही परिपाटी पाई जाती है । ग्वाल ने भी स्वरचित रस ग्रन्थ 'रसरग' और 'रसिकानन्द' म इसी परम्परा का अनुसरण किया है । परन्तु सर्वांग निरुपक 'साहित्यानन्द' ग्रन्थ मे इन रसो को किंचित विशदता के साथ विवेचित किया गया ह । लक्षणो को स्पष्ट करने म गद्य का भी आश्रय लिया गया है । उदाहरण स्पष्ट हैं, जिन्हें प्राय पद्य के साथ गद्य म भी समझाया गया है । विवेचन स्वच्छ हैं । शृगारेतर आठो रसो के अतिरिक्त गौडेश्वर रूप गोस्वामी के 'भक्तिरसामृत सिन्धु' के उपासना कांड के दास्य, सख्य, वात्सल्य रसो का भी ग्वाल ने विवेचन किय । अन्य रीतकालीन कवियो द्वारा यह प्रयत्न नहीं किया गया । कवि ने अपने विवेचन को अधुनातन बनाने का सफल प्रयास किया ।

मुख्य रसो मे से रौद्र और वीर को छोड कर शेष छ रसो को स्वनिष्ठ और परनिष्ठ दो दो भेदो मे विभक्त किया गया है । रौद्र का कोई भेद नही हो पाया । शेष रसो के भेद निम्नाकित रूप में वर्णित हैं—

रस नाम	रस भेद
हास्य	स्मित, हसित [उत्तम], विहसित उपहसित [मध्यम] अपहसित, अतिहसित [अधम] के पृथक पृथक स्वनिष्ठ, परनिष्ठ करके कुल १२ भेद ।
करुण	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ, कुल २ भेद ।
वीर	युद्धवीर, विद्यावीर, दानवीर, दयावीर, धर्मवीर, कुल ५ भेद ।
रौद्र	कोई भेद नही, कुल १ भेद ।
भयानक	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ, कुल दो भेद ।
बीभत्स	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ कुल दो भेद ।
अद्भुत	अत्युक्ति भ्रमोक्ति चित्रोक्ति विरोधाभास के पृथक पृथक स्वनिष्ठ-परनिष्ठ भेद, कुल ८ भेद ।
शान्त	स्वनिष्ठ और परनिष्ठ कुल २ भेद ।

रस उपासना के भेद

सख्य	समता, विश्वासता ।
दास्य	दास्य ।
वात्सल्य	वात्सल्य ।

सस्कृत ग्रन्थो के आत्मस्थ और परस्थ ही ग्वाल के स्वनिष्ठ और पर निष्ठ हो गये हैं। वीररस मे सस्कृत मे शस्त्र और शास्त्र वीर भेद हैं। कवि ने 'शास्त्र' के स्थान पर 'विद्या' कर दिया है और 'शस्त्र वीर' युद्धवीर कहलाता ही है। शेष तीनो वीर रस के भेद भी नये नही हैं। अद्भुत रस के चारो भेद अत्युक्ति भ्रमोक्ति, चित्रोक्ति और विरोधाभास वास्तव म अलकार हैं। यहाँ तो मात्र इनक उदाहरणो म रसाभास ही अधिक लक्षित होता है।[1] इनके लक्षण नही दिये गये। उदाहरण कवि के अपने है और स्पष्ट हैं।

कान्ता हास्या करुणा, रौद्रा, वीरा, भयानका, वीभत्सा और अद्भुता य आठ रस दृष्टियाँ रसतरगिणी के आधार पर लिखी गई हैं। कवि का निजी मत है कि शृ गार सयोग म रूप ललचौंही, वियोग मे रुदिता हास्य म प्रफुल्लिता करुणा मे करुणा रौद्र म कुपिता, वीर म उत्साहिता भयानक मे भीता, वीभत्स म सकुचिता अद्भुत में चकिता और शा त रस मे समान दृष्टि होती है।[2] ये विभाजन वज्ञानिक भी प्रतीत होता है। रसो के जनक, मित्र और अमित्र रसो का वणन भरताचाय के मतानुसार किया गया है।[3] इसमे कोई मौलिकता नहीं है।

२ अलकार विवेचन—रीतिकाल के देव आदि अधिकतर कवियो ने अलकारो का वणन करते समय शब्दालकारो की प्राय उपेक्षा करते हुए अर्थालकारो—और उनमे भी विशेपत उपमालकारो—को ही प्रधानता दी है।[4] ग्वाल कवि ने शब्द को अथ का आश्रय बता कर अर्थालकार से पहिले ही शब्दालकारों का वणन प्रस्तुत किया है।[5] अलकारो का विशद और विद्वत्ता-

१ स्वनिष्ठ अत्युक्ति—साहित्यानन्द १०।८७, परनिष्ठ—वही १०।८८, स्वनिष्ठ भ्रमोक्ति—वही, १०।८९, परनिष्ठ भ्रमोक्ति—१०।९०, स्वनिष्ठ चित्रोक्ति—१०।९१ परनिष्ठ चित्रोक्ति—१०।९२ स्वनिष्ठ विरोधाभास—१०।९३, परनिष्ठ विरोधाभास—१०९४।

२ साहित्यानन्द—१०।२९, ३ (अ) वही १०।३१ ३२
(ब) वही १०।५६।

४ (अ) सरस वाक्य पद अरथ तजि, शब्दचित्र समुहात।
दधि, घत, मधु, पायसहि तजि वायस चाम चबात॥
—देव शब्द रसायन।
(ब) सकल अलकारन विस, उपमा अग उपग। ,, ,,

५ साहित्यानन्द १६।१७,

पूण वणन स्वरचित साहित्यानन्द षोडश स्कन्ध म 'अलकार भ्रम भजन' नाम से किया है। 'इस प्रकरण की रचना पडितराज जगन्नाथ की परम्परा पर हुई है। विषय के आधार सस्कृत के शास्त्र ग्रन्थ विशेषत काव्य प्रकाश, चन्द्रालोक, कुवलयानन्द और अलकार चन्द्रिका रहे हैं। 'उन्हाने सस्कृत आचार्यों तथा भाषा काव्य शास्त्रियो के मता का यथास्थान खडन कर के तक सगत स्थापनाएँ की हैं।[1] शब्दालकारो म छेकानुप्रास, वृत्यानुप्रास, लाटानुप्रास, यमक, चित्रालकार पुनरुक्तवदाभास का ही वणन है वक्रोक्ति को शब्दालकारों म न लेकर अर्थालकारो म रखा है।

ग्वाल की अलकार विषयक मान्यता

परिभाषा—जो रस व्यग्य और शब्दाथ से भिन्न होकर शब्दाथ म विषयगत चमत्कार का कारण होता है, वही अलकार है।[2] यहाँ अलकार की रस व्यग्य से भिन्नता मानी गई है। शब्दाथ से भी भिन्न है, पर शब्दाथ म है। अलकार चन्द्रिका म वद्यनाथ सूरि ने अलकार को रस से रहित व्यग्य से पृथक माना है। ग्वाल भी अलकार को व्यग्य से भी भिन्न मानते हैं। ग्वाल ने अन' का अथ पूण' मानकर अलकार को अक्षरो मे व्याप्त बताया है। स्वर्णादि के भूषण तो उतारे और पहने जा सकते हैं परन्तु ये अलकार कभी शब्दाथ से पृथक नहीं किये जा सकते।[3]

अलकार इक छद में　　　　　तासु नाम कहवाय[4] ॥

अलकार के क्षत्र मे ग्वाल ने कोई मौलिक उद्भावना स्थापित नही की जो कुछ प्राचीन ग्रन्थो मे वणन है वही उन्होने भी वणन कर दिया है। यत्र-तत्र नामों म परिवतन अवश्य हुआ है, जसे-प्रतिबध के स्थान पर प्रतिवध। रस दृष्टियो के नाम भी दूसरे रख दिये हैं। विवेचन मे कवि ने सूक्ष्म दृष्टि से काम लिया है। सस्कृत और भाषाग्रन्थो म वणित प्राय कोई भी अलकार कवि की दृष्टि से ओझल नहीं रह पाया यही नहीं विस्तृत गद्य टीकाओं का सहारा लेकर उसने विवादास्पद लक्षणो को स्पष्ट किया है। एक विशेषता कवि ने इस विषय मे यह दिखाई है कि सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्तर वाले मिल दिखने वाले अलकारों के भेदो को पारदर्शी दृष्टि द्वारा पृथक् पृथक् करके दिखा दिया है। ये इस प्रकार हैं रूपक तथा वाचक धम लुप्तोपमा,

१ वही पृष्ठ १४५　　२ साहित्यानन्द, १६।४-५,　　३ वही १६।३।
४ वही १६।१५।

अधिक अभेद रूपक तथा परिणाम, सन्देह तथा विकल्प शुद्धापह्नुति तथा पर्यस्त, पर्यस्तापह्नुति तथा परिसंख्या, छेकापह्नुति तथा व्याजोक्ति, अक्रमातिशयोक्ति तथा अक्रम हेतु, तुल्ययोगिता प्रथम तथा दीपक वर्ण्य अवर्ण्य अप्रस्तुत प्रशंसा तथा प्रस्तुतांकुर पर्यायोक्ति तथा गूढोक्ति तथा विषाद तृतीय विषम तथा विषाद, तृतीय सम तथा प्रहर्षण, प्रहर्षण तथा सूक्ष्म तृतीय विशेष तथा प्रथम पर्याय, प्रथम समुच्चय तथा कारक दीपक, अविज्ञा तथा अनद्गुण मीलित तथा सामान्य और उन्मीलित तथा विशेष।[1]

इस विषय मे ग्वाल की प्रौढ विश्लेषण प्रतिभा, विचार गाम्भीर्य और विशद शास्त्रानुकूल विवेचनाशक्ति भी झलक स्पष्ट मिलती है। रीति के परवर्ती आचार्य होने के नाते उनसे अपेक्षा भी यही थी।

३ पिंगल वर्णन–पिंगल छन्द शास्त्र है। छन्द के बिना काव्य की सृष्टि सम्भव नहीं। अतः पिंगल शास्त्र काव्य का एक अनिवार्यता है। छन्द-नियामक विषय होने के कारण यह दुरूह और शुष्क है। फलतः रीतिकालीन कवियो मे से कतिपय ने ही इस पर ग्रन्थ लिखे हैं। ग्वाल ने वृत्ति विनोद शीर्षक से साहित्यानन्द मे दो विस्तृत स्कन्ध लिखकर इस क्षेत्र मे भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। साथ ही छन्द प्रस्तार पर 'प्रस्तार प्रकाश' नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी लिखा, जो पिंगल मे कवि की विशेष गति का द्योतक है। पिंगल के आदि आचार्य शेषनाग हैं जिनको कवि ने आरम्भ मे ही प्रणाम किया है।[2] कवि के अनुसार पिंगल का शाब्दिक अर्थ है गुरु लघु को बाधना।[3] कवि ने प्रस्तार की विविध विस्तृत विधियों के लक्षण और उदाहरण दिये हैं। वर्णित छन्दो के नाम कवि के ग्रन्थ परिचय मे दिये जा चुके है। ग्वाल का आधार शेषनाग हैं।[4]

कवि ने विस्तृत गद्य वार्ताओ और टीकाओ, प्रस्तार स्वरूपो द्वारा विषय को हृदयगम कराने का पूर्ण प्रयास किया है। विस्तार की दृष्टि से देखा जाय तो आर्या के ८, १६, २० ००० और दोहा को १६ ०६, ५५ ६२५ की गिनती तक प्रस्तार किया है। पर यहाँ एक कमी खटकती है। वह यह कि पिंगल के अन्य शास्त्रीय ग्रन्थो से छन्दों के नामों को मिलाकर समन्वय नहीं दिखाई देता। यो एक एक छन्द के कई नाम दे दिए गये है, परन्तु उनके विशद विवेचन का अभाव है। कवि पिंगल के शिक्षक आचार्य की दृष्टि से

१ वही, छन्द ४०० से ४२५ तक। २ वही १।१५।
३ वही, १।१६। ४ वही, २।५७।

कवि ने निश्चय ही पिंगल निरूपक हिन्दी आचार्यों में अपना प्रमुख स्थान बनाने का स्तुत्य प्रयास ही किया है।

४ काव्य दोष वर्णन—संस्कृत के प्रायः सभी आचार्यों ने काव्यगत दोषों के परिहार का वर्णन किया है। दोष विवेचन शास्त्रीय विषय है हिन्दी के सर्वाङ्ग निरूपक आचार्यों ने ही काव्य दूषणों का वर्णन किया है। रचित स्वतन्त्र दोष ग्रन्थ 'कवि दर्पण' और साहित्यानन्द के दोष प्रकरण के पन्द्रहवें स्कन्ध के अध्ययन से प्रतीत होता है कि इन्होंने मम्मटाचार्य की परिपाटी पर थोड़े बहुत अन्तर से दोषों का नामकरण करते हुए लक्षण और उदाहरण अपने दिये हैं। उदाहरणों में हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों के भी उदाहरण अंगीकृत किये और निर्दुष्ट बनाकर दिखाये हैं। खंडन मण्डन-पद्धति से प्रसिद्ध संस्कृत शास्त्रकर्त्ताओं और भाषा कवियों के मतों के भी उल्लेख किये गये हैं गद्यात्मक शैली ने ग्वाल को इसमें पर्याप्त सफलता प्रदान की है। संस्कृत के ग्रन्थों के दोष उदाहरणों को भी कवि ने मम्मट के काव्य प्रकाश के आधार पर निर्दिष्ट नाय रखा है। साराश यह कि कवि की विषय दृष्टि सर्वतोमुखी रही है। वर्णन शैली शास्त्र सम्मत है। पहले लक्षण फिर अपना उदाहरण, तत्पश्चात इतर कवियों के उदाहरण, तदुपरान्त दुष्ट पदों का दोष-निरसन करना—आद्योपान्त इसी क्रम का अनुसरण किया गया है। लक्षण लक्ष्य दोनों स्पष्ट है।

ग्वाल की दोष विषयक मान्यताएँ

दोष परिभाषा—जिस प्रकार शरीर में व्याधि होती है उसी प्रकार कविता में दोष होते हैं।[1] काव्य के सुनने में और समझने में जो निमिषमात्र हर्ष प्राप्त होता है, उसे जो दुखद रोकता है, वह दूषण है।[2] काव्य के और कवि की उत्कृष्टता परखने को दोषों के विचार से ग्वाल ने एक अपना मापदंड बनाया है। वह यह कि जिस कवि का आधा काव्य सदोष हो, वह कवि और उसका पूरा काव्य ही दूषित है। यदि काव्य का पंचमांश ही सदोष हो तो फिर वहाँ उतने में दोष गिनने चाहिए। वहाँ कवि अदोष है। क्योंकि अधिक वर्णन में चूक हो ही जाया करती है।[3] कवि की दोष परिभाषा में 'सुनिबे' पद से शब्द और 'समुझ' से अर्थ और रस दोनों का भाव व्यंजित होता है। यह बिल्कुल सटीक ही है क्योंकि दोष स्थूल रूप में तीन ही प्रकार के माने गये हैं—(१) शब्द गत दोष, (२) अर्थगत दोष और (३) रसगत दोष।[4]

१ (अ) कवि दर्पण १।१७। (ब) साहित्यानन्द, १५।२। २ वही १५।३।
३ (अ) कवि दर्पण १।१०–१२। (ब) वही, १।१३।
४ (अ) वही, १।२३। (ब) काव्य प्रकाश–सूत्र ७१, पृ० १६८।

कवि ने शब्ददोषो को तीन भेदो म विभक्त किया है—(१) पददोष, (२) पदांशदोष और (३) वाक्य दोष। यही तीन भेद अथ और रस म भी माने जाते हैं। कवि ने दोषो को मम्मट के आधार पर वर्गीकृत किया है।

अलकार दोषों मे (१) जाति यून (२) जाति अधिक (३) अस भव (४) भि न लिंग, (५) वचन अभ्र य, (६) असादृश्य (७) यून प्रमाण (८) अधिक प्रमाण भेद कवि ने किये हैं जो वास्तव म नये नही हैं। ये उपभेद और उपमान के रस-पोषा मे इस प्रकार मिलते हैं—जाति यून और जाति अधिक सहचरि भि न म यून प्रमाण और अधिक प्रमाण लोक विरुद्ध म असम्भव और भि न लिग लोक विरुद्ध म, अश्रव्य वचन और असा दृश्य भी सस्कृत के प्रसिद्ध विरुद्ध क आकृति के भेदो म समाहित हैं।

सस्कृत साहित्य मे वाक्यगत दोषो की सख्या २१ है। ग्वाल ने १८ भेद किये हैं। उपसग लुप्त, विसग लुप्त और विसधि हिन्दी मे नही होती। ग्वाल ने मम्मट के अनुसार शेष दोषो का वणन किया है। केवल कुछ नामो म ही अन्तर है।

अथगत दोषो का वणन भी काव्य प्रकाश सम्मत है केवल नामों का यत्रतत्र अ तर है। सस्कृत के अप्रसिद्ध को प्रसिद्ध विरद्ध लिखकर नो उपभेद कर दिये हैं, जो वज्ञानिक ही है।

५ शब्द शक्ति, रीति, गुण और वृत्ति शब्द शक्ति साहित्य शास्त्र का अत्यन्त महत्वपूण और सूक्ष्म विषय है। हि दी के कतिपय आचार्यों ने ही इतनी गहराई तक जाने का साहस किया है, भले ही वे उसे स्पष्ट न कर पाये हों। ग्वाल ने 'साहित्यान द के एकादश स्कन्ध मे 'लक्षणा-व्यजना' शीर्षक से शब्द शक्ति की गहराइयों म उतरने का प्रयत्न किया है। शब्द की परिभाषा करके उन्होंने पहले उसको ध्वन्यात्मक और वर्णात्मक भेदों म विभक्त किया है।[1] वर्णात्मक को फिर रूढ, रूढयौगिक और यौगिक भेदो मे बाँटा है।[2] शब्द की वाचक लाक्षणिक और व्यजक तीन कोटियाँ रखकर लक्षणा के चार भेद किये हैं—(१) उपादान, (२) लक्षणलक्षणा, (३) सारोपा और (४) साध्यवसाना। इन चारो को पुन गौणी और शुद्धा दो दो भेदों म रख कर आठ भेद किये हैं।[3] गौणी के और भी दो भेद—(१) रूढा और (२) प्रयोजनवती—किये गये हैं।[4] प्रयोजनवती लक्षणा दो प्रकार की है—(१) गूढ व्यग्य और अगूढ व्यग्य।[5] इस प्रकार ८ प्रकार की रूढा और १६ प्रकार

१ साहित्यानन्द ११।२, २ वही, ११।४। ३ वही, ११।१४-१५, ४ वही ११।२२ ५ वही ११।२३।

की प्रयोजनवती हुई। प्रयोजनवती कही धम म और कही धर्मी में मानी गई है। इस प्रकार उसक ३२ भेद होते हैं। रूढा और प्रयोजनवती मिल कर ४० प्रकार की हुई। पद और वाक्यगत दो भेद इन ४० के और करके लक्षणा ८० प्रकार की गिनाई गई है।[1] कवि के मत मे लक्षणा के अस्सी भेद केवल दिखावा और कथन मात्र ही है।[2] चाहे कितने ही भेद कर दिये जायें परन्तु जिनके उदाहरण बन सकें, वे ही ठीक हैं।[3]

व्यजना अनेक या एक वाचक मे जो व्यग्य प्रकट करे, वह व्यजना है। यह शाब्दी आर्थी वृत्ति वाली है। स्थूल रूप से यह दो प्रकार की है—(१) अभिधामूल और (२) लक्षणामूल। अभिधामूल व्यजना तेरह प्रकार की है-(१) सयोग, (२) वियोग, (३) साहचय, (४) विरोधा (५) अर्था, (६) प्रकरणा (७) चिन्हा, (८) शब्द, (९) समर्था, (१०) उचिता, (११) देश, (१२) काल और (१३) व्यक्तिगत।[4]

लक्षणा मूल व्यजना स्थूल रूप से गूढ और अगूढ दो प्रकार की है।[5] लक्षणा शब्द शक्ति का एक पृथक ही भेद है, तब व्यजना मे लक्षणा मूल भेद क्यो रखा गया। यहाँ यह तक उठता है कि जब कोई लक्षणा ही बिना व्यग के नही होती, तब फिर यहाँ पृथक व्यजना क्यो रखी गई है। कवि इसका उत्तर इस प्रकार देता है कि व्यजना म अभिधामूल व्यग्य और लक्षणा मूल दोनों ही बनते हैं, अत इनका वणन पृथक भी होना चाहिये ही।

आर्थी व्यजना कवि ने १० प्रकार के प्रभाव की बताई हैं—'१) वक्ता, (२) बोधव्य, (३) काकु वाक्य, (४) काकुवाक्य (वचन) (५) अन्य सन्निधि, (६) प्रस्तावन, (७) देनिक, (८) कालिक, (९) राज्य और (१०) चेष्टा।

ग्वाल ने शब्द शक्ति का वणन पर्याप्त गहराई म पैठ कर किया है। मम्मट के अनुसार उसके भेद और उनके लक्षण लक्ष्य शास्त्र-सम्मत है। लक्ष्यो मे विविधता, स्पष्टता और सुबोधता है। अन्य हिन्दी कविया के उदाहरणों को भी अगीकृत किया गया है। सक्षेप मे कवि ने अपने उद्देश्य म सफलता प्राप्त की है।

प्रचलित परम्परा मुक्त प्रणाली म ग्वाल ने रीति, गुण और वृत्तियो का प्राय मम्मट के आधार पर वणन किया है। गुणों को कवि ने काव्य पुरुष के गुण की सज्ञा दी है—माधुरज आदि गुन सनमानिये।[6] एक दूसरे स्थान

१ साहित्यानन्द ११।६१ ६८, २ वही ११।६०, ३ वही ११।५४,
४ वही ११।७२, ५ वही ११।१०२ ६ वही १२।४।

पर गुण को जीव (प्राणी) की सूरतादि माना है—सूरतादि ज्यो जीव म त्या गुण काव्य सु जान ।[1] गुण का्य में मुख्य रस का उत्कष होता है—मुदय जु रस उत्कस को हेतु सरूपा होइ ।[2] पहले मम्मट के अनुसार तीन–माधुय और प्रसाद–गुणभेद किये गय हैं तदुपरा त प्राचीन आचार्यों के दश गुणा—श्लेष प्रमाद, समता, समाधि, माधुय, ओज, सौकुमाय, अथ व्यक्ति उदार का ति का भी सक्षिप्त वणन प्रस्तुत हुआ है । प्रमुख तीनो गुणो के सम्मिश्रण स छ गुणो को कणन ग्वाल ने किया है—(१) माधुय निष्ठ प्रसाद (२) ओजनिष्ठ प्रसाद, (३) माधुय ओजनिष्ठ प्रसाद, (४) शुद्ध माधुय, (५) शुद्ध आज और (६) शुद्ध प्रसाद ।

गौडी, पाचाली, वदर्भी तथा लाटी रीतियो और परुषा उपनागरिका और कामला वृत्तियो का वर्णन चलता हुआ किया गया है । गौडी रीति की वत्ति परुषा, वदर्भी की उप नागरिका पाचाली (गौडी वदर्भी सयुक्त) की सयुक्त वृत्ति (परुषा उपनागरिका) और लाटी की कोमला वृत्ति कही गई है । आज गुण के वण गौडी रीति म, माधुय क वदर्भी म और प्रसाद क वण पाचाली मे होते हैं । लाटी के कोमल वण प्रसाद गुणमय होते हैं ।

कवि न इस वणन म न तो कोई विस्तार दिया है और न तकपूण विवेचन । वणन सक्षिप्त और सामा य स्तर का है ।

६ का य निरूपण—ग्वाल के अनुसार काव्य मे श द और अथ का सु दर मेल, नियमिक वण विचार छ दोबद्धता और चमत्कार की प्रभूत मात्रा मे विद्यमानता का होना आवश्यक हैं ।

शब्द अथ सु दर का य उचार ।।साहित्यान द।।१२।३ ।

इस लक्षण म से जो विपयय हो, वही दोष कारण है ।[3] का य की परिभाषा करते समय ग्वाल जयदेव के बहुत समीप हैं ।

जयदेव की परिभाषा—निर्दोषा लक्षणवती सरीतिगुण भूषिता ।
सालकार रसानेक वत्तिर्वाक्का य नामभाक् ।।
—चद्रालोक १।७ ।

पद पश्चात्, वाक्य, वाक्याथ रसगनादि दोषा से शू य अक्षर सहतादि लक्षणा स युक्त पाचाली लाटी आदि रीतिया स भूषित, शब्दायगत अलकारो से चमत्कृत तथा कौशिकी आदि शब्द वृत्तियों से सम्बद्ध वाक्य को ही जयदेव ने का य कहा है ।

---

१ वही, १४।२ । २ वही १४।२ मम्मट ने भी यही परिभाषा दी ह । काव्यप्रकाश सूत्र ८७ (कापी देखो) । ३ साहित्यान द १२।४ ।

ग्वाल ने शब्द और अर्थ की सुन्दर रचना, नियमित वर्ण और छन्दो बद्धता की पिंगल सम्मतता आदि लक्षण काव्य की निर्दोषिता की ओर ही इंगित करते हैं। 'बहुत चमत्कृत' पद अलंकारों की अनिवार्यता का द्योतक है। ग्वाल का निम्नांकित कवित्त जयदेव की काव्य-परिभाषा के कितना समीप है यह अवलोकनीय है।

हाव भाव दायनि सजुक्त कवित्त नये नये ॥ रसिकानन्द ११३९॥

ग्वाल ने काव्य पुरुष का स्वरूप इस प्रकार किया है—शब्दार्थ शरीर—शब्द अग्रभाग और अर्थ पृष्ठ भाग—व्यंग्य ध्वनि ही आत्मा, अतिशय व्यंग्य ध्वनि, कहीं व्यंग्य कहीं ध्वनि ही जीवन, अद्भुत उक्तियां ही वस्त्र और वेश माधुर्यादिगुण ही गुण, अलंकार ही भूषण रूप, अर्थ व्याधि व्रण, कफ आदि ही काव्य के दोष हैं।

काव्य के कारणों में ग्वाल ने जयदेव और मम्मट के सिद्धान्तों का समन्वय कर दिया है। जयदेव के अनुसार—'प्रतिभव श्रुताभ्यास सहिता कविता प्रति हेतु'—और मम्मट के अनुसार—'शक्ति निपुणता लोके शास्त्र काव्याद्य वेक्षणात। काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यास इति हेतुस्त-दुद्भव।'[1] और ग्वाल काव्य का कारण इस प्रकार लिखते हैं—

काव्य करन कारन कहूं देव बरदाय ॥
—साहित्यानन्द १२।५ ६ ॥

देव वरदान ग्वाल की अपनी मौलिक सूझ है। काव्य शक्ति के अनुसार तीन प्रकार के कवि होते हैं—(१) देव वरदान से उत्तम, (२) शास्त्राभ्यास से मध्यम पंडित कवि और (३) अभ्यास से अपट अधम कवि।

काव्य के प्रयोजन में ग्वाल मम्मट के सिद्धान्त से प्रभावित है।[2] 'जगचातुरी' में व्यवहार', 'दुगति दूर' में शिवत्व भाव और रहै मुदित' में 'कान्तासम्मितयोपदेशयुजे' का भाव आ जाता है।

ग्वाल ने शास्त्र सम्मत काव्य के तीन ही भेद किये हैं—(१) उत्तम, (२) मध्यम और (३) अधम। जिसमें व्यंग्य या ध्वनि प्रधान हो वह उत्तम काव्य[3] जहाँ अप्रधान अचमत्कृत व्यंग्य हो[4], वह मध्यम काव्य और जिसमें शब्द चित्र हो या अर्थ का किंचित व्यंग्य हो[5], वह अधम काव्य है। इस प्रसंग

१ काव्य प्रकाश—१।३। २ (अ) साहित्यानन्द, १२।१०।
(ब) काव्य प्रकाश १।२। ३ साहित्यानन्द १२।१२।
४ वही, १३।२। ५ वही, १३।३९।

म कवि ने व्यंग्य और ध्वनि का विन" विवेचन प्रस्तुत करते हुए ध्वनि की परिभाषा इस प्रकार की है—

प्रथम अर्थ ते कुछ अरथ, ताते कछु जु अर्थ।
यह ही अति सों व्यंग है यही धुनि सामर्थ ॥साहित्यानन्द १२।१७।

स्थूल रूप स यह ध्वनि दो प्रकार की है—(१) अविविक्षित वाच्य ध्वनि और (२) विविक्षित वाच्य ध्वनि। ध्वनि अविविक्षित वाच्य लक्षणा मूलक है, जो मुख्यार्थ म पाई जाती है। इसक दो उपभे" और है-(१) अर्थान्तर सङ्क्रमित और (२) अत्यन्त तिरस्कृत। अर्थान्तर सङ्क्रमित ध्वनि का उपादान लक्षणा से सोजन्य है और अत्यन्त तिरस्कृत ध्वनि का जन्म लक्षण लक्षणा से होता है। विविक्षित वाच्य ध्वनि का जन्म अभिधामूल लक्षणा स होता है। यह भी दो प्रकार की कही गई है-(१) असलक्ष्य क्रम और (२) सलक्ष्यक्रम ध्वनि। असलक्ष्यक्रम ध्वनि रसभाव ध्वनि म होती है। यह तीन प्रकार की है-(१) शब्द शक्ति जन्य, (२) अर्थ शक्ति जन्य और (३) शब्दार्थ शक्ति जन्य। शब्द शक्ति से वस्तु और अलकार ध्वनि बनती है। अर्थशक्ति के तीन स्थूल भेद हैं। (१) स्वत सम्भवी, (२) कवि प्रौढोक्ति और (३) कवि निबद्ध प्रौढोक्ति। इन तीनो के फिर चार चार अन्तर्गत भेद हैं-(१) वस्तु से वस्तु, (२) वस्तु से अलकार, (३) अलकार स वस्तु और (४) अलकार स अलकार। इस प्रकार असलक्ष्यक्रम ध्वनि के १२ भेद कहे गये हैं। सलक्ष्य क्रम ध्वनि के १५ भेद वर्णित किये हैं। विद्वानो ने ध्वनि भेद की गिनती १०४५५४ तक कराई है। ग्वाल न इस गणना को कथन मात्र ही कहा है। और १५३ भेदों को ही मान्यता दी है। इन्होने प्रत्येक रस म १७-१७ ध्वनि भेदो को स्थान दिया है।[२]

मध्य काव्य के गुणीभूत व्यग्य को कवि ने आठ प्रकार का लिखा है—(१) अगूढ, (२) इतराग, (३) वाच्य सिद्धयाग (४) अस्फुट (५) सन्दिग्ध, (६) तुल्य प्रधान, (७) काकु, (८) असुन्दर। इनमे इतराग, असुन्दर सन्दिग्ध वाच्य सिद्धयाग, काकु और अस्फुट छ ही ठीक बताये गय हैं। उत्तम काव्य म १७ भेद और मध्यम म छ भेद ही पाये जात हैं। ग्वाल ने तुल्य प्रधान और अगूढ का उत्तम काव्य के सत्रह भेदों के ही भीतर अन्तर्भूत माना है। पूर्व पडितो ने मध्यम काव्य मे आठ भेद माने हैं। ग्वाल ने उनसे सहमत न होकर ६ ही भेदा की उसम विद्यमानता स्वीकार की है।[3]

---

१ देखिये साहित्यानन्द स्कन्ध १२ छ० स० ६९ से ८१ तक।
२ वही १२।८५ ८९।   ३ वही १३।१३।

अधम काव्य मे चित्रभेद के अ तगत ग्वाल ने इनका वणन लक्षण, लक्ष्यो और स्वरूपो के साथ किया है—अनुप्रासनिष्ठ, यमकनिष्ठ बहिर्लापिका, आद्याक्षरी मध्याक्षरी, अ त्याक्षरी, अ तर्लापिका, मुक्तावरणग्राही जलभि नाय श्लेषोत्तर, गतागत वधरचना—अश्वगति, गोमूत्रिका, पदगुप्त कपाटब ध, हारब ध, कमलब ध, अष्टदल कमलब ध, त्रिपदी चक्रब ध, धनुषब ध, सवतोभद्र, छत्रब ध, चौकीब ध, वृक्षब ध, समुद्रब ध, अधर रहित, द्वाक्षरी एकाक्षरी।

काव्य निरूपण म ग्वाल ने अपने विस्तत गहन अध्ययन का परिचय दिया है। विविध कवियो द्वारा किये गय ध्वनि आदि के भेदो मे से औचित्य के अनुसार भेदो को चुना है। अ य मता का खडन करने हुए कवि ने अपनी मा यतायें शास्त्र सम्मत विधि से स्थापित की है। लक्षण स्पष्ट है। उदाहरण कवि के अपने हैं और लक्षणो क अनुकूल बन पडे हैं। विवेचन विशद हुआ है।

(आ) नाराशसा तथा राजवभव वणन

ग्वाल ने अपने जीवन के लगभग ४५ वष राज्याश्रय म ही व्यतीत किये। आश्रयदाताओ की प्रशस्ति मे उ होंने पर्याप्त लिखा है। यही नही कतिपय सरदारो की भी जि होने उन पर अपना वरद हस्त रखा, कवि ने स्तुतिया की हैं। प्रथम कोटि मे लाहौर के राज्याधिपति महाराजा रणजीतसिंह और महाराजा शेरसिंह, नाभानरेश जसव तसिंह और भरपूरसिंह, आते हैं। दूसरी कोटि म अमृतसर के सरदार लहनासिंह लाहौर दरबार के मत्री राजा ध्यानसिंह, राजा हीरासिंह जल्हा पडित और नाभा के गुरुसहाय पडित गणनीय हैं। कवि द्वारा प्रशसितों की एक विशिष्ट श्रेणी सिख धम के दस गुरुओ की है, ये कवि के आश्रयदाता तो नहीं रहे पर तु जो ऐतिहासिक और धार्मिक जगत के महापुरुष थे। एक चौथी श्रेणी ऐसे व्यक्तियो की है जिनका गुण कीतन कवि ने आत्मिक भक्तिभाव में लीन होकर किया है। कवि के पूवज, गुरु और कतिपय मित्र ऐसे ही कुछ पात्र हैं।

ग्वाल की प्रशस्तिया रसिकान द, विजय विनोद, इश्कलहर दरियाब आदि के आरम्भ म क्रमबद्ध रूप म और ग्रथा त मे आशीर्वादात्मक रूप म लिखी गई हैं। यत्र उदाहरणो मे भी आश्रयदाता की प्रशस्तिया मिलती है। कवि दपण प्रभृति ग्रथा की पुष्पिका के रूप म भी कुछ प्रशस्तियाँ विद्यमान हैं। ग्वाल ने अपने गुरु और मित्रो की स्तुतियाँ ग्रथो के वर्ण्य विषयो के बीच बीच मे ही अधिक की है। गुरु और पिता को कवि ने प्राय मगलाचरणो मे भी स्मरण किया है।

नर गुण गायन म कवि ने सयम से काम लिया है, इसका कारण यह रहा है कि रणजीतसिंह जसवन्तसिंह भरपूरसिंह और शेरसिंह प्रभृति सभी नरेश इतिहास और साहित्य मे शूरवीर, यशस्वी, गुणी गुणग्राही और प्रभूत वभव के स्वामी प्रसिद्ध हैं। जसवन्तसिंह भरपूरसिंह दोनो अच्छी कोटि क कवि भी थे। इनके दरबारो म दजनो हिन्दी कवि रहते थे। जसवन्तसिंह क काव्य ग्रन्थ भी उपलब्ध होते हैं। लहनासिंह प्रसिद्ध कवि साहित्यकार और ज्योतिषशास्त्र के अच्छे ज्ञाता थे। जल्हा पडित प्रसिद्ध विद्वान और ज्योतिषी थे। कुछ स्थलो को छोडकर जहा कवि की दृष्टि अतिरजित रही है स्तुत्य व्यक्तियो के चरित्रो म अमानवीय गुणो का आरोप कवि ने प्राय नहीं किया है। यो काव्य तो काव्य ही है इतिहास नहीं। राजाओ की प्रशसा मे उनके वयक्तिक गुण कथन के अतिरिक्त राज्य वैभव के वणन भी हैं। गुरुओ म कवि को दवोचित चरित्रो की झाकी दिखाई दी है। इतर नर प्रशस्तियो म वयक्तिक गुणो का ही कथन अधिक मिलता है। उपयुक्त सामान्य विशेषताओ को ही दृष्टिगत रखकर हम ग्वाल के नाराशसी काव्य की कुछ झाकियाँ निम्नाकित पक्तियों म प्रस्तुत कर रहे हैं।

रणजीत सिंह एक कुशल शूरवीर योद्धा, विजेता, प्रशासक, सगठन कर्त्ता, सेना पति बुद्धिमान और विचक्षण राजनीतिज्ञ के रूप मे महाराजा रण जीतसिंह की प्रशसा भारतीय और विदेशी इतिहासकारो ने एक स्वर से की है। ग्वाल ने इन्ही गुणो को काव्य का विषय बनाया है।

रणजीतसिंह स्वय भगवान के अश के रूप म प्रकट हुए हैं। वे वेद, गो, विप्र, तुलसी के रक्षक, तेजवान, ज्ञानवान, बुद्धिमान, दानी और शूरवीर हैं।[1] आयु के बढने के साथ ही साथ उनका प्रताप बढा। महासिंघ के इस सुपुत्र की यश की खटाई से अनेक राजाओ के राज्य फटने लगे।[2] काबुल ते कई बेर कतल करैया आय [3] दिल्ली स कई बार 'चक्ता[8] कत्ता[4] बाध बाध कर आये परन्तु व किसी से सर' न हुए। यही नहीं—

ठाकुरी न काहू की रहन दीनी परबत मे साइस हू धारते कराई नित चाकरी।[6]

उन्होंने समस्त पजाबी और पहाडी रियासतें तो जीती हीं, अटक, पशावर, काश्मीर, मनकेरा और भारी मुलतान तक डगमगाने लगे।[7] शत्रुओ की नारियाँ महाराजा के भय मे आतकित हैं। वह कहती हैं—

---

१ विजय विनोद—८। २ वही, ९। ३ वही १०।
४ मुगल। ५ हथियार विशेष। ६ वही, १०। ७ वही, ११।

शेरन पै जाने नमशेर नजर उतालियाँ ।।विजय विनोद १४।।

महाराजा की अधीनता स्वीकार करने के उपलक्ष मे देश देश के राजा भेंट भेजने लगे—

काबुली कंधारी सेव नजर दीनहुँ वचे ।।वही १६।।

महाराज के ऐश्वर्य का प्रभाव ही ऐसा है कि—

सहज सभा मे महाराज श्वास तच्च है ।।वही १७।।

प्रशासन वर्णन—

चोर धाड बीन ईरान की अरजी ।।वही १८।।

सेना वर्णन—

लनं[1] तोपखाने की तडिता तडाके सों ।।वही १९ २०।।

तलवार—

मडन मही के महाराज कटाकी करतूत है ।[2]

दान—

कयक हजारन मना रोमरोम छाई है ।।विजय विनोद ६४।।

शेरसिंह प्रशस्ति रणजीत सिंह की मृत्युपरान्त उनके पुत्र खडग सिंह राजा हुए तत्पश्चात् उनक तीसरे पुत्र शेरसिंह । शेरसिंह शूरवीर, मानवान और बुद्धिमान थे ।

जसे बुद्धि सागर जानत अनेक अग ।।वही ३५२।।

सेना—

फौजें महाराज शेर तड तडक्यो करें ।।[3]

दान—

उद्धत प्रतापी महाराज लपेटि मोहि लीनो है ।[4]

शूरवीरता—

आदि ही ते श्री गाढि गहरानी है ।।विजय विनोद २३०।।

ध्यानसिंह प्रशस्ति राजा ध्यानसिंह रणजीत सिंह के राज्यकाल से लेकर शेरसिंह तक लाहौर राज्य के प्रधान मन्त्री रहे । ग्वाल चिरकाल तक इनके कृपापात्र बने रहे । य एक कुशल राजनीतिज्ञ, प्रशासक और बुद्धिमान सेनापति भी थे । तत्कालीन लाहौर की कूटनीति के ये सचालक रहे थ । ग्वाल ने इनकी प्रशसा किसी स्वतन्त्र महाराजा से कम नही की ।

लोकप्रियता—

जसो जिस लायक है लागै सभ नीको है ।।वही ३५।।

---

१ अग्रेजी लाइन (LINE) का अपभ्रंश रूप बहुवचन २ ग्वाल कवि — प्रभुदयाल मीतल ३ वही पृष्ठ २१ ४ वही पृष्ठ २२ पृष्ठ १९ ।

सुप्रबंध—

वित्त ही ह चोर　　　　　　एसौ बन्दोवस्त है। वही ३८॥

स्वामिभक्ति—महाराज शेरसिंह के प्रति ध्यानसिंह ने आजीवन निम्नांकित प्रतिज्ञा को निभाया—

राजा ध्यान सिंघ जू　　　　　कही जो जबान म ॥वही १५०॥

चरित्र—

सागर सगर न्याव नागर　　　　जू की छाई है ॥वही २५१॥

दान—

श्री बजीर महाराज　　　　　सुभ पान सों ॥वही ११७॥

×

धन्य धन्य श्री ध्यानसिंह　　　रन रूरो बुधिवन्त। वही २५१॥

राजा हीरासिंह प्रशस्ति　ध्यान सिंह की मृत्यूपरान्त राजा हीरासिंह लाहौर के प्रधान मन्त्री हुए। ग्वाल बराबर उनके ही कृपा पात्र बने रहे। हीरासिंह अपने पिता की भांति ही योग्य और कुशल थे।

युद्धवीर—

जग वरिव कों महाराजे　　　　तडप तडडात है ॥वही ३८८॥

×

चढ्यो एक हल्ल हिंदू पति　　　पान फेरा सो ॥वही ३८९।

तलवार—

व्याली सी कहीं तो　　　　　ताकों अजगरी है ॥वही ४७०॥

आशीर्वाद—

तज रहो रवि सो　　　　　　उग्रराज करिवौ करो ॥४८६॥

दीवान दीनानाथ प्रशस्ति　ये लाहौर के राजकीय कार्यालय के उच्चतम अधिकारी ग्वाल के प्रशसक और कृपालु थे। ग्वाल ने इनकी प्रशंसा म पर्याप्त लिखा है। यहाँ केवल एक कवित्त ही दिया जाता है—

इलम कमाल हाल　　　　　दीवान दीनानाथ हैं ॥वही ३७०॥

जल्हा पंडितेश प्रशस्ति　ये भी लाहौर दरबार म एक उच्च पदस्थ कर्मचारी थे। ग्वाल के ये अभिन्न हृदय थे। कूटनीति और ज्योतिष के ये अच्छे ज्ञाता बताये जाते हैं—

कुल अपने में भानु जल्हा महाराज भयो, सरद सुधाकर सो चित्र चकोरन को।

×

ग्वाल कवि कहैं मत्य　　　　उछाहो को ॥वही ४८० ४८१॥

जसवन्तसिंह प्रशस्ति ग्वाल नाभा दरबार म पर्याप्त समय तक रहे। इन्होने जसवन्तसिंह, भरपूरसिंह और भगवानसिंह तीनो राजाओ की कृपा प्राप्त की। ये तीनो ही बडे गुणग्राही थे। ग्वाल को यहाँ से प्रचुर धन और यश मिला। ग्वाल ने इस दरबार की सर्वाधिक प्रशसा की है।

नाभा-नगर—

चारौं हू वरन निज भूपति प्रचड अति ॥रसिकानन्द १।४॥

गयन्द—

सोभित सवारे रग अखड श्री नाभेस के ॥वही १।२०॥

तुरग—

सुघर समाजी साज राजी वरबाजी लेत ॥वही १।२१॥

राजसभा—

सोभित सभा है साज जाहर जगत मे ॥वही १।२२॥

कीर्ति—

तारा सौ सुजस पारावार पायौ है ॥वही १।१७॥

पडितेश गुरुसहाय प्रशस्ति ये नाभा दरबार के सभासद शिरोमणि, शास्त्रो के अच्छे ज्ञाता कहे जाते हैं। ग्वाल ने इनकी स्तुतियाँ लिखी हैं। केवल एक कवित्त और एक दोहा प्रस्तुत किया जाता है—

सभा शिरोमणि देखिये श्रीगुरू तिन्हैं सहाय।
गुरू सहाय महाराज तह, राजद रहत सदाय ॥वही १।२४॥

तेज रवि सौ है रावरी धरा प है ॥वही १।२६॥

भरपूरसिंह प्रशस्ति

दुर्ग—

बहुत बुलन्द है किलौ मैं लियौ निहार ॥इश्कलहर भू० १७॥

महाराज भरपूरसिंह ताके मालव मुल्क।
खुली खूबियाँ खलक मे सबसो खासे खुल्क ॥वही २०॥

कीर्ति—

दया के करैया बाद साध्या जमाने के ॥वही १४ प्रशस्ति॥

आशीवचन—

एहो तेजधारी भरपूरसिंह उमरदराज होय ॥वही १६॥

गुरु गोविन्द सिंह प्रशस्ति :

वेद व्यास वाक्य ते करालताई कटती ॥गुरू पचासा ५०॥

मुरलीधर (कवि के पितामह) प्रशस्ति

श्री मुरलीधर राजज कविता करी अनूप ॥रसिकानन्द १।५६-६०॥

उपर्युक्त विवरण से ग्वाल की नाराशसा प्रवृत्ति का एक परिचय मिल जाता है। तत्कालीन अन्य विशिष्ट पुरुषो की प्रशसा मे भी ग्वाल ने काव्य पक्तियाँ लिखी हैं। एसे छन्दो की सख्या प्राय ३०० है, जबकि अब तक के प्राप्त इनके साहित्य म लगभग १० सहस्र छन्द हैं। इस अनुपात म इनका नर प्रशस्ति विषयक काव्य अत्यल्प ही माना जायगा।

(इ) भक्ति वैराग्य तथा नीति वणन

शृङ्गारिक वणनो प्रशस्तियो आदि को काव्य का विषय बनाने वाले ग्वाल को भक्त कवि कहना कदापि समीचीन नहीं हो सकता। किशोरावस्था से ही नोंन तेल लकडी' की चिन्ता मे घर से निकल कर कवि आजन्म ऐसे वातावरण म रहा, जहाँ भक्ति साधना का प्रश्न ही नही उठता था। परन्तु उसने भक्ति पर पर्याप्त लिखा है, साथ ही साथ उसके वराग्य और नीति विषयक छन्द भी कम नहीं मिलते। ग्वाल निघनता की गोद म धमस्थली मथुरा वृन्दावन के वातावरण म पले थे। अत सस्कारवश भक्ति कदाचित उनकी घुट्टी म मिली थी। दूसरे रीतिकवियों की भाति एक दीघ अवधि तक शृङ्गारिक कविता और नाराशसा करने वाले इस कवि को मन की प्रतिक्रिया ने भी भक्ति और वराग्य की ओर प्रेरित किया होगा। तीसरे ग्वाल का पारिवारिक जीवन एक पुत्र की मृत्यु और दूसरे के पथभ्रष्ट होने के कारण अति क्लेशग्रस्त भी रहा था। फलत इस कारण भी वह इस दिशा म रचना करने को उन्मुख हुए होगे। जो भी हो, श्रीकृष्ण जू को नखशिख, यमुना लहरी, कृष्णाष्टक राधाष्टक गोपी पच्चीसी, कुब्जाष्टक गणेशाष्टक, ज्वालाष्टक, निम्बाक स्वाम्यष्टक तथा विविध हिन्दू देवी देवताओं की उपासना के अनेक पुस्तकबद्ध और प्रकीण छन्द ग्वाल की स्वतन्त्र भक्ति और वराग्य प्रवृत्ति के ठोस साक्ष्य हैं। इनम निश्चय ही भक्तिकालीन कवियो की सी भाव-तीव्रता और गहराई देखने को नही मिलती। अधिकतर वणनात्मकता की ही इनम व्याप्ति है। कवि की प्रतिभा भक्ति वणनों म भी षटऋतु वणन का समाहार करती चली है। यमुनालहरी इस का उदाहरण है। रीतिकालीन अलकारों और चमत्कृत उक्तियों ने भक्ति को प्राय प्रतिपादित ही नहीं होने दिया है। यही बात इस युग के अन्यान्य रीतिकवियों के विषय म भी उतनी ही सटीक उतरती है। अत ग्वाल अकेले इसके दोषी नही।

ग्वाल कवि और भक्ति सम्प्रदाय—ग्वाल के मगलाचरणों म राधा की स्तुतियाँ अखण्ड रूप म मिलती हैं। राधोपरान्त कृष्ण इनके दूसरे उपास्य

रहे हैं। राधा-कृष्ण समस्त रीति कवियों के ही उपास्य रहे हैं। इस युग के काव्य के व नायिका-नायक ही बने हैं। ग्वाल भी इसके अपवाद नहीं हो सकते। निम्बार्क स्वाम्यष्टक' के मिल जाने से इस धारणा को बल मिलता है कि वह निम्बार्क मतावलम्बी थे। निम्बार्क मत में राधा-कृष्ण की युगल उपासना का विधान है, परन्तु राधोपासना का प्राधान्य है। इस दृष्टि से ग्वाल को ऐसा माना जा सकता है। उधर ग्वाल ने अपने को जगदम्बा का भी भक्तघोषित किया है। कवि द्वारा निर्मित 'गवरि सम्भु' का मन्दिर इसकी पुष्टि भी करता है। इससे निम्बार्क मत वाली बात निबल पड़ती है। ग्वाल ने गनेश, नृसिंह, राम, गंगा, काली तारा, विद्या, षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, धूमावती, बगुलामुखी मातंगी, कमला, महाकाली, महा लक्ष्मी, महासरस्वती, ज्वाला, गणेश, शिव, हनूमान, भैरव स्वामिकार्तिकेय, सूर्य, शीतला, ब्रह्मा इन्द्र त्रिवेणी आदि देवी देवताओं की स्तुति मे भी छन्द लिखे हैं। कोई भी कट्टर मतानुयायी इष्टेतर देव वन्दना इतनी मात्रा में नहीं करता फिर ग्वाल ने ऐसा क्यों किया। इस शंका का समाधान हम इनके जीवन विषयक प्रसंग में कर चुके हैं। यहाँ तो इतना ही पर्याप्त है कि ग्वाल कवि पे आर 'कवय कि कि न वदयन्ति' वाली उक्ति इन पर ठीक घटित होती है। जैसा कि जीवनी में कहा जा चुका है ये आरम्भ में जगदम्बा के उपासक रहे थे, परन्तु भक्ति का दृष्टिकोण उनका उदार था, कट्टर नहीं। शिव-पार्वती का मन्दिर बनवाकर उन्होंने अपनी भक्ति-आराधना विषयक शंका का समाधान कर दिया है।

यहाँ सभी देवी देवताओं की स्तुति में एक एक भी छन्द प्रस्तुत करना विषय विस्तार ही होगा। अतः इनके प्रमुख ग्रन्थों से भक्ति विषयक कतिपय कवित्त ही नीचे उद्धृत किये जाते हैं—

राधा—

नागन को मरत की ... राधा महारानी है ॥ ८ राधाष्टक ॥

कृष्ण—

जरें के जलूसन मे ... नजर मुलाइ है ॥ २ कृष्णाष्टक ॥

राम—

धीरता सखेंगे रघुवीर ... रामचंद चंद हो ॥ ८ रामाष्टक ॥

त्रिवेणी—

वारिद वरनी सुभ ... त्रिवेनी है ॥

—२१देवी देवताओं के कवित्त।

(उ) काव्यानुवाद

हिन्दीतर प्रान्तीय भाषाओं के ग्रन्थों के अनुवाद करने की प्रवृत्ति रीतिकालीन में नहीं रही। ग्वाल ने मीर हसन देहलवी की उर्दू की प्रसिद्ध मसनवी 'सहर उल बयान' का हिन्दी में सफल काव्यानुवाद करके हिन्दी क्षेत्र में एक नवीन प्रवृत्ति का सूत्रपात किया। आगे चलकर भारतेन्दु काल में यह अनुवाद प्रवृत्ति पर्याप्त सम्मानित हुई। ग्वाल के अनुवाद 'इश्क लहर दरियाव' का परिचय इसी प्रबन्ध के छठे अध्याय में दिया जा चुका है। 'रीतिबद्ध काव्य' और 'रीति मुक्त' काव्य की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है, जिसके निर्वाहार्थ ग्वाल ने रचनायें कीं। दृगशतक, श्रीकृष्ण जू को नखशिख आदि रीतिमुक्त और नेह निबाह रीतिमुक्त रचना है।

सारांश—ग्वाल ने आचार्यत्व की परम्परा में विविधांग निरूपक लक्षण ग्रन्थों की रचना करके रीतिकालीन प्रवृत्ति का निर्वाह किया, जिसमें उन्हें पर्याप्त सफलता मिली। रीति की इतर समस्त प्रवृत्तियों का भी उनमें पूर्ण आग्रह मिलता है। इतिहास प्रतिबद्ध वीर-काव्य और उर्दू का काव्यानुवाद प्रस्तुत करके उन्होंने परम्परा को नकारा और नई दिशा की ओर संकेत किया। इन नये आयामों की प्रतिष्ठापना के लिये ग्वाल श्रेय के अधिकारी रहेंगे।

अष्टम अध्याय

ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

८ | ग्वाल के काव्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

(अ) ग्वाल की काव्य कला

कवि की कला उस के समग्र आत्म रूप की अभि यक्ति है। उसकी आत्मानुभूति अभि यजना के माध्यम स रग, रेखा श द आदि मे निबद्ध होकर जो सहज रूप धारण करती है वही उसकी कला है। अनुभूति को आकार दने का सबसे सहज माध्यम है चित्र। इस अनुभूति को व्यक्त करने के लिये कलाकार या तो अनुभोक्ता की मूत्त चष्टाओ का अव न करता है या फिर अनुभोक्ता की वासना मे रगे हुए अनुभूति के विषय अथवा पात्र के रूप का चित्रण।[१] ग्वाल की अनुभूति प्रधानत एका त शृ गार है अत उनके का य म शृ गार के आलम्बन और आश्रय की चेष्टाओ के रूपचित्र अकित किये गये हैं। का य म आत्माभि यक्ति का माध्यम भाषा है और उसका स्वरूप छन्दो बद्ध। अत वस्तु विषय, भाषा और छ द योजनाकला के इन तीनो अगा के आधार पर ही ग्वाल की का य कला का अध्ययन प्रस्तुत किया जायगा।

वस्तु विषय—

विभाव और अनुभाव का वणन ही कला का प्रमुख वस्तु विषय है। का य के अ तगत आचार्यों ने भावा की अनिवाय सत्ता को सवमत स स्वीकारा है। विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिया के प्रसग म बाह्य विषयो तथा उनकी शारीरिक और मानसिक क्रियाओ के वणन अलौकिक आन द की सृष्टि करते है। इन चित्रो की रेखाए और रग जितन स्पष्ट होग, अनुभूति की अभिव्यक्ति उतनी ही सजीव होगी। ग्वाल ने रीति परम्परा क अनुरोध स्वरूप नायक नायिकाओ के रूपचित्र और चेष्टाओं के शब्द चित्र अकित किये है। इनके अ तगत अनेक वस्तु चित्र हैं जो भाव व्यजना को तीव्र करने के लिये अकित किये गये हैं। सर्व प्रथम हम एक नायिका का स्थिर-स्थूल रूप चित्र नीचे प्रस्तुत करते है—

लाल लाल पायन बठी कुरसी प है ॥रसरग ३।७५॥

लाल लाल परो म जरकसी कौसें, घेरदार पाइचे कीमखाप का इजार

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, पृ० १८१।

बन्द, पीली कुर्ती, ऊचे उरोजा पर तग चोली, रगीन चूनरी, आरसी पर लगी आँखें ये सब मिल कर नायिका का एक स्थूल चित्र निर्माण करते है। कुर्सी पर बठी हुई नायिका की तन द्युति सोने की सीढी, बिजली और चन्द्रमा के खण्डा की उपमाओ से सफलतापूवक स्पष्ट की गई है। इस स्थिर चित्र म एक समान क्षीण रेखाआ और रगो का प्रयोग दिखता है।

एक दूसरे रूप चित्र मे अकित एक परकीयागामी नायक को अपने शरीर का भी होश नही है। गले म जनानी माला है, भाल पर महावर के चिह्न हैं। नायक की निलज्जता और ढीठता पर नायिका दपण मे उसका मुख दिखा रही है—

माल ये जनानो   बदन निहारौ तो ॥वही ४।४१॥

यहाँ माथे पर लगा महावर और सिन्दूर दोनो सूक्ष्म होते हुए भी पर्याप्त स्पष्ट हैं। नायक का मौन और बेसुध होना उसके शरीर के शथिल्य को सजीव रूप मे प्रस्तुत कर रहा है। नायिका द्वारा दपण का दिखाना उसके अलस रूप को और भी स्पष्ट कर देता है।

नायिका के सूक्ष्म शृगार का स्थिर रूपचित्र कवि ने निम्न कवित्त म इस प्रकार निर्माण किया है—

कसी रेख मिसी की   सरस करि देत है ॥रसरग ६।२६॥

दातो मे पृथक पृथक दिखने वाली मिस्सी की पतली रेखायें ऊपर से पान की शोभा गजमुक्ताओ का गुनीबन्द चन्द्रहार की चमक, कसी कचुकी म कुचो का औन्नत्य चूनर की चुनटें बडा स्वच्छता के साथ नायिका के अवयवो के रगो और सूक्ष्म रेखाओ को उभार रहे हैं। यहाँ एक समान रेखाआ और रगों की योजना एक स्वच्छ सजीव चित्र बनाने मे समथ हुई है।

ऊपर के उदाहरणा म क्षीण रखायें ही प्रयुक्त हैं। अब नीचे कुछ ऐस छन्द लिये जाते हैं जिनम क्षीण रेखाआ के अतिरिक्त व्यजना की गहराई भी पाई जाती है एक छन्द दखिय—

आई यह पाती प्रान   पूछि न सकत है ॥वही ४।९६॥

मुग्धा नायिका को सखी उसके प्राण प्यारे का पत्र लाकर देती है। कहती है— यह तुम्हारे प्रियतम का पत्र है इस लो छाती स लगाओ मैं इसे पढवा लाई हू। वह सुखी और हर्षित है और अब शीघ्र ही आकर मिलेगा, इसम कोई अवरोध नही। पत्र का समाचार सुनकर कमल नयनी हर्षोत्फुल्ल हो उठी। दृष्टि नीची करली और तिरछी चितवन स दखन लगी। नायिका

सखी से पूछना चाहती है कि नायक किस तिथि और किस दिन चला है, परन्तु पूछ नहीं सकी। समाचार सुनने से लेकर हर्षोत्फुल्ल होने तक की नायिका की मनोगत क्रियाएँ कवि ने एक समान सूक्ष्म रेखाओं द्वारा चित्रित की हैं। तदनन्तर 'नजर निचोहीं करि तिरछी तकति है' पद द्वारा व्यंजना को तीव्र किया गया है। 'ऐसे चहै पूछ्यो परि पूछि न सकत है' द्वारा नायिका की पीडा की तीव्रता को और भी तीव्रतर अंकित किया गया है। इसी प्रकार—

सीत के सदन आगि ... ... बधाई कहती गई ।।वही ४।९८।।

परकीया नायिका नायक के घर आग लेने गई है। उसके हृदय में भी विरहाग्नि धधक रही है। उसी समय नायक का पत्र आया। यहाँ तक सीधी, सूक्ष्म और एक समान रेखाओं द्वारा चित्रांकन हुआ है। 'पीतम पठाई पेखि मौन गहती गई' पद में नायिका ने मौन द्वारा बरबस अपने मनोगत हर्ष को दबा लिया है। घरवालों (नायक की पत्नी, माँ आदि) ने पत्र को पढ़कर यह निश्चय ही जान लिया कि यह बात (नायक का आगमन) सच है। कवि ने यहाँ भी 'आवत है स्याम यह सुनि सहती गई' कह कर एक बार पुनः नायिका द्वारा उसके मनोवेगों को प्रच्छन्न और दमित रखने दिया है। 'मही नहीं पी गई खुशी को' पद द्वारा व्यंजना को और भी तीव्रता प्रदान कर दी है, क्योंकि नायिका का अन्तर्मन नायक के आगमन की सूचना के हर्ष में निश्चय ही बल्लियों उछल रहा है—'जी गई हिये में वह।' परन्तु वाह्यतः उसने अपने रूखेपन को स्थिर करके घरवालों से 'बधाई कह ही तो दी और चलती बनी। इसमें 'बधाई' शब्द तीव्रतम भाव-व्यंजना का द्योतक है। इस प्रकार यह चित्र पूर्ण मनोवैज्ञानिक बन पड़ा है। विचारणीय है कि वह अपने साथ हृदय में विरहाग्नि लाई थी और उधर आग भी लेने आई थी। नायक के आगमन की शुभ सूचना से वह दोनों ही प्रकार की आगों को भूल गई। हर्ष लेकर लौटी। कवि अनेकत्र ऐसे भावों के व्यंजक सुन्दर रूपचित्र अंकित करने में सफल रहा है।

अन्यत्र द्वारपाल ने नायक के आगमन का सन्देश दिया ही था कि इतने में ही वह द्वार पर आ गया और मित्रों से मिलने में इतना व्यस्त हुआ कि उसका चित्त ही नहीं करता कि घर में घुसे और नायिका से चार आँखें हों। नायिका विवश घर के भीतर दौड़ गई और नायक द्वारा परदेश से लाये पदार्थों को देखने लगी। वहाँ उसे बड़ी आयु की सखियाँ भी विद्यमान हैं, अतः

एक एक वस्तु को उनसे छिप छिपकर क्षण क्षण छाती से लगाती है और तृप्त होती है। देखिये—

पौरि प कौं पहरू छिन छिन मे छकत ह ॥वही ४।१०२॥

इसम भीतर का भजे' और छिपि कें छवाइ छ्वाइ छाती' य दो पद विशेषत द्रष्टव्य हैं। द्वार पर नायक का मित्रा से मिलन स ही अवकाश नही मिल पा रहा। उधर वह भेंट करने को अत्यधिक अधीर हो रही है। स्वाभाविक ही है कि तब तक वह भाग कर भीतर पहुची और नायक द्वारा लाई गई वस्तुओ को ही छाती स भेटने लगी और वह भी सखियो से छिपकर कि वे कही उसकी मिलनोत्कण्ठा को देख न लें। यहा नायक को द्वार पर देखकर मिलनोत्कण्ठा म तीव्रता आई परन्तु नायक को देर करते देखकर उसके औत्सुक्यातिरेक ने भीतर को दौड लगाई। वस्तुओ को हृदय से लगाने म नायिका को नायक से भेंटने का ही आनन्द प्राप्त हुआ। यह चित्र भी पर्याप्त मनोवैज्ञानिक और सहज बन पडा है।

कवि ने कही कही भावो की तीव्रता को अभिव्यजना के लिये मानवेतर उपादानो के धम सादृश्य की सहायता लेकर चित्रो म सजीवता उत्पन्न की है। निम्नांकित दो एक उदाहरण इसी कोटि के हैं—

औचकाय मोहन बिसै मछरी लौं तरफराइ ॥वही ४।१०३॥

उक्त छन्द म नायिका का कबूतरी लो' फडफडाना और 'मछरी लो तडपना उसके अधीरतातिरेक और चापल्य के तीव्र व्यजक हैं। प्रिय के आगमन पर भी प्रिया की उस स निकटतम पाथक्यज य तड़प कितनी सजीव और स्पष्ट है, इसे चित्रित करने मे कवि असफल नही रहा है। एक ऐसे ही अन्य सुअवसर पर नायिका प्रिय दशन को गमनोद्यत है परन्तु उसकी सास और पडोसिनें पास म विद्यमान हैं, अत 'सरकना चाहते हुए भी वह विवश हो कर रह गई है। प्रिय को देखन की उसकी लालसा और भी उद्दाम हो जाती है, परन्तु जाल म फसी हुई हिरनी के सदृश तडपते रहने के अतिरिक्त उसके पास और चारा ही क्या है—

सहज सुभाइ कहीं तकन प्रान प्यारे कों ॥वही ४।१०४॥

सहज स्वभाव स आगन म आकर किसी का प्रियागमन का स देश सुनाना यशोदा के द्वार पर ग्वालो का नगाडे बजाना क्रियायें अपने म बडी स्पष्ट हैं। गुरुजनों की भीड म स धीरे स खिसकने क लिये 'सरकन चाहे पद का प्रयोग अत्यन्त सटीक हुआ है। जाल में फसी हिरनी की फडफडाहट और

तडपन के सादृश्य के माध्यम से कवि ने नायिका के चापल्य को सजीवता प्रदान की है जो सफल बन पडी है ।

गतिशील चेष्टाओ द्वारा गतिमय चित्रो का निर्माण भी कवि ने कम कुशलता के साथ नही किया । ऐसे चित्र नितात मनोवैज्ञानिक बने हैं । नायक के शुभागमन के शकुन हो रहे हैं । नायिका की दशा औत्सुक्य और चापल्य के कारण ऐसी विचित्र हो जाती है कि वह कभी अटारी पर चढ जाती है कभी तिदरियो म घूमती है । कभी झझरियो म होकर झाकती है, कभी किवाडो की खुली झिरियो म से ताकने लगती है । ऐसी चचलता न तो मछली म देखी गई है, और न खजना मे और न बिजली मे है । देखिये यह चित्र—

आज या वियोगनी की कहू बिजुरीन मे ।।रसरग १।११९।।

कहने की आवश्यकता नही कि उक्त चित्र की प्रत्यक क्रिया स्वय म सुस्पष्ट है । इससे कुछ और अधिक वगवान गति चित्र नीचे के कवित्त मे दृष्टव्य है—

मन दै सुनौ री कान्ह किलकात पिछवारे प ।।वही १।१२०।।

यदि और भी गति वेग मय चित्र देखना हो तो निम्नाकित पक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

'ग्वाल कवि चादनी सो गिलौरी ल गुपाल प ।।वही १।१२७।।

शृगार के अतिरिक्त ग्वाल ने वीर रस के भी कुछ चित्र बनाय हैं । नाभा नरश क हाथियो का एक चित्र यहा लिया जाता है—

सोभित सवारे रग अखड श्री नमेस के ।।रसिकानन्द १।२०।।

उक्त चित्र म कवि का उद्देश्य व्यजना द्वारा आश्रयदाता की प्रशस्ति करता रहा है । ऊपर हाथियो का अकन जहाँ उभरी हुई रेखाओ म है वहाँ क्षीण रेखाओं म आश्रयदाता की प्रशस्ति परक व्यजना भी लक्षित हो रही है ।

नीचे एक युद्ध स्थल का चित्र दिया जा रहा है । यह युद्ध अलाउद्दीन और हम्मीर दव क मध्य हुआ है । घायलो और मृतक योद्धाओ की लाशों से रणस्थली भरी पडी है । कुछ घायल भाग जा रहे हैं—

किते सीसहीन किते धरे घास कांधे ।।हम्मीर हठ ९५-९७।।

वस्तु वणन—ग्वाल ने अन्य कवियो की भाति भाव चित्रण तो रेखाओ को उभार कर या क्षीण करके किया है किन्तु वस्तु चित्रण म **प्राय सभी प्रकार के**

रगों का आश्रय लिया गया है । रगो का उपयोग रेखाओ के साथ मिलकर चित्र को समृद्ध बनाता है । जहा रखायें चित्र को उभारने म असमथ सी हो जाती है वहा रग उसे स्पष्ट करत हैं । ग्वाल ने अकले रगो से भी चित्राकन किया है और रेखाओ के साथ साथ रगो के मिश्रण स भी । पहल हम केवल रगो के चित्रण को ही लेते हैं ।

चली ब्रजचन्द जू प यह कौन है ।।रसरग ४।९०।।

ऊपर क कवित्त में शुक्लाभिसारिका का चित्र अकित है । नायिका का चिकना गोर शरीर चन्दन स चर्चित है वस्त्र श्वेत चादी से चमक रहे हैं हीरो की चमक चारो ओर है चुने हुए चमेली के श्वेत पुष्पो की माला गले म पडी है । समस्त द्युति चादनी जसी है । नायिका चन्द्रमा को दखती जा रही है । जिस देखकर स्वय चन्द्रमा को द्वितीय चन्द्रमा का भ्रम होने लगा है । कहना न होगा कि श्वत वण का यह चित्र पूण सफलता से अकित हुआ है । एक चित्र म कवल श्याम वण का प्रयोग भी देखिय—

नीलम के हार जालदार नन्द के कुमार प । वही ४।८६।।

श्यामाभिसारिका ने समस्त अवयवो को यथाशक्य रात के अधियारे म मिला लेने की पूण चेष्टा की है । सासनी रग की साडी नीलम के हार कस्तूरी आदि की काली बिदी सभी श्याम वण है । रात भी काली है । तन चोआ चर्चित है अत काले भ्रमरो की भीड नायिका के चारो ओर मडरा रही है । अधिक अधेरे मे कही चमकदार मुख मडल न दिख जाय, इस कारण वह मुख पर काले कश डाल कर पूरी की पूरी श्यामाभ बन गई है । रात क रग म रग मिल गया है । कहना व्यथ है कि कवि की तूलिका वण-योजना म पूणत सफल हुई है ।

मिश्रित रगो की एक चटक निम्नलिखित पक्तियो म दृष्टव्य है—

गोरे गोरे उरज उतगन धरि राखी है ।।रसरग ५।१९।।

गोरे स्तना पर नीली कचुकी, उस पर सफेद गोटे की धारें बीच-बीच म सुनहरी बिन्दियाँ, कुल मिलाकर चार रगो का चित्र अति अभिराम बना है । कवि ने शिव शीश पर त्रिवेणी की कल्पना करके चित्र के रगो को और अधिक चमक दे दी है ।

विविध रेखाओं के साथ विविध रगो का उपयोग करके ग्वाल ने कई चित्रो का निर्माण किया है उनम से एक चित्र इस प्रकार है—

सबज बिछान छात राज दग कोर ।।वही २।९३।।

हरी त्रिछत पर लाल लाल छापा है। कमरे की छत की कडिया सुनहरी हैं, जिनम हरी रशमी डोरें पडी हैं। पले का रगीन पट्टा चिकना चौडा और चमकदार है यहा तक चित्र मे विविध रग भरे गये हैं। इसमे आग कुछ क्षीण और कुछ उभरी हुई रेखायें हैं। नायक न दोना नायिकायें हट्टु पर आमने सामने मुँह करके बिठा रखी हैं। और वह स्वय 'मचकि मचकि' कर उन दोनो की ओर मुसकरात हुए झूले पर पगें बढा रहा है। चित्र अपन आप म पूण और सजीव हो गया है।

इसी प्रकार एक चित्र म एक चन्द्रमुखी अपन नत्र नीचे झुकाए हुए है। स्वणिम झूमका कानो म पडे हैं, जो अपनी आभा गोरे गोल कपोलो पर डाल कर उनको बसन्ती रूह की छवि प्रदान कर रह हैं। नायक ने कुछ विचार करके नायिका को मदिरा पिला दी है, जिससे व बसन्ती छविधारी गोल कपोल लाल लाल हो गये हैं। नायक जब जब उनको चूम चूमकर चूमने लगता है, तो नायिका बिजली की भाँति चमक चमक उठती है और कपोल ज्यो के त्या पुन बसन्ती के बसन्ती हो जाते हैं। इस प्रकार श्वेत से बसन्ती, बसन्ती स अरुण और अरुण स पुन बसन्ती रगो का परिवतन दिखाकर कवि ने एक गतिमय रगीन चित्र का विधान किया है। चित्र म क्षीण और उभरी रेखायें हैं और गहगहे रग भी हैं इनके निदशनाथ निम्नाकित पक्तिया द्रष्टव्य है—

चद की निकाई नन बसती होइ आये हैं ॥वही २।५५॥

कहना न होगा कि चित्र अपने आप म पूण और सप्राण है।

प्रकाश और अधेरे का मिला जुला चित्र देखिये—

गोरे गोरे रग की बीजु महताबी सी ॥ वही ३ १७॥

ग्वाल ने पावस की सन्ध्याकालीन घन घटाओ म काली, श्वेत, चम्पकई, नीली, पीली, धूमरी, सिन्दूरी और जान कौन कौन रग भर दिया है—

पावस की साँझ तसवीरें उडी जात हैं ॥वही ७।९७॥

आसमान म अस्ताचलगामी सूय की दबी दबी प्रकाश किरणें पृष्ठभूमि से काली, पीली, चम्पई, नीली पीली, धूमई और सिन्दूरी घन घटाओ क रगो को गहगहे बना रही हैं। आगे की उत्प्रेक्षा 'मानहु मुसव्वर मनोज को मुरव्वा मजु फलि परयो ताकी तसवीरें उडी जात हैं स कवि ने चित्र को उचित गत्यात्मकता और कान्ति प्रदान कर दी है।

विरोधी रगो द्वारा निर्मित एक रगीन खण्ड चित्र नीचे देखिये। इसम श्याम और लाल रग विरोधी हैं। नायिका के नेत्र बिना काजल के कजरारे

हैं और रतनारे भी हैं। दोनो रगा का विरोध नेत्रो की आभा को द्विगुणित कर रहा है। उधर श्वेत और लाल रगो का हाथो पर अनूठा मिश्रण है। गोर गोरे हाथो पर मेहदी की लाल लाल बुंदकिया शोभित हैं। देखिये—

बिन कजरा के मेहदी की भरिकें ॥वही ३।१४॥

सूक्ष्म और उभरी हुई रेखाओं और विविध रगो द्वारा चित्र-निर्माण करना ही एक मात्र कलाकार कम नही इससे आगे चित्रो म वह एक प्रकार की कान्ति भी उत्पन्न करता है जिसे पालिश कहा जाता है। इस कान्ति या 'पालिश से रगो मे एक विशेष चमक उत्पन्न हो जाती है और चित्र सवाक हो उठते हैं। ग्वाल ने विविध व्यजक पदो द्वारा अपने चित्रो म कान्ति भरी की है। उदाहरणार्थ नीचे कुछ पक्तियां दी जाती हैं—

'ग्वाल कवि रावरे बसती या कपोल पर,
कत पर चुभायौ दत अजब सुहायौ है।[1]

ऊपर की पक्ति म 'सुहायौ' पद के साथ अजब' विशेषण ने नायिका के बसती कपोल पर नायक द्वारा चुभाये दन्त चिन्ह मे कान्ति भरने का काम किया है। इसी प्रकार—

१—'ग्वाल कवि कहै ताहि ताक तकि बांध लाल,
हाल भयौ और गई सुधि हू सिराय क।[2]
२—'ग्वाल कवि' चचला की आभनि को दाब है कि
मोहनी सिताब रूप धारि लियौ फेरि मे।[3]
३—ग्वाल कवि' मेरे सुषमा के प न उपमा के,
अजब अदा के मन मोहन मजा के हैं।[4]

में 'और' 'सिताब और 'अजब पदो स भावो म कान्ति भर दी गई है।

ग्वाल म रगो के प्रति विशेष आग्रह है। भाव प्रधान चित्रो को इ कवि रे रेखाओ और रगो के प्रति विशेष आग्रह है। भाव प्रधान चित्रो क इस कवि न रेखाओ और रगो से साजा सवारा है। आलम्बन और उद्दीपन के प्राय समस्त काव्य चित्र ग्वाल की दृष्टिभाव व्यजक रही है।

अभिव्यजना के प्रसाधन —अनुभूति के सौन्दर्य तथा अभिव्यक्ति सौन्दर्य मे सहज सम्बन्ध होता है। सौन्दर्य शास्त्र के इस मूल रहस्य और इस महत्व से रीति शास्त्र सुपरिचित था। परन्तु इनकी अनिवार्य एकता का व कायल नही था। इसी कारण उसने अनुभूति और अभिव्यक्ति के पार्थक्य क

१—वही—५।१९ २—वही—६।१४ ३—वही—६।४५ ४—वही—६।४२

सर्वथा लोप नहीं होने दिया।[1] परन्तु रीति के रसवादी आचार्यों ने इन दोनों की सत्ता को अभिन्न माना है। ग्वाल ने अपनी अलंकार की परिभाषा में इस तथ्य को स्पष्टतः स्वीकार किया है कि काव्य में अलंकार की सत्ता आन्तरिक है बाह्य नहीं। कवि के अलंकार विवेचन के प्रसंग में हमने सौन्दर्य शास्त्र के इस रहस्य को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि अलंकारों की सत्ता काव्य से पृथक नहीं है।[2] वे शब्दार्थ से भिन्न रहते हुए भी शब्दार्थ में ही अन्तर्भूत रहते हैं।[3] कवि की यह भी मान्यता है कि 'अलंकार' शब्द में 'अलम्' पद परिपूर्णता का द्योतक है जो अक्षरों में ही व्याप्त रहता है—'अलं भाषियत पून को पूरि रह्यौ अखरान'[4]। इनके मत में अभिव्यक्ति का सौन्दर्य अनुभूति के सौन्दर्य की एक अनिवार्यता है। दूसरे शब्दों में वे अभिव्यक्ति को अनुभूति की आत्मा मानने के पक्षपाती हैं। इस सम्बन्ध में वे केशव से कुछ आगे हैं। केशव अलंकारों के बिना काव्य की सत्ता नहीं मानते—'भूषण बिना न सोहही, कविता वनिता, मित्त'। ग्वाल की मान्यता है—'होय विषय संबंध कीर चमत्कार को कन'[5]। केशव के अलंकार जहाँ केवल चमत्कार के निमित्त हैं तो ग्वाल के रस और चमत्कार दोनों के लिये। अतः ग्वाल का दृष्टिकोण रसालंकारवादियों का रहा है, केवल अलंकारवादी वे नहीं हैं। इनके इस दृष्टिकोण को हृदयंगम करने के उपरान्त ही इनके अभिव्यक्ति के प्रसाधनों—अलंकारों—के विषय में यहाँ विचार किया जायगा।

अप्रस्तुत विधान—कवि जहाँ अभिव्यक्ति को रमणीय तथा सशक्त बनाने के लिये अप्रस्तुतों का प्रयोग करता है, वहाँ वे प्रधानतः साम्य पर आधृत रहते हैं। यह साम्य भी मुख्यतया तीन प्रकार का होता है—१. रूप साम्य या सादृश्य २. धर्म साम्य या साधर्म्य और ३. प्रभाव साम्य। ग्वाल ने अपने अप्रस्तुत विधान में इन तीनों प्रकार के साम्यों का अनुगमन किया है।

सादृश्य—प्रस्तुत वस्तु के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिये कवियों ने अप्रस्तुतों का प्रयोग किया है। नारी के नखशिख वर्णन[6] में प्रयुक्त अप्रस्तुत प्राय रूढ़ हो गये थे। रीति के कवियों ने संस्कृत के उपमानों की रूढ़ परम्परा

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र, १९६० ई०, पृष्ठ, १३०।
२ हेमादिक भूषनन कौं, पहिन उतारन जोग।
ये भूषन तन मे दिये होत न जुगो उदोत ॥ साहित्यानन्द १६।३,।
३ सब्दारथ तें भिन्न हुवै सब्दारथ के माहि ॥ वही १६।४।
४ वही—१६।२।   ५ वही—१६।८।   [illegible]

के अनुरोध म पुराने अप्रस्तुता का प्रयोग तो किया ही, कतिपय प्रतिभाशाली कवियो ने अपनी कल्पना से अभिनव अप्रस्तुत भी प्रयोग किये । ग्वाल मे रूढ उपमानो का प्रयोग तो है ही, नये अप्रस्तुतो के प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध होते हैं। नीचे पारम्परिक उपमानो का प्रयोग उदाहरण के लिये उद्धृत किये जात हैं—

जसे भूमि अम्बर के बीच मे न कोई खभ,
तसें लाल लोचनी के अक मे न लक हैं ।[1]

तथा— जसें अछरान मे अकार कों प्रमानियत,
तसें लक जानियत गोरी के सरीर मे[2] ।।

उपयु क्त पक्तियो म कमर के लिये प्रयुक्त दोनो उपमान रूप की अनुभूति कराने मे किमी प्रकार भी समथ नहीं हो रहे । कोई चित्रमयता यहा नही दिखती । जसे भूमि और आकाश के मध्य कोई खम्भ नही वसे ही नायिका की कमर का पता नही । दूसरे उदाहरण मे—अक्षरो मे अ' अक्षर की भाति शरीर मे कटि का अस्तित्व है जो दिखाई नहीं देती । इन उपमानो से कमर की सदिग्धता एव सूक्ष्मता तो निस्स देह व्यजित होती है, पर तु उसका रूप सौ दय चित्रायित नही होता ।

पर तु कहीं-कहीं कवि नये नये मूर्त्त अप्रस्तुता को भी लाया है । एक उदाहरण दखिये—

पावस की साझमाझ तसवीरें उडी जात हैं ।।षटऋतु वणन ३३।।

आकाश म काली, श्वेत चम्पकई नीली, पीली धूमरी सि दूरी घन घटायें मडरा रही हैं। कवि ने उद्भावना की है कि मानो चित्रकार कामदेव के चित्रो का डिब्बा खुल गया है जिसम से विविध रगो के चित्र आसमान म इधर उधर बिखरे बिखरे उडे जा रहे है । कितनी रमणीयता भरी कल्पना है । मनोज के मुक्'बा' के उपमान ने पावसकालीन स ध्या के आकाश के बहुरगी रूप चित्र को न केवल रमणीय बनाया है बल्कि अभिव्यक्ति को गतिमयता और सशक्तता भी प्रदान कर दी है ।

वय सधि की नायिका की क्रमश क्षीण होती हुई कमर के लिय कवि ने पतग की डोर के गोला का उपमान चुना है । यह इस प्रसग म नया ही है । देखिये—

दौरन दरीन की है पतग को ।। रसरग २।४३।।

१ रसरग—५।१४ । २ वही—५।१५

'ग्वाल कवि' छाती पर पूनों को मयक है ॥वही २।७०॥

यहा सुन्दरी नायिका के लिये सरद की पूनो के मयक का अप्रस्तुत प्रयुक्त है।

कवि ने भावो के चित्रण म भी सुन्दर अप्रस्तुतो का विधान किया है—

ग्वाल कवि त्योंही मीत चकाचौंध सो करत है ॥वही ११५३॥

यहा प्रभावाधिक्य क कारण नायिका का शरीर कम्पायमान होगया है उसी द्युति का सौन्दय बोध कराने के लिये चचला की पुन पुन चकाचौंध को अप्रस्तुत रूप म लाया गया है।

कुछ साधर्म्यमूलक अप्रस्तुतो के उदाहरण और द्रष्टव्य है —

चपक वरनवारी हास हुलसनवारी हस सी चलनि वारी प्रेम रस पोखी सी।[१]

ऊपर नायिका का हस की सी चाल वाला बताया गया है। यहाँ गुण साद्दश्य है।

> कह ला बुलाइ औ कबूतरी सी फरकराइ।
> भिरिबे को अकुलाइ मछरी लौं तरकराइ[२] ॥

यहाँ नायिका के औत्सुक्य और व्याकुलता की उपमा कबूतरी की फडफडाहट और मछली की तडफडाहट से देकर क्रिया साद्दश्य स्थापित किया गया है। उपमान सटीक हैं।

> हिरनी ज्यो जाल म फस ते तरफर दया,
> तरफर तीय त्या तकन प्रानप्यारे को।[३]

गुरुजन भीड में फमी नायक को देखने मे असमथ नायिका की तडफडाहट जाल म फमी हरिणी की तडफडाहट के सदृश है। बेचैनी उत्सुकता असमथता विवशता आदि मनोगत भावों को इस उपमान द्वारा स्पष्ट करने म कवि पूण सफल रहा है —

तारा सो सुजस तिहारो जसवतसिंघ उज्जल अनूपम अमल भल छायो है।[४]

यहाँ यश की उपमा तारे स देकर कवि ने उसकी उज्जवलता और अमलता का प्रमाणित किया है यश अमूत्त और तारा मूत्त है। अत अमूर्त प्रस्तुत के लिये यहा मूत्त अप्रस्तुत की सफलता देखी जा सकती है।

> तेज रहो रवि सो जहान मे प्रकासमान सेज रहौ।
> सुखको सुफ्ल फरिबौ करौ ॥
> सरद ससी सा पूर सुजस महर रहो।
> प बल प्रताप सों प्रताप करिबौ करौ[५]।

---

१ वही ११४४। २ वही - ४।१०३। ३ वही ४।१०३।
४ रसिकानन्द ११९७। ५ विजय विनोद ४८६।

इन पक्तियो म तेज, सुजस' और 'व्रत' तीना प्रस्तुत अमूत्त है, इनके लिये क्रमश सदृश धम वाले रवि, ससी और 'प्रताप' मूत्त अप्रस्तुतो की योजना की गई है, जो उचित ही है। तज क लिये सूय सुयश क लिये शशि के उपमान भले ही रूढ हैं पर तु व्रत के लिये प्रताप (राणा) का उपमान नवीनतम है।

कवि ने अमूत्त प्रस्तुत के लिय अमूत्त अप्रस्तुता की कल्पना भी कहीं-कहीं की है एक उदाहरण देखिय—

गज बदनी दग उभय प समरस अति दरसाय।
सात सिंगार विरोध तजि, बसे कुटी इक आय॥[1]

यहाँ 'समरस' अमूत्त और शान्त शृङ्गार' रस भी अमूर्त हैं। नेत्रों की समरसता ठीक एसी है, जस शान्त और शृङ्गार विरोधी हात हुए भी एकत्र बठकर समरसता उत्पन्न करते हैं।

मानवीकरण—भाव की तीव्र अनुभूति को व्यक्त करने के प्रयत्न म ग्वाल ने जड वस्तुओ भावनाओ तथा अग विशेष पर कर्तृत्व आदि मानव गुणों का आरोप करके सुन्दर रचनायें की हैं। सूक्ष्मेन्द्रिय मन पर मानव अगा का आरोप करके कवि ने अनेक छन्द लिखे हैं। एक अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द उदाहरण के रूप म नीचे दिया जाता है—

ताकें तिया क्यों गयो ... झलका मे री॥रसरग ११९८।

इसी प्रकार—

"ए रे मन मेरे तेरे काज सब सिद्ध होय
सिद्ध निद्ध साज होय सो उपाय करिये।"[2]

×

काया जिन आपनी ... पार तू उतरि जा॥[3]

कवि ने जड वस्तुओ म भी मानव गुणा का आरोप किया है। देखिये—

सरद हिमत अत करिकें ... तेरो अवलव है॥षट्ऋतु वणन ११४॥

इसी प्रकार कवि ने मेघमाला पवन बिजली कदम्ब, चन्द्रमा, पावस वसन्त, ग्रीष्म आदि म मानवीकरण अनेकत्र प्रस्तुत किया है।

सम्भावनामूलक अप्रस्तुत विधान—

ग्वाल की रचनाओ म देव और मतिराम की भाति ललित सम्भाव

---

१ दग शतक-११।   २ यही-११।

३ शान्त रस के कवित्त-३।

नाओं की कल्पना कम नहीं मिलती। हेतूत्प्रेक्षा और फलोत्प्रेक्षा ग्वाल के प्रिय अलकार हैं। इन्हीं मे सम्भावना मूलक अप्रस्तुतों की ललित छटा के दर्शन होते हैं। एक उदाहरण देखिये—

झपकि झपकी खुलें चक्रवान बांधि राखे हैं ॥रसरग १।९८॥

नेत्रों और चक्रवाकों म गुण साहश्य है। खजनी क खुबीले पन और चचल नैन झपक झपक कर खुलते हैं। कानो को पार करके कुछ केश कुण्डलाकार नेत्रो तक आ रहे है। निसिनाथ च द्रमा (मुख) ने यह सोचकर कि ये चक्रवाक (नेत्र) रात्रि को विरोधी है। रात न होगी तो उस (च द्रमा) का उदय ही नहीं होगा, उनको नागफास (केशजाल) म बाध कर डाल दिया है। यह सम्भावना मूलक ललित कल्पना है। भावुक कवि ने भावुकता का पुट देकर एक अद्‌भुत सौ दय उत्प न कर दिया है।

वपम्यमूलक अलकार—

वपम्य मूलक अलकारो द्वारा कवि सामा यत रूप, रग आदि उप करणों के वपम्य से मुख्य विषय की अनुभूति म अद्भुत सौ दय की सृष्टि करता है। साम्य मूलक अलकारो की भाति ही इनक उपयोग म कवि को अपनी सूक्ष्म दृष्टि और परिष्कृत रुचि से काम लेना पडता है। उदाहरण के लिये नीचे की पक्ति म कवि न अधिक अलकार की सहायता से भगवान त्रिपुरारि के मुखो का वपम्य प्रस्तुत कर के हरि लीला का प्रभावी चित्र अकित किया है। हरि एक हैं और लाला गायक पाच मुख। इन पचसख्यक मुखो म एक हरि की लीला नही समा रही—

हरि लीला न समात है त्रिपुर मुखन मे देख ॥साहित्यान द १६।२२८॥

इसी प्रकार अ यत्र एक दोहे म बताया गया है कि जिस भगवान के रोम रोम मे कोटि कोटि ब्रह्माण्ड है वे ही भगवान मुनि के एक मन म समा रहे हैं। यहाँ आधार को आधेय से अधिक बताया गया है। हरि आधेय हैं और मुनि मन आधार।

कोटि कोटि हरि रोम जिंह, सो हरि मुनि मन माही ॥वही १६।२२९॥

कहा मुनि का छोटा सा मन और कहाँ कोटि कोटि ब्रह्माण्डो म रोम रोम म व्याप्त करने वाले हरि। पर वे मन म समा गय हैं। यहाँ मुनि मन का प्रभावी चित्र अकित किया गया है। विषम अलकार के प्रयोग से भी यह वपम्य उपस्थित करके आधार की सौ दय वृद्धि की जाती है। नीचे के उदा हरणो म यही वैषम्य उपस्थित किया गया है—

१—कहु श्री गगा की सुजल, कहा उदधि को पाय ।।वही २१६।।

२—हरी जु मेहदी तें कहत अरुन रग सो जोय ।।वही २२०।।

३—पठई मधि पिय ल बनहिं, रही वही लिपटाय ।।वही २२१।।

प्रथम पक्ति म गगाजल मीठा और समुद्र जल नमकीन । इस प्रकार वषम्य है । दूसरी पक्ति मे हरी महदी से लाल रग निकलता है और तीसर उदाहरण म नायिका ने सखी को अपने अभीष्ट के लिये प्रिय के साथ भेजा है परन्तु वह सखी ही उस प्रिय स रतिलीन होकर इष्ट के स्थान पर अनिष्ट कर रही है । इस प्रकार वैषम्य स्थापित करके क्रमश गगा जल, महदी और सखी का उत्कष प्रस्तुत किया गया है ।

असगति अलकार की सहायता से भी वषम्य स्थापित किया जाता है । निम्नाकित दोहे म नायिका ने दूती को प्रिय के बुलाने के लिये बुलाया था परन्तु स्वय उस के साथ विरह भुलाने के लिये चौपड का खेल खेलने लगी । देखिये—

बोलि पठाई दूतिका प्रियहिं बुलावन काज ।

तासौं चौपड खेलि प घर बिरहे ब्रजराज ।।वही १६।२१८।।

आरम्भिक काम कुछ और ही था, हो कुछ और ही गया । इसी प्रकार अ यत्र नायक ने नायिका को तो सकेत स्थली मे भेज दिया और स्वय गायन म लीन होकर मुख्य काम को भूल बठा । दखिये—

भेजी प्रिया सकेत म, आप सु गावन लाग ।।वही १६।२१७।

निम्नाकित छन्द म 'याघात' अलकार की सहायता स कवि ने नायिका के नेत्रों का सौन्दय चित्रित किया है । देखिये—

तो अखिया नीकी कहत, भरी अनी की घात ।

हिय वेधत कसकत नही भीतर धसकत जात ।।शृगारशतक ८२।।

आखो की चोट हृदय को बधती है पर कसक नहीं होती । उलटी वे आखें हृदय म भीतर और घसती जाती है । यहाँ आखो का गुण वर्णित है । इसी प्रकार 'विशेपोक्ति' अलकार द्वारा वपम्य का प्रयोग—

पग प्रहार भृगु न कियो तऊ न विष्नु रिसान ।।साहित्यान द १६।२११।।

इसी प्रकार विरोधाभास अलकार के प्रयोग म भी प्रभाव वैषम्य उपस्थित किया गया है—

छक छक तेरो अधर रस, अछक रहत ब्रजराय ।।वही १६।२००।।

अधर रस को छक छक कर भी अछक (अतृप्त) रहना वषम्यमूलक है । इसी प्रकार—

जागत जे हरि भजन म ते सोवत निह चत।
सोवत जे हरि भजन बिनु, ते जागन भव अत ॥वही १६।२०१॥

'जागत' और 'सोवत वपम्यमूनक प्रभाव है।

आतिशय्य-मूलक-अलकार —

इन अलकारा का प्रयोग प्राय भावोद्दीपन के लिये होता है। कवि इनके द्वारा अपनी अनभूति को आवग देता है। परन्तु रीतिकाल म इन अलकारो का कुछ ऐसा विस्तार हुआ है कि उक्ति अपनी सवदन क्षमता खोकर चमत्कार मात्र रह गई है। ग्वाल भी इस कथन के अपवाद नही रह। कहीं कहीं इनकी ऊहोक्तिया अतिशयय की सीमा का उल्लघन कर गई है। उदाहरण के लिये इनके कटि सूक्ष्मता क वणन को ही लें —

दूर ते दिया तें गोरी के सरीर मे। रसरग ५।१५।

यहा तक ही हो तो भी गनीमत है। अश्वरी म अ क अस्तित्व के समान लक का कही अस्तित्व तो माना तो गया है। परन्तु जहा कमर का अस्तित्व ही न रहा हो वहा क्या कहियेगा। देखिय —

'ग्वाल कवि' जौ न लक है। वही ५.१४ ॥

परन्तु सवन एसी ही अतिशयय मूलक उक्तिया नही कही गई। सीमा क भीतर भी ग्वाल ने अतिशयय का अकन किया है। जसे —

प्रिय जाय विदेस लुयें लागती हैं॥ वही ४।३५।

वक्रता मूलक अलकार —

प्रत्येक आलकारिक उक्ति या तो वक्रता लिय हुए रहती ही है, परन्तु इन अलकारो की तो विशषता ही यह है कि वाणी भगिमा द्वारा य रसिक हृदय म अनुभूति को पुष्ट करत हैं। ग्वाल इस कला म पर्याप्त कुशल प्रतीत होते हैं। वक्रोक्ति को इन्होंने अर्थालकारो के साथ लिया है शब्दालकारो म नही। इसस स्पष्ट ही है कि य वक्रोक्ति का विशष महत्व दते हैं। श्लेषाथ वक्रोक्ति कि सहायता स कवि ने राधाकृष्ण के सुन्दर वार्तालाप का एक चित्र इस प्रकार खींचा है।

पीठि मोर बठी करी हाट मे॥ रसरग ९।११०।

यहाँ नायक के 'मोर' 'साईं घरवारा,' कसी' 'पीठ', प्रियतम, और धनी शब्दों को नायिका न क्रमश तोड़े', योगी, 'घर निछावर किया' आर', पिठ़ना, 'तम ही जिस प्रिय है जिस वह, और धनवान अय सवथा उन्ह ही लगाकर उत्तर दिये हैं। नायक का कथन है कि तुम पीठ मोड़े क्यों बठी हो, नायिका कहती है कि मैंने किसी के पाट कब मोरे (तोड़े) हैं।

नायक-मैं साईं हू'। नायिका 'तो कही अलख जगाओ' आदि आदि। यहाँ श्लेष से शब्दार्थ म वक्रता उत्पन्न की गई है।

पर्यायोक्ति' का आश्रय लेकर ग्वाल ने पर्याप्त सम्यक वक्रोक्तियां अपने का य म सजाई हैं। यहा हम दो एक उदाहरण ही देंगे।

इकली मैं अभागिन लुए लागती हैं ॥वही३।४०॥

मैं घर में अकेली हू। पडोसिनें मुझसे कोई सम्बध नही रखतीं। इस समय सब दिशायें जल रही हैं। दो दो कोस तक पानी की बूंद नही है और न कोई छायादार पेड ही माग मे है। आगे बडी लुए चल रही हैं। तुम्हे देखकर बडी दया आरही है। इस समय हमारी हौरी मे ही विश्राम करो। यह कहकर नायिका पथिक को आश्वस्त कर देना चाहती है कि यहा नितान्त एकान्त है। रतिक्रीडा करने का इससे अच्छा अवसर और क्या होगा।

क्रिया की वक्रता द्वारा भी नायिका अपने अभीष्टाय को व्यक्त करती है। एसे अवसर प्राय भीडभाड के होते हैं जहाँ बोलना निरापद नही होता। एक ऐसा ही उदाहरण यहा दिया जाता है—

आज गोपसुत के घरिकें चली गई ॥वही ३।४५॥

नायिका ने नायक को दिखाकर अपनी कचुकी से एक फूल निकाला और उसे बरगद के पत्ते के नीचे रख कर चली गई। वक्रार्थ से यह व्यजित हुआ कि नायक को रात्रि को बाग में बरगद के नीचे मिलना चाहिये। पत्ता बरगद का व्यजक है और फूल नायिका का और पत्ते के नीचे का अधेरा रात्रि का।

औचित्य मूलक अलकार—

स्वाभाविक सौन्दय की अभिव्यक्ति प्राय औचित्य मूलक अलकारो द्वारा हुआ करती है। स्वाभाविकता की सृष्टि अनुभूति के विविध अवयवो का विशिष्टक्रम म सजोकर रखने म हुआ करती है। ग्वाल की रचनाओ म यह स्वाभाविकता ज य सौन्दय प्रभूत मात्रा म अवलोकनीय है। यद्यपि वे व्यजना को ही अधिक प्रश्रय देते दीखते हैं परन्तु उन्होने जितने छदो मे औचित्यमूलक अलकारो का प्रयोग किया है, वे अपनी कोटि के अन्य रीति कवियो द्वारा रचित छन्दो से उ नीस नही बठत। निम्नाकित छन्द इस कथन के प्रमाणस्वरूप प्रस्तुत है—

ताक तिया कों रहयौ भलका मे री ॥रसरग १।१८

इसम नायक की दृष्टि क्रमश नायिका की कमर से लेकर समस्त अवयवो पर होती हुई सिर तक के सौदय का पान करती गई है। वणन स्वाभाविकता के साथ हुआ है।

ग्वाल के प्रतीकों का विवेचन—

ग्वाल की रचनाओ म काय के प्रसन्न और मुखर प्रतीको का प्रयाग आधिक्य के साथ हुआ है। प्रतीको के प्रयोग कवि को पर्याप्त प्रिय रहे हैं। परम्परा के अनुरोध स्वरूप ग्वाल म शृगार प्रतीकों का प्राधान्य है। ऊपर के उदाहरणो म सभी प्रतीक शृगार के हैं। य सभी कोमल रमणीय तथा चित्र मय बन पडे हैं। इनमे वण वभव भरा पडा है। परन्तु अन्य रीति कवियो की भाति ग्वाल की काव्य सामग्री भी सीमित है और रूढ उपमाना का उसम बाहुल्य है जिनको कवि ने अपनी भावुकता म रग कर चमकाने का सफल प्रयत्न किया है। ग्वाल म नवीन प्रतीकों के प्रयोग का सवथा अभाव है ऐसी भी बात नही है। नवीन अप्रस्तुत विधान भी अनकत्र मिलता है पर्याप्त मात्रा म अमूत्त उपकरणो का प्रयोग है परन्तु आधिक्य म नही। परन्तु इसके लिय भी कवि को दोषी नही ठहराया जा सकता। यह तो युगानुकूल ही हुआ था। ग्वाल के विषय म यह बात बिना सकोच कही जा सकती है कि केवल चमत्कार के लिये ही नही वल्कि भाव व्यजना के लिय भी उस ने अलकारो का प्रयोग किया है। उनके प्रतीक अधिकाशत भावमूलक हैं, अत भाव सवेदन का ही उदबुद्ध करते हैं। केशव, देव और बिहारी को छोडकर बहुत कम कवियो का क्षेत्र इतना विस्तृत है जितना ग्वाल का। इसम परम्परा के निर्वाह के साथ साथ ग्वाल ने नई उदभावनाओ के भी पयाप्त सकेत इस क्षेत्र म दिये है। उनका प्रतीको का कोश पर्याप्त समृद्ध है। जितनी सहजता के साथ उसके काय म रसमूलक अलकार जड गय हैं इसे देख कर आश्चय करना पडता है।

(आ) ग्वाल की भाषा

स्वरूप—ग्वाल के समय तक आते आते साहित्यिक ब्रजभाषा का स्वरूप भली भाँति सज सवर गया था। इसका शब्द कोश भी व्यापक बन गया था। ग्वाल क पूववर्ती आचाय भिखारीदास ने इसक स्वरूप के विषय म स्पष्ट कथन किया था कि—

ब्रजभाषा भाषा रुचिर विधि कहत बखानि॥

स्पष्ट है कि तत्कालीन ब्रजभाषा म संस्कृत और फारसी के प्रचलित सुगम शब्दो के अतिरिक्त पूर्वी, प्राकृत आदि के शब्दो का भी मिश्रण रहता

था। इसके अतिरिक्त ब्रज मे प्रचलित देशज और तद्भव शब्दा का भी इसम प्रयोग रहता था। उत्तरी भारत की अन्य बोलिया के शब्द भी इसम स्थान पाते थे। ग्वाल न अपनी जन्म भूमि ब्रज के अतिरिक्त पजाब, राजस्थान और पहाडी रियासतों मे पर्याप्त भ्रमण और निवास किया था। अतएव वहा की बोलिया के शब्दो का इनकी काव्य भाषा मे प्रयोग मिलता है। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पडित थे ही। अनुभव ने उनको फारसी, उर्दू पजाबी, गुजराती पूर्वी, राजस्थानी भाषाओ का भी ज्ञान कराया था। उर्दू और फारसी उस समय की दरबारी भाषा थी। अतएव ग्वाल की भाषा और भी अधिक मिश्रित बन गई थी। इनके काव्य म संस्कृत, अरबी फारसी और उर्दू के तत्सम शब्दों के प्रयोग अधिकता के साथ मिलते हैं। तद्भव शब्दा के प्रयोग भी या हैं परन्तु वे छन्द के अनुरोध के अनुसार ढाल कर लिए गये हैं। लक्षण ग्रन्थो म संस्कृत की शब्दावली अपने विशुद्ध रूप म ही प्रयोग हुई है। काव्य म भी संस्कृत के तत्सम शब्द कम नही आये। कहीं कही ब्रज की बोली के शब्दो का भी प्रयोग उनके साहित्यिक स्वरूप को विकृत करके किया गया है। 'सीरक', घाम, 'नगीच' आदि ग्रामीण ब्रजी शब्द भी काव्य मे अनायास स्थान पा गये हैं। देव बिहारी और मतिराम की भाति ग्वाल ने भाषा के मध्यम मार्ग का अनुसरण नही किया। भाषा को छन्दो में पर्याप्त विकृत कर दिया गया है। हिन्दी म अरबी फारसी के शब्दों के प्रयोग का आधिक्य खटकने लगता है। यो ग्वाल का शब्दकोश भरा पूरा है।

समग्रत ग्वाल ने निम्नोक्त तीन प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है—

(१) विशुद्ध ब्रजभाषा। (२) संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा। (३) फारसी और अरबी निष्ठ ब्रजभाषा।

कवि के पजाबी गुजराती और पूर्वी भाषाओ के कवित्त भी मिलते हैं, जिनम इनकी विशुद्ध शब्दावली प्रयुक्त हुई है। परन्तु ये दूसरी भाषायें उसके काव्य म अत्यल्प ही आई हैं। अत उसके काव्य की भाषा के उपयुक्त तीन रूप ही विचारणीय हैं।

(१) विशुद्ध ब्रजभाषा—

ग्वाल को मिश्रित भाषा यो विशेष प्रिय है किन्तु एक तो वे ब्रजवासी थे, दूसरे ब्रजभाषा की कोमल कान्त पदावली उनको पुरा कविया से उत्तराधिकार म प्राप्त थी अत स्वाभाविकतया ही उनके सैकडो छन्दा म **विशुद्ध** ब्रजभाषा की पदावली की ही छटा मिलती है।

(२) संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा—

दक्षिन द्विभुज अघहर्त्ता अघ खग्ग खुल्यौ,
बाम अधकर म कपाल है विराजमान।
अद्ध कर नील कज चारा कर अरुनाई
नील घन द्युति देह दत सव कुद जान॥
'ग्वाल कवि' जिह्वा दीह तीन दग ससि भाल,
बद्धित सुकेस सीस पाचन सौ सोभवान।
बहु मुख सव सेत सीस पै सो छत्र रहे,
द्वितीया श्री तारा जी को ऐसें करो नित्य ध्यान॥४॥

—देवी देवतान के कवित्त

उक्त कविता श्री तारा जी की स्तुति म है। इसम वाम, कपाल, अघ हर्त्ता, विराजमान, नील कज नील घन सव जिह्वा भाल बद्धित बहुमुख छत्र, द्वितीया, विशुद्ध रूप म आय हैं। दक्षित अघ खग्ग, दुति, दत दीह, ससि सुकेस, सीस, सेत शब्द सस्कृत के क्रमश दक्षिण अद्ध खडग द्युति दन्त, दीघ शशि, सुकेश, शीश इवत शब्दो के ब्रजीरूप हैं। ग्वाल की भक्ति परक कविताओ मे प्राय सस्कृत निष्ठ ब्रजभाषा प्रयुक्त हुई है। इनम यो कुछ शब्द फारसी के भी अनायास प्रवेश पा गये हैं। संस्कृतनिष्ठ भाषा के बीच-बीच म आये कुछ अरबी-फारसी शब्दो के उदाहरण—

जाबक जपा मे बट किसल पसद के।
लाल म गुलाल म गहर गुल लालन म।
तसी है न कज बीच औ गुलाब फन्द के।
सोभा के जहाज राज लोकन के ताज राज।

ऊपर की पक्तियो म रेखकित शब्द अरबी फारसी के है। कवि ने आनुप्रासिकता के लोभ म इनका सस्कृत के शब्दो के साथ प्रयोग कर डाला है। जसा कि स्पष्ट ही है ये शब्द भावों की सम्प्रेषणीयता म कोई रुकावट नही डालते। दरबारी भाषा मे ऐसे शब्द घुलमिल चुके थे अत बरबस ही कवियो की रचनाओ मे स्थान पा जाते थे।

(३) अरबी फारसी निष्ठ ब्रजभाषा—

इस मिश्रित भाषा के ग्वाल मे दो रूप दृष्टिगोचर होते हैं। एक तो आमफहम उदू फारसी शब्द मिश्रित ब्रजभाषा और दूसरी क्लिष्ट उदू फारसी मिश्रित ब्रजभाषा। अरबी के शब्दा की दोनों म ही खपत समान रूप म पाई जाती है। दोना प्रकार की भाषा के उदाहरण यहा दिये जाते हैं—

(अ) जाकी खूब खूबी खूब खूबन मे खूबी यहाँ।
ताकी खूब खूबी खूब खूबी नभ गाहना ।।प्रस्तावक–३।।

(आ) चाहिय जरूर इन्सानियत मानस को।
नौबत बजे पै फेर भेरि बजिवो कहा ।।
जाति औ अजाति कहा हिंदू और मुसलमान ।।वही–४।।

उद्धृत पंक्तियों में खूब, खूबी, जरूर, इन्सानियत, नौबत, मुसलमान हिन्दू, आदि उर्दू के शब्द हैं। ये शब्द तत्सम रूप में भी प्रयुक्त हैं और विकृत भी। उदाहरणार्थ कृष्णाष्टक का यह छंद—

जर को जुलूसों म लोटता हमेसा रहै
सीमजर गौहर का आप बक्सद है।
जिसके खयाल म खलक गिरफतार हुआ-
हुआ गिरफ्तार वही मा के दसफद है ।।
'ग्वाल कवि' जिसने चलाया आफताब तिम
गोपियाँ सिखाती रफ्तार हरचंद है।
चार सिर वाले के कारिंदे हैं जिसकी वे वही
बंदे पर महरबान नजर बुलंद है ।। २ ।।

इसमें जर सीमजर, गौहर, खलक, गिरफ्तार, दस्तफन्द, आफताब, रफ्तार आदि फारसी के शब्द है, जो व्रजभाषा में ढाल लिये गये हैं। जुलूस, हमेशा बकसन्द, खयाल, तिस, हरचन्द, जिसी के, बन्द, नजर बुलन्द आदि उर्दू शब्द हैं।

ग्वाल रामपुर के दरबार में कई वर्ष रहा था। उसका सम्बन्ध टोंक के नवाब तथा अन्य मुसलमान शासकों से रहा था। इम्दादुल्ला खां ताब, 'इल्म और अमीर आदि उर्दू के शायरों से उस का घनिष्ठ सम्पर्क था। अत फारसी और उर्दू कवि को पर्याप्त प्रिय थी और सम्भवत इसी कारण कवि की काव्य भाषा पर इनका पर्याप्त प्रभाव लक्षित है। संस्कृत की भांति कवि ने उर्दू और फारसी के शब्दों को व्रजभाषा में पचाने की भरसक चेष्टा की है परन्तु इसमें वह सर्वत्र सफल नहीं पाया जाता है। ग्वाल के फारसी और उर्दू के शब्द समूह के अवलोकन से ज्ञात होता है, इन भाषाओं के शब्दों का एक बड़ा भंडार इनके काव्य में मिलता है। क्षेत्र के [illegible] के कारण इस कवि ने जहाँ संस्कृत के तत्सम रूपों का खुलकर [illegible]
के तत्सम-शब्दों की भी एक बड़ी संख्या इनके [illegible] थी।

'इश्क लहर दरयाव के माध्यम से उन्होंने हिन्दी को अरबी फारसी और उर्दू की एक बहुत बडी और मूल्यवान शब्द सम्पत्ति हिन्दी को दी है। इस कवि पर फारसी उर्दू के प्रयोग के आधिक्य का आरोप प्राय लगाया जाता है जो अशत ठीक ही है। सम्भवत इसके लिये कवि का युग और वातावरण दोनो उत्तरदायी हैं। कवि ने परम्परा के अनुरोध स्वरूप कुछ कवितायें पजाबी गुजराती और पूर्वी भाषाओ मे भी की थी। कवि हृदय विनोद से प्राप्त उदाहरण भाषा का स्वरूप दिखाने के लिये यहाँ दिये जाते हैं —

पजाबी—

जेदी थ्वाडे चित्त बिच्च भाउदी है आउदी हैं
ओहा तुसा करणाधि गाणे कानू कसस दे।
साडी खुसी ऐहो आप आरांदी खुसी ने बिच्च
जेही चाहो तेही करोने हो कानू नस्स दे॥
ग्वाल कवि होऊ करमोदा लिख्या लेख
साकी बल्ल न नानू पिथारे रख्यो हस्स दे।
छल्ल रल्ली गल्लां थ्वाडी सोहणी न हूदी
स्याम सिद्धी गल्ल साड्डे नालकरन दस्स दे॥३५॥

पजाबी के कविता के अतिरिक्त कवि रचित विजय विनोद मे यत्र तत्र पजाबी लटक दृष्टिगोचर होती है किन्तु यहाँ उर्दू शब्दो को पजाबी उच्चारण मे डाला गया है यथा—लधार मनूम, चलाक बहानियाँ खुमा लियाँ घालियाँ वालिया आदि।

गुजराती भाषा—

तम तो वहो छौ छया मोरो ऊधमी छ म्हारो
मटकी मठानो ढुरकावनी निदान छ।
सो तो म्हनें जाण्यू तमे सगली जु भाखो झूठ
दीधो म्हनें सीख मस्ती माटी पहचान छ॥
ग्वाल कवि' साने मैया चरित रचो छौ तमे
सगली थई छौ गेली अडको मा आन छ।
घरे मा रमेछ हरणा तो दी करान माह, तम
तेसू दोस मो कलावा बाला जान छ॥३४॥

पूर्वी भाषा—

नदक बबुआ बगिया म बाटे अस कहि मोहि का लयलस बाटी।
वहि पर ससुर क डरवा छुडल्यू मितवा न पेत्यू सोचत बाटी॥

गवई कं मनई कमनई मिले न मग यह बिधना हम मागत बाटी।
जस जस ग्वया को्हा हम सन, तस तस हम सब जानत बाटी ॥३३॥

शब्द-समूह—इस कवि की रचनाओ मे सस्कृत, अरबी फारसी आदि के शब्दो का बाहुल्य है। कही वे तत्सम रूप म हैं तो कही तद्भव रूप म। नीचे हम इन भाषाओ के ऐसे कुछ शब्द दे रहे है जिनका कवि ने अपने काव्य म खुलकर प्रयोग किया है। कोष्ठक मे तत्सम रूप लिख गये हैं—

सस्कृत शब्द समूह तथा सस्कृताभास शब्द समूह—कलित, कीरति (कीर्ति), मुनीसुर (मुनीश्वर), धुनि (ध्वनि), म्रदुलता (मृदुलता), विसस (विशेष), पानिप मजु मुक्ता (मुक्तक) सिंधु (सिन्धु) *अगम (अगम्य)*, बिंब (बिम्ब) जावक, ललित दुद (द्वन्द्व), तत्व, सत्व, प्रभुत्व, कुलिस (कुलिश), चिन्हित विचित्र सुषमा उत्तर, ऊरध (ऊद्धव), कदली अरध (अद्ध) प्रिष्ट (पृष्ठ), चामीकर स्वण हीरक, पुसकर (पुष्कर), सब द्रव्य, यथा विहित व्यतिरिक्त नकुल, कन्यका, घृत, दीप, धूम (धूम्र) काक मारतड (मार्तण्ड), पडितेश पुरहूत, मृगमद, अखड कम्बु, पुडरीक, कलानिधि अमन्द कलस (कलश), विद्रुम परिपूरन (परिपूर्ण), पियूष (पीयूष) पल्लव प्रभा, पारिजात द्रिष्टि (दृष्टि) खचित, जटित, मुकर उद्धित, रुद्धित क्रुद्ध, मयक, सहस्र फनीस (फणीश) पदारविन्द युग्म सुभूषित नव, हरितपत्र अरुनाबर (अरुणाम्बर) लक्षित विलक्षण, क्रीट (किरीट), कुभ (कुम्भ) जिह्वा दुति (द्युति) रत्नदीप कल्पवृक्ष, घूरनिति (घूर्णित), अक्ष श्यामलाग्र दिव्य, दीह या दीरघ (दीर्घ) वग्धि, पसु (परशु) सुरापात्र रिपुमर्दिनी, राका, उद्भव, पराभव प्रवप उतकस (उत्कर्ष), दुतिय (द्वितीय) त्रितिय (तृतीय), पड (पट) सुभ्र (शुभ्र) सरसुति (सरस्वती), वृत्ति घति, चारु आदि।

अरबी फारसी शब्द समूह—इस वर्ग म अरबी और फारसी के ऐसे आमफहम शब्द भी हैं जो साधारण बोलचाल की भाषा क अग बन चुके थ और एस भी, जो केवल साहित्य म ही प्रयुक्त होते थे। ग्वाल के काव्य म इन भाषाओ के प्रचलित शब्दो का ही प्रयोग बाहुल्य मे हुआ है कुछ शब्द ये हैं—मुल्क, चश्मा, नेजा, शिकार, कबूल, निसान (निशान) हद हमाम गुलाम, फरियादी गिरद (गिद) करामात, फबत, चिराक (चिराग) कसाला, कलाम, नजराना कारगार, तुफे (तोहफे), नजर कहर, अजादह आतिब मरजी, दरयाब बदोबस्त, फमस हिसाब, आमद, मुन्शी, दफतर (दफ्तर) फरद कुरान, खुदा, आईना करीना, खबर, बुज इनसाफ तकसीर तकदीर दुरस्त (दुरुस्त), वजीर बदसीम (बदिशग) महताव (माहताव), चोगा, जमक

कहने की आवश्यकता नही कि प्रत्यक वाक्य अपने म पूण और लिग, वचन, कारक, क्रियादि क दोषो से रहित है। बहु वचन के कर्त्ता और तदनुकूल, बहु वचन की ही क्रियायें हैं। केवल प्रथम पक्ति म 'हम' पद के स्थान पर मोहिं' (मुझको) होता तो और अच्छा होता। क्योकि यह वचन नायिका (एक वचन) का है। परन्तु यह त्रुटिपूण प्रयोग क्षम्य ही माना जायगा क्योकि ग्वाल न नायिका के लिये उसके स्वकथन म अनेकत्र उत्तम पुरुष एक वचन का ही प्रयोग किया है।

व्याकरण के सभी नियमा का पूण निर्वाह है। पहले कर्त्ता, फिर कम और अन्त मे क्रिया—यही व्याकरणिक वाक्य विधान है। ग्वाल के काव्य म ऐसे अगणित छन्द हैं, जो व्याकरण सम्मत हैं। परन्तु अनेकत्र वे भी व्याकरणिक दोषो से बच नही पाये। यदि उनके पूरे काव्य को व्याकरण विधान की कसौटी पर कसा जाय तो उनका काव्य अन्य रीति कवियो के काव्य की भाति ही दूषित मिलेगा। ग्वाल ने काव्य के शास्त्रीय पक्ष पर अधिक ध्यान दिया, व्याकरण पर नही।

वचन और लिंग के दोष—

तार्कें तिया के मन मेरो गयो लक पर
निकसि तहा तें घँस्यो त्रिवली प्रभा म री।
रोम अवली तें उच कुच मे सरुच लसि,
सकुच न की ही लूम्यो हेम के हरा म री॥
'ग्वाल कवि उचकि वहा ते अधरा प गयो
नासिका चढन गिरि परयो कौन यामे री।।रसरग ११८॥

उक्त पक्तियो म कुच और 'अधरा दोनो एक वचन मे प्रयुक्त हुए हैं। नियमानुसार ये बहुवचन म ही प्रयुक्त होने चाहिये। रीति कविया ने इन शब्दा की ओर इस दृष्टि से ध्यान नही दिया। प्यारी कुच शम्भु को मैं पूजन करत हो (ग्वाल) मे कुचो का शम्भु के साथ रूपक दोषपूण बनता है। कुच दो हैं, शम्भु एक। परन्तु परम्परा म यही रूपक मान्य चलता रहा है। पर तु कवि की रचनाओं म वचन सम्बन्धी दोष अधिक और लिंग सम्बन्धी दोष अपेक्षाकृत कम मिलते हैं।

कारक चिह्नों के दोष—ग्वाल ने अन्य रीति कवियो की भांति कारक चिह्नो को अधिकाशत छोड दिया है। कही कही इनका अनावश्यक प्रयोग किया है। ऐसे सकडा उदाहरण दिये जा सकते है जिनम चिह्न तो गायब है कर्त्ता भी नही लिखा।

१—'ग्वाल कवि' कहै कीर कदी मे किये हैं केते।
२—अजब अनूठे विधि कीले द्व बनाये हैं सो।
३—बोले क्यो न आली का गुनाह उन पाली।
४—मैं न अपराधी तुम साधी क्यो रिसीली रीति।
५—इहा कौ इहा ई वर देन हारी मे निहारी।

उपयुक्त पक्तियों मे रेखाकित कर्त्ता शब्दो क साथ ने' विभक्ति नही लिखी गई।

प्राचीन ब्रजभाषा मे ने' का प्रयोग बहुत ही कम मिलता है। अवधी की भाति 'ने रहित वाक्य भी व्याकरणानुसार शुद्ध हैं। 'मैं किये" का अथ है= मरे द्वारा किय गये'।

स० मया> प्रा० मइ > मैं—यह विकास क्रम है।

ग्वाल कारक चिह्नो क प्रयोग म विशेष सजग नही रहे। एक कारक के प्राय सभी चानु चिन्हों को उन्होने अपने काव्य में इच्छानुसार स्थान दिया है। उन्हाने कम क 'को, 'को', 'कौ' 'कौं' चिन्हो को स्वतन्त्रता से प्रयोग किया है। करण और अपादान कारक के लिये 'ते' 'तें, त' से, 'सें, 'सों', 'सौं, अधिकरण कारक म 'मे', मैं, 'प', 'पर' 'माहि', 'माझि', 'पह, 'पाहि' चिन्ह प्रयुक्त हैं। इनम से कौं, मैं' 'सौं', 'तें' आदि दीघ मात्रा वाले चिह्न ग्वाल के जिस जिस हस्तलिखित ग्रन्थ में मिलते हैं, उसी में इनके लघु मात्रा वाले रूप भी लिखे मिलते हैं। यह लिपिकर्त्ताओ की भूल भी ठहराई जा सकती है।

क्रिया रूप—ग्वाल ने क्रिया पदो को यथाशक्ति उनके पूणरूप म ही प्रयोग करने की चेष्टा की है। प्राचीन कवियों द्वारा अत्यल्प प्रयुक्त वत्तमान कालिक 'है' क्रिया का पृथक रूप म उन्होने बखूबी प्रयोग करके दिखाया है। वर्तमान कालिक क्रियाओ के रूपो का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है—

इकलो म अभागिनि हौं बडो लुयें लागती हैं ॥रसरग ३।४०॥

भविष्यत कालिक क्रिया पदों म गा', 'गी', गे', चिन्हा के प्रयोग के अतिरिक्त इनका एक और स्वरूप रीति के कवि प्रयोग करते थे। ग्वाल की रचनाओ म कही कही क्रिया पद के अशुद्ध रूप प्रयोग भी मिलत हैं। यथा—

'ग्वाल कवि' एक का जु सामने बिठाय दीनो
दूजी को बिठाई निज करि मुख ताकी ओर ॥ वही २।६३॥

यहाँ दीनी' क्रिया पद अनुपयुक्त है इसक स्थान पर 'दियो होना चाहिये था। दूसरा पद 'बिठाई भी ठीक नही। यहाँ भी बिठायो' होना

निगु ण–निगु ण' की रट लगाये हुए हो कृष्ण कब के योगी बने हैं। उनमें तो सबगुणों का भंडार भरा है।'

जो पीय ब्याहि लायो दिवन सों भरी हैं ॥ कुब्जाष्टक ७ ॥

दोपाराखिता काहू दासी कुब्जा ने गोपियों के ऊपर 'सूप बोल तो भलई चाल चालनी हू बोल जो कि छेदन सों भरी है' लोकोक्ति के माध्यम से कितना जबरदस्त व्यंग्य प्रहार किया है। यह कवि की लक्षणा शक्ति का ही चमत्कार है।

लोकोक्ति कहावतें अथवा मुहावरे लक्षणा के ही प्रयोग होते हैं। जहाँ इनमें अलंकारों का समावेश रहता है, वहीं अर्थ की वक्रता भी निहित रहती है। ग्वाल के साहित्य से इस प्रकार के लक्षणा प्रधान कुछ मुहावरे और लोकोक्तियाँ यहाँ उद्धृत किये जाते हैं। ये लक्षणा के अनूठे प्रयोग हैं—

१। बिरहा प परो बिजरा गिन बोलत बोल महा भभरे हैं।
खान न पान की स्वाद कहें द्रग मूंदे कछू ओ कछू उघरे हैं॥
त्यों कवि ग्वाल तियान की जूथ सब उपहासन में पसरे हैं।
बूझ न बात कछू कहीं तोय री कामिनि पे पथरा से परे हैं॥

—रसरंग १।१३०।

'परो बिजरा' गिन बोलत बोल भभरे हैं, द्रग मूंद बूझ न बात में मुहावरों का सुंदर प्रयोग दर्शनीय है। पथरा से परे हैं' मुहावरे में उपमा अलंकार की भी छटा है। इन उदाहरणों से ग्वाल की भाषा की लक्षणा शक्ति का पूरा आभास मिल जाता है।

(ग) व्यंजना—जहाँ अभिधार्थ और लक्ष्यार्थ के अतिरिक्त एक तीसरे प्रकार के अर्थ का भी बोध होता है वहाँ व्यंजना का व्यापार होता है। जिस शब्द से इस अर्थ का बोध होता है वह व्यंजक और इस व्यंजक शब्द से प्रतिपादित अर्थ व्यंग्यार्थ कहलाता है। यद्यपि शब्द में इस अर्थ का प्रत्यक्ष निर्देश नहीं होता, परंतु प्रसंग विशेष में वह स्वयं ही ध्वनित हो जाता है। अतः व्यंजना शक्ति शब्द की अनेकार्थी शक्ति से भिन्न रूप में काम करती है। व्यंजना के पर्याप्त उदाहरण पीछे वक्रतामूलक अलंकारों के प्रसंग में दिये जा चुके हैं। यहाँ व्यंजना के कुछ अन्य उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१–त्रिविधि बयार बहै जहाँ तहाँ चलो हरिराम।
गहवर बन निरजन जहाँ तहाँ न रवि हरसाम ॥साहित्यानंद ११।१२७॥

यहाँ गहवर बन निर्जन है, सूर्य का प्रकाश भी नहीं है। उधर

त्रिविधि समीर प्रवहमान है। समय और स्थान दोनों ही रतिक्रीडा के अनुकूल हैं। इससे व्यंग्य निकलता है कि निश्चय ही क्रीडा करेंगे।

२-परिक्रमा गिरिराज की करन चलोगी भोर।
अटवी दुपहर काटि हौं जहाँ सघन वन घोर ॥वही ११।१२१॥

नायिका का मित्र समीप ही है। 'सघन वन म दुपहर काटने' से व्यंग्याय निकला कि वहाँ क्रीडा करेंगे।

३-कहा कहौं कहत न बनें, प कछु करौं बखान।
मोरन की सी गति लई, तुम हू स्याम सुजान ॥ वही ११।११८ ॥

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि ग्वाल की भाषा म शब्द की विविध शक्तियों का नाना विधि समावेश है। भाषा का यगत सौन्दय को व्यजित करने म प्राय समथ है।

(घ) नाद सौन्दय—अनुकरणात्मक शब्दों की योजना द्वारा अभीष्ट नाद ध्वनि की सृष्टि करके प्रसगानुकूल चित्र उभारने म ग्वाल पर्याप्त कुशल हैं। वर्षा की उमडती घुमडती घट घटाओ के नाद सौन्दय की चर्चा हम कवि के प्रकृति वणन म कर चुके हैं। यहाँ युद्ध म तोपों की ध्वनियो द्वारा प्रसूत नाद सौन्दय का एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है—

फौजें महाराज शेर शेरसिंघ जू की चलीं,
घन घहरात गड गड गडक्यो कर।
पलटन की पगति त्यों पलक न फरि पर
फेर फुरती ले फड फड फडक्यो कर ॥
ग्वाल कवि कहैं चल तोप की तडाक
तेज तडर तडर तड गड्ड तडक्यो कर।
तडड तडड ताड तडड तडड ताड
तडड तड्ड तड तड तडक्यो कर ॥ वि० वि० ॥

'घन घहरात गड गड गडक्यो कर' 'फड फड फडक्यो कर स तोपों के गुरु गम्भीर मन्द्र घोष और 'तडर तडर तड तड म तोपों के चलने का उपयुक्त घोतिक नाद जैसे कानों क समीप ही हो रहा प्रतीत हो रहा है। अन्तिम पक्ति क प्र प्र म निरन्तर तोपों क चलने का घोष निनादित हो रहा है।

(ङ) वृत्ति और गुण

भाषा की सबलता और भावों की अभिव्यक्ति म वृत्ति और गुणों का ... महत्त्वपूर्ण स्थान है। वृत्तियाँ दो हैं—

(१) परुषा और (२) कोमला। गुण तीन हैं—(१) माधुर्य (२) ओज और (३) प्रसाद। इन पर हम पीछे ग्वाल के रीति निरूपण में विचार कर आये हैं। यहाँ तो मात्र यह देखना है कि कवि की रचनाओं में किस सीमा तक उक्त वृत्ति और गुणों का निर्वाह हुआ है।

माधुर्य गुण—इसमें कोमल भावनाओं का प्रकाशन होता है अतः यह गुण योजना कोमला वृत्ति के अंतर्गत आती है। ग्वाल शृंगार के सिद्ध कवि हैं, अतः इनमें माधुर्य गुणाश्रित रचनाओं का प्राचुर्य होना स्वाभाविक ही है। निम्नांकित छन्द कोमला वृत्यन्तर्गत माधुर्य गुणोपेत सौंदर्य का एक अच्छा उदाहरण है। इसकी संगीतात्मकता इसे और मधुर बनाती है।

मैल करौ वासों नैन सैन सर केलें करौ
खेल करौ रात दिन मेल करौ रहि कें।
चाहे जब अब करौ दरसन दवै करो,
भोजन ह्वा पै वै करौ निज रुचि चहि कें॥
ग्वाल कवि' मोहि निज खुसी ही की जायो करौ
जुदी जिन जायो करौ कहीं पाव गहिकें।
छिपि कें न जबौ करौ बसन सजबौ करौ
पानि पान लबौ करौ जबौ करौ कहिकें। ॥रसरंग १।११०॥

ऊपर शृंगार के संयोग पक्ष में कोमल कांत पदावली में माधुर्य गुण उदाहृत है।

ओज गुण—इसका संयुक्ताक्षरों, द्वित्व वर्णों, टवर्गी से युक्त शब्दों की योजना में परुषा वृत्ति का ही ध्यान रखा जाता है। संयुक्ताक्षरों का ओजो गुण मय छन्द अमृत ध्वनि है। ग्वाल की एक अमृत ध्वनि का उदाहरण प्रस्तुत है—

गहि गहि कर तरवार को, हीरासिंघ समत्थ।
चत्तगज हय रत्थ पै, किति ग्वाल कवि कत्थ॥
कत्थ गत्थ अगत्थ सुनियत पत्थ खलभल।
मत्थ धुनि हरि पथ्थ धरकि कुपथ्थ बलचल॥
लथ्थ पथ्थ अनथ्थ सुनथ्थ नथ किय लच्छर्हि।
गुथ्थत रुंडन मुंड सुभट हताहत भुज गहि॥ वि० वि० ४७१॥
गज्ज गज्ज सनन सनन। भज्ज भज्ज धन्न धन्न।
धाइ धाइ झट्ट झट्ट काटि काटि कट्ट कट्ट ॥वही ४१४॥

प्रसाद गुण—प्रसाद गुण सभी रसो म स्थित रहता है। माधुय और ओज का सम्बन्ध भाषा के बाह्य स होता है, जबकि प्रसाद अथ से सम्बद्ध रहता है। प्रसाद गुण सवलित एक कवित्त कलियुग की 'कीति' मे उप स्थित है—

ईरषा की सन लकें कलजुग भूप आयो,
झूठ क नगारे सो बजत दिन रात हैं।
काम क्रोध मोह लोभ तग गभी धनु नेजा
अन्या अखड तो प्रचड घहरात हैं॥
'ग्वाल कवि' गब्बर गसील गोन गोला चलें,
टाना धूर बचनो के पूर लहरात हैं।
हूजियो हुस्यार यार साच के मवास माहि
पाप की पताका आसमान फहरात हैं॥प्रस्तावक २९॥

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ग्वाल भाषा गत विविध शब्द शक्तियो द्वारा काव्य म उपयुक्त सौन्दय बोध उत्पन्न करने की क्षमता रखते थे। इनकी शब्द योजना वृत्तियो के उपयोग म भावाभिव्यजना के प्राय सवथा अनुकूल हैं।

(उ) उक्ति वैचित्र्य

कवि कम-कौशल जन्य शब्दाथ चारुता उत्तम काव्य का सहज अग है। इस से भाषा की धार पनी बनती है, जो व्यग्य को तीव्रता प्रदान करती है। इस का नाम उक्ति वचित्र्य है जिसे शास्त्र मे 'वक्रता' कहते हैं। वक्रोक्ति जीवित कार ने इसके ६ भेद किय हैं—(१) वण विन्यास वक्रता, (२) पद पूर्वाद्ध वक्रता (३) पदपराद्ध वक्रता, (४) वाक्य वक्रता, (५) प्रकरण वक्रता और (६) प्रबन्ध वक्रता। ग्वाल के उक्ति वचित्र्य के सन्दभ म इन्ही शीषकों म विचार करना अपेक्षित है।

(१) वण विन्यास वक्रता—इसके अन्तगत अनुप्रास योजना, वर्ग तयोगी स्पर्शों त, ल, न आदि वर्णों के द्वित्व तथा रेफादि वर्णों की आवृत्ति, यमक योजना आदि आते हैं। ग्वाल ने इन सभी तत्वो का अपनी रचनाओ म पर्याप्त कुशलता के साथ निर्वाह किया है। अनुप्रास के प्रति इनका विशेष आग्रह रहा है। इन्होने पद पद पर अनुप्रासो का ऐसा समा बाधा है कि कहीं कहीं कविता के भाव भी दब म गये हैं। इन के कुछ उदाहरण नीचे दिय जाते हैं—

१—झूमे झुकें झिझकें झिहरें झमका झमकें झपकें झपकीन म ।
—रसरग ११८९ ।

२— ग्वाल कवि' कहें चलें तोप की तडाडें तेज
सडर सडर सड सड सडक्यो कर ।
तडड तडड ताड तडड तडड ताड
तडड तडड तड तड तडक्यो कर ॥वि० वि०॥

३—लाल लाल गिदुक गुलाल लाल लाल गुल
गालिब गुलाब गोल गादी गुल गुल की ॥षटऋतु ६८॥

४—गावत धमार धूम धाम धाम धाय धाय ।
धीर ना धगत मौज फौज के नगीच मे ॥वही ७१॥

कहना न होगा कि ग्वाल की प्रतिभा अनुप्रास योजना म बडी लगन शील रही है । इनकी रचनाओ म से ऐसा छद खोजना कठिन ही होगा जो अनुप्रास से आभायित न हो ।

जैसे कान्ह जान तसे उद्धव सुजान आय
हैं तो पाहुने ये पर प्रानन निकारें लेत ।
लाख वर अजन अजाय इन आखिन तें
तिनको निरजन कहय कूठ धारें लत ॥
ग्वाल कवि हाल ही तमालन म मालन म,
ख्यालन मे खले हैं कलोल किलकारें लेत ।
ह्या न परचे री परचेरी सग परचे री
जोग परचे री भेजि परचे हमारे लेत ॥गोपी पच्चीसी १॥

प्रथम परचे' का अथ 'पहचान , द्वितीय का 'दूसरे की सेविका', तृतीय का पुन पहचाने चतुथ का अथ 'पत्र' और पचम का अथ है 'परिचय । यमक का यहा अच्छा चमत्कार है ।

(२) पदपराद्ध और पदपराद्ध वक्रता—पदपूर्वार्द्ध के आठ भेद किय जाते हैं—(१) रूढि वचित्र्य वक्रता (२) पर्याय वक्रता, (३) उपचार वक्रता (४) सवति वक्रता (५) विशषण वक्रता (६) वत्ति वक्रता (७) लिंग वचित्र्य वक्रता तथा (८) क्रिया वचित्र्य वक्रता । रूढि वचित्रय मे आशय कोश तथा लोक व्यवहार म प्रसिद्ध अथ क अन्तगत लाकोत्तर चमत्कार उत्पन्न करने से है जबकि पर्याय—वक्रता की सफलता पर्यायवाची शब्दों के उनकी आत्मा के अनुसार प्रयोग म मानी जाती है। उपचार वक्रता जहाँ साम्यमूलक अलकार—व्यापार का पर्यायमात्र है, वहाँ विशेषण का वदग्ध्य

पूण प्रयोग विशेषण प्रधान अलकारा की कोटि म रखा जा सकता है—वसे अलकार के अभाव म भी विशेषण वस्तु वणन को सुन्दर बना देते हैं। सर्वति वक्रता का सम्बन्ध क्रमश सना आदि के गोपन तथा समस्त पदावली की योजना मे उत्पन्न चमत्कार से है।[1] यह पराद्ध वक्रता का भी काल, कारक वचन, पुरुष, उपग्रह (धातु पद) सूचक प्रत्ययों तथा निपातन आदि के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। य भेद प्राय सस्कृत के आधार पर हैं। अत प्रकृति और प्रत्यय की भिन्नता होने के कारण व्रज भाषा म इन के उदाहरण भाषानुकूल विशेषताओ के साथ ही मिलेंगे। ग्वाल सस्कृत व्याकरण के ज्ञाता प्रतीत होते हैं क्योंकि उनकी रचनाओ मे य विशेषतायें प्राय प्राचुय के साथ उपलब्ध होती हैं। इस प्रकार के कुछ उदाहरण नीचे दिये जाते हैं—

१—रूप गहगहे म अनूप डहडहे म त्यो मन वहवहे म सदाई नहे नहे म।
रहे न मनोरथ निवाहति बहे में कछू कबहू सहना दाग विरहा के डहे म॥
'ग्वाल कवि' मद चहचहे लहलहे नैन उलहे अरुन डारे मन महमहे म।
चातके चहे मे नित छवि के छहे मे अहे,
बात के कहे म उमहे म लाल लहे मे॥ रसरग ४।७८॥

यहाँ रेखाकित शब्द अपने विशिष्ट अर्थो द्वारा छन्द म प्रसगानुकूल चमत्कार उत्पन्न कर रहे हैं।

२—हेमी झूमकान की परी है आनि आभा याते,
ह्वै गय बसती वे कपोल मन भाये हैं।
ग्वाल कवि लाल ने लगाई ख्याल प्यायो मद,
ह्वै गय कपोल लाल लाल ललचाये हैं॥वही २।५५॥

रेखाकित शब्द विशेषण हैं और विशेष्यो के वस्तुगत सौन्दय मे वृद्धि कर रहे हैं।

३—प्यारी तो तन ताल म फूले दग अरविंद।
चितवनि रसमकरद हित, मोमन भयोमलिद॥ दगशतक ६॥

रेखाकित पद सामासिक हैं, जो भाषा म विशिष्ट कसावट ला रहे हैं।

४—मीन का दिखाइ कचुकी तें पून लक एक,
पर के पतोआतर धरि कें चली गई॥ रसरग ३।४५॥

रेखाकित म काल वक्रता है।

५—पनि ही ते पति और सपति सुगति रूप
पति ही सो रघुपति बाधक विपति की॥वही १।१६८॥

---

१ मतिराम कवि और आचाय—डा० महेन्द्र कुमार पृ० २४१।

रेखांकित शब्दों में काल वक्रता एवं प्रत्यय निपात वक्रता द्रष्टव्य है।

अन्त साक्ष्य के सम्यक् अध्ययन से विदित होता है कि ग्वाल को भाषा पर व्यापक अधिकार प्राप्त था। इनका शब्द भंडार अतुलनीय है, जिसमें से अपनी अद्भुत शब्द चयन शक्ति द्वारा वे अवसरानुकूल लचीले, लाक्षणिक या प्रतीकात्मक शब्दों का चमत्कृति पूर्वक प्रयोग करते दिखाई देते हैं। काव्य के अपने विशाल विस्तृत क्षेत्र में सानुप्रासिक पदावली के व्यापक प्रयोग कौशल को देखकर सहसा आश्चर्य करना पड़ता है कि रीति का एक परवर्ती कवि अत्यन्त स्वाभाविकता और लाघव के साथ काव्य में शब्द सौंदर्य को कितनी सफलता के साथ सम्पुटित करता है। उनकी शृंगार रसोपयुक्त भाषा की तो दाद देनी पड़ती ही है इनके वीर काव्यों की ओजस्वी वाणी को भी नहीं भुलाया जा सकता। इनकी चमत्कृत भाषा सदा रसानुगामिनी है। रीति के दो एक कवि को छोड़कर किसी का क्षेत्र ग्वाल के समान विस्तृत नहीं है और देव, मतिराम आदि दो एक कवियों को छोड़कर शायद ही किसी अन्य की भाषा पर इतना व्यापक अधिकार प्राप्त हो, जितना ग्वाल को है। उसका व्यापक शब्द कोश सफल प्रतीक विधान पदे पदे लाक्षणिक प्रयोगों की प्रचुरता आद्योपान्त अलंकरण का निर्वाह गुण और रीतियों का समन्वय आदि विशेषतायें उक्त कथन की मुखर साक्षी हैं।

(ऊ) ग्वाल की शैली

शैली के स्वरूप की चर्चा करते हुए विद्वानों ने इसके चार प्रमुख गुण बताये हैं—(१) ओजस्विता, (२) सजीवता (३) प्रौढ़ता और (४) प्रभावशालिता।[१] प्रकारान्तर से पीछे इन गुणों पर ग्वाल की कविता के संदर्भ में पर्याप्त विचार किया जा चुका है। यहां तो शैली के अन्तर्गत सामूहिक प्रभाव की चर्चा ही अभीष्ट होगी। ग्वाल ने शृंगार रस की रचनाएँ प्रमुख रूप से की है। इसमें उस शैली की हम विशेषता देखनी है जिसमें कवि प्रसंगानुकूल और विषयानुकूल शब्द योजना का विधान करके भाव में स्वयं ही उद्दीप्त होने की उस सशक्तता का समावेश कर देता है जो रचना में प्राणवत्ता फूंकने के साथ साथ किसी व्याख्या की अपेक्षा नहीं करती। एक उदाहरण देकर हम इसे स्पष्ट करेंगे—

उरि गई बात पीय   लाजवती सी सिकुरि गई ॥रसरंग ४।१९॥

१ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० ब्रज नारायण सिंह, पृ० ४२८।

यहा द्रष्टव्य है कि केवल नायक के परदेश जाने की बात सुनने मात्र से नायिका की विकलता का ठिकाना नही रहा है, जबकि वह अभी गया भी नही है और दोनो म भेंट सम्भावना सवथा समाप्त नही हुई है। कारण की सम्भावना ने ही नायिका के काय व्यापार अस्त यस्त स दिखाई पडने लगे हैं। जब पाथक्य होगा, तब नायिका की क्या दशा होगी यह कल्पना स परे है। पति वियोग की कल्पना मात्र से उसके अगावयवो म विरहाग्नि 'पुरि गई है'–व्याप्त हो गई है। जिससे वह इतनी शोकाकुल है विदुहुरी। मुरि गई जुरि गइ है। जो खेल की उमग। नायिका मुग्धा है उसके तनमन म लीन थी वह सहसा ढुरि गई'–उतर गई। नसनस मे पीडा का साम्राज्य हो गया और मुख द्युति औरा अउर औरा से औरही होगई। यही नही परम सहचरी सखीस भी वह लडकर बिछुड गई। ग्रीवा नत। निहुरि। हो गई तथा नेत्रो से निचुड ही गई—श्रीहीन हो गई। सास सामने खडी है। उस दखत ही अचानक उसम व्रीडा का त्वरित सचार हुआ और वह तुर त मुडकर कोठरी म जा छिपी। लज्जा तिरक से वह छुई मुई की भाति सिकुड कर रह गई। वैकल्प के इतने सारे काय यापारो क अन्तगत कही भी शिथिलता नहा आने पाई है। भाव सवत्र प्राणवान और मूर्त है। 'दरि गई बात स लेकर सिकुरि गई' तक की समस्त शारीरिक और मानसिक चेष्टायें नितात मनोवैज्ञानिक ढाचे म ढली सी हैं जिन मे गतिमयता का नैरन्तय और प्रबल प्रवेग है। एक साथ कई सचल बिम्बचित्र पाठक के नेत्रो के समक्ष स्वत ही सजीव स आते और उन पर अपना अचूक प्रभाव डालते हैं। यह सब कवि की सफल शब्द योजना का प्रति फलन है। 'दरि गई' 'पुरि गई' मुरिगई 'जुरि गई,' 'घुरि गई' 'ढुरि गई, 'बिछुरि गई, 'लरि गई, निहुरि गई' निचुरि गई' दुरि गई,' मुरि गई और सिकुरि गई, पद कोमल का त, माधुय गुणोपेत, अलकारिक होने के साथ साथ कितने सटीक भी हैं। इनम स एक भी शब्द निकल जाय, तो पूरा का पूरा भाव ही नष्ट हो जायगा। कवि ने शब्दो की आत्मा म पैठ कर ही इस अपूव भाव सौंदय को द्दटायित किया है। कहना न होगा कि ग्वाल ने भावो की माला चुन चुन कर मोती पिरोये हैं आबदार और निष्कलक।

वीर रस के अन्तगत कवि ने राजा ध्यानसिंह क क्रुद्ध अन्तद्व द्व का सजीव चित्रण इस प्रकार किया है—

राजा ध्यान सिंह के सहरें जराइ डारों ये॥वि० वि० ३३३॥

महाराजा शेर सिंह और राजकुमार प्रताप सिंह के अजीत सिंह और लहनासिंह द्वारा विश्वासघातपूर्ण नृशंस वध किए जाने पर मन्त्री राजा ध्यानसिंह के क्रोध का ठिकाना नहीं रहा। उनके मन में अनेक लहरें उठ रही हैं। विद्रोहियों को आनन फानन में नष्ट करने का एक के पश्चात् एक विकल्प आता है— भूमि में जीवित गड़वा दूं, तोप से उड़वा दूं, हाथियों के पैरों तले कुचलवा दूं, मौचर हथियारों से अंग प्रत्यंग पृथक् पृथक् करा दूं, बारूद से उड़वा दूं, चीर डालूं, जल में पटक दूं या जला दूं आदि के द्वारा क्रोध भाव का मूर्त रूप खड़ा किया गया है। क्रुद्ध व्यक्ति के मनोविज्ञान का यह सफल अध्ययन प्रस्तुत करता है। कहना आवश्यक नहीं कि कवि भावों को प्राणवत्ता प्रदान करने में पूर्ण सफल हुआ है। इस सफल भाव चित्रण का श्रेय कवि की सशक्त शब्द चयन शक्ति को है।

१—सकेतात्मक शैली ग्वाल की रचनाओं में लक्षणा और व्यंजना गत वक्रता की प्रायः पूर्ण व्याप्ति है। इनमें शब्दों का अर्थगत चमत्कार वर्णन की शैली द्वारा अधिक प्रभाव के साथ सामने आता है। इसमें अर्थगत शक्तियों का तो पूरा पूरा योग है ही, प्रस्तुतीकरण की भी कवि की अपनी सूक्ष्म बूझ महत्वपूर्ण है। अनेक गोपनीय बातों को सकेतों द्वारा किसी माध्यम से कह जाने की परम्परा में भाषा की सकेतात्मक शैली के दर्शन होते हैं। निम्नांकित छन्द में नायिका के संकेत व्यापार का एक ऐसा ही अनूठा सलज्ज चित्रण प्रस्तुत है जिसमें गुरुजनों के मध्य बैठी नायिका तिरछी चितवन से सब कुछ कह देती है। भावों के प्रस्तुतीकरण की यह शैली सकेतात्मक है—

बीच गुरु नारिन सुख पाइ कें ॥वही॥

२—सगीतात्मक शक्ति समन्वित शैली शब्दों की विशिष्ट योजना से छन्द की भाषा में एक लय सी उत्पन्न होकर नाद सौन्दर्य की सृष्टि कर देती है। यह शैली की सगीतात्मक शक्ति होती है। ग्वाल की रचनाओं में लयदार सगीतात्मक छन्द सरलता से अनेकत्र मिल जाते हैं। पीछे इस शैली के कई छन्द उदाहृत किये जा चुके हैं।[१] एक उदाहरण यहाँ दिया जाता है—

बारियाँ महल की मुन्दी हैं ताने हलकी सु
रास परमल की अगीठिया अनल की।
जोतें मन जल की चगेरें हैं निकल की
सुप्यालियाँ अमल की पलगें मखमल की॥

१ (अ) रसरग (आ) वही, ४।१९ (इ) वही, ४।७८ (ई) वही, ९।१७२।

'ग्वाल कवि थल की सचौली लक वल की
वो पून ममतन की प्रभाम झलाझल की ॥
विपरीत ललकी कहै की वात कलकी,
सुवाले छवि छलकी दुमाले म उछन की ॥

छन्द—रीतिकालीन कविया न अधिकाशत दोहा, कवित्त और सवया इन तीन छ न्दो का ही अपनी श्रृ गारिक रचनाआ म प्रयोग किया है। लक्षण ग्रन्था म भी प्राय ये ही छन्द प्रयुक्त हैं। प्रब ध काव्यो म वीर गाथा परम्परा के नोग्य चौपाई, भुजग प्रयात, नाराच आदि छन्दो का भी प्रयोग हुआ। ग्वाल ने रीति निरूपण और रीतिबद्ध श्रृ गारिक रचनाआ म परम्परानुगत दोहा कवित्त और सवया छन्दा को अपनाया है। इनम भी अपक्षाकृत दोहो की प्रधानता हैं। 'विजय विनोद' और 'हम्मीर हठ' प्रबन्ध काव्यो म इन तीनो छन्दा के अतिरिक्त सोरठा प्रमाणिका, अमृतध्वनि भुजग प्रयात, शख ।।री पद्धरी मल्लिका, छप्पय, चौपाई आदि भी लिखे गये हैं। ग्वाल के लिखे कुछ प्रमुख छन्दो पर हम यहाँ विचार करेंगे।

दोहा—ग्वाल ने दोहो का सर्वाधिक सख्या म प्रयोग किया है। साहित्यानन्द के कुछक लक्षणो को छोडकर, जो कवित्तो म हैं शेप सवत्र ही दोहों म लक्षण लिखे गये हैं। दृगशतक पूरा ही दोहा म है। लक्ष्य प्राय सवत्र ही कवित्त और सवैयों म लिख गये हैं। साहित्यानन्द म अधिकाशत दोहा म लक्षण लिखकर कवि ने अपनी कवित्त की प्रवत्ति को एक मोड दे दिया है। यहा तक कि अलकारो के सम्पूण लक्षण लक्ष्य दोहा मे ही हैं। ग्वाल ने पर म्परानुगत दोहे क तेईस भद माने हैं— (१) भ्रमर, (२) सुभ्रामर, (३) शरभ, (४) श्येन (५) मडूक (६) मकट (७) करभ (८) नर (९) हस, (१०) गयद, (११) पयोधर, (१२) बल (१३) बानर (१४) त्रिकल (१५) कच्छप (१६) मत्म (१७) शादूल, (१८) अहि, (१९) विडाल, (२०) श्वान, (२१) वर (२२) उदर और (२३) सप।[1]

---

१ भ्रमर सुभ्रामर सरभ कहि स्पेन बहुरि मडूक।
मरकट करभ जना समुझि बहुरि सुहस अचूक ॥६८॥
मदकल फेर पयोधर सुवल अस वानर मान।
त्रिक्ल मुक्ल भानि मत्सपुनि सारदूल पहिचानि ॥६९॥
अहि वर व्याल कहि स्वान उदर अरु सप।
दोहा तेइस विधि कहे, जिनको है अति दप ॥७०॥
—साहित्यानन्द प्रथम स्कन्ध।

कवि ने अपनी रचनाओं में प्रायः सभी प्रकार के दोहों का प्रयोग किया है परन्तु दोहों का नाम निर्देश कहीं भी नहीं हुआ। उदाहरणार्थ कवि ने 'भ्रमर' का लक्षण २२ गुरु और ४ लघु वर्ण कुल २६ मात्रायें लिखी हैं, जो निम्नांकित दोहे में लक्षित हैं—

काह्हा काह्हा हू सदा ताके संग गाइ।
ऽ ऽ ऽ ।ऽ ऽऽ ऽऽ ऽ।
राधा राधा गाइये बाधा बाधी जाय ।।वही १।१७७।।
ऽऽ ऽऽ ऽ।ऽ ऽऽ ।ऽ ऽ।

कवित्त—यह रीतिकाल का अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द है। कवित्त में अधिकांशतः ८ ८ ८ ७ पर यति का नियम होता है। देखिये—

| ए रे मन मेरे सब | | काज तेरे सिद्ध होय |
८ ८
| सिद्ध निद्ध साज होय | | सो इलाज करिये | ।=३१
८ ७
| कोटि कोटिचन्द जाकी | | दुति के समान है न, |
८ ८
| पिता वृषभान जाके | | ऐसी ध्यान धरिये | =३१
८ ७ —रसरंग १।१।

एक दूसरे प्रकार के घनाक्षरी में ८ ८ ८, ८ पर यति होकर ३२ वर्ण होते हैं। इसे रूप घनाक्षरी कहते हैं। ग्वाल ने ३१ और ३२ वर्ण वाले दोनों कवित्तों का ही अधिकांशतः प्रयोग किया है। ३२ वर्ण वाले कवित्त का उदाहरण दिया जाता है—

| भूप बलवारे छत्र | | वारे कलवारे किते |
८ ८
| धनुष उठाय हारे | | बठे बदरंग होय | =३२
८ ८
| दशरथनंद पानि | | मृदु अरविंद हू ते |
८ ८
| बाल गति मदकौतु- | | लन कौन अंग होय | =३२
८ ८ —वही१।१०४।

सवया—कवित्त के उपरान्त यह रीति काल का परम प्रिय छन्द रहा है। आचार्यों ने इसके ४८ तक भेद किय हैं। कवि ने प्राय ८ प्रकार के सवया का प्रयोग किया है—(१) मदारमाला, (२) मदिरा, (३) माद, (४) मत्त गयन्द, (५) चकोर, (६) सुमुखी, (७) वागीश्वरी और (८) अग्र। सवया म २२ से लेकर २६ तक वण हाते हैं। सम्पूण छन्द एक गण पर आधत रहता है, जिसके कारण इसम सगीतात्मकता आ जाती है। ग्वाल न अधिकाशत मत्तगयन्द दुर्मिल और चकोर सवया लिखे हैं।

मत्त गयन्द—यह २३ वर्णों का हाना है। आदि म ७ भगण और अन्त म दा गुरू आत हैं। चकोर सवैया भा २३ वर्णों का है। मत्त गयन्द का उदाहरण—

प्रान पियारि निहारि क हाल लिखौं जिन चालन सो रहती हैं।
ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। । ऽ। ।ऽ ।। ऽ।। ऽ ।।ऽऽ =२३वण
कीन्ह भली न रह मन को तन छी न छिना छिन ही लहती हैं॥
ऽ । ।ऽ । ।ऽ ।। ऽ ।। ऽ । । ऽ ।। ऽ ।।ऽऽ =२३ वण
यो कवि ग्वाल गरीबि गह वितर्ने दिन रात हिय दहती है।
ऽ ।। ऽ ।।ऽ। ।ऽ ।।ऽ ।। ऽ। ।ऽ।।ऽऽ =२३ वण
सौनिन के विष घोरि कुचाल अलाल भई सि सब रहनी हैं।रसरग ११०१।
ऽ।।ऽ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ ।।ऽऽ =२३ वण

इनम ७ भगण ऽ।। और अन्त म दो गुरू हैं।

दुर्मिल—यह २४ वर्णों का और आठ सगण का छन्द है।१२ १२ पर यति होती है। आरम्भ म दो लघु और अन्त म एक गुरू का नियम है। देखिये—

पिचकारिन सों वट का छिरक्यो जन घारन मो जटा जागनि हैं।
।।ऽ।।ऽ ।। ऽ ।।ऽ ।। ऽ।। ऽ ।ऽ ऽ।। ऽ =२४ वण
तिहि छाह घनी म विनोवा खसी खम ही की कनातें सुपागति हैं॥
।। ऽ। ।ऽ। । ऽ । ।ऽ ।। ऽ । ।ऽ।।ऽ।। ऽ
कवि ग्वाल' वु सौचि गुनाव घने पैं जनाव तऊ न विरागनि है।
।। ऽ। । ऽ । ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। । ऽ
न छुएँ न छुएँ सिय राइ कहू न रुकैं न रुकैं लुजें लागति हैं॥प० वर्णन ७॥
। ।ऽ। ।ऽ ।। ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।ऽ ऽ। । ऽ

ग्वाल ने २५ वर्णों क ८ भगण और एक गुरु वाले सवया भी लिख हैं। परन्तु इनकी सख्या अत्यल्प है। एक उदाहरण देखिये—

भभराइ गई विरहागिनि म मति की गति हू क्तराय गई सी।
।।S। ।S ।।S । । S । । S । । S । ।S । । S S
निय राइ गई प्रिय आवन औधि तऊ तरुनी अधिराय गई सी ॥
।। S। ।S ।। S।। S । । S । ।S । ।S। ।S S
सिय राइ गई न विथा तन की 'कवि ग्वाल' कहूँ घबराइ गई सी।
।। S।।S । । S ।। S ।। S । ।S । ।S। ।S
दुबराइ गई पियराइ गई पलिका पै परी हियराइ गई सी ॥रसर ग १।१७२॥
।।S।।S।।S।।S।।S।।S।।S।।S S

२२ और २६ वर्णो के सवया छन्द कवि ने सम्भवत इसलिये नही लिखे है कि उनम लय आदि म कमी या अधिकता के कारण गयता कठिन हो जाता है। कवि का प्रिय छन्द २३ वर्णो का मत्त गयन्द है। कवि न छन्दो म यति का पूरा ध्यान रखा है परन्तु यत्र तत्र यति भग भी हुआ है। न्यून पदत्व दोष भी कही कही लक्षित होता है यह लिपिकारो की कृपा स भी सम्भव हो सकता है। छन्दगत दोषो पर हम आग के अध्याय म विचार करेंगे।

प्रबन्ध काव्यो म ग्वाल ने भुजग प्रयात प्रमाणिका और पद्धरी का प्रयोग सर्वाधिक किया है।

भुजगप्रयात—यह ४ यगण वाला ४ चरण का छन्द है। इसम १२ वर्णों की योजना रहती है। ग्वाल ने वीर रस म इसका प्रयोग किया है—
फडक्क भुजा सिंह दल की फडक्क। तडक्क दुहूधा हिये या धडक्क ॥
झडक्क पडक्क पगो म चत्क्क। चत्क्क झिलं खग्ग लग्ग रडक्क ।विवि ४१९।

प्रमाणिका—यह चार चरण वाला अष्टाक्षरी वर्णवत्त एक जगण और अन्त म गुरु होता है। उदाहरण—

चले गुबार गोल यो। छुटे घुटे सु लोल या।
चढे चढ़े अकासिय। परे तरे प्रकासिय ॥वि०वि० ४०९॥

पद्धरी—यह अपभ्रश का प्रसिद्ध छन्द है। प्रत्येक चरण म चार चतुष्कल गणो का नियम होता है परन्तु अन्तिम गण म जगण (। ऽ ।) आवश्यक माना गया है। उदाहरण—

कहु करत भटट चक्र सु मार। अगुरीन रक्ख घूमत धार।
गति अधिक वक्र वच्च समान। झट हनतसीस नक्र प्रमान ॥वही ४२६॥

प्राय ग्वाल ने रीति परम्परागत सभी छन्दों का प्रयोग अपने ग्रन्थो मे सफलतापूर्वक किया है। इस नाते भी वे रीति का पूरा प्रतिनिधित्व करते दिखाई देते हैं। वे पिंगल शास्त्र के अच्छे ज्ञाता और लखक हैं।

नवम् अध्याय

ग्वाल-साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज

मनाआ, युद्धा और सामान्य नागरिकों की सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान होना है। सामाजिक दृष्टि से दूसरा महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है रसिकानन्द और तीसरा इश्क लहर दरियाव। कवि के इतर ग्रन्थ इस दृष्टि से हीन है, ऐसा कहना सर्वथा युक्तियुक्त न होगा। उनमें भी समाज के चित्रों के प्रकीर्ण चित्र खण्ड इतस्ततः खोजने से मिल जाते हैं।

समाज का उच्च वर्ग—उन्नीसवीं शताब्दी में मुगल सम्राट प्रायः सन १८५७ ई० तक किसी न किसी रूप में अस्तित्व में बने रहे। रणजीतसिंह के प्रसंग में ग्वाल की बस एक पंक्ति इस सम्राट के विषय मे मिलती है— दिल्ली ते चत्ता कत्ता बाधि बाधि आये पर काहू सो भए न सर शत्रु की निसा करी।'[1] इससे केवल इतना ही आभासित होता है कि मुगल सम्राट और रणजीत सिंह के सम्बन्ध मधुर नहीं थे।

स्वतन्त्र क्षत्रीय शासक मुगल सम्राटों की भांति निरकुश और ऐश्वर्यशाली होते थे। कुछ शासकों को प्रजा भगवान का ही अंश मानती थी— जब हरिजू ने निज अंस प्रगटायौ भायौ, रनजीतसिंह नाम पायौ सो जहान जान।[2] रणजीतसिंह इतना शक्तिशाली नरेश था कि उस की धाक, बलख, बुखारे और चीन तक थी।[3] स्वयं अंग्रेजों ने उस के प्रति अपनी मैत्री का हाथ बढ़ाया था।[4] उसकी मृत्यूपरान्त भी तत्पुत्र लाहौर नरेश शेरसिंह के शत्रु अतरसिंह को अंग्रेज गवर्नर जनरल ने भी शरण देने का साहस नहीं किया था।[5] नाभा नरेश भरपूर सिंह जैसे कतिपय शासक तो अंग्रेजों के सरक्षित ही थे,[6] ठीक वैसे ही जैसे मुगल सम्राट बहादुरशाह। भरपूर सिंह के पितामह जसवन्त सिंह स्वयं अंग्रेजी शक्ति से आतंकित थे पर तब तक नाभा में कोई पोलिटिकल एजेंट नहीं रहता था। इन शासकों में से कुछ की शक्ति और धाक इतनी होती थी कि दूसरे राजा द्वेषवश षड्यन्त्र रच कर उन को नीचा दिखाने की भी चेष्टा करते थे। देशी राजा परस्पर एक दूसरे के राज्य को हड़पने की चेष्टा में रत रहते थे, तो दरबारों के उच्च पदस्थ कर्मचारियों को पारस्परिक द्वेष मात्सर्य छल, छद्म, उत्कोच, चाटुकारिता आदि के विषैले कीटाणुओं ने कलहप्रिय, सत्ता लोलुप षड्यन्त्रकारी विश्वासघाती, अवसरवादी और रक्तशोषक बना रखा था। उत्तराधिकार का प्रश्न मुगलों की भांति इन देशी राज्यों में भी तलवार द्वारा हल होता था, जिसमें शक्ति

१ विजय विनोद—१० २ वही ८ ३ वही १६ ४ वही, १०४
५ वही २६९ व २७२ ६ पुष्पिका इश्क लहर दरयाव।

शाली सत्ता लोलुप सरदार षडय त्रो क विनाशकारी के द्र बनते थे। रणजीत सिंह के प्रथम पुत्र खडगसिंह की मृत्यूपरा त तत्पुत्र नौनिहाल सिंह की असामयिक और अस्वाभाविक मृत्यु पर रणजीतसिंह क द्वितीय पुत्र महाराज शेर सिंह को राज्य सिंहासन के लिये प्राणा का सौदा करना पडा। यही नही खडगसिंह की विधवा रानी चन्द्र कौर तक ने विद्रोहियो स मिल कर गृह युद्ध की आग म घी डाला। अतरसिंह अजीतसिंह, और लहना सिंह के अधार्मिक विश्वासघात ने महाराज शेरसिंह, उनक कुवर और राजा ध्यान सिंह जसे स्वामिभक्त मन्त्री का भी दिन दहाडे वध कर डाला और इस प्रकार रणजीत सिंह के खून पसीन से निर्मित सिखा की एकता का दुग भरभरा कर धराशायी होगया।[1] 'विजय विनोद' के प्राय ७५ छन्दो मे इस लोमहर्षक विश्वासघात पूण घटना का ऐतिहासिक वणन कवि ने किया है।

यह तो हुई तत्कालीन राज्य दरबारो क सत्ता षडय न्त्रो की एक झलक। अब राजमहलो म व्याप्त रसरगीनी को देखे तो ज्ञात होता है कि अन्य राजाओ की तो बात क्या है स्वय रणजीतसिंह की विवाहित और अविवाहित ११ पत्निया थी।[2] जो उन की चिता मे साथ भस्म हुई। उनक मन्त्री राजा ध्यान सिंह के साथ सती होने वाली नारियो की सख्या १५ थी।[3] कहने का तात्पय है कि तत्कालीन सिख राजमहलो म भी विलास क साधन उपकरणा का अभाव न था। रसिकान द और इश्क लहर दरियाव म ग्वाल ने नाभा दरबार, स्वण मडित राजमहलो[4] आदि के वभव पूण जीवन का वणन किया है। वभव श्रृगारेपण का पोषक होता ही है। नाभा नगर सुख सम्पन्न है। धन वभव चहु दिशि व्याप्त है।[5] चारो वण अपने अपने धम पर आरूढ हैं।[6] नाभा का दुग अत्युच्च है और तोपो से सज्जित है। सरदारो के भी शाही महल इस युग के वभव के प्रतीक थे। इस की कल्पना सहज ही की जा सकती है। पुत्र जन्म, राज्यारोहण उत्सव विजय पव या ऐसे ही अन्य शुभ दिनो पर दिये जाने वाले दानो म हाथी, घोडा, गाय, स्वण, नाना रत्नाभूषण, हीरे पन्न, माणिक्य, रेशमी परिधान स्वण पालकियाँ, ग्राम आदि का वणन ग्वाल ने किया है। मन्त्री ध्यान सिंह के पुत्र हीरासिंह क जन्म पर दिये गये दान का वणन कवि ने इन शब्दो म किया है—

मू गन की मोतिन प दिवाय हैं ।।विजय विनोद ७४।

---

१ विजय विनोद—२६०-३३६ २ वही ९३
४ वही १८ ५ वही, १६

होता था। रणजीतसिंह खडगसिंह, शेरसिंह, ध्यानसिंह हीरासिंह, जसवंत सिंह, भगवानसिंह और भरपूरसिंह सभी गौ गंगा और ब्राह्मण को हिंदू धर्म के मूलाधार मान कर इनकी पूजा करते थे। नाभा और लाहौर दरबार में क्रमशः पंडितेश गुरुसहाय और पंडितेश जल्हा प्रसिद्ध ब्राह्मण विद्वान् थे, जिनका शासक भारी सम्मान करते थे।

तत्कालीन समाज में सब वर्णों से ऊपर ब्राह्मणों की श्रेष्ठता सिद्ध होती है। क्षत्रियों के धर्म की मर्यादा रखने के लिये जम्मू नरेश गुलाब सिंह भारी अन्तर्द्वन्द में ग्रस्त हैं। चन्द्रकौर रानी की रक्षा करें, यह क्षत्री का धर्म है। शेरसिंह सेना समेत किले का घेरा किये हुए हैं। राजा ध्यानसिंह अभी लाहौर लौट नहीं सके हैं। गुलाबसिंह हीरासिंह से विमर्श करते हैं (देखिये विजय विनोद छन्द २१७ व २१६) अन्त में क्षत्र धर्म की रक्षा का ही विचार पक्का होता है कि अब तो लड़ना ही अनिवार्य है क्योंकि नारी की रक्षा क्षत्रिय का धर्म है—

छोडि देंय किल्ला और अब्ला गरीबनी कों
तो रहै न धर्म छितिछत्री रघुवंसी है ॥वही २१९॥

एक ओर क्षत्रियों का यह आदर्श रहा तो दूसरी ओर अजीत सिंह अतरसिंह और लहनासिंह जैसे अधार्मिकता में पगे विश्वासघाती क्षत्रिय भी उस समय में देखने को ग्वाल काव्य में मिलते हैं। परन्तु इन अपवादों को छोड़कर सर्वत्र क्षत्रियों ने आलोच्य काव्य में प्रायः अपने क्षात्र धर्म की रक्षा हेतु अनेकधा आहुति दी हैं। कृषि गो रक्षा वाणिज्य यही क्षात्र धर्म शास्त्र सम्मत कहा गया है। क्षत्रियों ने कृषि गौ और वाणिज्य की सुरक्षा के पूरे प्रबन्ध किये थे। कवि ने रणजीतसिंह के मंत्री ध्यानसिंह के देश प्रबन्ध की प्रशंसा विजय विनोद के ३३ से ३८ तक के छन्दों में की है।

हिन्दू और मुसलमानों के अतिरिक्त कुछ अंग्रेज जाति के व्यक्तियों की भी चर्चा विजय विनोद में है—'ग्वाल कवि देखि इंतजाम अंग्रेज गुनी कहै वाह वाह वाह वाह वाह वाई है। (वही छन्द संख्या ४०)

व्यवसाय—राज सेवा उन दिनों भी सर्वोत्तम समझी जाती थी। सभी वर्गों के लोग राजकीय सेवा प्राप्त करने के उद्योग में रहते थे। राज सेवकों को पूरी सुख सुविधाएँ प्राप्त था। समाज में भी इन्हीं की प्रतिष्ठा होती थी। राज कर्मचारियों का आतंक भी जनता पर कम न था। स्वतन्त्र व्यवसायों में कृषि व्यापार, दुकानदारी संगीत, चित्रकला वास्तु शिल्प, काव्य रचना तथा

अन्य छोटे छोटे काम थे। नाभा नगर के कुछ व्यवसायों का वर्णन कवि ने विजय विनोद के छन्द ७ से १२ में किया है।

शिक्षा—ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य की ओर से शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं होता था और जनसाधारण शिक्षा के लाभ से वंचित रहता था। केवल उच्चवर्ग और मध्यम वर्ग ही शिक्षित था, क्योंकि इन्हें अपेक्षाकृत अवकाश और धन साधनों की सुविधा थी। ग्वाल काव्य में पंडितों ज्योतिषियों, कवीश्वरों एवं मन्त्रज्ञाताओं के वर्णन यत्र तत्र आते हैं, जिससे प्रकट होता है, कि इन विद्याओं का इस युग में प्रचार था।

छहों सास्त्र के कथन .... बिलायतनु छाई हैं ॥इ० ल० दरियाव ११२७ ३९॥

राजा उक्त सभी विद्याओं का ज्ञाता था। देशी भाषा के अतिरिक्त उसे फारसी, अरबी संस्कृत और अंग्रेजी भाषाओं का भी अच्छा ज्ञान था—

ललित कलायें—यहां यह कहना पिष्टपेषण लगता है कि काव्य संगीत, नृत्य वादन चित्र और वास्तुकलादि को समाज में विशिष्ट स्थान प्राप्त था। राजसभाओं में विविध कलावन्त' और बजन्त्री आदि रहते थे। सितार, बीन तबला सारंगी तम्बूरा, नफीरी शहनाई बांसुरी मृदंग, डफ ढोल ताशे चंग, पखावज नगाड़ा तूती, मारू, डफ्ले, खजरी झांझ, मजीरे ढोलक आदि वाद्ययन्त्रों का वर्णन इस कवि के काव्य में अनेकत्र मिलता है। उदाहरणार्थ—

बीन कनून रबाब .... नये जोर तमासे ॥वही १२९-३०॥

×

चहुँधा धन्न्त्रीन बाजे .... और तंबूर बाजें ॥वि० वि० ३९६॥

नाचने वाले भांड और वेश्या नर्तकियां होते थे। नाना प्रकार के *नृत्यों का प्रचलन था। विशेषकर उत्सवों में* 'नचकये' और 'गवये' बड़ी संख्या में एकत्र होते थे और दर्शकों का मनोरंजन करते थे। देखिये इश्क लहर दरियाव पहली दास्तान छन्द २७ ८, ३१ से ३४, ३९ ४४ व ४५।

विविध विद्याएँ—पटशास्त्रों का वर्णन ऊपर आ चुका है। ज्योतिष, शस्त्रास्त्र तन्त्र और मन्त्र विद्याओं के अतिरिक्त मल्ल विद्या का भी प्रचार समाज में था। ग्वाल ने मल्ल विद्या के कुछ दाव पेचों का वर्णन 'रसिकानन्द के तृतीय प्रकरण में किया है, जो इस प्रकार है—

डारें नाग फांस चख बांधि के पछारें फेर,
छाती चढ़ि करि फेर कूदत तड़ातड़ौ।

'ग्वाल कवि' मोतीचूर कोल्हुआ क्तिकन को
द द ताल कुदन सुभटन सडा सडी ॥
फुटत सुमेर फर टुटत विवान आन,
आसुरी अदष्ट सीस कुटत कडाकडी ॥१३१ प्र० ३॥
× —रसिकान द

रेलें सुई वरत हस्त पेलें करि मसा फॅट
दस्ती औ कुदस्ती झलि झ पत झमका ज्व ।
'ग्वाल कवि' बठक लवेडा बेस कचो एच,
बाहुबली दिग्गज बली ठडे बलका सब ॥वही १३०॥

वेशभूषा वस्त्र, आभूषण और अ गराग—यह बनाव शृ गार, प्रदशन और सुखोपभोग का युग था । समाज मे मूल्यवान तडक भडक वाल आकषक और जडाऊ वस्त्रों का भारी प्रचार था । स्त्री और पुरुष दोनो ही बहुमूल्य रत्नाभूषणो को धारण करने म रुचि रखने वाल दिखाई देते हैं ।

ग्वाल ने रसरग की द्वितीय तरग मे नायिका के प्रसग म खासा जीन झोला कमरखतार किरन, तून ननमुख डोरिया चारखाना, गाता तनजब मामल तनसुख चादतारा, सालुआ जरी मसरू सान गुलबदन वीमखाप आदि वस्त्रा का पुन पुन वणन किया है ।[१] विजय विनोद मे हीरासिंह की बहुमूल्य पोशाक का वणन है । शाहजाद मूल्यवान वस्त्रो के ऊपर जवाहरात पहनते थे—यह वणन इश्क लहर दरियाब म किया गया है ।

स्त्रिया कसे वस्त्र और आभूषण धारण करती होगी इसका अनुमान सहज ही हो सकता है । वे तो दिनरात बाहनो से ही लदी रहती थी । दिन म कई बार रत्नाभूषणो को भी नये नये ढग से धारण करती थी । दान म मोती हीरा, माणिक्य पुखराज आदि दने के वणन अनेक हैं । नारिया अपन सौन्दय की वृद्धि के लिये विविध अ गरागो का प्रयोग करती थी । माथे पर जावक[२] का टीका, हाथो और परो मे महदी[३] लगाती थी । इत्र और गुलाब जल म तो जसे वह अहर्निशि ही डूबी रहती था ।[४] स्त्रिया कघी से बाल सवारती और दातो म मिस्सी लगाती । होठो पर लाली का प्रयोग भी होता था ।[५] मुख सौन्दय के लिये पान का प्रयोग स्त्री पुरुष दोना ही करते थे ।[६]

१ (अ) रसरग–२।१०५ (ब) वही २।१०६ २ रसरग ३ वही ५।२२
४ इश्क लहर दरियाव ५।१७ ५ वही ३।३३ ६ रसरग २।४३ ।

शीशफूल, बणफूल बिन्दी, मुरकी, नथ, बाली, जजीर नटरन हार, अगूठी, छाप छल्ला, कडे जासन, हसली, गुलूबन्द बाजूबन्द, चूडी कधनी किंकिणी नूपुर बिछिया, पायजेब, पजनी हमन, तोडिया, बसर आरसी आदि समाज म प्रयुक्त होन वाले सोने चाँदी के विविध आभूषण थे। अपने अपने स्तर के अनुसार विभिन्न जाति क लोग इनका प्रयोग करत थे।

आमोद प्रमोद—समाज शृगार प्रिय था। अत ललितकलाओ म स्त्री-पुरुष अपना मनोरजन ढूढने थे। गायन, वादन नृत्य, सैर सपाट इस युग क समाज के प्रमुख आमोद प्रमोद थे। धनी लोग शिकार क शौकीन थ।[1] शतरज और चौपड का खेल स्त्री पुरुष दोनों म ही प्रचलित था।[2] आसव और शराब क प्रयोग के वणन भी ग्वाल क काव्य म मिलते हैं। स्त्री पुरुष दोनो ही सम्भवत इस नशे म रुचि दिखलाते थे।[3] विशेष खुशी क अवसरो पर आतिशबाजी की रोशनी की जाती थी।[4] लोक जीवन म प्राय विविध मेले और जात इत्यादि जुडती थी, जहाँ साधारण स्तर के लोग जाकर अपना अपना मनोरजन करत थे।[5]

खाद्य पदाथ—ग्वाल के काव्य म निम्नाकित खाद्य पदार्थों क वणन हुए हैं–[6]

मिष्ठान्न—लड्डू बरफी, जलेबी अमृती सूतफनी, खाजा, खजला खोया पेडा, खुरमा, लौज, गुलगुला (पूआ) बालूशाही, मिश्री कुलफी, दही दूध आदि।

नमकीन—कचौडी, खस्ता, दालमोठ, मठरी पकौडी दालसेव, पूरी, समोसे आदि।

मेवा—किशमिश, दाख छुआरे बादाम पिश्ता आदि।

फल—सेब, नासपाती, अमरूद, आम संतरा बेर अगूर नींबू।

गमनागमन क साधन—ग्वाल ने अपने काव्य मे आवागमन के साधनो म प्राय हाथी, घोडे रथ पालकी ऊट, बग्घी आदि बाहनो का उल्लेख तो रीति कवियो की परम्परा के अनुसार ही किया है। रेलगाडी का एक छद म पृथक वणन इस कवि ने किया है जिस हम पीछे उसक वण्य विषयो म उद्धत कर चुक हे। हाथी, घोडे रथ और ऊँट युद्ध म भी काम आते थे।

---

१ विजय विनोद–१।१३१ २ (अ) रसरग १।१५९ (ब) वही १।१५९ (स) वही २।१०२ (द) वही २।११२ ३ (अ) वही १।८८ (ब) वही १।९० ४ विजय विनोद–५९ ५ (अ) रसरग ३।७ (ब) वही ३।१४ ६ (अ) विजय विनोद–४८ से ५१ (ब) रसरग ५।२१ (स) वही ५।१८ (द) वही २।१०७

'ग्वाल कवि' मोतीचूर कोल्हुआ कितेकन को,
द द ताल कुदन सुभन्न सडा तड़ी ॥
फुटत सुमेर फर टूटत विमान आन,
आसुरी अदष्ट सोस फुटत कड़ाकडी ॥१३१ प्र० ३॥
× —रसिकानन्द

रेलें मुई वस्त हस्त पेलें करि कसा फेंट
दस्ती औ कुदस्ती झूलि झपत झमका ज्य ।
'ग्वाल कवि' चमक लवेडा वेस कची एच,
बाहूबली दिग्गज बली ठहे धलका सब ॥वही १३०॥

वेशभूषा वस्त्र आभूषण और अंगराग—यह बनाव शृंगार, प्रदर्शन और सुखोपभोग का युग था। समाज में मूल्यवान तड़क भड़क वाले आकर्षक और जड़ाऊ वस्त्रों का भारी प्रचार था। स्त्री और पुरुष दोनो ही बहुमूल्य रत्नाभूषणों को धारण करने में रुचि रखने वाले दिखाई देते हैं।

ग्वाल ने रसरंग की द्वितीय तरंग में नायिका के प्रसंग में खासा जीन चोला कमरखतार, किरन, तून नैनसुख डोरिया चारखाना, गाढा तनजव मलमल तनसुख चांदतारा, सालुआ जरी मसरू साटन गुलबदन कीमखाप आदि वस्त्रों का पुन पुन वर्णन किया है।[1] विजय विनोद में हीरासिंह की बहुमूल्य पोशाक का वर्णन है। शाहजादे मूल्यवान वस्त्रों के ऊपर जवाहरात पहनते थे—यह वर्णन इश्क लहर दरियाव में दिया गया है।

स्त्रियाँ कैसे वस्त्र और आभूषण धारण करती होंगी इसका अनुमान सहज ही हो सकता है। वे तो दिनरात गहनों से ही लदी रहती थीं। दिन में कई बार रत्नाभूषणों को भी नये नये ढंग से धारण करती थीं। दान में मोती हीरा, माणिक्य पुखराज आदि देने के वर्णन अनेक हैं। नारियाँ अपने सौन्दर्य की वृद्धि के लिये विविध अंगरागों का प्रयोग करती थीं। माथे पर जावक[2] का टीका, हाथों और पैरों में मेहँदी[3] लगाती थीं। इत्र और गुलाब जल में तो जैसे वह अहर्निशि ही डूबी रहती थीं।[4] स्त्रियाँ कंघा से बाल सँवारती और दाँतों में मिस्सी लगाती। होठों पर लाली का प्रयोग भी होता था।[5] मुख सौन्दर्य के लिये पान का प्रयोग स्त्री पुरुष दोनों ही करते थे।[6]

---

१ (अ) रसरंग—२।१०५ (ब) वही २।१०६ २ रसरंग ३ वही ५।१२२
४ इश्क लहर दरियाव ५।१७ ५ वही ३।३३ ६ रसरंग २।४३।

मोतपूस, बगतर खिल्ली, मुरकी, त्रय, बाली, जजीर लटकन हार, अगूठी, छाप छल्ला, कडे आसन, हमली, गुलूबन्द बाजूबन्द, चूडी कधनी किकिरनी नूपुर बिछिया, पायजेब, पजनी, हमेल, हसिया, नसर आरसी आदि समाज म प्रयुक्त होने वाले सोने चाँदी के विविध आभूषण थे। अपने अपने स्तर के अनुसार विभिन्न जाति के लोग इनका प्रयोग करते थे।

आमोद प्रमोद—समाज शृगार प्रिय था। अत ललितकलाओ म स्त्री-पुरुष अपना मनोरजन ढूढ़ते थे। गायन वादन नृत्य, मर-सपाट इस युग के समाज के प्रमुख आमोद प्रमोद थे। धनी लोग शिकार के शौकीन थे।[1] शतरज और चौपड का खेल स्त्री पुरुष दोनों म ही प्रचलित था।[2] आसव और शराब के प्रयोग का वणन भी ग्वाल के काव्य म मिलते हैं। स्त्री पुरुष दोनो ही सम्भवत इस नशे म रति विलास करते थे।[3] विशेष खुशी के अवसरों पर आतिशबाजी की रोशनी की जाती थी।[4] लोक जीवन म प्राय विविध मेले और जात इत्यादि जुटती थी, जहाँ साधारण स्तर के लोग जाकर अपना अपना मनोरजन करते थे।[5]

खाद्य पदार्थ—ग्वाल के काव्य म निम्नाकित खाद्य पदार्थों के वणन हुए हैं–[6]

मिष्ठान्न—लड्डू, बरफी, जलेबी अमृती, सूतफेनी, खाजा, खजला खोया पेडा गुरमा, लौंज गुलगुला (पूआ) बालूशाही, मिश्री कुल्फी, दही, दूध आदि।

नमकीन—कचौडी, खस्ता, दालमोठ, मठरी पकौडी दालसेव, पूरी, समोसे आदि।

मेवा—किशमिश, दाख छुआरे बादाम, पिश्ता आदि।

फल—सेव, नासपाती, अमरूद, आम सतरा, बेर अगूर चकोतरा।

गमनागमन के साधन—ग्वाल ने अपने काव्य म आवागमन के साधनो म प्राय हाथी, घोडे, रथ पालकी ऊट बग्घी आदि वाहनो का उल्लेख तो रीति-कवियो की परम्परा के अनुसार ही किया है। रेलगाडी का एक छन्द म पृथक वणन इस कवि ने किया है जिसे हम पीछे उसके वण्य विषयो म उद्धृत कर चुके हैं। हाथी, घोडे, रथ और ऊट युद्ध म भी काम आते थे।

१ विजय विनोद–१।१३१ २ (अ) रसरग १।१५९ (ब) वही १।१५९ (स) वही २।१०२ (द) वही २।११२ ३ (अ) वही १।८६ (ब) वही १।६० ४ विजय विनोद–५९ ५ (अ) रसरग ३।७ (ब) वही ३।१४ ६ (अ) विजय विनोद–४८ से ५१ (ब) रसरग ५।२१ (स) वही ५।१८ (द) वही २।१०७

सामाजिक प्रथाएँ—हिंदू शास्त्र विहित प्रथाओं के समाज में अनुसरण का प्रतिबिम्ब विजय विनोद में मिलता है। राजा ध्यानसिंह ने पुत्र जन्म पर ज्योतिषियों को बुला कर जन्म नक्षत्रादि का ज्ञान किया था—'शुभ दिन शुभ घडी शुभदानक्षत्र योग सुन्दर लगन राजयोग सरसायौ है।' (विजय विनोद-४३) शुभ मुहूर्त पर कल्याण के प्रतीक केला, मोती तिल, पांचों पल्लव कलश रोचन पान आदि का प्रयोग करके ही नवग्रह पूजनोपरान्त पुत्र का 'आरता' किया गया था।[1]

रणजीतसिंह की रानियां विधि विधानपूर्वक विविध दान कर के ही सती हुई थीं।[2] सती होते समय विवाहित और अविवाहित रानियां क्रमशः सिर और पगों की ओर बैठी थी।[3] सती प्रथा हिन्दू धर्म का एक अंग थी। रणजीतसिंह का अन्तिम संस्कार विधानानुसार किया गया। बादशाह जू कौ ज्येष्ठ पुत्र श्री खड्गसिंह आइ आगि दीन्ही भयौ जं जं सब्द सोर है। (वही-८३) हिंदू धर्म में ज्येष्ठ पुत्र ही पिता का दाहसंस्कार सम्पन्न करता है। उन के फूलों की सवारी निकाल कर उनको हरिद्वार गंगा जी में प्रवाहित किया गया था—इति मैं गंगा को गये बादशाह के फूल।' (वही-१०५)

महाराज खड्गसिंह का राज्याभिषेक वेदों और सौढी ब्राह्मणों द्वारा नवग्रह भूमि, सिंहासन शस्त्रादि को मन्त्रों और तीर्थों के पवित्र जल से पुजवा कर ही हुआ था—

सुंदर महूरत बतायौ राजतिलक चढायौ है ॥वि० वि० १४४॥

सती प्रथा—हिन्दू धर्म मे सती प्रथा का प्रचलन था। रणजीतसिंह के साथ उनकी रानियाँ सती हुई थीं जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है। राजा ध्यानसिंह की मृत्यूपरान्त उनकी पन्द्रह रानियां भी सती हुई थीं। इस का उल्लेख विजय विनोद के छन्द ४४७ व ४४८ मे मिलता है।

समाज मे अन्धविश्वासों की स्थिति—हिंदू समाज धर्मभीरू था। भगवान और उसके विविध अंशों—देवी और देवताओं की पूजोपासना के अतिरिक्त पीपल आदि वृक्षों की पूजा का प्रचार उन दिनों मे था। ग्वाल ने इस विषय में एक संकेत भर किया है—

फेरि वह फेरी जाय पीपर की देन लागी मैं हू देन लाग्यौ न्व

॥ रसरंग ३।७ ॥

मियाँ या मसानी की 'जात' में न जाने का भी एक नारी का उल्लेख

१ विजय विनोद-४४ से ४६ २ वही ८७ ३ वही १०६।

है जिस स प्रगट होता है कि इस प्रकार की बातें भी लोक जीवन म प्रच लित थी—

जमुना नहाय न हरि मदिर म जाइ कभू,
जात म न जाय पौरि पालौ न दिखाय है ।।वही ३.१।।

शकुन और अपशकुन के प्रभाव से उस युग क समाज का मन भली-भाति आक्रान्त था । कोमन हुच्या स्त्री अपने बायें अग फडकने और कौआ के बोलन को अपने विदेश गत पति के शुभागमन का शुभ सूचक प्रतीक मानती है जैसा रमरग के छन्दा १।११८, ४।६५ व ४।६७ स स्पष्ट है ।

लोक जीवन म एसा विश्वास आज भी है कि यदि गमन काल म सामने स जलपूरित घडा, घाडा, बछडे के साथ दुधारू गाय, कुए को जाती हुई पनिहारिन, फूल फल, दधि, ब्राह्मण वृन्द गोबर भरा डला, कन्या, शराब के बतन, धूप दीप, अगर, श्वेत, वृषभ निधू म अग्नि, घृतपूरित कुम्भ, सिंहासन, पताका, वस्त्र धोता हुआ धोबी रत्नो के साथ साहूकार, नीलकठ नेवला, वृक्षारूढ मयूर मछली, पिक, पाडुकी, छछूदर, दक्षिण दिशा म हिरन आदि दिखाई दें, तो कायसिद्धि म कोई शका सन्देह नही रहता । राजा हीरासिंह की सना के समक्ष यही सब शुभ दशन कवि ने काव्याकित किये हैं । देखिये विजय विनोद क छ द ३७४ से ३७७ तथा ३७९ स ३८३ ।

समाज की धार्मिक मान्यतायें ग्वाल रचित काव्य मे हिन्दू धमगत समस्त देवी देवताओ की उपासना और स्तुति के छन्द प्रचुर मात्रा म पाये जाते हैं । इन का वणन सप्तम प्रकरण क धम, वैराग्य और नीति क प्रसग मे पहले ही किया जा चुका है । तत्कालीन समाज म भागवत धम की उपासना की ही प्रधानता प्रतिबिम्बित होती है । समाज के वग या व्यक्तियो को भाव नानुसार इष्टोपासना करने की स्वतन्त्रता थी । भागवत धम मे भी द्वैतभाव अद्वैतभाव, द्वैताद्वैत और विशिष्टाद्वैत भावो से पृथक् पृथक् उपासना की जाती थी । कोई किसी की उपासना करता था, कोई किसी की । प्रत्येक दशा म समाज म आस्तिकता का बोलबाला था । उधर सिखो म दशम ग्रन्थ और दसो सिख गुरुओ की पूजा का भी प्रचलन था । ग्वाल ने राधा कृष्ण बलदेव, राम शिव, ब्रह्मा, विष्णु, सूय, गगा, यमुना त्रिवेणी हनुमान, शीतला, भरव, लक्ष्मी महालक्ष्मी, सरस्वती, ज्वाला, बगुलामुखी, काली, तारा विद्या षोडशी, भुवनेश्वरी, भैरवी छिन्नमस्ता धूमावती, मातगी आदि हिन्दू देवी देवताओ की स्तुतियों के साथ साथ सिख धम के दसो गुरुओं की भी स्तुतियाँ लिखी थीं । इससे स्पष्ट होता है कि कवि के समय में समाज में बहुदेववाद का प्रच

न था। ग्वाल की निम्नाकित 'सर्वोत्कृष्ट गुरुत्व स्तुति' कदाचित उस युग की हृदयवान की समवायित उपासना का ही प्रतीक मानी जायगी—

> बद यास वाक्य तें अद्वतता प्रगट कीनी
> ना तौ जगजीवन का द्वततांई जरती।
> चारि हू बरन कीन एक ब्रह्म दरसाय
> भेष ब्रह्मचय दियौ जो न हाय घरती॥
> ग्वाल कवि कहें पच खालसा अखड मड्यौ,
> लालसा कौ पूरन करया है सु भटती।
> हात जौ न एसे श्रीगोविंद सिंह महाराज,
> तौ न कलिकाल की करालताई कटती॥गुरुपचासा ५०॥

समाज म यो धम के प्रति आस्था प्राय बलवती थी पर तु नतिकता का अधिकाश म अभाव था। नतिकता यो पूणरूपेण लुप्त नही हुई थी और रणजीतसिंह, ध्यानसिंह हीरासिंह आदि जसे चरित्र नायका से धरा सवथा शून्य नही हुई थी। पर तु अतरसिंह अजीतसिंह और लहनासिंह जस विश्वास घाती कपटी राजद्रोही और घार स्वाथ परक यक्ति भी इसी समाज म विद्यमान थे। हम पीछे लिख चुके हैं कि किस प्रकार राजद्रोही और स्वदेश द्रोही अजीतसिंह न लाहौर नरेश क विरुद्ध अग्रेज गवनर जनरल की सहायता कलकत्ता जाकर मागी थी। ब्रिटिश सहायता के अभाव म उसने राजा का बिना शत क्षमा याचनापूवक आत्म समपण कर दिया था। गुरू ग्रथ साहब की शपथादि को शीघ्र ही भुला कर अकस्मात उसन चन्द देशद्रोहिया से मिल कर राजा, राजकुमार एव राजमन्त्री का दिन दहाडे विश्वासघातपूण नशस वध कर दिया था। ऐस ही सत्तालोलुप महत्वाकाक्षियो क कर्मों क परिणाम स्वरूप धीर धीरे सारा भारत ही कुछ दिन पश्चात ब्रिटिश झण्डे के नीच आ गया था। यह दशा नतिकता की दष्टि से उच्च वग की थी, किन्तु समाज क निम्न स्तर भी इसी प्रकार की अनतिकता वतमान थी इसका प्रतिबिम्ब हम आलोच्य काय म नही मिलता।

क्षमा दया करुणा, स्वामिभक्ति वचनाख्ढता, क्षात्रधम, उच्चाशयता, उदारता आदि सात्विक गुणो का भी समाज स सवथा तिरोभाव नही हा गया था इस के लिये यहा पुन महाराजा रणजीतसिंह ध्यानसिंह हीरासिंह, दीवान दीनानाथ पडित जल्हा आदि क दष्टा त रख जा सकत हैं। 'विजय विनाद' म सत्ता के लिये किये गय विविध षडय त्रो की एक श्रृ खला वर्णित है, जिसम प्राय खलनायको मे उक्त गुणो का अभाव है।

समाज मे नारी का स्थान—ग्वाल की नारी कल्पना एक चतुर (द्विविध) गुणी (अष्टधा), 'विविध जायका दायका' (रति वेलि गत) अलौकिक सौन्दर्यशालिनी ऐसी स्वर्गोपमा रमणी की है जिस देख कर पुरुषो की तो बात ही क्या है, गन्धर्व लोक, नरलोक, नागलोक और देवलोक की रूपवती देवियाँ और परियाँ भी मुग्ध हो जायँ और वाह वाह कह उठें। वह नख से शिख तक केवल रूप ही रूप की राशि है। उसके शरीर म सभी छहो ऋतुओ का विहार का निवास है[1] और जहाँ नायक शिकारी के शिकार खेलने हेतु पूरा पूरा सुप्रबन्ध है।[2] यही तक नहीं उस सर्वगुण सम्पन्न नायिका के पास नायक के उपभोग के लिये सुस्वादु खाद्य पदार्थों का अक्षय भडार भी विद्यमान रहता है।[3] परिवार म वधू का क्या-क्या आचरण करने पडते थे, इस का वर्णन भी कवि करता है।[4]

हिन्दू नारी कुल रीति का निर्वाह करती हुई पितृगृह और पतिगृह दोनो को सुखदायी बनाती थी। पति और घर के अन्य बडो के चरण स्पर्श करके प्रात वह घरेलू कामो म इस भाँति लीन हो जाती थी कि गुरुजन उसकी परछाई भी न देख पाते थे। यह परदा प्रथा का प्रभाव था। तुलसीदास की आदर्श नारी 'पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ' का आदर्श रखती थी। ग्वाल के युग की नारी भी न्यूनाधिक इसी आदर्श का अनुगमन करने की इच्छा रखती है। पति ही उसका सर्वस्व है। उसके सारे हित उसी म लीन हैं।[5]

साराश यह कि उस समाज म सभी प्रकार के नारियाँ और पुरुष मिलते है अच्छे भी बुरे भी। परन्तु दोनो ही विलासिता के रग म सिर से पैर तक रगे हैं। उस युग म नारी राजनीति म क्या स्थान रखती थी, इसकी एक झाँकी रानी चन्द्रकौर के चरित्र से मिल जाती है। रणजीतसिंह के निधन पर तत्पुत्र खड्गसिंह राजा बनाया गया। खड्गसिंह की असामयिक मृत्यु से राजसत्ता के लिये एक द्वन्द्वात्मक सघर्ष उठ खडा हुआ। मन्त्रियो ने खड्गसिंह की रानी चन्द्रकौर को गद्दी दे दी। यह बात भारतीय इतिहास म नई नही है। इससे पूर्व भी महिलाओ ने राज्य किये हैं पर तु यहाँ चन्द्रकौर मन्त्रियो की दया की पात्र बनती है। जब रणजीतसिंह का द्वितीय पुत्र शेरसिंह सेना लेकर लाहौर जीतने आता है तो राजा गुलाबसिंह, जो रानी के सरक्षक हैं, अन्तर्द्वन्द्व म केवल इतना कहते हैं—

जबू ते न आये किले तै नाम है गयो।।वि० वि० २१७।।

---

१ रसरग ५।१७ २ वही ५।१६ ३ वही ५।१८ ४ वही २।३९
५ वही १।१६८।

जब युद्ध की तयारियाँ पूरी हो जाती हैं तो रानी घबरा कर अपनी दुर्बलता दिखाती हुई कहती है—

> कहै चन्द और राजा साहब जू लड़ो मत,
> किले देहि डारो अब बात बिगरी सी है ।।वही २३८।।

अन्त में रानी शेरसिंह के निय गद्दी खाली कर ही देती है। कहने का तात्पर्य यह है कि ग्वाल के साहित्य में प्रतिबिम्बित समाज में पुरुष और नारी अपना पारस्परिक रूप ही प्रकट करते हैं। दोनो ही सामन्ती युग के हैं। इस के गुण दोष दोनो उनमे विद्यमान हैं।

निष्कर्ष—राज दरबारी समाज में रह कर कवि से जिस प्रकार के समाज चित्रण की अपेक्षा थी उसमे वह असफल नहीं हुआ। समाज के उच्च वर्ग के सदस्यों का वर्णन करने में उसने विशेष रुचि और मनोज्ञता का परिचय दिया है। इतर वर्गों के वर्णन केवल आनुषंगिक हुए हैं, बल्कि कहना चाहिये उनके केवल संकेत ही ग्वाल काव्य मे मिलते हैं। समाज के सांस्कृतिक पक्ष को कवि ने उपेक्षित तो नहीं रहने दिया, किन्तु यहाँ उसका मन अधिक नहीं रमा। उसने राजनीतिक समाज का चित्रण बड़ी सतर्कता और मनोज्ञता से किया है। यहाँ उसने राजा, रानी प्रधान मंत्री, मन्त्री, राजपुत्र राजा के सम्बन्धी जन सामन्त, सरदार छोटे बड़े नौकर तक के चरित्र को अपनी लेखनी का विषय बनाया है। राजनीतिक गुत्थियों, शंकाओं और षड्यन्त्रों तक का वर्णन उसने सफलतापूर्वक किया है। चरित्र चित्रण की उसमे क्षमता है। परन्तु अपने परिवेश के आग्रह के कारण समाज के सांस्कृतिक पक्ष को वह विस्तार नहीं दे पाया है। उसके वर्णनो से यह तथ्य हाथ लगता है कि आलोच्य शताब्दी का समाज अठारहवी शताब्दी के समाज से विचारों और कार्यों में किसी प्रकार भिन्नता रखता दिखाई नहीं देता। तत्कालीन समाज के उलझे हुए ताने बाने में यदि शाक का कोई सूक्ष्म तार दिखता है तो वह यह कि राजा अपनी प्रजा के दुखो के प्रति संवेदनशील है। कवि ने इस सूक्ष्म तार को पकड़ा है और कई छन्दों में इस गुण का उसने वर्णन किया है। यह कवि कर्म की जागरूकता का परिचायक तो है ही, समाज के भावी परिवर्तन का सचेतक भी है। आगे चलकर हम देखते है कि भारतेन्दु युग के साहित्यकार इस दिशा में अधिक सजग और क्रियाशील है। अग्रेजी शक्ति के उद्भव के छिप छिपे से बारीक संकेत समाजगत भय और आशंका को प्रकट करते हैं।

दशम् अध्याय

ग्वाल कवि का मूल्यांकन

3978

१० | ग्वाल कवि का मूल्यांकन

ग्वाल म काव्य शक्ति निपुणता और काव्याभ्यास—का य रचना म प्रवृत्त होने स पूर्व ग्वाल न वृ दावन म दयानिधि गोस्वामी काशी म दयाल कवि और बरेली म खुशहाल राय जस तत्कालीन प्रसिद्ध आचार्यों स दीक्षा ग्रहण की थी। संस्कृत और हि दी के काव्य शास्त्रो का भी उ होने गहरा अध्ययन किया था। इस विषय म हम उनके शिक्षा दीक्षा प्रकरण म विचार कर चुके है। एक सफल कवि क लिये शिक्षा दीक्षा और का य शास्त्र का गहन अध्ययन ही पर्याप्त नही, यदि उसम प्रतिभा नही है। यह प्रतिभा ईश्वर प्रदत्त होती है। ग्वाल को काव्य प्रतिभा प्राप्त थी अत साक्ष्य इसका प्रमाण है। अत साक्ष्य इस बात का भी प्रमाण देता है कि काव्य रचना की प्रवृत्ति ग्वाल को उसके पूर्वजो से ही प्राप्त हुई थी। आग चल कर अपने अध्यवसाय द्वारा कवि न अपनी प्रतिभा को कुशाग्र बनाया था। अत नि सकोच रूप से कहा जा सकता है कि ग्वाल विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। कवि का दूसरा प्रमुख गुण निपुणता या व्युत्पन्नता है। ग्वाल की काव्यकला तत्कालीन सभी का य प्रवृत्तियों के निर्वाहार्थ लिखे गय उनक बहु सख्यक ग्रथ नवीन विषयो और उपेक्षित पात्रों का लकर की गई रचनाएँ, उनकी ग्रथ लेखन की व्य वस्था की कुशलता और उनकी आलोचक बुद्धि को देख कर सहसा आश्चर्य करना पड़ता है। उ होन प्राचीन का य परम्परा का प्रतिनिधित्व करत हुए भी नवीन रचना म नय आयामो की स्थापना की इसस उनकी निपुणता पर सन्देह करने की गु जायश नहीं रह जाती। प्रतिभा और निपुणता के पश्चात कवि का तीसरी विशषता है उसका काव्याभ्यास। ग्वाल न संस्कृत शास्त्र म निष्णात होकर अपनी प्रतिभा को काव्य रचना क क्षेत्र म उतारा था। यो तो विद्यार्थी जीवन म ही कवि रचना करने लगा था। 'निम्बार्क स्वाम्यष्टक' और 'नेह निबाह' उस की प्रारम्भिक रचनायें इसक प्रमाण स्वरूप देखा जा सकती हैं। 'यमुना लहरी' (र० का० स० १८७९ वि०) स लकर 'दृगशतक' और 'भक्त भावन' क सग्रह (जिसका रचनाकाल स० १९१९ वि०) तक की प्राय ४० वष की दीर्घावधि म ग्वाल ने विविध विषयक अनक ग्रन्थो की रचना की। यही नही देश क अनक राज्यो म घूम घूम कर उ होन प्रभूत मात्रा म अनुभव प्राप्त किया और हि दीतर कई भाषाओ का ज्ञान भी

(एकावली), विश्वनाथ (साहित्य दपण), भानुदत्त (रसतरंगिणी और रसमजरी), रूप स्वामी (भक्ति रसामृत सिंधु तथा उज्ज्वल नीलमणि), अप्पय दीक्षित (कुवलयानंद) वद्यनाथ सूरि (अलंकार चन्द्रिका) पण्डित राज जगन्नाथ (रसगंगाधर), विश्वेश्वर पंडित (अलंकार प्रदीप) वात्सायन (कामसूत्र) कोक्कोक (रति रहस्य), श्रीहर्ष (रत्नावली) पिंगलाचार्य (पिंगल) अमरकोश, एकाक्षरी भारती वृत्ति, वर्णीसवृत्त गूढ़ पच्चीसी कुमार सम्भव, वीर चरित्र आदि के सन्दर्भ भी प्रमाण स्वरूप दिये गये हैं।

हिन्दी—केशवदास (रसिकप्रिया कविप्रिया और रामचन्द्रिका), चिन्तामणि (कविकुल कल्पतरु), देव (काव्य रसायन, भवानी विलास भावविलास और प्रेम तरंग) भिखारीदास (काव्य निर्णय) मतिराम (रसराज) बिहारी (सतसई) कुलपति मिश्र (रस रहस्य) जसवन्त-सिंह (रसमंजरी) हरचरण दास (सभा प्रकाश व कवि वल्लभ) पद्माकर (पद्माभरण जगद्विनोद) ठाकुर कालपी वासी श्रीपति (काव्य सुधाकर) नरवरपति रामसिंह (रसविनोद) परमेश सुंदर, दयानिधि, दयाल बैसवारा (भावाभरण) उदयनाथ कवीन्द्र, बलभद्र (नखशिख) सूरति मिश्र (अमरचन्द्रिका और नखशिख), दूलह (कवि कुलकण्ठाभरण), आदि।[1]

जैसा कि पीछे ग्वाल के रीति निरूपण प्रसंग में लिखा जा चुका है कवि ने केवल एक या दो ही संस्कृत ग्रंथों को अपने विवेचन का आधार नहीं बनाया बल्कि उपरिलिखित सभी ग्रंथों से कुछ न कुछ अंगीकृत किया है। परन्तु काव्य प्रकाश नाट्यशास्त्र रसतरंगिणी रसमंजरी कामसूत्र, रति रहस्य चन्द्रालोक कुवलयानन्द और संस्कृत पिंगल ग्वाल के प्रमुख आधार ग्रंथ रहे हैं। संस्कृत सूची के अन्य ग्रन्थों के मतों को कवि ने या तो प्रमाण स्वरूप अनुवाद किया है या फिर उनकी सन्दर्भ रूप में चर्चा की है। रीति के कवियों पर प्रायः आरोप लगाया जाता है कि वे एक या दो संस्कृत ग्रंथों का आधार बना कर ही रचना में प्रवृत्त हो जाते थे और यह कि वे संस्कृत शास्त्र का गूढ़ अध्ययन नहीं करते थे। यह बहुत कुछ अंशों में सत्य भी है। परन्तु ग्वाल के सम्बन्ध में यह निःसंकोच रूप में कहा जा सकता है कि उन्होंने

१ संस्कृत और हिन्दी के कवियों की सूचियों में कोष्ठगत ग्रन्थों का ग्वाल ने अपनी रचनाओं में आधाररूप, प्रमाणरूप अथवा उदाहरण अथवा खण्डन के लिये प्रयोग किया है।

सस्कृत काव्य शास्त्र का ही नहीं, हिन्दी रीति ग्रन्थो का भी गूढ़ अध्ययन किया था। यही नही कवि ने संस्कृत हिन्दी के विशाल वाङ्मय का सम्यक आलोडन करके हिन्दी को जो सन्तुलित काव्य शास्त्र दिया, उसे देख कर सहसा आश्चय करना पडता है। ग्वाल की अध्ययन गरिमा के विषय म आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का यह कथन ठीक ही है कि 'हिन्दी रीति शास्त्र की परम्परा म सस्कृत आधार ग्रन्थो का कदाचित सबसे अधिक आलोडन करने वाले ये ही हुए हैं।'[1] सस्कृत शास्त्र के व्यापक अध्ययन न ग्वाल म आत्म विश्वास उत्पन्न कर दिया था जिसके कारण वे दृढ़ता से हिन्दी के ही नहीं सस्कृत के आचार्यों के मतो का खण्डन मण्डन करने म भी नही चूके। इनके ऋण को कवि ने स्पष्ट रूप म स्वीकार किया है। विवादास्पद स्थलों म ग्वाल ने वैज्ञानिक पद्धति का अनुसरण किया है। पहले वे हिन्दी के आचार्यों के मत का उल्लेख करते हैं, तदनन्तर सस्कृत के ग्रन्थो के प्रमाण दे कर[2] अपने मत की पुष्टि करते हैं। जहाँ वह अपने स्व सम्मत मत की स्थापना करते हैं वहाँ 'हमारो मत' लिखते हैं।

हिन्दी के पूववर्ती आचार्यों के मत के साथ जहाँ कवि का वैमत्य हार

---

१ हिन्दी साहित्य का अतीत दूसरा भाग श्रृगार काल—आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, द्वितीय सस्करण स० २०२३ वि० वाणी वितान वाराणसी, पृष्ठ ६१०।

२ रस प्रकरण मे ग्वाल अपने मत की पुष्टि मे सस्कृत के प्रमाणो को रसिकानन्द के चतुथ प्रकरण मे इस प्रकार लिखते हैं—

प्रथम प्रमान भरताचाय को मत—विभाव, अनुभाव, सचारी भाव इन करि थाई भाव व्यग कीयो रस आनन्द स्वरूप प्रगट होत है।

अथ अभिनव गुप्ताचाय को मत—नाटय काव्य देखि सुनि आवरन आदि विगत होय अरु आनन्द रूप प्रकासित चतन्य सोई रस होत है।

अथ काव्य प्रकास को मत—कारन कारज सहायक ये मिलि फिरि प्रगट होइ थाई भाव सो रस। कारन कारज सहायक इन ही को नाटय शास्त्र म विभाव अनुभाव सचारी भाव कहत हैं। अरु भावादिक मे एक ही होय जहाँ और भावन की कल्पना करि लीजियत हैं।

अथ साहित्य दरपन को मत—स्वय प्रकार आनन्द स्वरूप सुद्धता अखड अन्य ज्ञान रहित ब्रह्मान द स्वाद तुल्य ऐसो रस होत है—४।१।

है, उसका कहीं-कहीं उसने अपने तर्कों द्वारा भी खंडन करके नयी परिभाषा बनाई है। रसिकानन्द के द्वितीय प्रकरण के आरम्भ में कुलपति मिश्र की काव्य की परिभाषा को लेकर कवि ने अपना तर्कपूर्ण मत प्रस्तुत किया है।[1] इससे कवि के ज्ञान और आलोचना शक्ति का पता चलता है। अमर कोश[2] के उद्धरणों और वेद[3] के वाक्यों से भी कवि ने अपने कथनों की पुष्टि की है। संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य मम्मट के परस्पर विरोधी कथनों की भी कवि ने कवि दर्पण में एक स्थान पर आलोचना की है और उसे केवल अपने ज्ञान बल पर खंडित करने का प्रयास किया है।[4] ग्वाल का यह प्रयास उनके आत्म विश्वास का द्योतक है। यहाँ कवि का आशय काव्य प्रकाश कार की कमियों की ओर संकेत करने का है, जिन की ओर किसी भी टीकाकार ने ध्यान आकृष्ट नहीं किया। इस न्यूनता को कवन ग्वाल की सूक्ष्म बुद्धि ने देखा था। कहने का तात्पर्य यह है कि ग्वाल जिस आत्म विश्वास, दृढ़ता योग्यता और व्युत्पन्नता के साथ संस्कृत आचार्यों की आलोचना करते हैं और रीति शास्त्र में वे जितने गहराइयों में उतरे हैं उतना रीति का कोई अन्य आचार्य सम्भवतः नहीं दिखता। उन्होंने रीति के जिस अंग को पकड़ा उसे मनोयोग के साथ पूरा पूरा निभाने का सफल प्रयत्न किया। इस विषय में डा० महेन्द्र कुमार का कथन हमारे मत की कुछ सीमा तक पुष्टि करता है। वे लिखते हैं— उनकी विवेचन शैली की सब से बड़ी विशेषता यह है कि यथा स्थान संस्कृताचार्यों का मत देकर उसे तर्क की कसौटी पर कसते हैं और अपने मत की स्थापना करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि उनमें संस्कृत के आचार्यों की आलोचना करने का साहस और प्रतिभा दोनों थी। इनकी विवेचन शैली की दूसरी विशेषता यह है कि इन्होंने लक्षण और उदाहरण यद्यपि कुवलयानन्द और चन्द्रालोक की शैली पर दिये हैं तथापि यदि विषय इससे स्पष्ट होता हुआ दिखाई नहीं दिया तो ब्रजभाषा गद्य में उसकी व्याख्या भी करदी है। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इस व्यक्ति ने आचार्य कर्म को अत्यन्त मनोयोग के साथ ग्रहण किया है।'[5]

जब दूषण की चर्चा चली है तो लगते हाथ यहाँ यह भी निवेदन कर

---

१ इसी शोध प्रबन्ध का रसिकानन्द विवरण। २ इसी शोध का साहित्यानन्द विवरण। ३ वही। ४ कवि दर्पण–७।३२ ४२ व टीका।

५ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास—षष्ठ भाग, डा० नगेन्द्र, पृष्ठ ३८१–३८२।

दिया जाय कि कवि ने इस प्रसग को भी रस, अलकार की भाति गहराईपूर्वक ग्रहण किया है। साहित्यानन्द म सामान्यत और कवि दपण म विशेषत केशव, बिहारी आदि हिन्दी के मान्य रस सिद्ध कवियो के अनक प्रसिद्ध छन्दो को ग्वाल ने शास्त्र की कसौटी पर कसा और उनको सदोष बता कर निदुष्ट बना कर रखा है। कवि दपण की रचना की पृष्ठभूमि मे कवि की यही इच्छा बलवती दिखाई देती है कि सभी कविया न अपनी-अपनी कविता को शुद्ध करने की प्राथना विद्वानो मे की है परन्तु इस ओर ध्यान नही दिया गया और यह कि मैं (ग्वाल) इनको निदुष्ट बना कर दिखाऊगा।[1] और यह सच है कवि ने अपनी इस प्रतिज्ञा का अनुपालन किया है।

रस, अलकार और पिंगल के निरुपण के प्रसग मे पीछे यह दिखाया जा चुका है कि ग्वाल ने अपने विवेचन म पर्याप्त ईमानदारी से काम लिया है। रस और अलकार पर अच्छे विशद विमश किये गये है। मुख्यत रस-प्रसग म ग्वाल न परम्परा के साथ साथ चलते हुए भी नये आयामों की प्रतिष्ठापना की है और कही कही परम्परा को नकारा भी है। उदाहरणाथ हिन्दी के किसी रीति कवि न रूप गोस्वामी द्वारा प्रतिपादित भक्तिरस को ग्रहण नही किया है। भक्ति रसामृत सिन्धु और उज्ज्वल नीलमणि के भक्ति उपासना के सख्य, दास्य और वात्सल्य रसो के निरुपण को रस विवेचन मे प्रथम बार अगीकार करने वाल आचाय ग्वाल हैं। इससे रस निरुपण का अद्यतन समाहृत रूप बना। इस प्रसग म दूसरी नवीन बात ग्वाल ने यह की कि रीति परम्परा के विरुद्ध चल कर उन्होने अपन ग्रन्थो म सवत्र सवप्रथम 'भाव का निरूपण किया, तदनन्तर रस का प्रसग उठाया। रस भावो से उद्‌बुद्ध होता है अत भाव का रस से पूव वणन करना तक सम्मत और समीचीन भी है। मिश्र अमिश्र रसो की चर्चा हिन्दी क बहुत कम कविया न की है। ग्वाल ने अपने ग्रन्थो म इस प्रसग को भी निभाया है। इस कवि ने नायिका की परिभाषा को भी अपनी सूझ से नया रग देने का प्रयत्न किया है।[2] अलकार के स्वरूप को भी कवि ने नये दृष्टि बिन्दु से देखा है।[3] अधिकाश रीति कवियो ने अर्थालकारो का ही वणन किया है। ग्वाल ने अब तक के प्रसिद्ध सभी अर्थालकारो का विशद वणन करते हुए शब्दालकारो को भी विवृत किया है।

---

१ कवि दपण—१।८ ९ २ इसी शोध का नायिका वणन ३ अलकार वणन (इसी शोध का)।

पिंगल निरूपण म पिगलाचाय का अनुगमन करते हुए कवि ने परम्परा का ही पालन किया है। शब्द शक्ति पर कवि ने जम कर लिखा है।

जिन काव्यागो के वणन म ग्वाल की वृत्ति विशप रूप से नही रमी है, उनम रीति के अय आचार्यो ने भी रुचि नहीं दिखाई और वे हैं रीति गुण वृत्ति और शृगारेतर रस। ग्वाल ने भी इनका वणन आनुषगिक कर दिया है।

निष्कप

१ ग्वाल ने काव्य के दशाग का निरूपण किया है। इस दृष्टि से ग्वाल हिन्दी के इने गिने आचार्यो म से एक हैं।

२ ग्वाल के लक्षण और उदाहरण प्राय स्वच्छ और सुबोध हैं जहाँ आवश्यकता समझी है उहोने वहाँ पूरक ब्रजभाषा गद्य वाताओ के माध्यम से अपनी पूरी बात कह दी है।

३ ग्वाल ने आचायत्व कम को अत्यन्त गम्भीरतापूवक ग्रहण किया और सतकता एव म नोयोगपूवक उस निभाया है।

४ इस कवि को अपने विषय पर पूण अधिकार था जिस से वह काय शास्त्र की शिक्षा के कई महत्वपूण ग्रथो का निर्माण कर सका। इनके ग्रथो के पाठक का शास्त्र ज्ञान अधूरा नही रह सकता।

५ ग्वाल रीति के परवर्ती तम आचाय थ। इस नाते आचायत्व निरूपण म उनसे जो अपक्षाए की जा सकती थी उन का उन म समाहार मिलता है।

६ उहोने मौलिक उद्भावनाए तो नही की रीति के किसी भी कवि से यह सम्भव नही हुई, परन्तु खण्डन मण्डन गत तकपूण निष्कर्षो का उनक शास्त्र मे प्राचुय मिलता है। लक्षणो को नया रग देकर सटीक बनाने के भी प्रयत्न उनमे परिलक्षित हैं।

७ उनके लक्षण सस्कृत ग्रथो पर आधत हैं पर तु उदाहरण उनके अपने हैं और कहीं कही एक से अधिक सख्या म भी है। यही नहीं, अपनो के अतिरिक्त अय हिन्दी-कवियो के छन्दो को भी उन्होने प्रचुरता से उदाहृत करने म सकोच नही दिखाया।

८ उनका रीति विवेचन तकसम्मत और प्रमाणिक है।

९ परम्परा को कहा कही नकारते हुए उन्होन नये आयामो की भी प्रतिष्ठापना भी की है। इसस उनके काय शास्त्र मे उस युग तक के प्रतिपादित समस्त सस्कृत और हिन्दी शास्त्र का समाहार हो गया है।

३ कवि के रूप में ग्वाल का मूल्यांकन—रीति के कवि अपने लक्षण ग्रंथों के लिये जिस प्रकार संस्कृत शास्त्र साहित्य के ऋणी थे उसी प्रकार संस्कृत के मुक्तकों के भी वे अनुगृहीत थे। संस्कृत में मुक्तकों की बहुत पुरानी परम्परा है। रीति ही क्या भक्तिकालीन विद्यापति सूर, तुलसी आदि सिद्ध भक्त कवियों पर भी संस्कृत का पर्याप्त प्रभाव पड़ा है। वास्तव में कवि अपनी प्रेरणा के लिये अतीत में डूब कर सोचता है जहाँ उसके लिये विषय भाव आदि प्रचुर मात्रा में सुरक्षित मिलते हैं। कुशल कवि की मौलिकता पर इससे आंच आती है ऐसी बात नहीं। कवि की प्रतिभा, व्युत्पन्नता और साधना उन पुराने भावरत्नों को और भी चमका सकती है जिससे गृहीत सामग्री कभी कभी मूल से भी उत्कृष्ट बन पड़ती है। यह बात भाव और भाषा के पारखियों के लिये तो सच है किन्तु अपारखी कहीं-कहीं पुराना माल उड़ाते हुए पकड़े में भी आते देखे गये हैं। ग्वाल रीति के सिद्धहस्त लेखक थे। उनमें प्रतिभा, निपुणता और साधना तीनों थी। ये भी प्राचीन मुक्तकों के ऋणी रहे हैं। ये रीति के अंतिम छोर के कवि थे अतः इनके समक्ष संस्कृत के मुक्तकों का एक विशाल भंडार था। किन्तु इन्होंने अपने पूर्ववर्ती कवियों की भांति अत्यन्त प्रसिद्ध संस्कृत-मुक्तकों से ही अपनी काव्य रचना में सहायता ली।

सात वाहन हाल की 'गाहा सतसई' अमरु की 'अमरु शतक' और गोवर्द्धनाचार्य की 'आर्यासप्तशती' आदि मुक्तकों की संग्रह पुस्तकें रीतिकाल के कवियों के मुक्तकों का आदर्श रही हैं। केशव बिहारी और पद्माकर प्रभृति कवियों ने उक्त संग्रहों से न केवल भाव ही लिये बल्कि अनेक का रूपान्तर तक प्रस्तुत किया है। बिहारी ने तो रचना करते समय उपयुक्त तीनों ग्रंथों को आदर्श रूप में सामने रखा है—इन्हीं के अनुकरण पर उन्होंने कहीं एक भाव, कहीं एक चमत्कार को लेकर समास शैली में दोहों का निर्माण किया है। उक्त संस्कृत ग्रंथों के छन्द ग्वाल के भी मनोराज्य में अवश्य ही उन्मुक्त विचरण करते रहे होंगे। फलस्वरूप उनके भावों, चमत्कार आदि का उनकी कविता में समावेश होना स्वाभाविक ही था। परन्तु बहुत मिलान पर भी ग्वाल का ऐसा कोई पूरा छन्द नहीं मिलता जो उक्त मुक्तक ग्रंथों के किसी संस्कृत छन्द का पूर्ण रूपान्तर अथवा पूर्ण भाव साम्य हो। भाव साम्य के खण्ड संकेत तो अनेक छन्दों में निश्चय धायमान हैं। गाहा सत्तसई से भाव साम्य के कुछ उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

रुअ अच्छी सु दिअ फरिसो अ गेसु जम्पिअ कण्णे ।
हिअअ हिअए णिहिय विआइअ कि त्थ देवेण ॥
— गाहा सत्तसई १३२ ।

संस्कृत छाया– रूपमक्षणो स्थितस्पर्शो गेषु जल्पित कर्णे ।
हृदय हृदये निहित वियोजित किमत्र दवेन ॥

×

ग्वाल— कहिबे कों हम तौ रसिक बिहारी है ॥ गोपी पच्चीसी २४ ॥

देव ने कुछ अधिक भाव साम्य के साथ उक्त गाथा को अपने शब्दों में बाधा है—

रावरो रूप रह्यौ भरि ननिन बननि के रस सौ श्रुति सानौ ।
गात जो देखत गात तुम्हारेई बात तुम्हारिय बात बखानौ ॥
ऊधा हूना हरि सो कहियो तुम हौ न इहा यह हो नहिं मानौ ।[1] (देव)

हिअअ हिअए णिहिय चित्तालिहिअ ब्व तुह मुहे दिठी ।
आलिगण रहिआइ णवर खिज्जति अग्गाई ॥
— गाह सत्तसई–हाल ४८५ ।

संस्कृत छाया–हृदय हृदये निहित चित्रलिखितव तत्र मुख दृष्टि ।
आलिगन एहितानि केवल क्षीयतेऽगानि ॥[2]

इस गाथा का भाव ग्वाल म इस रूप मे चित्रायित है—

द्व घरी तें दधिको बिलोवत ही रूपरासि,
आसपास आलिन की हुती उहाँ भीर है ।
तानें तक्यौ तोदि तब ही ते तक एक टक,
ए रे जसुधा के भलो भयो जादू मीर है ॥
ग्वाल कवि वह तौन डोल है न बोल कछू,
साधत न चोल है न बिसुधि सरीर है ।
कचन की मूरति बनाई प न बनि आई
तब लिखि मानों मैन रति तसवीर है ॥रसरग १।६०॥

आखो मे रूप है अगो म स्पर्श है कानो म वाणी है हृदय म हृदय निहित है फिर विधाता न वियोग ही किसका किया है ।

---

१ देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र पृष्ठ २६१ से उदधत ।

२ तेरे आलिगन के बिना उसका हृदय हृदय मे विलीन हो गया है, चित्र मे बनाई हुई सी द ष्टि तेरे मुख पर टिकी हुई है तथा अग क्षीण हो गये हैं ।

एक्कक्कमवइ वठण विवरतर दिण्णतरनण अणाए ।
तइ बोलते बालअ पजरमउणाइ अनोए ॥
—गाहा सत्तसई वही २२० ।

सस्कृत छाया—एकक व त्ति वष्ट न विविरा २र दत्त तरल नयनया ।
त्वयि यतिक्रान्ते बाला पजरश कुनायि ततया ॥[१]

ग्वाल ने उक्त भाव को इस स्वरूप मे बाधा है—

तब ही तें तरुनी को ताको मैं तमासौ यह
चढत अटारी कभू डोलें तिदरीन मे ॥
ग्वाल कवि कबहू झकत झझरीन बीच,
कबहू झक है री क्विार की झिरीन में ।
ऐसी तो न तोफगी तकी हो सफरीन में न,
खजनी खरीन में न कहू ल्जिुरीन में ॥रसरग १।११९॥

ग्वाल के पूर्ववर्ती मतिराम और देव ने भी इन्ही भावो को इस प्रकार काव्यबद्ध किया है—

सजनी मेरौ मन परयौ मनमोहन के सग ।
छटपटात छूटत न ज्यो पजर परयौ पतग ॥
—मतिराम सतसई २८८ ।

फेरि फेरि हेरि मगु बात हित वठी पूछै
पछी हू मृगछी जैसें पछी पिंजरा परयौ ॥ देव ॥

गाहा सत्तसई के पश्चात् 'अमरु शतक' दूसरी महत्वपूर्ण मुक्तक रचना है जिसका व्यापक प्रभाव रीति साहित्य पर पडा । ग्वाल के मस्तिष्क म इस के छ दो का प्रचुर प्रभाव था जो उनके मुक्तको म ध्वनित हुआ दीखता है । कुछ प्रभावापन्न छन्द उदाहरण स्वरूप यहाँ दिये जाते है—

१-अमरु—एकस्मिन् शयने विपक्ष रमणीनाम ग्रहे मुग्धया
सद्य कोप पराङमुख ग्लपितया चाटूनि कुव नपि ।
आवगा वधीरित प्रियतम स्तूष्णी स्थितस्तत्क्षणा
माभूम्लान इवत्यमन्द वलितग्रीव पुनर्वीक्षित ॥[२]

इसके प्रथम तीन चरणो के भाव को ग्वाल ने इस प्रकार अगीकृत किया है—

---

१ तेरे चले जाने के पश्चात् एक एक आवरण पर दृष्टि डालती हुई, वह पिंजडे मे बन्द पक्षी जसी हो गई है ।

२ अमरु शतक—अनुवादक कमलेश दत्त त्रिपाठी, इलाहाबाद, पृष्ठ २२ ।

सोवें एक सेज प छबीली छल दोऊ जहा
पर ती की लीयो नाम पीउ सपन हूँ देख ।
सुनि क सलोनी आहि जाहि यों कराही फेर
बाही खेंचि बठी मान माही छलत्यो हैं देख ॥
ग्वाल कवि जनि कैं गुविंद कह 'को हो प्यारी',
प्यारी ही तिहारी है न कोऊ म सचौहै वप ।
गोरस की सौंह प्यारो, गोरस की सोहमोहि
तो रसकी सौं, प्यारो तेरीसौ हसा है दख ॥

— रसिकानन्द ५।५१

खि न केन मुख न्विाकर करैस्ते रागिणी लोचने
रोषात्तद्वचनोदिता द्विलुलिता नीलालका वायुना ।
भ्रष्ट कु कममुत्तरीय कषणात्वला लासि गत्यागत
स्त्त तत्मकल विमत्र वद ह दूति । क्षतस्याधरे ॥रसरग ११३॥

ग्वाल के रसिकानन्द मे—

पूछत हौं तोहि कुच रेख कत लागी लाल
तोरे पून लाल सो खरौंटे यह खाई मैं ॥'
'ग्वाल कवि' स्वद सरसी क्यो' 'अमराह के ते,
'पीत पट कसैं ओढि आई, भरमाई मैं ।
'तू जो कहैगी घनस्याम प गई न ताते,
पीतपट तेरी य प्रतीत काजलाई मैं ॥रसिकानन्द ५।४२॥

ग्वाल के उक्त दोनो छन्दों मे अमर शतक क छन्द का शलीगत प्रभाव दृष्टिगोचर है ।

मिथ्यावादिनि ! दूति ! बान्धव जनस्याशानपीडागमे ।
वापी स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम ॥अमरु १०५॥

यह भावपूण रूपेण ग्वाल की निम्नाङ्कित पक्तियो म ज्यो का त्यो ध्वनित है—

दूती जानि तोका मजबूती कें पठाई आज,
घूती करि बातन सु बावरी बनाई मैं ॥

— रसिकानन्द ५।४२॥

प्यारे प्राननाथ प न पहुची प्रवीनी प्रिया
बावरी सी बावरी अहाई फिर आई तू ॥वही ५।४३॥

४—अमरु के श्लोक संख्या ६०[1] और १०५[2] की भाव ध्वनि ग्वाल के निम्नांकित छंदों में रूपायित हुई है—

अ– ऐसें पिक वनी वैन कहि क निहारी फेर,
जावक लिलार पीक पलकन क्षेम पर ।।रसिका० ६।३०।।

ब– आये भोर भावते सुहाये नखरेख लाए
मानो स्याम घन म कालनिधि की राग यह।
अजन तें रजन अनूप रूप अधरा की,
माना बिम्ब ऊपर, मलिदन की भाग यह ।।
भाल पै सु जावक जग्यो है जोर जाहर या,
मानो मन सीस पै सुहायो रतिराग यह ।।वही ६।३१।।

सम्भवत ग्वाल पर अमरु का पर्याप्त प्रभाव पडा है। इसकी कतिपय स्फुट पंक्तियों की प्रतिध्वनि ग्वाल में अनेकत्र गुंजायमान है।

आर्यासप्तशती—गोवर्द्धनाचार्य रचित यह अमरु शतक से परवर्ती रचना है। इसमें आतिशय्य और चमत्कार प्राय कुछ अधिक मात्रा में पाया जाता है। चमत्कार प्रिय ग्वाल ने अपने कतिपय छंदों में इस रचना के कुछ एक श्लोकों की ध्वनि और कहीं कहीं भाषा को भी अङ्गीकृत किया है। ऐसे दो तीन उदाहरण यहां पर्याप्त होंगे—

परमोहनाय मुक्तो निष्करुणे तरणि तव कटाक्षोऽयम ।
विशिख इव कलित कर्ण प्रविशति हृ य न नि सरति ।।३५५।।[3]

इसके 'न नि सरति' पद को छोड कर शेष श्लोक के अर्थ और भाषा को ग्वाल ने निम्नांकित दोहा में इस रूप में अपनाया है—

तर द ग सर सों छिद यौ प्रान सिपाही सूर।
मसकत हू सोंही रहैं नकौ होत न दूर ।।दृगशतक ३५।।

यहाँ 'विशिख' और 'हृदय' शब्दों को क्रमश 'सर' (शर) और 'प्रान' के रूप में ग्रहण किया गया है। 'न नि सरति' के लिये 'नकौ होत न दूर'

---

१ लाक्षालक्ष्म ललाट पटममित केयूर मुद्रा गले,
दवत्रे कज्जल कालिमा नयनयोस्ताम्बूल रागो पर। अमरु शतक—पृष्ठ ११८।

२ नि शेष च्युत चन्दन स्तन तट निमृष्ट रागो धरो,
नेत्रे दूर मनजने पुलकिता तन्वी तवेय तनु। वही पृष्ठ १६३।

३ आर्या सप्तशती—गोवर्द्धनाचार्य, काव्य माला सीरीज १८६६ ई०।

लिख कर बताया गया है कि दग शर छिद के छिदे ही रहते हैं, सामने ही रहते हैं—पृथक् नहीं होते। हृदय प्रविशति न निःसरति' म भी यही अपाथवय का भाव है। परन्तु प्रविशति' के स्थान पर 'छिद्यो' लिख कर कवि ने भाव की सम्प्रेषणीयता को और भी गहन बना दिया है। किंचित अन्तर के साथ इसी ध्वनि को ग्वाल ने अन्यत्र भी ग्रहण किया है—

तो चितवनि अकुस सद्रिस छेदत मूधी जाय ॥वही २६॥
पै यह सर है मैन को, योहि पार कढ़िजाय ॥वही २७॥

स्पष्ट ही है कि ग्वाल ने गोवर्द्धनाचार्य की आर्या की ध्वनि को अपनी कांति (पालिश) से चमक दे दी है।

दयित प्रहिता दूतीमालम्ब करेण तमसि गच्छन्ती।
स्वेद च्युत मृगनाभिदू रादगौरागि दृश्यासि ॥आर्या सप्तशती॥
गोरे गोरे अग की उज्यारी सो पसरी पर
सेत जरतारी प किनारी फन फाबी सी।
रनि म हू न्नि सो दिखात है ददा को सौंह,
मगमद दमकत बीजु महराबी सी ॥रसरग ३।१७॥

नायक प्रति यहा दूती का कथन है कि नायिका के शरीर की कांति चन्द्रमा की चमक से भी बढ कर सूर्य की सी है, अत चाँदनी म भी वह छिप नहीं सकती। उसे लाना सकट से रहित नहीं। यहाँ केवल शरीर की दीप्ति और मृगमद द्वारा लक्षित हो जाने के भाव म ही साम्य है। तम, मृगमद और गौरांगी के स्थान पर आये क्रमश रनि' 'मृगमद' और गोरे गोरे 'अगा पदा म भाषा साम्य तो है ही। सक्षेप म हम इस उक्त आर्या को छाया ही कह सकते हैं।

सस्कृत के स्फुट श्लोकों की छाया

सस्कृत के कुछ स्फुट श्लोको से भी ग्वाल ने छाया ग्रहण की प्रतीत होती है। बिल्हड कवि का चौर पचाशिका[1] मे एक श्लोक है—

अद्यापि ता गमनमित्युदित मन्दीय, श्रुत्वैव भीरु हरिणीमिव चचलाक्षीम्।
वाच स्खलद्विगलदश्रुजलाकुलाक्षीम्, सचिंतयामि गुरु शोक विनम्रवक्त्राम्।२८।

मुझको गमनुद्यत सुन कर भीत हरिणी के समान चचल और वाणी स्खलन से विगलित अश्रुजल से आकुल नेत्रा वाली अत्यन्त शोक सतप्त उस

१ सम्पादक एस० एन० ताडपत्रीका—पूना १९४६ ई० सस्करण।

का मैं आज चितन करता हू। ग्वाल ने इसी भाव को एक दूसरे प्रसग म इस प्रकार व्यक्त किया है—

'ग्वाल कवि' सीतागम सुनि सरकन चाहै,
ए पै सास पास औ परोसैं घरबारे को।
हरिनी ज्यों जाल मे फँसे त तरफरै दया,
तरफर तीय त्यो तकन प्रान प्यारे का ॥रसरग ३।१०४॥

यद्यपि प्रसग सवथा भिन्न है और मूल भाव म भी पूण साम्य नही है पर तु नायिका की चचलता का चित्र ग्वाल न वसा ही खींचा है, जैसा विल्हण न। ग्वाल का निम्नाकित छन्द बहुत प्रसिद्ध है—

कल केलि भौन म कलानिधि मुखी सो कत,
कलि करतैं ही 'नाही मुखसो निकल परै।
झिलकी न जान हिलमिल की न जानै बात,
हिलकी म सोभ झिलमिल की उछल पर॥
ग्वाल कवि मसकि मसकि पिय राख तऊ,
खसकि खसकि प्यारी पाटी पै फिसल पर।
चचला सी चपल सुपारद सी हलचल
जल बिन मीन जसैं उछल उछल पर।

अब एक सस्कृत का श्लोक दखिये—(रत्नहार से)

अक घताऽपि नयन विनिवेशिताऽपि क्रोडे कृताऽपि यतते बहिरेव गन्तुम्।
जानीमहे नववधूरथ तस्य वश्या य पारद स्थिरयितु क्षमते करेण ॥५६॥

सहज सजीली नवल वधू सहज ही हाथ नहीं आती। गोद म, शयन म और भुजाओ म कितना ही कसा जाय वह तो पारे की भाति चचल रहती है। इस भाव का ग्वाल के उपयुक्त कवित्त म सजीव वणन है। इसी प्रकार सस्कृत की कुछ और छायायें ग्वाल की रचनाआ म यत्र तत्र देखने को मिल सकती है।

ग्वाल पर हिन्दी कवियो का प्रभाव

ग्वाल पर हिन्दी क रीति कविया का प्रत्यक्ष प्रभाव है। भक्त कविया म सूरदास को छोड कर अन्य किसी का प्रभाव छाया इन पर नही पडी प्रतीत होती। इस का कारण यह है कि सूरदास भक्ति शृगार के कवि हैं। उनके सूरसागर म प्रकारान्तर स प्राय सम्पूण नायिका भेद के उदाहरण मिल जाते हैं। अत प्राय सभी रीति कविया न सूर की अनुभूति और अभिव्यक्ति का पर्याप्त मात्रा म प्रयोग किया है। इनकी खण्डिता आदि नायिकाओं के चित्रो

सयोग क्रीडाओं के वर्णनों और उद्धव-गोपी संवाद प्रसंगों में सूरदास की वाग्य सामग्री का रीति में बराबर प्रयोग हुआ है।

ग्वाल के खंडिता के चित्र निम्नांकित हैं—(रसरंग से)

१—जाम जाम जामिनी हू खातिर जमा न भई
एक जाम दिन हू चढ़ाय अब आये हो।
आज तो अधर वर अरुन तिहारे पर
अंजन के दाग लगे लाग लोभ छाए हो॥
ग्वाल कवि ताही ताकि अति ही लजीली
बाल पालकी पर्की सी होयआई का सुहाए हो।
मानो याहि खेलिवे का गहकि गुलाब लाल
गुंजन की माल मुखमाहिं दाबि लाए हो॥४।३९॥

२—राति रहि जाय पिय जावक लगाये भाल
माल पखि आये वाई पीर पर पीर है।
त्यौर तरराय सरमाय पर चुकि जाय
चुप पाइ ताहि चल्यौ धाइ नैन नीर है॥
ग्वाल कवि अंजन अधर ताकि ताकी पर
रोप भयो अंगन में सिगरो सरीर है। ४।४०॥

खण्डिता के चित्र बनाते समय ग्वाल के मनोराज्य में सूरदास के निम्नांकित पद अवश्य विचरण कर रहे होंगे—

१-प्यारी चित रही मुख पिय को।
अंजन अधर कपोलनि बदन लागौ काहू तिय को॥
तुरत उठी दरपन कर लीन्हे दखो बदन निहारौ।
अपनौ मुख उठि प्रात देखिके तबतुम कहू सिधारौ॥[1]

२-दरपन लै प्यारी मुख आगें कहति पिया मुख हेरौ जू।
मेरी सौं हा हा कहि पुनि पुनि उन काहू मुख फेरौ जू॥[2]

३ क्यों मोहन दरपन नहीं देखत।
क्यों धरनी पग नखनि करोवत क्या हम तन नहिं पेखत।
×　　　×　　　×
उतरि गयौ उर तें उपरना, नखछत, बिनु गुन माल।
सूर देखि लट पटी पाग पर जावक की छवि लाल॥[3]

---

१ सूर सागर—दूसरा खण्ड—सम्पादक श्री नन्द दुलारे वाजपेयी, सं० २०-१८ वि० पृष्ठ १०३३।　　२ वही, पृष्ठ १०३३।

४ जावक सा कहू पाग रगाई, रगरजिनी मिली कोउ बाल।
वद न रग कपोलनि दीहो, अरुन अधर भये स्याम रसाल॥
माला कहाँ मिली बिन गुन की उर छत देखि भई बेहाल।
५—चन्द्रावलि धाम स्याम भोर भए आये।
रिस नहि सकी सम्हारि बठी चढि द्वार बारि॥
बिन गुन बनी हृदय माल, ता बिच नख छत रसाल।
लोचन दोऊ दरस लाल जियसों रिस बाढी॥
जावक रग लग्यो भाल बदन भुज पर बिमाल।
पीक पलक अधर झलक बाम प्रीति गाढी॥
क्या आये कौन काज, नाना करि अग साज।
उलटे भूषन सिंगार निरखत हो जाने॥
ताही के जाहु स्याम जाके निसि बसे धाम।
मेरे गृह कहा काम सूरदास गाने॥[1]

कहने की आवश्यकता नही कि ग्वाल ने अपने लिये काव्य सामग्री प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप म सूरदास से भी प्राप्त की है। यो उनके समक्ष देव, बिहारी मतिराम आदि रीति कवि भी अवश्य थे।

ग्वाल ने मध्या अधीरा की उक्ति इस प्रकार लिखी है—
आए पास कौन के हो भूले कौन भौन के हो
डगमग गौन के हो दह मौज माची है।
पाग पच ढीले भये दृग उनमीले भये,
तऊ न नजीले भय पाटी भई काची है॥
ग्वाल कवि और न उपाय ब्रजराज अब,
जाउ जाउ जहा चाउ म तो यह जाची है।[2]

सूरदास जी के 'तहइ जाहु जह रनि बसे हो।', तहइ जाहु जह निसा बसे हो।, तहइ जाहु जह रनि हुत।' और तहइ जाहु जह रनि गवाई।' वाले पद इस सन्दभ म विशेषकर अवलोकनीय है। खडिता के चित्रण म देव, मतिराम आदि कवियो ने भी लगभग इसी काव्य सामग्री का उपयोग किया है। देखिये—

देव १—अजन अधर बीच नख रेख लाल लाल
जावक तिलक भाल सघन सुहाग के।

१. वही, पृष्ठ १०,७। २ रसरग, २।८१।

भौहैं अलसौहैं पलमौहैं पगे पीक रस रग
मग नन रनि जागे लगे लाग के ॥
काहे को लजात जलजात से बदन मोहि
महासुख देन आए देव पेंच पाग क ॥[1]

२—भोर ही आए मया करि मोपर बठिये दरपन देत मगाये।
ओठन अ जन लीक लस दृग देव दुहू पल पीक लगाये॥
अ गन म अगरे बगरे गुण बाल भरे रग रैनि रगाये।
को इन लोइन लाल लाख जि ह को इन लाइन ल्याए लगाय॥[2]

३—पीक भरी पलकें झलकें अलकें जु गडी सु लसें भुज खोज की।
छाय रही छवि छल की छाति म छाप बनी काहू ओछे उरोज की॥[3]

मतिराम—

जावक लिनार ओठ अ जनकी लीक सोहैखये
न अलीक लोक लीक म बिसारिए।
कवि मतिराम छाती नख छत जगमग
डगमग पग मूध मगम न धारिए॥
कसके उधारत हौं पलक पलक यातें पलकावै
पौन्हि सभ राति को बिसारिए।
अटपटे बन मुख बात न कहत बनै
लटपटे पेंच सिर पाग के सुधारिए॥[4]

रीति कवियो ने खण्डिता वणन प्रसगों मे नायक की अटपटी वेषभूषा नायिका क अगरागादि के लग चि हों के जो चित्र दिय हैं उनम प्राय साम्य पाया जाता है। ये रीति कवि इनक लिये या तो सूर के ऋणी है या सीधे सस्कृत या प्राकृत क मुक्तकों के। भागवतकार ने भी ऐसे वणन किये हैं। ग्वाल भी इन वणनो के लिये प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में श्रीमद्भागवत् सस्कृत और प्राकृत के मुक्तकों तथा देव और मतिराम जसे रीतिकवियो के ऋणी हैं जिनसे उ होने अपनी काव्य सामग्री ग्रहण की है।

बि_ारी—

ग्वाल बिहारी से अपने कतिपय छ दो म प्रभावित रहे हैं बिहारी का एक दोहा इस प्रकार है—

१ देव की कविता— डा० नगेन्द्र पृष्ठ २६८, २ वही, पृष्ठ २६८,
३ वही पृष्ठ २६९, ४ मतिराम ग्रन्थावली—रसराज—१०५।

तिय मुख लखही राजरी वदी बढ़ विनोद।
सुत सनेह मानहु लिये विधु पूरन बुध गोद ॥बिहारी सतसई॥

नायिका के मस्तक पर हीरा जडी बिन्दी शोभित है मानो चन्द्रमा अपने पुत्र बुद्ध को गोद म लिये हुए है। इस उत्प्रेक्षा का कुछ दूसरे रूप मे कवि ग्वाल न निम्नाक्ति कवित्त मे प्रयोग किया है। देखिये-(रसिकानन्द से)

प्यारी पगी प्रेम म प्रवीन प्रान प्यारे सग
रति विपरीत रची जाम जाग छाकी मैं।
छुटि परे बार हार टूटि परे मोतिन के
सरके सिंगार अग अग छवि ताकी मैं॥
ग्वाल कवि भाल तें हरित मन बेंदा परयो
हीरन जडाऊ कान्ह चौकी हियराकी मैं।
मानो निज गोद मे कलानिधि सपूत बुध
दियो है उतार गोद छीरधि पिता की मैं॥ ४।१८॥

नायिका के भाल से पन्ना का बेंदा नायक के हृदय की हीरा जडी चौकी पर गिरा है, मानो चन्द्रमा ने अपने पुत्र बुध को अपने पिता समुद्र की गोद म डाल दिया है। मुख कलानिधि, पन्ना का बेंदा बुध और हीरा की चौकी क्षीर सिन्धु है। बिहारी के दोहे मे बेंदा मुख पर ही रहता है, ग्वाल के कवित्त मे वह नायक की गोद म गिर पडता है। इस परिवतन से ग्वाल की उत्प्रेक्षा म मौलिकता आगई है। वसे इसकी कल्पना उन्होंने बिहारी से ली है।

बिहारी का दूसरा अत्यन्त प्रसिद्ध दोहा यह है —

नहिं पराग नहि मधुर मधु नहि विकास इहि काल,
अली कली ही सो बध्यो आगे कौन हवाल ॥बिहारी सतसई॥

ग्वाल ने इसी भाव को अपने निम्नाक्ति कवित्त म अपनाया है—

प्यारी लाज साज म गडी ही जात रनदिन
सक्ति रहत बीच गुर जन जाल के।
पानी पान भोजन करत पिय पूछि पूछि
पलग बिछावत बिछौना फूल माल के॥
ग्वाल कवि वह तो न जानै भेद मोहिव क
मतर म जवर-म जान कौन हाल क।

हूव है वहा आगें सवलोग भये अब ही ते
अधिक अधीन भये ए री नव बाल के ।।वही ६।६८।।

ह् है वहा० और अली भली ही सो यद्यो' का अ तर स्पष्ट है। बिहारी की कल्पना म जो विशषता है ग्वाल उससे उत्कृष्ट नही बना पाय।

बिहारी के एक विपरीत रति वर्णन के प्रसिद्ध दोहे की अर्द्धाली इस प्रकार है—'करत कुलाहल किंकिनी मौन गह्यो मजीर।' इसी का ग्वाल ने इस प्रकार निम्नांकित पक्ति म उतारने की चेष्टा की है—

किंकिनी की नीकी कत्यो नवन निनाद स्वाद
बिछियन कीनी बाद अपनी अवाज को।[1]

इसमे ग्वाल पूरे भाव का रूपान्तर भी कुशलता से नही कर पाये।

भिखारीदास—इन्होंने कुचो को शकर के समान माना है। ग्वाल इन स कुछ और आग बढकर कुच शम्भु की पूजा का विधान बनाते हैं। दखिय—

भिखारीदास—

वे धरें अग भुजग के भूषन एऊ भुजग धरें तन कारे।
वे धरें भाल प चद्र सवारिकें ये हू नखच्छद सीस सवारे।।
सकर औ कुच की समतानि म कोऊ विभेद न दीखत प्यारे।
वे करि कोप जरायो मनोज उराज मनोज जगावन हारे।।[2]

तथा—

ब्रज के सपुट है ये सही हिय म गढि जात ज्यो मु त की कोर हैं।
मरु हैं प हरि हाथ म आवत चक्रवती प बडेई कठोर है।।
तेरे उरोजन म सजनी गुन दास लखें सब और ही ओर हैं।
सभु हैं प उपजाव मनोज सुवृत्त हैं प पर चित्त के चोर हैं।।[3]

ग्वाल—

सखी जानि माको लोग कामी को पठावत हैं,
आवत न मेरे मन कान न धरत हो।
जघ कदलीबन म नाभि कूप कूल बठि अतर
गगोतरी, की, सीसियाँ भरत हो।।
ग्वाल कवि' चन्दन चढावो पहिरावो मान
आगुरीन आरती उतारि वितरत हो।
सुचि करि रुचि करि उच्च पद पाइबे को
प्यारी कुच सभु की मैं पूजन करत हो।।[4]

वही ४।१२८। 1 2 ग्वाल रत्नावलि—कवि किंकर सन् १९४५ ई० इलाहाबाद भूमिका भाग। 3 वही। 4 रसरग—ग्वाल, ७।९।

'दाम' जी के उपमान का लकर ग्वाल ने 'अन्तर गगोत्री की सीसिया' भरन की अनूठी कल्पना कर डाली है। परन्तु कुच शम्भु की यह पूजा ग्वान न न्दास से ही सीखी है। दास और ग्वाल दोनो ही यहा यह भूल गये हैं कि शम्भु एक हैं और उरोज दो। अत रूपक नही बनता। परन्तु यह एक दूसरा ही विषय है। यहा तो ग्वाल पर दास का प्रभाव दखना ही काम्य है।

भूपण के भाव और कही कही भावो की छाया ग्वान की कुछ पक्तिया म अवलोकनीय है। शिवाजी की प्रशसा म भूपण का एक कवित्त 'शिवराज भूपण' म इस प्रकार है—

अति मतवार जहा दुरद निहारियत तुरगन म ही चचलाई परतीति है।
भूपन भनत जहा पर लग बानन मे कोक पच्छिनहिं माहि बिछुरन रीति है॥
गुन गन चोर जहा एक चित्त ही के लोर बध जहाँ एक सर जाकी गुन प्रीतिहै।
कप कदली म बारि बुन्द बदली म सिवराज अदली के राज मे या राजनीति है॥२४७॥

इसी शली और भाव का एक छन्द ग्वाल के विजय विनोद से नीचे दिया जाता है—

चित्त ही है चोर और चोर कौन शोर कहू
धान्वी त्रिया के दृग दौरत दुरस्त हैं।
पौन ही पवन विभिचारी जहा दखियत
सूरज की तेज अनाचारी उन अस्त है॥
ग्वान कवि कहै जहाँ दीप फूल ही की खून
लग्त मनोरथ औ अलिपुज मस्त है।
धन्य रघुकुन जन्य ध्यानसिंह महाराज
जान कियो देस दस ऐसो वदोबस्त है॥३८॥

इन दोनो कवियो क लगभग समानान्तर भाव के कुछ और छन्द यहा दिय जा रह हैं—

भूपण—(शिवा बावनी छन्द ५१)

वद राख विदित कुरान राखे सार युत
राम नाम राख्यौ अति रसना सुघर म।
हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की
काधे प जनऊ राखौ माला राखी गर म॥
मीडि राखे मुगल मराडि राखे पातसाह
वरी पीसि राखे वरदान राख्यौ कर म।

राजन की हद्द राखी तेग बल सिवराज
देव राख दवल स्वधम राख्यौ घर म ।।

ग्वाल—(विजय विनोद ४६६)

महाराज हीरासिंघ हिंदू पति हीरा एक
राखी निज टेक नक धरम की चोटद्दी तें ।
फौज मे फितूर कीना फिरका चलन दीनौ
हलन न दीनौ कोऊ मूवा सरहद्दी तें ।।
ग्वाल कवि कहै बादसाही की न भु द करी
दु द खरी दरी प्रजा सुखन की लद्दी तें ।
बद्दी को करया वेरी रद्दी सम फारि डारे
करके भरद्दी हद्दी राखी राजगद्दी तें ।।

स्पष्ट है कि भूषण के भाव को ग्वाल सफलतापूर्वक निभा नही पाय । उल्टे भाषा को भी विकृत कर बठ हैं ।

भूषण—(शिवराज भूषण छन्द २५०)

देसन देसन नारि नरेसन भूपन या सिख देत दया सा ।
मगन ह्वै करि दत गहो तिन कत तुम्हें है अनत महा सो ।।
कोट गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजौ प्रभुता मो ।
और करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सा ।।

ग्वाल—(विजय विनोद १३ व १४)

खबर ते जे पर कहे का जवाब का साह ।
तिन को नारी यों कह सुनो हमारे नाह ।।
सेरन प जान समसेर घालियाँ है वहाँ
रनजीत सिंघ जू की फौज आवें चालिया ।
कालिया अकालियाँ की पाति दूर दीख
कज जायगी सभालिया न फेर ततकालियाँ ।।
ग्वाल कवि चाहत खुसालियाँ बिसालिया
जो राखनी है मुख पर लालियाँ बहालिया ।
मेवन की डालिया तुरगन की पालिया
ल मिलौ मुक्तालियाँ द नजर उतालियाँ ।।

ऊपर के कवित्त म ग्वाल न भूषण के भाव को सभाल कर रखा है ।

पद्माकर और ग्वाल का आदान प्रदान—पद्माकर (स० १८१० ८६६ वि०) ग्वाल (स० १८५६-१६२४ वि०) के समसामयिक हैं । पद्मा

कर का रचना काल हिम्मत बहादुर विरदावली (र० का० स० १८४८ १८५६)[1] के निर्माण से आरम्भ होकर गगा लहरी की पूर्ति (स० १८६० वि०) तक है और ग्वाल का रचना काल स० १८७६ वि० से १६१८ वि० तक निश्चित है। इन दोना की रचनाओ म भाव और भाषा का अद्भुत साम्य पाया जाता है–विशेषकर पद्माकर की गगालहरी और ग्वाल की यमुना लहरी के वण्य विषय ज्यो के त्यो मिलत हैं। यहाँ तक कि भाव, विषय, उप विषय शली आदि हूबहू एक हैं। इस सम्बन्ध मे विद्वाना का मत है कि ग्वाल ने अपनी यमुना लहरी' पद्माकर की गगा लहरी' के अनुकरण पर लिखी थी। आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र लिखते हैं—ग्वाल ने तो मानो पद्माकर की डाडा मडी म ही अपनी रचनाए की हैं। उनकी 'यमुना लहरी' पद्माकर की गगा लहरी की होडा होडी म बनी है और 'रसरग' 'जगत विनोद' के अनुगमन पर निर्मित हुआ। इन कवियो म विषय की ही सामानान्तरता नही है उप विषय, प्रसग भाव आदि ठीक आमन सामने भिडे बठे हैं।[2] डा० व्रज नारायण सिंह[3] श्री प्रभुदयाल मीतल[4] आदि विद्वानो की भी यही सम्मति है कि ग्वाल ने पदमाकर की 'गगा लहरी' के अनुगमन पर अपनी 'यमुना लहरी' की रचना की। परन्तु इन दोनो के रचनाकाल को किंचित ध्यान से दखा जाय तो एक विपरीत ही तथ्य हाथ आता है। गगा लहरी पद्माकर की अतिम रचना है, इस विषय मे विद्वाना मे दो मत नही हैं। मिश्र व धुओ ने लिखा है— रोग मुक्त होने पर पद्माकर जी गगा सेवनाथ कानपुर चले गय और वही सुखपूवक आयु के शेष दिन उन्होने प्राय ७ साल तक व्यतीत किय। इसी समय उन्होने गगा लहरी नामक ६६ छ दा का एक उत्तम ग्रथ बनाया।'[5] आचाय प० रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं—अतिम समय निकट जान पद्माकर जी गगा तट के विचार से कानपुर चले आये और वहीं अपन जीवन के शेष सात वष पूरे किय। अपनी प्रसिद्ध गगा लहरी

---

१ कविवर पद्माकर और उनका युग—डा० व्रजनारायण सिंह १८६६ ई० पृष्ठ १०३।

२ पद्माकर पचामृत —आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र स० १९९२ वि० पृष्ठ ७७।

३ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १९४।

४ ग्वाल कवि—श्री प्रभुदयाल मीतल स० २०१७ वि० मथुरा पृष्ठ ४९।

५ मि० ब० विनोद—द्वितीय भाग, स० १९८४ वि० सस्करण, पृष्ठ ९०६।

इन्होंने इसी समय के बीच बनाई थी।[1] आचार्य मिश्र जी, डा० ब्रजनारायण सिंह प्रभृति सभी विद्वानों ने इसी मत की पुष्टि की है। डा० सिंह का गंगा लहरी के रचनाकाल के विषय में स्पष्ट मत है कि कवि ने अवश्यमेव इसकी रचना सं० १९८४ वि० के लगभग आरम्भ कर दी होगी और जैसा हम पहले अनुमान कर चुके हैं कि लगभग १८८६ वि० तक कवि बाँदे में ही रहा तो वहीं पर ग्रन्थ का आरम्भ कर तथा अन्तिम वर्ष (१८९०) में कानपुर में आकर इस ग्रन्थ को कवि ने समाप्त किया। इस कवि का यह अन्तिम ग्रन्थ ठहरता है।'[2] इस प्रकार बहुत हुआ तो पद्माकर की इस कृति का रचना काल सं० १८८३ वि० से लेकर सं० १८९० वि० तक निश्चित होता है। उधर ग्वाल अपनी यमुना लहरी की रचना कार्तिक मास की पूर्णमासी सं० १८७८ वि० को पूर्ण कर चुके थे। कवि का अन्तःसाक्ष्य इसका साक्षी है।[3] इस प्रकार पद्माकर की लहरी से ग्वाल की लहरी कम से कम ४ वर्ष पूर्ववर्ती है। दूसरे शब्दों में 'यमुना लहरी' के समापन तक 'गंगा लहरी' का लिखना तक आरम्भ नहीं हुआ था। साक्ष्य से सिद्ध होता है कि पद्माकर की गंगा लहरी के अनुगमन पर ग्वाल ने अपनी यमुना लहरी कदापि नहीं लिखी क्योंकि १८७६ वि० तक गंगा लहरी का अस्तित्व ही नहीं था। ऐसी दशा में ग्वाल अनुसरण ही किसका करते। बल्कि एक नया तथ्य यह सामने आता है कि *पद्माकर ने ग्वाल की यमुना लहरी के अनुकरण में अपनी गंगा लहरी की* रचना की थी। जहाँ तक पद्माकर के जगत विनोद का प्रश्न है। उसकी रचना सं० १८६२ और १८७० वि० के बीच की है।[4] और वह ग्वाल के प्रथम रीति ग्रन्थ रसिकानन्द (रचना काल सं० १८७८ वि०) की पूर्ववर्ती कृति है। उक्त विवेचन का निष्कर्ष यह है कि ग्वाल और पद्माकर अपनी रचनाओं में अनेकत्र एक दूसरे के ऋणी रहे हैं और भाव भाषा विषय तथा प्रसंग में परस्पर पर्याप्त प्रभावापन्न हैं। यहाँ पहले हम ग्वाल पर पड़े पद्माकर के प्रभाव पर विचार करेंगे, तदनन्तर पद्माकर पर ग्वाल के प्रभाव को देखेंगे।

पद्माकर का ग्वाल पर प्रभाव—पद्माकर अपने युग के एक प्रसिद्ध

---

१ हि० सा० का इतिहास—सस्करण सं० २०१८ वि० पृष्ठ २९५।

२ कविवर पद्माकर और उनका युग—पृष्ठ १३०।

३ देखिये इसी शोध प्रबन्ध का यमुना लहरी प्रकरण।

४ इस सम्बन्ध में देखिये 'ब्रजभारती' वर्ष २१ अंक १ में पद्माकर और ग्वाल सम्बन्धी मेरा लेख पृष्ठ २१ २४।

कवि हैं जिनका अनेक समसामयिक और परवर्ती कवियों पर प्रभाव पड़ा। ग्वाल भी यत्र-तत्र उन से प्रभावाप न हुए हैं। परन्तु इस प्रभाव की मात्रा अत्यल्प और वह भी ग्वाल के कुछ ही छन्दों में अवलोकनीय है।

जगत विनोद में पद्माकर का एक अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द है—

गुलगुली गिल में गलीचा है गुनीजन हैं,
चादनी है चिक है चिरागन की माला है।
कहै पद्माकर त्यों गजक गिजा है सजी
सेज है सुराही है सुरा है और प्याला है॥
सिसिर के पाला को न व्यापत कसाला तिन्हे,
जिनके अधीन एते उन्दित मसाला है।
तान तुक ताला है विनोद के रसाला हैं,
सुबाला है दुसाला है विसाला चित्रसाला है॥३८८॥

इसी से मिलता जुलता ग्वाल द्वारा रचित षटऋतु वर्णन का कवित्त यहाँ प्रस्तुत है—

सोन की अंगीठिन में अगर अधूम होय,
होय धूमधार हू तो मृग मद आला की।
पौन की न गौन होय भरक्यो सुभौन होय
मेवन की खौन होय डब्बियाँ मसाला की॥
ग्वाल कवि कहै हूर परी सी सुरगबारी
नाचती उमग सो तरग तान ताला की।
पाला की बहार औ दुसाला की बहार आई
पाला की बहार में बहार बड़ी प्याला की॥६०॥

कहने की आवश्यकता नही कि ग्वाल ने पद्माकर के वस्तु विषय को पूर्णरूप में ग्रहण किया है। यही नही भाषा भी लगभग पद्माकर की है।

जगत विनोद में पद्माकर का एक छन्द वचन विदग्धा नायिका से सम्बन्धित है—

जब लौं घर को धनी आवै घरै तब लौं तौ कहूँ चित दबो करौ।
पद्माकर ये बछरा अपने बछरान के सग चरबो करौ॥
अरु औरन के घर तें हमसो तुम दूनी दुहावनी लैबो करौ।
नित सांझ सबेर हमारी हहा हरि गैया भला दुहि जैबो करौ॥६१॥

ग्वाल ने पद्माकर के इसी भाव को ग्रहण करके अपनी वचन विदग्धा का वर्णन रसरंग के निम्नांकित छन्द में किया है—

यह लात चलावनी हाय दया हर एक सा नाहि दुहावनी है।
सुनी तरी तरीफ मिलावनी की हित तर सा माल पुहावनी है॥
कवि ग्वाल चराय कें लावनी ह्या फिरि बाधनी ठौर सुहावनी है।
मनभावनी दहीँ दुहावनी म यह गाय तुही पँ दुगावनी है॥

पद्माकर की नायिका की उक्ति विनम्र और अनुरोधपूण है। 'हहा न्त्र' से उसकी आग्रह भरी चिरारी और भी सरस बन गई है। परन्तु ग्वाल की नायिका म प्राथना नही विनय नही अनुरोध भी नही, बल्कि एक अधिकार भरी उक्ति है। ग्वाल की नायिका की गाय लात चलाने वाली है। हर किसी स नही मिलती। उसे नायिका किसी दूसरे को छूने भी नही देगी। नायक की गाय दुहने की कला की प्रशसा नायिका ने सुन रखी है यह जता कर वह नायक की कोमल वृत्ति को जगाती है। वह उसके हित की बात कह रही है। मन भावनी दुहावनी नैन का लोभ काफी मोहक है। पदमाकर की नायिका की पहुच जहाँ भावुक है वहा ग्वाल की नायिका की पहुच मनोवैज्ञानिक है।

जगत विनोद म पद्माकर की वत्तमान गुप्ता नायिका की उक्ति इस प्रकार है—

उधध ऐसो मच्यो ब्रज म सब रग तरग उमगनि सीचें।
त्यां पद्माकर छज्जनि छातनि छव छिति छाजनी केसर कीचें॥
द पिचकी भजी भीजी तहाँ परे पीछें गुपाल गुलाल उलीचें।
एक हा सग इहा रपटे सखी ए भय ऊपर मैं भई नाचें॥८८॥

रसरग म ग्वाल की वत्तमान गुप्ता की उक्ति भी अवलोकनीय है—

गाकुल की यहि साकरी गल म जोरावरी रसरग मो मीचें।
लाल गुलालें सुधा लें यहा मग लालें भये रग कीचें उलीच॥
यों कवि ग्वाल गुपाल छली छवि छल टक्यो पट छोरन खीचें।
तरी सा आली दुहू रपटे हाग हा भई ऊपर ये भये नीच॥३।२६॥

ग्वाल ने पद्माकर के भाव को कुछ परिवतन के साथ ग्रहण किया है। भाषा तो मिल ही रही है विषय, प्रसग कारण और काय भी समानान्तर चल रह हैं। अन्तर कवल इतना रहा है कि ग्वाल की नायिका अपन नायक क ऊपर आ गिरती है जबकि पद्माकर के छन्द की नायिका पहल गिरती है और ऊपर से नायक। ग्वाल की यह कल्पना हृदयग्राह्य नहीं कही जा सकता। पद्माकर की उक्ति बडा स्वाभाविक और सरस है। ग्वाल यहाँ

प॰माकर के भाव को चतुराई से प्रयोग नही कर सके । एक दूसरे स्थल पर उ न पद्माकर के इसी भाव को ज्यो का त्यों रख दिया है । देखिये—

आई मैं अकेली या कलिंद जाके कूलन पै
न्हा॰ लाय प्रेमन ॰िमाग॰ग मौंजे य ।
नीर भरि जौला म चलनि चह्यो तौला वीर
छाय घन आयो मह चचलान कौंजे ये ॥
ग्वाल कवि गागर गुवि॰ लें उठाई आय
रपटि परे री दोऊ देखि चकाचौंजे ये ।
मैं तो चित्त चौंकि क गिरी री चित्त चाग
सिर ऊपर ते एक मग आडम्बर औंधे य ॥

केवल प्रसग बदल गया है । भाव कल्पना ज्यो की त्यो पद्माकर की है ।

ग्वाल का हिन्दी कवियो पर प्रभाव

ग्वाल का पद माकर पर प्रभाव—प॰माकर ने ग्वाल की यमुना लहरी की अनुकृति पर अपनी गगा लहरी बनाई, यह ऊपर निवेदित हो है । अत आधार ग्रन्थ यमुना लहरी के वण्य विषय, प्रसग और उपविषयो का प्रभाव गगा लहरी पर पडे बिना नही रहा । दोनो लहरियों म पापियो का उद्धार प्रमुख विषय है । नामोच्चारण, माजन, स्नान दशन से सभी पाप नष्ट होने हैं । कोई भी पापी यमदूतो के चगुल म नही फस पाता । चित्रगुप्त की परे शानी बढ जाती है । जिस भी यमराज पकड कर ले जाते हैं वह गगा और यमुना का नाम लेकर स्वगधाम चला जाता है फिर नरक म कौन जायगा । इसी प्रकार दोनो नदियो की महिमा का गायन दोनों कवियो ने अपने ग्रन्थ मे किया है । प॰माकर गगा भक्त हैं पर तु उन्होने जमुना लहरी भी लिखी है और ग्वाल यमुना के अनन्य भक्त हैं पर तु उन्होंने भी गगा पर पच्चीस छन्द लिखे हैं । ग्वाल की यमुना लहरी म १०८ छन्द हैं और पद्माकर की गगा लहरी म ५६ छ द । भाव, भाषा विषय और प्रसग के साम्य क दोनो कवियो के कुछ ही छन्द नीचे लिखे जाते है—

ग्वाल की यमुना लहरी का एक स्थल देखिये—

मूल करनी को धरनी प नर देह लैबो
देहन को मूल फेर पालन दुनी को है ।
देह पालिव को मूल भोजन सुरूस है,
भोजन को मूल हानो वरसा घनी को है ॥

ग्वाल कवि मूल बरमा को है जतन जप,
जतन सुमूल भेद वन्द बहु नीको है।
वन्द को मूल पान मूल तरिवे को
तरिवे को मूल नाम भानुनन्दिनी को है ॥८॥

गंगा लहरी में उक्त छन्द के ठीक अनुरूप पद्माकर का निम्नांकित कवित्त है—

करम को मूल तन तनमूल जग जीव
जग जीवन मूल अति आनन्द उधरिबो।
कहै पद्माकर सु आनन्द को मूल राज
राजमूल केवल प्रजा को भौन भरिबो ॥
प्रजा मूल अन्न सब अन्नन को मूल मघ
मघन को मूल एक जन्न अनुसरिबो।
जन्नन को मूल धन धन मूल धम अरु धम
मूल गंगा जल बिन्दु पान करिबो ॥४॥

यमुना लहरी में ग्वाल का एक दूसरा छन्द देखिये—

काहू साहूकार को चुरायो धन चोर एक,
सोर भयो सहर गयो दई किस कित।
बहुत दिना में गयो बाधि के नपात भयो
पूछयो तें लयो है कह्यो हम नाहित हित ॥
ग्वाल कवि भाज्यो रविजा पै जान नयो माल,
हाल भयो और इमि कहत तित तित।
स्याम रंग हैवें भुज चार भई आयुध लै,
चौकयो आम खाम रह्यो हाकिम चित चित ॥२५॥

गंगा लहरी में इसी से कुछ मिलता जुलता पद्माकर का कवित्त है—

हरि हरि हसत न चाहत हरिपद चल्यो
कलहू विनोदि मन बाकी आर ढरको।
कहै पद्माकर सु देखि कै गरुड हू को
लेखि निज भाग अनुराग कै न सरको ॥
कांधे चढ़ा कोउ तजो चाहत सदन यह
सोवन पतित परयो गंगातीर परको।
जौ ना धरी द्वक रूप हर को न पायो तौला
पातकी विचारो भयो चोर भरघर को ॥४२॥

इसी प्रकार के साम्य पद्माकर और ग्वाल की लहरियो म पर्याप्त मात्रा म मिलते हैं। सक्षेप म कहा जा सकता है कि पद्माकर पर ग्वाल का प्रभाव पर्याप्त मात्रा मे पडा है। यहा यह निवेदन करना आवश्यक प्रतीत होता है कि पद्माकर पर ग्वाल के प्रभाव को यहाँ प्रथम बार विवेचित किया गया है। साहित्य म अभी तक ग्वाल ही पद्माकर के अनुकर्त्ता रूप म मान्य थे। एक और उदाहरण देकर हम इस प्रसग को समाप्त करेंगे। ग्वाल यमुना लहरी म लिखत हैं —

कोई दुराचारी व्यभिचारी अनाचारी एक
हाय जमुना म कह्यौ कस मैं उधारिहा।
फेरि प्रान त्यागे, भुज चारि भई ताही
ठौर आयौ जमदूत कहै तोहि मैं पकरिहौं॥
ग्वाल कवि एती सुनि भाग्यबली भाख्यौ
वह निज भुजदड कौ घमड अनुसरिहौं।
तोरि जमदड कों, मरोरि दाहुदड कों सु
फोरि फोरि मडल अखड खड करिहौ॥

गगा लहरी मे इसी से मिलता हुआ पद्माकर का एक प्रसिद्ध छ द देखिये —

जमें तू न मोको कहू नेक न डरात हु तो
ऐस अब तो को हो हू नेकहू न डरिहौं।
कहै पद्माकर प्रचड जो परैगो तो उमडि
करि तो सा भुजदड ठोकि लरिहौं॥
चलौ चल चलौ चल विचल न बीच ही तें
कीच बीच नीच तो कुटुम्ब कों कचरि हौं।
एरे दगादार मेरे पातक अपार तोहि गगा
की कछार मे पछार छार करिहौं॥८॥

ग्वाल कवि का फुटकर कवियो पर प्रभाव—पद्माकर के पश्चात् जिन कवियो पर ग्वाल का विशेष प्रभाव पडा उनम चन्द्रशेखर बाजपयी नवनीत चतुर्वेदी, हरदेव उरदाम, लछीराम, सवक प्रमुख रूप स उल्लेखनीय हैं।

चन्द्रशेखर बाजपेयी—चन्द्रशेखर ग्वाल क समकालीन थे। इन्होंने ग्वाल कृत हम्मीर हठ' (र० का० स० १८८३ वि०) की अनुकृति पर स० १९०२ वि० म 'हम्मीर हठ का य की रचना की। दोनो का यो की हम्मीर विषयक कथा लगभग एक सी है परन्तु चन्द्रशेखर का का य ग्वाल के का य

बन पड़ा है। ग्वाल का अन्य प्रकार का प्रभाव चन्द्रशेखर वाजपेयी पर पड़ा।

नवनीत चतुर्वेदी (१९१५ १९८९ वि०)—ग्वाल के काव्य का सर्वाधिक प्रभाव चतुर्वेदी जी के काव्य मे दिखाई देता है। नवनीत जी ग्वाल के सहवासी और प्रशसक थे। अत यह प्रभावापन्नता स्वाभाविक ही दीख पडती है। नवनीत जी के अनेक छन्द ऐसे हैं जिनमे ग्वाल की भाषा उनके भाव, विषय और प्रसग तक ज्यो के त्यो गृहीत हुए हैं। ग्वाल ने कवियो द्वारा उपेक्षिता कुब्जा की हिमायत मे कुब्जाष्टक लिखा। नवनीत जी ने भी इनके अनुकरण पर कुब्जा पच्चीसी की रचना की। दोनो का प्रतिपाद्य एक ही है—कुब्जा द्वारा गोपियो को खरी खोटी सुनाना। ग्वाल के कुब्जाष्टक का प्रथम छन्द है—

> मोहि व्यभिचारिनी कमीन कहि बोलती हैं
> राखती न नेंक हू सम्हारि कें जबान को।
> दीन्हा गोपिकान ने भलो ही ताहिनो है वीर,
> खोलोंगी उन्ही के पतिव्रत के बखान को॥
> ग्वाल कवि अबलो रही ही चुप कान कानि,
> कहो का ग वारिनि क अधिक अयान को।
> जानूगी ऊचाई चतुराई उन सौतिन की
> लैंय तौ बुलाय अब सावरे सुजान को॥१॥

नवनीत जी के कुब्जा पच्चीसी क निम्नाकित छन्द स ठीक यही ध्वनि निकलती है—

> गोपिन की अकथ कहानी कहो ऊधो तोहि
> ऐसी कुन बोरनी न दखी बनितान में।
> औगुन अनेकन त पूरि रह्यो रोम रोम कहाँ
> ला गिनाऊ मन आवत गिनान म॥
> नवनीत नान्क लगावें दोष मोको हाय,
> मैं तो ब्रज पन करि राख्यो गहि पान म।
> गोकुल की गूजरी गुमाइन बनेंगी कहा
> जिन गुणबोध मूढ जाहिर जहान में॥२॥

ग्वाल की कुब्जाष्टक की निम्नाकित उक्ति को भी नवनीत जी से मिलाइए—

ग्वाल—ग्वाल कवि एक बस घाटो तो जरूर मोम
गोबर न थाप्यो औ न खोयौ मे उकर है।
घर घर द्वार द्वार गली गली फिरवैया
भोरतें घसत साझ तिनकी कहा दर है ।।३।।

–गोबर की डलिया सिर लै कब गायन म हम जात ही रु धन।
त्या नवनीत दुहावन के मिस द्वार किवार दये कब मू दन ।।
कौन दिना वन बीच कही हरि कामरी लाय बनाय्यो बू दन।
उद्धव और कहा कहिये कब खालि दये फरियान के पू दन ।।
—कुब्जा पच्चीसी ५।

दोनो की कुछ और पक्तियाँ भी अवलोकनीय हैं। दखिये—

ग्वाल—(कु जाष्टक छ० ६)
ग्वाल कवि छिपछिप अधियारी रातिन म
सोवे पति त्यागि के क्विार मु दी खोली वे।
बनन म, बागन मे, जमुना किनारन म
खेतन खरान म खराब होत डोली वे ।।६।।

नवनीत—(कुब्जा पच्चीसी छ० १० व ४)
कातिक की रनि बीच उन के बजावत ही
पहुची वन बीच कुल पतिव्रत खोय खोय।
घोय घोय डारी उन सरम धरम धीर
उडिग हवास चन्द्र चाँन्नी सु जोय जोय ।।१०।।

तथा— दौरि उठी तजिकें पति गह बढयौ रस नह मनेह सुरु पर ।
गरि दई उन लाज पै गाज कहा कहिये नवनीन निहू पर ।।
या रसरग उमग बग्गाय रही सुख पाय तब व्रज भू पर ।
भूलि गई सब कौतुक वे सुलतान के नीचें पतान क ऊपर ।।४।।

ग्वाल —(कुब्जाष्टक छ० ८)
करि सकी कस गोपिकान की बराबरी मैं
हौं न धारी सीस डाली दही के किमाम की।
मैं न काहू मानुम मो बिगरत डोली कहू,
बात हू न कीन्ही कहू हसि हसि काम की ।।
ग्वाल कवि कहू छिरी न खत खिरकन म
,घारि म न बन म न बगिया अराम की।

चाहे नरनारी मेरी यारी गिना गावर सो
चाहे घरवारी प्रानप्यारी गिना स्याम की ॥८॥

नवनीत—(कुब्जा पच्चीसी छ० ८)

यान करें अपन नितनेम जित दुख पाय मिन गिरधारी ।
त्या नवनीत दही सिर ल नित डोलत ही कुलकानि बिसारी ॥
उद्धव और कहा कहिय पर साकरी खोरि की बात जु न्यारी ।
क्या करें मरी बराबरी व नित नन्द की गोबर थापनहारा ॥८॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि नवनीत जी के 'सनेह सतक' क प्राय सभी छन्दा म ग्वाल के भाव उनकी भाषा आदि का पूरा पूरा प्रभाव है । नवनीत जी की कविता ग्वाल जी की छाया म ही रची गई है । रीतिबद्ध का य में भी नवनीत जी ग्वाल से प्रभावापन्न हैं । यहाँ हम केवल एक एक छान्द दरर अब इस प्रसग को समाप्त करेंगे ।

ग्वाल—(रसरग १।९४)

मैंन तौ कही ही वह अति सुकुमारि नारि
हारि हारि जाति हार पूजन के धारे हैं ।
तुम्हे एक लागी लाल इहाँ की बुलाइव की
यातें जाइ कहे प्रेम वचन तिहारे है ॥
ग्वाल कवि नकें चलि बठि गई सो करिकें
सीकर समूह वाके बदन पसार है ।
तारेन के वन्दन कों करत हुतो मन चद
आज चढि चद पर चमकत तारे हैं ॥१।९४॥

नवनीत—(काव्य नवनीत ४७ पृ० ६३)

आई प्रात हाइ वृषभानुजा कलिंद जाम
सखिन समेत गृह मारग सुचीन्हो है ।
नवनीत प्यारो उत आवत लख्यौ ही
तहा भई भेंट मरि हेरि हरख नवीनो है ॥
परें सेत सारी सो किनारीदार मुक्तमाल
लाल का निहारि चट घूघट सुकीन्हो है ।
दाव ही रहत चन्द्रमा तौ चाँदनी को सदा
आज चाँदनी ने चन्द्रमा कों दाबि लीन्हो है ॥४७॥

रेखाकित पक्तिया म अलकार साम्य स्पष्ट अवलोकनीय है । नवनीत जी न कवल प्रसग बदल कर ग्वाल जी की ही बात कह दी है ।

उरदाम चतुर्वेदी—ये ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी और समकालीन थे। इनकी रचनायें भी ग्वाल से प्रभावित हैं। नीचे ग्वाल और उरदाम का नेत्रा व कटी लेपन पर बना एक एक छ द उदाहरण स्वरूप दिया जाता है—

ग्वाल—(रसरग ५।१२)

मोभित सवार सने सुषमा समूल सुख
सरस रसील सरसील सील थोकदार।
चचल चनाक चार चोपन चटक भरे
चोकत चमकें चलें सजल सरोक्दार॥
ग्वाल कवि मन्म म मतग से मजे म मजे
मैंन मतवारे मृग मीनन के सोक्दार।
नूर भर नमित न मुदत न मूद नैन
नागर नवेली के नमील नैन नाक्दार। ५।११॥

उरदाम—(व्रजभारती वर्ष ७ सख्या १-२)

जीवन मुलक लहि मदन महीप जू ने
मीन छाप दर्के राख भट जुग जोरदार।
उरज बुरज दैनवासी छल रासी मनो
पीय मन चचल बनी के नीके मोरदार॥
उरदाम सिसुता सहर चढि लूटि लीनो
सरम घरम रह्यौ एकहू न छोरदार।
य न कज खजन चकोर भौंर गजन सो
करत कजाकी कजरारे नन कोरदार॥

कहने की आवश्यकता नहीं कि उरदाम ने ग्वाल के भाव को कुशलता पूर्वक निभाया है। ग्वाल की नायिका के नत्र सुदर, सरस, शील भरे किंतु चचल और चालाक हैं। वे चौंकते और चमकते हैं। उरदाम की नायिका के नेत्र छली, कजरारे कोरदार और कजाकी करने वाले हैं। उरदाम न नेत्रा को दो मटों और दो बुर्जों से उपमा दी है, ग्वाल न कवल मतग बताया है और वह भी दो नहीं एक मतग। होना द्विवचन चाहिय था।

हरदेव—ये ग्वाल के सहपाठी रह हैं। उरदाम की भाति य भी ग्वाल के प्रतिद्वन्द्वी थे। हरदेव पर ग्वाल का पर्याप्त प्रभाव है। यहाँ उदाहरण के लिय कवल एक ही छन्द लिया जा रहा है जिसम ग्वाल का भाव है। दोनों का प्रसग भी एक ही है। दखिये—

ग्वाल—(रसरंग १।४७)

गोरी गोरी ग्वालिनी हौं रूप गुन गरबीली,
अति चमकीली नहीं अंग बगरावे हैं।
महकें महल जाके तनकी सुगंध ही सों
गनिके सुमन भौर भौर दौरि आये हैं।।
ग्वाल कवि लाल जू सुनत बाल लोल भये
मुख प अनेक बार स्रम कन छाये हैं।
मानो कामदेव एक बिकसे कमल पर मुकता
अमल दल दल प बिछाय हैं।।

हरदेव—(ग्वाल कवि-प्रभुदयाल मीतल पृ० १५)

इत आपु ने म्हैन प प्यारी चढ़ी उत आपुने म्हैल चढ़े जसुदा के।
दृष्टि सो दृष्टि गई मिलि यो उमड़े घुमड़े मनो मेह मुधा के।।
सोह रहे कविया हरदव जू सज्जित साज सब बसुधा के।
हैं मुख प स्रम के किनुका मनों चन्द के मंडल बिन्दु सुधा के।।

ग्वाल के छन्द मे श्रवण मात्र से ही उत्पन्न श्रमकणो का वर्णन है जब कि हरदेव के छन्द म श्रमजन्य स्वेद वर्णित है। सरसता म ग्वाल का छन्द हरदेव के छन्द से बढ कर है। ग्वाल की भाषा का प्रवाह भी हरदव स अधिक स्फीत है।

सेवक—ये ग्वाल के परवर्ती कवि हैं। इन का एक छन्द है जिसम किसी मुग्धा की उक्ति है। मालिनि बला के फूल देती है, किन्तु हाथ म आते ही वे जवा कुसुम बन जाते हैं। नायिका आश्चर्य चकित है। छन्द यह है—

दबे सुगन्धित बल के देत भये कर लेत जपा दल कसे।
ज्यो महि डारे पर पग पीठि धरे रंग सोन जुहीन म जसे।।
सेवक' हामी लगी उर झारि निहारि लख प लग सब वसे।
टौने किये किधौ लौने अब य न्ये नये मालिनि फूलधौ कसे।।[1]

सेवक के इस छन्द म ग्वाल के निम्नांकित छन्द का भाव ध्वनित है। तद्गुण अलंकार भी है। देखिये—

(रसिकानन्द—४।१०८)

फूली कुंज क्यारिन म मालती महक भरी
पानि में लियें ते दुति चंपक की लीनी क्यो।

---

[1] ग्वाल रत्नावली—कवि किंकर, सन १९४५ ई० संस्करण इलाहाबाद भूमिका भाग।

सग की सहेनिन की कटिहि निहारि लेत
मेरी दिनरात होत जात कटि छीनी क्यो ॥
'ग्वाल कवि' अधिक अनमन दवाइ हाल
माल कुम्हलानी पैं सुगध रस भीनी क्या ।
देखि नयनी म राज राजिय दुनी म वीर
मेरी नथनी म चुनी तीन पोहि दीनी क्यो ॥

सेवक ने ग्वाल के भाव को लेकर सुन्दर कल्पना की है। सेवक के छन्द का प्रसग दूसरा है, कल्पना भी दूसरी है। परन्तु इसम स न्देह नही कि सेवक का छन्द ग्वाल के छन्द से उत्कृष्ट बन पडा है।

लछीराम—ग्वाल के प्रशमक लछीराम न कई छन्दो म उनके भाव को ग्रथित किया है। यहाँ ग्वाल और लछीराम का एक समान छद उदाहरण स्वरूप दिया जा रहा है—

ग्वाल—(रसरग)

प्यारी परभात परयक त निसक ए री
उठि उठि कहै कम बचन बिबम के।
फेरि आय आलिन की अवली जगाय लेत,
तोहू जमुहात मग धारे पगखस के ॥
ग्वाल कवि करन उचाय उलटाय। पाछे
कध ते मिलाय तन नोरत सरस के।
मानो कामदेव ने मयक तें मिलाय करि
दिय हैं वकसि सरकस तरकस क ॥

लछीराम—(ग्वाल रत्नावली—भूमिका भाग)

प्यारी परभात मद मद मुसकात आजु
आरस वलित चली उतरि अटारी तें।
कवि लछिराम' कल कचुकी मे बक लट
बधि गई निसि म असम गुनतारी तें ॥
करन दुहूँ तें तिन्हे बाहर करन लागी
छल छटकीलो छवयो छरकि छटारी तें।
बाजीगरी खेलिकैं जलूम हित मानों कढे,
कुडलित नाग नट मदन पिटारी तें ॥

ग्वाल उत्प्रेक्षा म अद्वितीय थे। वे चमत्कार के स्मरण करके उन्होंने उत्प्रेक्षा बाँध दी। जमुहाती हुई

पीछे से जाकर कंधे से मिला कर शरीर तोड़ने लगी है। कवि कल्पना करता है कि मानो कामदेव ने चन्द्रमा से मिला कर दो चमन तरकश दे दिये हैं। लछीराम ग्वाल के छन्द के भाव को ज्यों का त्यों ग्रहण करके एक दूसरी स्थिति की कल्पना कर लेते हैं कि नायिका की टेढ़ी वेणी-लट कंचुकी में बँध गई है। नायिका दोनों हाथों से बालों को निकालने लगी तो ऐसा लगा मानो कुंडली मारे हुए दो नाग बाजीगरी दिखा कर जुलूस के लिये पिटारी से निकले हों"। उत्प्रेक्षा अनूठी है सटीक है। साथ ही भाषा सौष्ठवपूर्ण और स्निग्ध है। कहना व्यर्थ है कि लछीराम ने गृहीत भाव को और भी चमका दिया है।

निष्कर्ष—रीति निरूपण में ग्वाल हिन्दी के जिन आचार्यों से अधिक प्रभावापन्न हैं, इनमें वरीयता से केशवदास, कुलपति मिश्र हरचरण दास जसवंत सिंह मतिराम और भिखारीदास के नाम प्रमुख हैं। शृंगारिक रचनाओं में उन पर सूरदास, केशवदास मतिराम भिखारीदास और पद्माकर का आंशिक प्रभाव है। वीर काव्य और नाराशंसा में वे भूषण से अधिक प्रभावित हुए हैं।

मौलिकता—साहित्य में मौलिकता से अभिप्राय केवल 'नवीन उद्भावना' का नहीं बल्कि दृष्टिकोण अथवा विवेचन की नवीनता ही उसके लिये अपेक्षित रहती है। भावसाम्य या प्रभाव ग्रहण मात्र से ही किसी कवि की मौलिकता पर आंच नहीं आती। भाव और विचार सार्वजनिक सम्पत्ति हैं। इनकी अभिव्यक्ति ही कवि की अपनी होती है कवि में पूर्ववर्ती आचार्यों और कवियों के गृहीत भाव या विचार उसके आत्म के अंग बन कर अभिव्यक्त होते हैं। ऐसी दशा में उसकी मौलिकता हीन नहीं बनती। बहुत सी दशाओं में विविध कारणों से दो कवियों में भावसाम्य मिल जाता है। वहाँ इसे प्रभाव ग्रहण नहीं माना जा सकता। समान सामाजिक परिस्थितियाँ समान वातावरण समान संस्कार समान विचार पद्धतियाँ समान भावों को उद्बुद्ध करने में प्रमुख रूप से सहायक रहती हैं। एक ही कोटि की प्रतिभाएँ एक सी मानसिक परिस्थितियों में एक विषय वस्तु पर एक समान सोचती हैं। रीतिकालीन कवियों की विविध परिस्थितियाँ उनके संस्कार, उनकी विचार पद्धति, उनका वातावरण उनके काव्य विषय और काव्य सामग्री आदि सभी एक समान थे। अतः यह स्वाभाविक ही था कि उनमें भावसाम्य होता। ग्वाल कवि भी इसके अपवाद नहीं थे। उनके समक्ष संस्कृत के काव्य शास्त्र के जो आदर्श ग्रन्थ विद्यमान थे, वे ही रीति के अन्य कवियों के भी आधार थे। अतः इनके रीति

निरूपण म केशव आदि पूववर्ती आचार्यों का सा विवेचन साम्य मिलता है। पर तु इससे ग्वाल की मौलिकता म किसी प्रकार की कमी नहीं आती। क्यों कि अभिव्यक्ति उनकी अपनी है। ठीक इसी प्रकार ग्वाल की कविता मे मिलने वाले इतर पूववर्ती कवियो के भाव साम्य के लिये उनकी मौलिकता पर दोषा रोपण नही किया जा सकता। अ य निपुण कविया की भांति ग्वाल ने भी अपने पूववर्ती का य का गम्भीर अध्ययन करके कुछ सस्कार अर्जित किये थे। मनन द्वारा पूववर्ती भावा और विचारा को उन्होंने पचा कर अपने आत्म का अग बना लिया था और अब वे उनके लिये बाह्य नहीं रह गये थे। ऐसी परिस्थिति म ग्वाल के कतिपय छ दा मे पूववर्ती कवियों के छ दा का यत्किंचित जो भाव साम्य पाया जाता है, उसके लिये वे सवथा साम्य ही माने जाने चाहिए। उनम जो कुछ प्रभाव ग्रहण की मात्रा है वह भी उनके आत्म का अग बन कर अभिव्यक्त हुई है। ग्वाल सस्कृत और हिन्दी के पडित थे। दोना साहित्यों मे उनकी पारगति थी। अत यह कहना कि उन्होंने जान बूझ कर किसी का भाव ग्रहण किया है उनके प्रति न्याय नही होगा। एक समान प्रसग और एक समान मानसिक स्थिति म पूववर्ती काव्य की भाषा और भाव की यत्रतत्र प्रतिध्वनि जाने अनजाने उनकी रचनाओ मे हुई है। पर तु ऐसे छन्दा की सख्या अत्यल्प है। ग्वाल ने बहुत लिखा है अत इसम इतना अल्प भाव साम्य और प्रभाव ग्रहण नगण्य ही माना जायगा। उन्होंने बडी सचाई के साथ कवि दपण म लिखा भी है—

> ज बनन बहु करत हैं ते काहू इक ठौर।
> चूक गये तो चूक उहिं सब म चूक न दौर ॥१।१२॥

> तथा—तुरी को चढ या जमै तुरी को चलावै नित्त,
> जा प गिरयो कबहू तो इलम घटै नही।
> तान को मिलया जैस तानन्नु मिलायो कर,
> कबहू मिला न तो प्रमान सु हट नही ॥
> ग्वाल कवि पडित परम तापै काहू सम
> आई एक बात न तो पडित लट नहीं।
> कवि के कवित्त मुक्ताहल से साचे लाख,
> तामे एक झूठो मिल पानिप घटै नही ॥१।१३॥

ग्वाल प्रथमत आचाय थे और तदनन्तर कवि। अत उनके कवि पर उनका आचाय पदे पदे आरूढ मिलता है। यही कारण है कि आनुप्रासिक पद योजना और अनूठी उत्प्रेक्षाओ के चमत्कार प्रदशन के भार स उ

आधारा त दबी हुई है। इतने पर भी वह जीवत और प्रभावशाली है। वे प्रतिभावान् और साहित्य निपुण कवि थे। उनकी अनुभूति समृद्ध थी। उनम आत्म तत्व भरापूरा था, अत याह्य अवलम्ब ग्रहण करने की यहाँ आवश्यकता ही नही थी। उन का काव्य केशव, बिहारी, मतिराम, देव, भिखारीदास, पद्माकर आदि के काव्यों की भाति ही मौलिक है।

रीति निरूपण क क्षेत्र म ग्वाल का प्रभाव हरदेव आदि दो चार कवियों पर ही पडा। इसका कारण यह है कि उनके ग्रन्थ अनुपलब्ध रहे हैं। उनका दुलभ ग्रन्थ साहित्यानन्द' हिन्दी साहित्य की अमूल्य रत्न निधि है जो सौभाग्य से अब उपलब्ध हुआ है। पीछ प्रभाव परीक्षण म लिखा जा चुका है कि इनकी कविता से पद्माकर जस रससिद्ध रीति कवि प्रभावापन्न हैं। इनसे प्रभावित उनके समसामयिक और परवर्ती कवियों की एक लम्बी सूची है जिसम नवनीत चतुर्वेदी और लछिराम जसे पडित भी आते हैं। ग्वाल की कविता ने वत्तमान मे भी व्रज भाषा के बीसियों कवियों को प्रभावित कर रखा है। ग्वाल की लोकप्रियता का रहस्य उनके काव्य की मौलिकता ही है।

४ हिन्दी साहित्य म ग्वाल का स्थान

समस्त हिन्दी साहित्य म ग्वाल का स्थान निश्चित करना सहज सम्भाव्य नही है। ग्वाल मूलत रीति कवि हैं। अत उनका साहित्य मुक्तक काव्य की श्रेणी म आता है। रीति काव्य की दो मूल प्रवृत्तियाँ हैं—१ रीति विवेचन, और २ शृगारिकता। इसके अतिरिक्त ग्वाल ने वीर काव्य की रचना भी की है। भक्ति, नीति और वराग्य उनके आनुषगिक काव्य विषय रहे हैं तथा एक काव्यानुवाद भी उन्होंने प्रस्तुत किया है। भक्ति और वराग्य उनके प्रमुख प्रतिपाद्य विषय नही हैं, अत इन प्रवत्तियो म उनकी तुलना करना उचित नही है। इस दृष्टि से उक्त सजातीय साहित्य के अन्तगत ही उनका स्थान निर्धारित करना समीचीन होगा। अतएव ग्वाल का स्थान हम हिन्दी के रीति आचार्यों, शृगार मुक्तककारो वीर काव्यकर्त्ताओ नीतिकारो और अनुवादको की परम्परा म ही निश्चित कर सकते हैं।

भारतीय साहित्यशास्त्र को हिन्दी रीति कवि कोई मौलिक योग नही दे सके। इस सम्बन्ध म आचाय रामचन्द्र शुक्ल की धारणा पर दृष्टिपात करना आवश्यक है। वे लिखते हैं — हिन्दी म लक्षण ग्रन्थो की परिपाटी पर रचना करने वाले जो सकडो कवि हुए व आचाय कोटि में नही आ सकते। व वास्तव म कवि ही थे। उनम आचायत्व के गुण नहीं थे। उनके अपर्याप्त लक्षण साहित्य शास्त्र का सम्यक बोध कराने म असमथ है।' आग चल कर

वे लिखत हैं कि 'अपनी ओर से उन्होंने न तो अलकार क्षेत्र म कुछ मौलिक विवेचन किया न रसक्षेत्र मे।'[1] डा० नगेन्द्र ने भी आचाय शुक्ल की इस धारणा की पुष्टि की है।[2] इस क्षेत्र म ग्वाल ने मौलिक उद्भावनाएँ तो नही की, परन्तु जसा कि हम इनके रीति निरूपण और आचायत्व के प्रसग म निष्कष निकाल चुके हैं व एक ममय आचाय हैं और उन्होंने आचायत्व कम को अत्यन्त गम्भीरता पूवक ग्रहण किया और मनोयोग पूवक निभाया है। साहित्य शास्त्र के सर्वांग पर इन्होंने बहुत कुछ लिखा और विशदता एव स्वच्छता पूवक विवेचन प्रस्तुत किया है। रस विवचन से पहल मनोवैज्ञानिक आधार पर भाव-वणन की वरीयता, रस सिद्धान्त की अनुशीलनात्मक और खडन मडनात्मक विवेचना भक्ति सम्प्रदाय के सख्य दास्य और वात्सल्य रसो की हिन्दी मे प्रथम वार विवृति अलकार सम्बन्धी नवीन दृष्टि, शास्त्रीय कसौटी पर कस कर हिंदी के पूववर्ती कवियो के काव्य दोषो का सप्रमाण निदर्शीकरण लम्बी-लम्बी गद्य वार्ताओ और टीकाओ का सिद्धात विवेचन म प्रचुरता के साथ प्रयोग आदि ग्वाल के आचायत्व कम की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनके सवाग्त दशन केशव चिन्तामणि, देव मतिराम भिखारी दास जनराज, कुलपति मिश्र गोविन्द, प्रतापसाहि आदि के निरूपण म भी नही मिलते। गद्य का प्रयोग कुलपति मिश्र भिखारीदास गोविन्द, प्रताप साहि आदि कतिपय आचार्यों न यो किया है परन्तु बहुत सीमित रूप म। पिगल का ग्वाल के अतिरिक्त बहुत ही कम कवियो न निरूपण किया है इस कथन को आवत्ति करन से हमारा अभिप्राय इस बात पर बल देने का है कि ग्वाल की दृष्टि और विवेचन पद्धति सवथा नवीन है और वनानिक, अत मौलिक कहलाने की अधिकारिणी है। यह एक सफल आचाय की सूझ बूझ मात्र की ही परिचायक नही बल्कि उसकी विषय म गहरी पठ पाडित्य प्रखरता और निर्भीक आलोचना शक्ति पर भी प्रकाश डालने को पर्याप्त है। आचाय प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र[3] और डा० महेन्द्र कुमार[4] की तथ्यपूण

१ हि० सा० का इतिहास पृ० २२७। २ देव व उनकी कविता पृ० ३०५।

३ 'कवि रूप म ग्वाल कवि का महत्व चाहे उतना न हो पर रीति ग्रथकार के रूप मे इनका पूरा महत्व माना जाना चाहिए। हिन्दी साहित्य का अतीत, द्वितीय खण्ड, पृ० ६१०।

४ यह कहने मे सकोच नहीं होता कि आचायत्व निरूपण की दृष्टि से ये चिन्तामणि कुलपति आदि की परम्परा के कवि हैं।' हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास षष्ठ भाग पृ० ९८

निष्पत्तियो मे मेरी ग्वाल विषयक उक्त प्रतिष्ठापनाओं की अनन पुष्टि हो जाती है।

हिन्दी म आचार्यों के तीन वग मिलत हैं—(१) मम्मट और विश्वनाथ आदि की शैली पर काव्य के दशाग का विवचन करने वाले आचाय, (२) शृ गार तिलक और रस मजरी आदि के अनुसार केवल शृ गार रस और उस की प्रधान आलम्बन नायिका का वर्णन कर न वाले आचाय और (३) चन्द्रालोक तथा कुवलयानन्द आदि के आधार पर अलकार मात्र का निरूपण करने वाले आचाय। ग्वाल न काव्य के सर्वांग का विवेचन किया है, अतएव स्पष्टत ही उनका स्थान पहले वग के अ तगत आता है। इस वग म उनक प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी आचाय हैं—केशव चिन्तामणि कुलपति मिश्र, पदुमनदास देव, कुमारमणि श्रीपति, सोमनाथ भिखारीदास, जसराज जगतसिंह, गोविन्द और प्रतापसाहि।

केशव को संस्कृत रीति शास्त्र को हिन्दी म उतारन का ऐतिहासिक श्रेय प्राप्त है। इन्होंने अलकार और रस सम्प्रदायो को हिन्दी म प्रतिष्ठापना की। ग्वाल ने अनेकत्र इनकी मान्यताओ को प्रमाण रूप म उल्लख करते हुए उनका आभार स्वीकार किया है और अन्यत्र इनक छन्दो को शास्त्रीय पद्धति से सदोष ठहराते हुए निर्दुष्ट भी बना कर दिखाया है। इससे सिद्ध होता है कि ग्वाल म केशव के पांडित्य क प्रति मान्यता भी है और उनक कवित्व के प्रति आलोचक और सुधारक दृष्टि भी। केशव क लक्षण जहाँ अस्पष्ट और अस्वच्छ है वहाँ ग्वाल के स्पष्ट और स्वच्छ। ग्वाल का विशद निरूपण तथा गद्य प्रयोग उसे केशव से और ऊ चा उठा दत हैं। पांडित्य म दोनो लगभग समान रूप म पारगति रखत हैं। परन्तु ग्वाल न आचाय धर्म को केशव से कहीं अधिक गम्भीरता स निर्वाह किया है।

चिन्तामणि ने दो चार स्थानो पर गद्य का आश्रय लेकर स्वनिर्मित लक्षणोदाहरणो का समन्वय मात्र दिखाया है ग्वाल की भांति शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत नही किया। चिन्तामणि की अधिकाधिक सामग्री संस्कृत का प्राय दुरूह अनुवाद मात्र है। अत लक्षण और उदाहरण स्वच्छ नही है। परन्तु चिन्तामणि का मम्मट की पद्धति पर किया गया प्रथम प्रयास महत्व रखता है। ग्वाल क युग तक यह परम्परा पर्याप्त मज चुकी थी। अत यदि ग्वाल [illegible]तस अच्छा विवचन कर सके, तो विशष आश्चय की बात नही। चिन्तामणि [illegible]नि क शैशव काल क आचाय है जबकि ग्वाल उसक प्रौढ़काल के। जो भी [illegible] ग्वाल उनसे बहुत आगे हैं।

मम्मट की आधार परम्परा म कुलपति मिश्र ने आचायत्व को यथेष्ट वित गम्भीरतापूवक ग्रहण किया, गद्य का भी थोडा थोडा आश्रय लिया और शास्त्रीय विवेचन भी किया। परन्तु यह ग्वाल की तुनना मे परिमाण और गुण म कुछ-कुछ हल्का है। कुनपति ने भी ग्वाल की भांति मम्मट और विश्वनाथ आदि आचार्यों पर आक्षेप किय है। परन्तु दोनो के ही य आक्षेप प्राय विवादास्पद और अव्यवस्थित हैं। ग्वाल न कुलपति के सिद्धान्ता के प्रमाणस्वरूप अनेकत्र उल्लेख किये हैं और उनक रस सिद्धान्त का तकपूण खण्डन करके अपने मत की प्रतिष्ठा भी की है। दोना ही शास्त्रविद् पण्डित है। दोना क लक्षण और उदाहरण स्वच्छ हैं। परन्तु एक ता ग्वाल का विषय क्षत्र व्यापक है, दूसरे उन्हाने विस्तृत गद्य का अपने विवेचन में लाभ उठाया है, तीसरे उन्होने भक्ति सम्प्रदाय तक क रस सिद्धान्त को अपनाकर शास्त्र को अद्यतन बनाया और चौथे पिंगल का भी उन्हाने विशद विवेचन किया है। कुल मिला कर ग्वाल म कुलपति से अधिक विशेषताएँ हैं। हिन्दी को उनकी दन भी कुलपति स निश्चित रूप से अधिक है।

पदुमनदास रीति के सामान्य विविधाग निरूपक आचाय हैं। इनका रीति निरूपण अत्यन्त सक्षिप्त और शास्त्रीय विवचन सामान्य कोटि का है। सम्पूण विवेचन काव्य मजरी' क ७१६ दोहो मे समाप्त हो गया है। गुण, परिमाण और विवचन की शास्त्रीय पद्धति क निर्वाह म वे कहीं भी ग्वाल के समकक्ष नही ठहरते।

विषय-क्षत्र की दृष्टि से देव ग्वाल की तुलना म आने योग्य हैं। परन्तु आचाय कम को ग्वाल के समान गम्भीरता और मनोयोग पूवक देव ग्रहण नही कर सक। ग्वाल पाडित्य के धनी आचाय है तो देव सूक्ष्म एव गहरी रस चेतना के अधिकारी आचाय देव म कहीं-कहीं निरथक विस्तार का आग्रह है, जबकि ग्वाल जो है उसी की प्रौढ विवेचना करके सिद्धान्ता को स्थिरता देने के पक्ष म है।' ग्वाल आचाय पहले हैं और तदनन्तर कवि, देव कवि पहले हैं और तत्पश्चात् आचाय। आचाय रूप म ग्वाल देव स पर्याप्त आग हैं।

चिन्तामणि और कुलपति मिश्र क पश्चात् शास्त्रीय विवेचन की शुद्धता के विचार से कुमारमणि का नाम प्रथम आता है। इनकी भाषा ग्वाल की भाषा म अधिक सरल और स्पष्ट है। भल ही इनम ग्वाल की सी मौलिक धारणाओं का अभाव है। परन्तु विवचन म भाषा वविध्य, जो कहीं-कहीं ग्वाल म परिलक्षित है कुमारमणि म देखन को नहीं मिलता। परन्तु

का विषय क्षेत्र कुमारमणि से अधिक विस्तृत और व्यापक है । ग्वाल का विवेचन कुमारमणि के विवेचन स अधिक विशद और प्रौढ है । जो सम वयक दृष्टि ग्वाल के विवचन मे पाई जाती है, कुमारमणि म उसका अभाव है ।

कुलपति मिश्र के पश्चात् ग्वाल के समान अत्यन्त पाण्डित्यपूर्ण विवेचन करने वाले और पूववर्ती कवियो तक के उद्धरण देने म सकोच न करने वाले आचाय श्रीपति आते हैं । श्रीपति म ग्वाल क समान ही पाडित्य प्रतिभा, साहित्य निपुणता आलोचना शक्ति और निणय दन का साहस मिलता है । इनका विषय क्षेत्र ग्वाल के समान ही व्यापक है परन्तु ये पिंगल नही लिख पाये । विवचन विस्तार और समन्वय की दृष्टि भी ग्वाल को इनसे ऊँचा उठा देती है ।

गद्य का यत्र-तत्र आश्रय लकर लक्षण उदाहरण लिखने वाले आचाय सोमनाथ शास्त्र का सम्यक विवेचन प्रस्तुत नही कर सके । उनका उद्देश्य सुकुमार बुद्धि पाठकों के लिये काव्य शास्त्रीय सामग्री प्रस्तुत करना था, न कि गम्भीर विवेचन । इनकी काव्य शास्त्र सामग्री कही कही अत्य त सक्षिप्त और अपूर्ण रह गई है । पर तु भाषा सरल और स्वच्छ है । दोष प्रकरण नही के बराबर है । रस प्रकरण विशद है ।, विषय क्षेत्र ग्वाल क समान व्यापक है और सोमनाथ ने शास्त्र के दशाग का वणन किया है । पिंगल निरूपण नहीं हुआ । ग्वाल की विशेषताए इनम देखने को नही मिलती । पाडित्य की दृष्टि स भी ग्वाल स इनकी तुलना नही बठती ।

भिखारीदास ने का य शास्त्र क विवेचन को गम्भीरता पूवक ग्रहण करके कुलपति मिश्र और श्रीपति की शास्त्रीय विवचना पद्धति को आग बढाया । इन्होने काव्य के व्यापक क्षेत्र म काय किया और सफलता पूवक गद्य वार्तिकों का आश्रय लकर विवेचन को स्पष्ट किया । दास के आचायत्व की विशेषताएँ हैं —मौलिक भावनाओ की प्रस्तुति का प्रयास, हिन्दी भाषा का आदश सामने रख कर ग्र थ निर्माण व्यावहारिक विवेचन और तक सम्मत धारणायें । ग्वाल म भी कुछ ऐसी ही विशेषताएँ मिलती हैं । दास काव्य का लक्षण नहीं दे पाये । इनका शक्ति क प्रसग भी अपूर्ण है । इनकी कुछ विषय सामग्री अपूण है और कतिपय स्थलो पर भाषा शथिल्य भी उनक विवेचन म पाया जाता है । ग्वाल की भाति का य शास्त्रीय सिद्धान्तो का य परिपक्व विवेचन नहीं कर पाये । परन्तु इन्होने पिंगल को अवश्य ग्वाल की भाति विशद विस्तृत रूप से निरूपित किया है । दास का छन्दोऽणव पिंगल महत्वपूर्ण है । गद्य की विशदता भाषा की स्पष्टता, शास्त्रीय खडन मडन पद्धति

का आद्योपान्त निर्वाह् आदि कुछ विषयो म ग्वाल कवि दास जी से कुछ आगे हैं। परन्तु दास क कुछ सिद्धान्तो के उल्लेख करके ग्वाल ने उनकी श्रेष्ठता स्वीकार की है। अत ग्वाल क आग दास के महत्व को कम नही किया जा सकता। दोनो ही अपने अपन युग के प्रसिद्ध रीति ग्रन्थकार हैं।

जनराज साधारण आचाय हैं। इनका विषय क्षेत्र ग्वाल के समान ही व्यापक है। रीति का विवेचन सामान्यत परम्परा के निर्वाहार्थ ही हुआ है। इनके शास्त्र निरूपण मे शास्त्रीय तकपूण विवेचन का प्राय अभाव है। इन्होंने कोई नवीन धारणा स्थापित नही की। ग्वाल क शास्त्रीय निरूपण की विशेषतायें इनम दुलभ हैं।

जगतसिंह का रीति निरूपण सामान्य कोटि का है। का यागों म दोष प्रकरण किंचित विस्तार के साथ और शेष अगा का साधारण वणन हुआ है। ग्वाल क स व्यवस्थित शास्त्रीय विवेचन का इनम अभाव पाया जाता है। परन्तु इनकी भाषा ग्वाल की भाषा से अधिक सरल और स्पष्ट है। परन्तु कई क्षेत्रा म ग्वाल इनमे आग हैं।

गोविन्द (रसिक गोविन्द) आचायत्व की दृष्टि से ग्वाल के अग्रवर्ती हैं। साहित्यशास्त्र पर इनका अच्छा अधिकार है। इनके अधिकाश लक्षण गद्य म होन के कारण स्वच्छ और सुकुमार बुद्धि के पाठको के उपयुक्त हैं। इन्होने शास्त्र को अत्यन्त सक्षेप म निपुणतापूवक बोध गम्य बनाने का सफल प्रयास किया है। ग्वाल की भाति ये गम्भीरतापूवक शास्त्रीय ऊहापोह क पचडे म नही पडे। इनके उदाहरण ग्वाल के उदाहरणो से सुन्दर बन पडे हैं। ग्वाल की भाति इतर पूर्ववर्ती प्रसिद्ध कवियो के छन्दो को इन्होन उदाहृत करने म सकोच नही किया। काव्य क दशाग का इन्होंने एक सफल काव्य पण्डित की भाति विवेचन किया है। गोविन्द कवि पहले है और आचाय बाद मे और ग्वाल मूलत आचाय है तदन तर कवि। कुछ स्थलों को गोविन्द चलता कर गये हैं, जबकि ग्वाल ने प्रत्यक विषय को गम्भीर विवेचन का विषय बनाया है।

प्रतापसाहि उत्कृष्ट कोटि क रस वादी कवि और सामान्य कोटि के आचाय हैं। ये काव्य शास्त्रीय विषय से भलीभाति अवगत थे। इनके अधिकाश उदाहरण शास्त्र सम्मत विशुद्ध और काव्य क उत्कृष्ट आदश हैं। ग्वाल की सी विवेचन प्रतिभा और विषय वणन की विशदता का इनम अभाव है। प्रतापसाहि का महत्व उनकी सूक्ष्म रग चेतना क कारण अधिक है। काव्य के अ य क्षेत्रा म उनकी गति है, गहरी पैठ नही। इनका शास्त्र गम्भीर

विवेचन का थोड़ा बहुत आभास मात्र देता है। तथापि इन का आचार्यत्व प्रभावित करने वाला है, परन्तु ग्वाल के आचार्यत्व के आगे कुछ हल्का पड़ता है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर निश्चयपूर्वक यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि हिन्दी में आचार्य की जो मान्य परिभाषा और विशेषताएँ एक उच्च कोटि के रीति ग्रन्थकार के लिये विद्वानों ने निर्धारित की हैं, वे समग्र रूप में ग्वाल में विद्यमान हैं। अब तक खेद का विषय यह रहा है कि इनके ग्रन्थों के अनुपलब्ध रहने से इनके आचार्यत्व का सम्यक परीक्षण नहीं हो पाया और इस रूप में आज से पूर्व उनका काव्य अभी प्रस्तुत नहीं हो सका। सभी दृष्टियों से अध्ययन करने पर वे हिन्दी के आचार्यों की प्रथम पंक्ति में बैठने के अधिकारी हैं।

कवि के रूप में—शृंगारिक मुक्तककारों की परम्परा में विद्यापति, केशव, बिहारी, देव, मतिराम, घनानन्द और पद्माकर प्रमुख कवि हैं। इनमें सूरदास को भी लिया जा सकता है परन्तु दृष्टिकोण काव्य प्रेरणा तथा प्रतिभा के धरातल की दृष्टि से विद्वानों ने उन्हें इस श्रेणी से पृथक रखना ही उचित समझा है। विद्यापति मानव शृंगार, विशेषकर मानव सौंदर्य के कवि हैं। उनमें सौंदर्य की सूक्ष्म और रसमय चेतना की व्याप्ति है। इस नाते उनकी तुलना में ग्वाल आते ही नहीं। देव में आत्म रस और नीति तत्व प्रभूत मात्रा में मिलता है। इनमें भाषा और भाव का मार्मिक संगीत भी प्रचुरता से पाया जाता है। ग्वाल उक्ति-वैचित्र्य प्रधान कवि हैं। उनमें देव की कविता की आत्म निलयता, आत्म रस, सांगीतिकता, भावुकता आदि नहीं मिलती। केशव और बिहारी दो ऐसे कवि हैं जिनकी कविता अत्यन्त लोकप्रिय रही है। दोनों में ही चमत्कार प्रियता के प्रति विशेष रुचि है। इस नाते ग्वाल की तुलना इन दोनों से की जा सकती है। परन्तु रसाद्रता, तन्मयता एवं द्रवणशीलता में ग्वाल केशव के समकक्ष और बिहारी से हलके बैठते हैं। उक्ति वैचित्र्य में ग्वाल दूर की कौड़ी लाते हैं और अनुप्रास एवं उत्प्रेक्षा के धनी भी हैं। इस क्षेत्र में वे केशव और बिहारी से आगे हैं। काव्य शिल्प की दृष्टि से ग्वाल का पक्ष सामान्यतः उक्त दोनों कवियों के समान ही प्रबल है। यहाँ बिहारी की कला केशव और ग्वाल दोनों से अधिक सचेष्ट है। सौंदर्य के सूक्ष्म तत्वों को पकड़ कर शब्द बद्ध करने में ग्वाल बिहारी की भाँति ही सक्षम हैं परन्तु ग्वाल सौन्दर्य में उतने रस मग्न नहीं हैं, जितने बिहारी। दोनों की सामासिक शैली

म सौन्य के पूण चित्र उतारने मे बिहारी जितने कुशल है, ग्वाल कवित्त और सवयो म भी उतनी कुशलता से सौन्य को नही बाध पाय। केशव के समान ग्वाल म आलकारिक अनौचित्य नही दिखता। पर तु वे केशव की तुलना के रसिक नहीं ठहरते। इन दोनो कवियो के कवित्व पर उनका आचाय सवत्र आरुढ रहता है। चमत्कार प्रियता के लोभ म केशव की भाति ग्वाल ने भी कही कही उक्ति की वक्रता की उपक्षा कर दी है।

देव प्रेमानुभूति की त मयता के रसन कवि हैं। उन के का य की आत्मा बिहारी क का य की आत्मा से भी अधिक समृद्ध है। ग्वाल यहा देव की तुलना मे पर्याप्त हलके पडत हैं। न तो उनकी भाषा देव की भाषा के समान प्रौढ है और न उनका शिल्प ही देव के समान विकसित और सामज स्यमय है। ग्वाल मे नाद सौदय और सगीतात्मकता तो है पर तु देव के समान औज्ज्वल्य और गतिमय प्रवाह का उनके का य म अभाव है। जहाँ ग्वाल की दृष्टि वस्तु परक है, वहाँ देव की भाव परक। अत ग्वाल की सौदय चेतना देव की सौदय चेतना के समान पूणत रस मग्न नही है। निश्चय ही ग्वाल की कविता देव की कविता की तुलना म पर्याप्त हलकी है।

मतिराम का भाव पक्ष ग्वाल के भाव पक्ष स अधिक सबल है। भाषा की प्रौढता और स्वच्छता भी मतिराम की कविता मे ग्वाल की कविता से कही अधिक है। मतिराम भाव गाम्भीय म भी ग्वाल स बढ़े चढ़े हैं। उधर ग्वाल का कलापक्ष मतिराम के कलापक्ष से भारी बैठता है। मतिराम का शिल्प ग्वाल के शिल्प से अधिक मँजा हुआ है। उक्ति वचित्र्य के दोनो ही कवि धनी है। पर तु कल्पना की उडान मे ग्वाल मतिराम को पीछ छोड जाते हैं। ग्वाल की भाषा म नाद झकृति और सगीतात्मकता मतिराम से अधिक बढी चढी है।

घनान द ने प्रेमानुभूति की गहराइया म डूब कर कविता की है। उन की अनुभूति की सचाई और आत्म रस ग्वाल म तो क्या पूरे रीति काव्य म ही विरल है। घनान द का सा आत्म तत्व ग्वाल म शायद ही कहीं मिले। लाक्षणिक वक्रता तीव्रता, त मयता और अभूतपूव सम्प्रेषणीयता, जो घना न द के काव्य के निजी गुण हैं ग्वाल के काव्य म ढूँढने स नहीं मिलत।

पद्माकर भावानुभूति के गम्भीर कवि हैं। आत्म तत्व की व्यापकता, अनुभूति की सचाई, स्निग्धता और कोमलता में ग्वाल उनस पिछडे हुए हैं। पद्माकर की कविता का कलापक्ष ग्वाल की कविता क

परिशिष्ट [ख]

हिन्दी ग्रन्थ सूची

आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२ ई० संस्करण इलाहाबाद।
उर्दू साहित्य का इतिहास	सैयद ऐहतिशाम हुसन, १९५४ ई० संस्करण।
उर्दू साहित्य परिचय	प० हरी शंकर शर्मा प्रथम संस्करण, आगरा।
उर्दू काव्य की एक नई धारा	उपेन्द्र नाथ अश्क' १९४१ ई० इलाहाबाद।
उद्धव शतक	बा० जगन्नाथ दास रत्नाकर, १९४९ ई०।
उन्नीसवीं शताब्दी	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय प्रथम संस्करण १९६३ ई० इलाहाबाद।
कविता कौमुदी (प्रथम भाग)	प० राम नरेश त्रिपाठी छटा संस्करण स० १९९० वि०।
कविवर पद्माकर और उनका युग	डा० ब्रज नारायण सिंह, प्रकाशन अनुसन्धान प्रकाशन प्र० संस्करण १९६६ ई०, कानपुर।
कविता मे प्रकृति चित्रण	डा० रामेश्वरप्रसाद खण्डेलवाल १९५४ ई०।
काव्य कल्पद्रुम (प्रथम भाग रस मंजरी)	सेठ कन्हैया लाल पोद्दार स० २००९ वि०, मथुरा।
काव्य कल्पद्रुम (द्वितीय भाग अलंकार मंजरी)	सेठ कन्हैया लाल पोद्दार स० २००९ वि०, मथुरा।
काव्यानुशीलन	डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, रतन प्रकाशन मन्दिर प्रथम संस्करण आगरा।
काव्य कानन	राजा चक्रधर सिंह, प्र० साहित्य समिति रायगढ़ प्रथम संस्करण स० १९९३ वि०।
काव्य दर्पण	प० राम दहिन मिश्र, द्वितीय संस्करण।
काव्य शास्त्र	डा० भगीरथ मिश्र विश्वविद्यालय गोरखपुर, प्रथम संस्करण १९५७ ई०।
काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध	डा० उमा मिश्र, प्रथम दिल्ली।

काय प्रभाकर	श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु प्रथम सस्करण स० १६६६ वि०, बम्बई।
केशव ग्रन्थावली	स० प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, १८५४ ई०।
ग्वाल ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	सकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी 'भवेश', ।
ग्वाल कवि	श्री प्रभु दयाल मीतल प्र० साहित्य सस्थान, मथुरा प्र० स० २०१७ वि०।
ग्वाल रत्नावली	कवि किंकर प्र० भारतवासी प्रेस, इलाहाबाद, स० १६४५ ई०।
ग्वाल स्मृति ग्रन्थ	सम्पादक—भगवान सहाय पचौरी 'भवेश', प्रका० व्रज साहित्य मडल मथुरा, अप्रैल सन् १६६८ ई०।
गोविन्द ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	सकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी भवेश मथुरा।
गोपी प्रेम पीयूष प्रवाह	सम्पादक कवि रत्न नवनीत चतुर्वेदी बम्बई भूषण यत्रालय मथुरा, प्रथम सस्करण।
गोपालराय ग्रन्थावली (हस्तलिखित)	सकलनकर्त्ता भगवान सहाय पचौरी भवेश' मथुरा।
घनानन्द और मध्य काल की स्वच्छन्द काव्य धारा	डा० मनोहर लाल गौड नागरी प्रचारिणी सभा बनारस प्रथम सस्करण।
चतन्य मत और व्रज साहित्य	श्री प्रभु दयाल मीतल, स० २०१६ वि०।
छन्द प्रभाकर	श्री जगन्नाथ प्रसाद भानु, सस्करण १६६२।
ठाकुर ?सक (कविवर ठाकुर कृत)	सम्पादक लाला भगवानदीन, प्रथम सस्करण स० १६२३ वि० काशी।
ठाकुर शतक (कविवर ठाकुर कृत)	सम्पादक वा० काशी प्रसाद स० १६६१ वि० काशी।
दरबारी सस्कृति और हिन्दी मुक्तक	डा० त्रिभुवन सिंह प्रथमावत्ति, सन् १६५८ ई०।
दिग्विजय भूषण	गोकुल प्रसाद व्रज सम्पादक डा० भगवतीशरण सिंह स० २०१६ वि०।
गोविन्दानन्द घन (हस्तलिखित)	कविवर गोविन्द।
दीन दयाल गिरि ग्रन्थावली	सम्पादक बा० श्याम सुन्दर दास, स० १६७६
देव और उनकी कविता	डा० नगेन्द्र तीसरा सस्करण १६६० ई०।

देव दशन	श्री हर दयालु सिंह सस्करण १९४१ ई० ।
न दकिशोर ग्रन्थावली	सकलनकर्ता भगवान सहाय पचौरी 'भवेश' ।
नवीन सग्रह	श्री हफीजुल्ला खा हाफिज, १९३४ ई० ।
नखशिख हजारा (परमानन्द सुहाने)	नवल किशोर प्रेस, लखनऊ स० १८९३ वि० ।
नखशिख	मुन्शी गिरधारी लाल कायस्थ, १९०२ ई०, लखनऊ प्रिंटिंग प्रेस लखनऊ ।
नायिका भेद	प० हरि शकर शर्मा, आगरा ।
नायक नायिका भेद	डा० छैल बिहारी गुप्त राकेश, १९५२ ई० ।
निम्बार्क माधुरी	श्री ब्रह्मचारी बिहारी शरण, वृन्दावन ।
पद्म कर पचामृत	प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र० सस्करण ।
पद्माकर ग्रन्थावली	प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र प्रथम सस्करण ।
पद्माकर रत्नावली	कवि किंकर प्रथम सस्करण सन् १९५० ई० ।
पुस्तक साहित्य	डा० माता प्रसाद गुप्त ।
पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ	प्रथम स० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, प्र० ब्रज साहित्य मडल, मथुरा, स० २०१० ।
पजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य का इतिहास	प० चन्द्रकान्त बाली, प्र० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम सस्करण १९६२ ई० ।
पजाब का हिन्दी साहित्य	श्री सत्यपाल गुप्त, प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन पटियाला सन् १९५९ ई० ।
बिहारी और उनका साहित्य	डा० हरवश लाल शर्मा एव डा० परमानन्द शास्त्री, प्रथम सस्करण, अलीगढ ।
ब्रज भाषा रीति शास्त्र ग्रन्थ कोश	(छन्द, अलकार, शास्त्र ग्रन्थ) हस्तलिखित, प० जवाहर लाल चतुर्वेदी, प्र० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्र० सस्करण, १९६५ ई० ।
ब्रज भाषा साहित्य का नायिका भेद	श्री प्रभु दयाल मीतल मथुरा, स० २००५ वि० ।
ब्रज साहित्य का इतिहास	डा० सत्येन्द्र प्र० भारती भवन इलाहाबाद, प्रथम सस्करण सन् १९६७ ई० ।
ब्रज भाषा साहित्य का ऋतु सौन्दय	श्री प्रभु दयाल मीतल मथुरा, स० २००७ वि० ।

ब्रह्म भट्ट कवि सरोज	प० दुर्गा प्रसाद शर्मा, मथुरा स० २०१८।
विजय हजारा	मौलवी अब्दुल हक डूगरपुर स० १६७१
ब्रज का इतिहास	डा० सत्येन्द्र भाग १ और २ अ० भा० ब्रज साहित्य मडल, स० २०१५ वि० स करण।
ब्रज का सास्कृतिक इतिहास	खण्ड १ श्री प्रभुदयाल मीतल सन् १६६७ सस्करण दिल्ली।
भारतीय मूर्तिकला	डा० रायकृष्ण दास, प्रथम सस्करण।
भारत की मूर्तिकला	डा० रायकृष्ण दास सस्करण स० २००७ वि०
भारतीय सगीत का इतिहास	श्री उमेश मिश्र प्रथम सस्करण १६५० ई०।
भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक रेखायें	श्री परशुराम चतुर्वेदी प्र० सस्करण १६५५ ई०।
भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा	डा० नगेन्द्र प्रका० नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, सन् १६६४ ई०।
भारतीय साहित्य शास्त्र	श्री बलदेव उपाध्याय द्वितीय भाग काशी।
भारतीय काव्य शास्त्र की परम्परा	डा० नगेन्द्र, प्रथम सम्करण स० २०१३ वि०।
भारतीय दशन	बलदेव उपाध्याय,१६४२ ई० सस्करण, काशी
मध्य युगीन हिन्दी साहित्य मे नारी भावना	डा० उषा पाडेय सन् १६५६ ई०।
मसनवी मीर हसन	ल० मीर हसन १६०६ ई० सस्करण कानपुर।
मतिराम ग्रन्थावली	श्री कृष्ण विहारी मिश्र प्रथम सस्करण।
मतिराम	कवि और आचार्य डा० महेन्द्र कुमार, १६६० ई० दिल्ली।
मध्य युगीन भारतीय सस्कृति	डा० युसूफ हुसन, प्रथम सस्करण अलीगढ।
मनोजमजरी भाग १, २, ३, ४	नकछेदी तिवारी १६०६ वि०।
मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन	डा० मोतीलाल गुप्त प्रथम राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान प्रथमावृत्ति, स०२०१६ वि०।
मान मयक	श्री हर दयाल सिंह, प्रथम सस्करण २००२ वि० इलाहाबाद।
मिश्र बन्धु विनोद	द्वितीय भाग, मिश्र बन्धु प्रका० गगा पुस्तक कार्यालय लखनऊ द्वितीय बार स० १६८४।

मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक तात्विक अध्ययन	डा० सत्येन्द्र, प्रथम सस्करण, आगरा ।
रस सिद्धान्त	डा० नगेन्द्र सस्करण १९६४ ई०, दिल्ली ।
रस रत्नाकर	डा० हरि शकर शर्मा, प्रथम सस्करण, सन् १९४५ ई० आगरा ।
रस चन्द्रिका	कविवर हरि देव कृत, सम्पादक बाबा कृष्ण दास स० २०२२ वि, मथुरा ।
रसिक विनोद	कविवर चन्द्रशेखर बाजपेयी कृत, सम्पादक डा० रामकृष्ण वर्मा, प्रथम सस्करण, काशी ।
रस मीमासा	आचाय राम चन्द्र शुक्ल सम्पादक प० विश्व नाथ प्रसाद मिश्र द्वितीय सस्करण काशी ।
रस कुसुमाकर	राजा प्रताप नारायण सिंह, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, सन् १८९४ ई० काशी ।
रसिक गोविन्द (हस्तलिखित)	कविवर गोविन्द कृत ।
राजस्थान में हिन्दी	के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज भाग ३ ।
राधावल्लभ सम्प्रदाय (सिद्धान्त और साहित्य)	डा० विजयेन्द्र स्नातक, २०१४ वि० दिल्ली ।
रीतिकाल और आधुनिक हिन्दी कविता	डा० रमेश कुमार शर्मा प्रका० विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, प्र० सस्करण १९६७ ई० ।
रीति काव्य की भूमिका	डा० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पचम सस्करण सन् १९६४ ई० ।
रीति काव्य और चित्रकला	डा० गिरीज किशोर अग्रवाल, अलीगढ टकित शोध प्रबन्ध, १९६८ ई० ।
रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यजना	डा० बच्चन सिंह, प्र० ना० प्र० सभा वाराणसी प्रथमावृत्ति स० २०१५ वि० ।
रीतिकालीन काव्य में लक्षणा का प्रयोग	डा० अरविन्द पाडेय प्र० जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, प्रथम सस्करण सन् १९६८ ई० ।
रीतिकालीन अलकारों का शास्त्रीय विवेचन	डा० ओम प्रकाश शर्मा, दिल्ली, सस्करण १९६६ ई० ।
रीति शृगार	डा० नगेन्द्र प्रका० गौतम बुक डिपो, दिल्ली ।
रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि	डा० शिवलाल जोशी, प्रथम सस्करण १९६२ ई० दिल्ली ।

रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस का विवेचन	डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, प्रथम संस्करण सं० २०१० वि० आगरा।
रीति काव्य संग्रह	डा० जगदीश गुप्त, १९६१ ई० संस्करण।
व्यंग्यार्थ कौमुदी	प्रतापसाहि सम्पादक डा० रामकृष्ण वर्मा।
विचार और विश्लेषण	डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण दिल्ली।
विचार व दिग्बोध और तथ्य	सं० पद्म चन्द्र अग्रवाल व डा० महावीर सरन जैन, प्रथम संस्करण १९६५ ई० आगरा।
शृंगार सरोज	मन्ना लाल 'द्विज कवि' बनारस लाइट प्रेस काशी १८८० ई०।
शृंगार निर्णय	मन्ना लाल 'द्विज कवि' बनारस लाइट प्रेस काशी सन् १८८० ई०।
शृंगार सुधाकर	सं० मन्ना लाल 'द्विज कवि' बनारस लाइट यन्त्रालय काशी।
शृंगार हजारा	गणपति शास्त्री चौबे जयपुर, र० सं० अज्ञात।
शृंगार हार (हस्तलिखित)	कृष्ण लाल शर्मा, १९३० वि० वृन्दावन।
शृंगार सरोज	गुरुदेव प्रसाद लखनऊ प्रिंटिंग प्रेस लखनऊ।
शृंगार संग्रह	सरदार कवि नवल किशोर प्रेस लखनऊ।
शृंगार विनयरस निरूपण (हस्तलिखित)	अज्ञात महावन।
शृंगारिक प्रवृत्तियाँ	श्री परशुराम चतुर्वेदी, प्र० संस्करण १९५५।
शृंगार सतसई	सं० राम कृष्ण वर्मा सं० १९५३ काशी।
शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त	प्रथम और द्वितीय भाग, डा० गोविन्द त्रिगुणायत भारती साहित्य मन्दिर दिल्ली।
शिवसिंह सरोज	डा० शिवसिंह सेंगर, प्र० नवल किशोर प्रेस, लखनऊ सप्तम संस्करण, सन् १९२६ ई०।
षट्ऋतु हजारा	हबीबुल्ला, नवल किशोर प्रेस लखनऊ।
षट्ऋतु काव्य संग्रह	हबीबुल्ला खां प्र० नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, सं० १८८६ ई०।
षट्ऋतु हजारा	परमानन्द सुहाने नवल किशोर प्रेस लखनऊ।
सरोज सर्वेक्षण	डा० किशोरी लाल गुप्त, प्रका० हिन्दुस्तानी एकडमी, इलाहाबाद प्रथम संस्करण १९६७।

साहित्य और संस्कृति	डा० देवराज, नन्द किशोर एण्ड ब्रादर्स, बनारस प्रथम संस्करण।
सांस्कृतिक परम्परा और साहित्य	श्री तारक नाथ बाली, प्रथम संस्करण १९५९ ई०।
सिख इतिहास	डा० देश राज, सं० २०११ वि० गंगा नगर राजस्थान।
सिखों का उत्थान और पतन	नन्द कुमार देव शर्मा, ना० प्र० सभा काशी।
सुन्दरी सर्वस्व	पं० मन्ना लाल 'द्विज कवि' बनारस, सं० १९४६ वि० चन्द्रप्रभा काशी प्रेस।
सुन्दरी तिलक	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र काशी, मथुरा, बारहवां संस्करण सं० १८३३ वि०।
सुन्दरी तिलक	नवल किशोर प्रेस, लखनऊ सन् १९३३ ई० बारहवीं बार।
हम्मीर हठ	कविवर चन्द्र शेखर बाजपेयी कृत सम्पा० बा० जगन्नाथ दास रत्नाकर, सं० १९२८ ई०।
हफीजुल्ला का हजारा	हफीजुल्ला खां हाफिज सन् १९१५ कानपुर।
हिन्दी ध्वन्यालोक	सं० डा० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण दिल्ली।
हिन्दी काव्यालंकार सूत्र	(आचार्य वामन) सं० डा० नगेन्द्र, प्र० संस्करण, सं० २०११ वि० दिल्ली।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य पं० राम चन्द्र शुक्ल, प्र० काशी ना० प्र० सभा तेरहवां पुनर्मुद्रण सं० २०१८ वि०
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० रमाशंकर शुक्ल 'रसाल' सन् १९३१।
हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास	पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', प्र० पुस्तक भण्डार लहरिया सराय, द्वितीय संस्करण सं० १९९७ वि०।
हिन्दी साहित्य का ऐतिहासिक अनुशीलन	डा० रामकुमार वर्मा इलाहाबाद, प्र० संस्करण।
हिन्दी साहित्य द्वितीय खण्ड	सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा, प्रका० भारतीय हिन्दी परिषद्, प्रयाग प्र० संस्करण सन् १९५९ ई०
हिन्दी साहित्य का अतीत, (दूसरा भाग)	आचार्य पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र० वाणी वितान प्रकाशन वाराणसी, द्वितीय संस्करण, सं० २०२३ वि०।

हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सन् १९४६ संस्करण, दिल्ली।
हिन्दी के अलंकार ग्रन्थों पर संस्कृत का प्रभाव	डा० कुन्दन लाल जैन, १९६४ बरेली।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	प० सूर्यकान्त शास्त्री प्रथम संस्करण लाहौर
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० कृष्ण शंकर शुक्ल प्रथम संस्करण।
हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास	डा० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्व विद्यालय द्वितीय संस्करण स० २०१५ वि०।
हिन्दी रीति साहित्य	डा० भगीरथ मिश्र प्र० राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई०।
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	डा० रामरतन भटनागर, प्र० साथी प्रकाशन सागर, तृतीय संस्करण सन् १८६६ ई०।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० गिरधारी लाल शास्त्री प्र० भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़, प्रथम संस्करण १८६६।
हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	डा० गुलाब राय प्रका० साहित्य रत्न भंडार, आगरा।
हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (षष्ठ भाग)	प्र० सम्पादक डा० नगेन्द्र, नागरी प्रचा० सभा वाराणसी, प्रथम संस्करण स० २०१५ वि०।
हिन्दी काव्य शास्त्र में दोष विवेचन	डा० रणवीर सिंह दिल्ली (अप्रकाशित शोध प्रबंध)।
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास	माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ नादर्न हिन्दुस्तान का हिन्दी अनुवाद अनु० डा० किशोरी लाल गुप्त प्र० हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय।
हिन्दी अलंकार साहित्य	डा० ओम प्रकाश प्रथम संस्करण, दिल्ली।
हिन्दुई साहित्य का इतिहास	गार्सा द तासी के फ्रांसीसी भाषा के मूल ग्रन्थ 'इस्त्वार दल लितरेत्यूर ऐंदुई ऐ ऐंदुस्तानी' का अनुवाद, हिन्दी रूपान्तरकार डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय। १९५३ ई० इलाहाबाद।
हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ	डा० जय किशन प्रसाद षष्ठ संस्करण, सन् १८६७ ई० विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डा० किरण कुमारी गुप्ता हिन्दी सा० स० प्रयाग, २००६ वि०।

हिम्मत बहादुर विरुदावली (कविवर पद्माकर कृत), सम्पादक लाला भगवानदीन दूसरा सस्करण, काशी।

हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव डा० सरनामसिंह सन् १८५२ ई० दिल्ली।

हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थो की खोज रिपोर्ट नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १६००, १६०१, १८०४, १८०५, १८०६ ८, १६०६-११, १६१७ १६, १६२० २२ १८२३-२५, १६२६ २८ १६२८ ३१, १६३२ ३४, १६ ३५ ३७ १८३८ ४० १६४१ ४३।

हिन्दी साहित्य का इतिहास कृष्ण शकर शुक्ल।

आधुनिक हिन्दी साहित्य डा० राम गोपाल सिंह चौहान विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा १६६५।

आधुनिक हिन्दी साहित्य डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय तृतीय सस्करण १६-५४ ई० १५, २०, २१, २४ हिन्दी परिषद् विश्वविद्यालय आगरा।

आधुनिक साहित्य नन्द दुलार वाजपेयी भारती भण्डार इलाहाबाद चतुर्थ स० २०२२ वि०।

हिन्दुत्व रामदास गौड १६८५ वि० सस्करण काशी।

हिन्दी और काव्य डा० टीकम सिंह तोमर, १६५४ ई०।

हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास राम बहोरी शुक्ल एव डा० भगीरथ मिश्र हिन्दी भवन जालन्धर एव प्रयाग।

हिन्दी साहित्य का विकास और प्रमुख प्रवृत्तियाँ डा० गोविन्दराम शर्मा हिन्दी साहित्य ससार, दिल्ली प्रथम सस्करण।

हिन्दी रीति परपरा के प्रमुख आचार्य डा० सत्यदेव चौधरी प्रथम सस्करण, इलाहाबाद।

हिन्दी काव्य मे शृगार परपरा और महाकवि बिहारी डा० गणपति चन्द्र गुप्त, प्रथम सस्करण, आगरा।

हिन्दी साहित्य और प्रगति डा० विजयेन्द्र स्नातक दिल्ली।

हिन्दी साहित्य मे प्रकृति चित्रण डा० किरण कुमारी गुप्त।

हिन्दी भाषा और साहित्य डा० उदय नारायण तिवारी।

हिन्दी विश्व भारती खण्ड ८ स० कृष्ण वल्लभ द्विवेदी

हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य चतुरसेन शास्त्री, सन् १९४८ संस्करण, दिल्ली।
हिन्दी के अलंकार ग्रन्थों पर संस्कृत का प्रभाव	डा० कुन्दन लाल जैन, १९८४ बरेली।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	प० सूर्यकान्त शास्त्री प्रथम संस्करण लाहौर
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० कृष्ण शंकर शुक्ल, प्रथम संस्करण।
हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास	डा० भगीरथ मिश्र, लखनऊ विश्व विद्यालय द्वितीय संस्करण स० २०१५ वि०।
हिन्दी रीति साहित्य	डा० भगीरथ मिश्र, प्र० राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई०।
हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास	डा० रामरतन भटनागर, प्र० साथी प्रकाशन सागर, तृतीय संस्करण सन् १९६६ ई०।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	डा० गिरधारी लाल शास्त्री, प्र० भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़, प्रथम संस्करण १९६६।
हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	डा० गुलाब राय प्रका० साहित्य रत्न भंडार, आगरा।
हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (षष्ठ भाग)	प्र० सम्पादक डा० नगेन्द्र, नागरी प्रचा० सभा वाराणसी, प्रथम संस्करण सं० २०१५ वि०।
हिन्दी काव्य शास्त्र में दोष विवेचन	डा० रणवीर सिंह दिल्ली (अप्रकाशित शोध प्रबंध)।
हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास	माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ नादर्न हिंदुस्तान का हिन्दी अनुवाद अनु० डा० किशोरी लाल गुप्त प्र० हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय।
हिन्दी अलंकार साहित्य	डा० ओम प्रकाश प्रथम संस्करण, दिल्ली।
हिन्दुई साहित्य का इतिहास	गार्सा द तासी के फ्रांसीसी भाषा के मूल ग्रंथ 'इस्त्वार दल लितरेत्यूर ऍंदूई ए ऍंदुस्तानी' का अनुवाद, हिन्दी रूपान्तरकार डा० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय। १९५२ ई० इलाहाबाद।
हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ	डा० जय किशन प्रसाद षष्ठ संस्करण सन् १९६७ ई० विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डा० किरण कुमारी गुप्ता, हिन्दी सा० स० प्रयाग, २००६ वि०।

हिम्मत बहादुर विरुदावली	(रविवर पद्माकर कृत), सम्पादक लाला भगवानदीन, दूसरा संस्करण, काशी।
हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव	डा० सरनामसिंह सन् १६५२ ई० दिल्ली।
हस्तलिखित हिन्दी ग्रन्थों की खोज रिपोर्ट	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, सन् १६००, १६०१ १६०४, १६०५ १६०६ ८, १६०६ ११, १६१७ १६, १६२० २२, १६२३-२५, १६२६ २८ १६२६ ३१, १६३२ ३४, १६ ३५ ३७ १६३८ ४० १६४१ ४३।
हिन्दी साहित्य का इतिहास	कृष्ण शंकर शुक्ल।
आधुनिक हिन्दी साहित्य	डा० राम गोपाल सिंह चौहान विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा १६६५।
आधुनिक हिन्दी साहित्य	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय तृतीय संस्करण १६-५४ ई० १५ २० २१, २४ हिन्दी परिषद् विश्वविद्यालय आगरा।
आधुनिक साहित्य	न द दुलार बाजपेयी भारती भण्डार इलाहाबाद चतुर्थ स० २०२२ वि०।
हिन्दुत्व	रामदास गौड़ १६६५ वि० सस्करण, काशी।
हिन्दी और काव्य	डा० टीकम सिंह तोमर, १६५४ ई०।
हिन्दी साहित्य का उद्भव और विकास	राम बहोरी शुक्ल एव डा० भगीरथ मिश्र हिन्दी भवन जालन्धर एव प्रयाग।
हिन्दी साहित्य का विकास और प्रमुख प्रवृत्तियाँ	डा० गोविन्दराम शर्मा, हिन्दी साहित्य संसार दिल्ली प्रथम संस्करण।
हिन्दी रीति परंपरा के प्रमुख आचार्य	डा० सत्यदेव चौधरी, प्रथम संस्करण, इलाहाबाद।
हिन्दी काव्य मे श्रृंगार परंपरा और महाकवि विहारी	डा० गणपति चन्द्र गुप्त प्रथम संस्करण, आगरा।
हिन्दी साहित्य और प्रगति	डा० विजयेन्द्र स्नातक दिल्ली।
हिन्दी साहित्य मे प्रकृति चित्रण	डा० किरण कुमारी गुप्त।
हिन्दी भाषा और साहित्य	डा० उदय नारायण तिवारी।
हिन्दी विश्व भारती	खण्ड ८ स० कृष्ण वल्लभ द्विवेदी।

(ब) हिन्दी पत्रिकायें

इन्दु	कला ६ खण्ड २ अगस्त १९१५ ई०।
कादम्बिनी	वर्ष ७ अंक ७ मई १९६७ ई०।
देशबन्धु	जनवरी १९८६ ई०।
धर्मयुग	होली अंक, १९६८ ई०।
ब्रज भारती	वर्ष १ अंक १, २, ३, ५, ७ ११ फाल्गुन सं० १९९७ वि०, ज्येष्ठ आषाढ़ भाद्रपद माघ सं० १९९८ वि० ज्येष्ठ १९९९ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ४ अंक ७, ८ ९ आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष सं० २००३ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ५ अंक २ आषाढ़ सा० भाद्रपद २००४।
ब्रज भारती	वर्ष ६ अंक ३ ४ आश्विन सं० २००५ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ७ अंक १ २ चैत्र से भाद्रपद २००६।
ब्रज भारती	वर्ष ९ अंक ४ पौष माघ, फाल्गुन सं० २००८ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष ११ अंक ५ पौष फाल्गुन २०१० वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १४ अंक १ ज्येष्ठ २०१३ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष २२ अंक १ ज्येष्ठ २०२५ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १५ अंक ३ मार्गशीर्ष सं० २०१४ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष १७ अंक १, २, ३ ज्येष्ठ २०१६ वि०।
ब्रज भारती	वर्ष २० अंक १ ज्येष्ठ २०२३ वि०।
मर्यादा	भाग ६, संख्या २ ३ जून जुलाई १९१३ ई०।
माधुरी	वर्ष १३ भाग २२ संख्या १ मई १९३४ ई०।
विद्यार्थी सम्मिलित हरिश्चन्द्र चन्द्रिका और मोहन चन्द्रिका	उदयपुर, कला ८ किरण ३ संवत् १९३८ वि०।
विशाल भारत	वर्ष २ अंक १ २ अप्रैल व मई १९२८ ई०।
विशाल भारत	एण्ड्रज अंक जनवरी १९४१ ई०।
वीणा	वर्ष ८ अंक ११ सितम्बर १९३५ ई०।
वीणा	नवम्बर १९५८।
विश्वमित्र	वर्ष ५ खंड ९ अंक १ अक्टूबर १९३६ ई०।
सरस्वती	दिसम्बर १९३३, जनवरी १९५६ ई०।
सम्मेलन पत्रिका	भाग ३१ सं० २००१ वि०।

सप्तसिंधु — वीर काव्य, विशेषांक, वर्ष २, अंक ६, जून १९५५ ई० ।

" — शृंगारिक कविता, विशेषांक वर्ष २ अंक ७, जुलाई १९५५ ।

" — उपदेशात्मक काव्य, अंक वर्ष ३ अंक १ २ जनवरी फरवरी १९५६ ई० ।

" — वर्ष ३ अंक १२ दिसम्बर १९५६ ई० ।

" — वर्ष ४ अंक ३ मार्च १९५७ ई० ।

" — वर्ष ४ अंक ६ जून १९५७ ई० ।

" — वर्ष ४ अंक ११ नवम्बर १९५७ ई० ।

" — वर्ष ५ अंक १ जनवरी १९५८ ई० ।

" — वर्ष १४ अंक १० अक्टूबर १९६७ ई० ।

" — दिसम्बर १९६२ ई० ।

सुकवि — वर्ष १५ अंक ६ जून १९४३ ई० ।

श्रीकृष्ण संदेश — अक्टूबर १९६७ ई० ।

साप्ताहिक हिंदुस्तान — दिनांक १७ मार्च १९६८ ई० वर्ष १८ अंक २५ ।

साहित्य संदेश — रीति काव्यालोचनांक १९५९ ई० आलोचना परिशिष्टांक १९५२ ई०, शोध विशेषांक १९६० ६१ ई, साहित्य शास्त्र विशेषांक १९६२ ६३ ई० ।

हिंदी अनुशीलनांक — धीरेंद्र वर्मा, विशेषांक, वर्ष १३ अंक १-२ ।

ज्ञानदा — वर्ष १ अंक १ सन् १९६७ ई० ।

(ख) संस्कृत ग्रन्थ

अमरु शतक — (अमरु), अनुवादक कमलेश दत्त त्रिपाठी, प्रथम संस्करण ।

आर्या सप्त शती — काव्यमाला सीरीज संस्करण १८८५ ई० ।

उज्ज्वल नीलमणि — श्री रूप गोस्वामी सं० बाबा कृष्ण दास ।

काम सूत्र — वात्स्यायन प्र० श्याम काशी प्रेस, मथुरा ।

काव्य प्रकाश — (मम्मटाचार्य) अनुवादक, पं० हरिमंगल मिश्र, द्वितीय संस्करण, इलाहाबाद ।

खेद प्रकाश

हम खेद है कि विद्युत अवरोध के कारण इस पुस्तक के मुद्रण म इतना अधिक समय लग गया कि जो स्तर निर्धारित किया गया था उसम क्रम भग यदा-कदा हो गया है तथा मशीन प्रूफो मे कही कही ऐसी अशुद्धियाँ रह गयी हैं जो हमारे गौरव क अनुकूल नही कही जा सकती हैं।

कागज की कमी को महसूस करते हुये हमने ऐसी व्यवस्था बनायी थी इस पुस्तक पर उसका प्रभाव न पड सके। खद है अति वष्टि क कारण पुस्तक के लिय सुरक्षित रख कागज का एक अश नष्ट हो जाने क फल स्वरूप पिछले तीस चालीस पृष्ठो मे हमे जो कागज लगाना पडा है। उसका हम अत्यधिक खद है।

आशा है विज्ञ पाठक इस स्वीकारोक्ति मे सन्तुष्ट होगे और हमारी परिस्थितियो एव मजबूरियो को ध्यान म रख कर इस पुस्तक के इन दोषा को अधिक महत्व न देंगे।

—प्रमोद बिहारी

परिशिष्ट (क)

चित्र १

कविरत्न स्वर्गीय श्री नवनीत चतुर्वेदी द्वारा नाथद्वारा के पेंटर वल्लभदास क हैयालाल द्वारा बनवाये गये रगीन चित्र का छाया चित्र

महाकवि ग्वालजी मथुरा

खेद प्रकाश

हम खेद है कि विद्युत अवरोध के कारण
अधिक समय लग गया कि जो स्तर निर्धारित कि
यदा-कदा हो गया है तथा मशीन प्रूफों में कहीं
हैं जो हमारे गौरव के अनुकूल नहीं कही जा सकत

कागज की कमी को महसूस करते हुये
इस पुस्तक पर उसका प्रभाव न पड सके। खेद
के लिये सुरक्षित रख कागज का एक अंश नष्ट हु
तीस चालीस पृष्ठों में हमें जो कागज लगाना प
खेद है।

आशा है विज्ञ पाठक इस स्वीकारोक्ति स
स्थितियों एवं मजबूरियों को ध्यान में रख क
अधिक महत्व न देंगे।

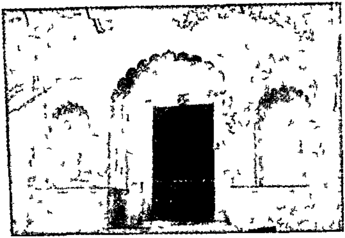

चित्र २

'बासी वृंदा विपिन के श्री मथुरा सुखबास ।'—ग्वाल कवि ।
मथुरा नगर के मध्य चूना कंकड़ मौहल्ले में स्थित 'ग्वाल
हवेली' के नाम से प्रसिद्ध ग्वाल कवि द्वारा
निर्मित उनका निजी आवास ।

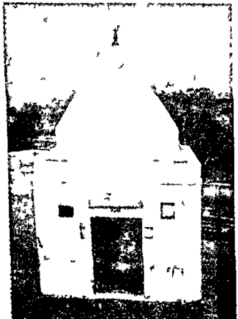

चित्र ३

'ग्वाल हवेली' के बाहर 'ग्वाल चबूतरा' नाम से प्रसिद्ध स्थान पर ग्वाल कवि ने पूजार्थ सं १८२१ वि में अपने इष्ट देव भगवान शंकर का मंदिर निर्माण कराया जो आज भी 'ग्वालेश्वर मंदिर' के नाम से प्रसिद्ध सार्वजनिक स्मारक है ।

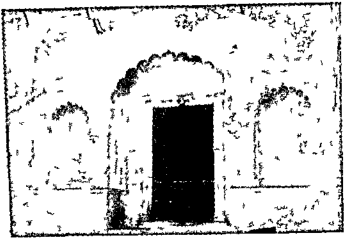

चित्र २
'बासी वृन्दा विपिन के श्री मथुरा सुखवास ।'—ग्वाल कवि ।
मथुरा नगर के मध्य चूना ककड़ मोहल्ले मे स्थित 'ग्वाल
हवेली' के नाम से प्रसिद्ध ग्वाल कवि द्वारा
निर्मित उनका निजी आवास ।

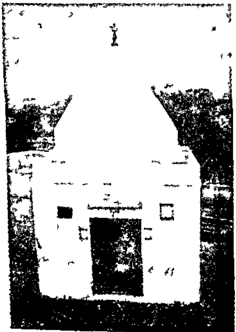

चित्र ३
'ग्वाल हवेली' के बाहर 'ग्वाल चबूतरा' नाम से प्रसिद्ध स्थान पर ग्वाल कवि ने पूजार्थ स १९२१ वि मे अपने इष्ट देव भगवान शकर का मंदिर निर्माण कराया जो आज भी 'ग्वालेश्वर मंदिर' के नाम से प्रसिद्ध सार्वजनिक स्मारक है ।

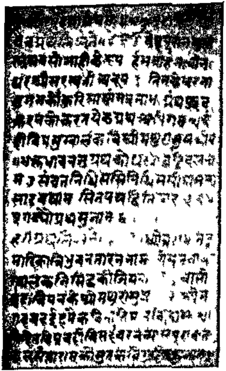

चित्र ४

मथुरा से प्राप्त प्रति भक्त भावन का प्रथम पृष्ठ

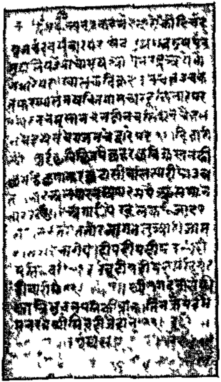

चित्र ५

भक्त भावन का अंतिम ११८ वां पृष्ठ

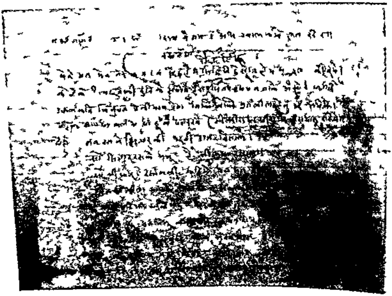

चित्र ८

इस ग्रन्थ का प्रथम पृष्ठ—स्व० सेठ कन्हैयालाल पोद्दार की हस्तलिपि

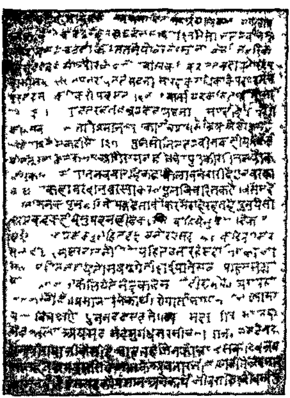

चित्र ९

साहित्यानन्द का प्रथम पृष्ठ

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर की प्रति से

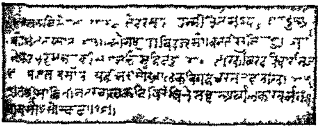

चित्र १०

साहित्यानन्द का अंतिम २५३ वां पृष्ठ